॥ सूचीपत्रात्मबोधस्य ॥

श्री आत्म प्रबोध भाषाकर्त्ता वृहत्खरतर भट्टारकूं गणोद्भवौ पंडित मुक्तचंद्र वा पंडित पन्नालाल संगीतां शोनिधिः ॥

॥ श्री सरस्वत्यैनमः ॥

॥ आत्म प्रबोध भाषाटीका ॥

श्री नवांगी वृत्ति विधायक श्री जिनाभय देव
सूरि सद्गुरुभ्योनमः ॥

उपाध्याय श्री क्षमा कल्याण जिद्गणीभ्योनमः ॥
परम उपकारी श्री महिमा भक्ति जिद्गणी परम गुरुवेनमः ॥

भाषा कर्त्ता पंडित पद्मोदय मुनि मङ्गलीक के वास्ते इष्ट देवता को स्मरण करके नवीन अनुष्टप छन्द लिखते हैं।

श्लोक—आल्हाद पूर्वकं नत्वा, श्री वीरं चरमं जिनं।
आत्म प्रबोध भाषांच, क्रीयते भव्य हेतवे ॥ १ ॥

अर्थ—परम हर्षयुत श्री वीर चरम जिनेश्वर को नमस्कार करके आत्म प्रबोध की भाषा को भव्य जीवों के हित के वास्ते वर्णन करता हूं ॥

अब ग्रन्थ को समीप लाकर आदि में मङ्गल (स्तुति लिखते हैं):—

श्लोक—अनंत विज्ञान विशुद्ध रूपं, निरस्त मोहादि परस्वरूपम्।
नरामरेन्द्रै कृत चारु भक्तिं, नमामि तीर्थेश मनंत शक्तिं ॥२॥

अर्थ—प्रथम ग्रन्थकारक श्री उपाध्याय क्षमा कल्याण जी गणी महाराज मङ्गलाचरण करते हैं। मङ्गल तीन प्रकार के होते हैं आदि, मध्य और अन्त। जिसमें आदि मङ्गल विघ्न निवारक इष्ट देव स्मरण रूप लिखते हैं ॥

'मङ्गल' के विषय में शंका समाधान बहुत हैं परन्तु ग्रन्थ बढ़ जावेगा इस वास्ते विशेष और ग्रन्थों में देख लेना ॥

अब मङ्गलीक के लिये इष्ट देव को नमस्कार करके अनन्त शक्ति के धरने वाले ऐसे तीर्थ के मालिक श्री महावीर स्वामी को नमस्कार करता हूं । वो कैसे हैं तीर्थ के पति अनन्त विशिष्ट ज्ञान याने निर्मल ज्ञान जिन्हों ने प्राप्त किया है किस प्रकार प्राप्त किया है, मोहादिक परस्वरूप को दूर करके केवल ज्ञान उपार्जन किया फिर जिस ज्ञान करके विशेष शुद्ध जिन्हों का निर्मल स्वरूप होगया । फिर वो तीर्थ पति कैसे हैं मनुष्य और देवताओं ने मनोहर याने उत्तम भक्ति की है याने छओं कल्याणक में इन्द्रादिक देवताओं ने भक्ति की है । मनुष्य चक्रवर्ती भक्ति करें उसमें आश्चर्य क्या है केवल श्री महावीर स्वामी के छः कल्याणक हुए हैं । शेषतीर्थकरों के पांच कल्याणक हुए हैं यहां पर विशेषण श्री महावीर स्वामी का है इस कारण से छः कल्याणक कहे इस प्रकार तीर्थ पति को नमस्कार प्रथम श्लोक में दिखाया ॥

श्लोक—अनादि संबद्ध समस्त कर्म, मलीम शत्वं निजकं निरस्य ।
उपात्त शुद्धात्मगुणाय सद्यो, नमोस्तु देवार्य महेश्वराय: ॥३॥

अर्थ—अनादि काल के मलीन कर्म बँधे हुए थे उनको अपनी आत्मा से दूर करके परम उत्कृष्ट ज्ञानादिक गुण प्रकट किया जिससे ऐसे आर्य महादेव को नमस्कार हो ॥

॥ सरस्वती जी की प्रार्थना ॥

श्लोक—जगत्त्रया धीश मुखोद् भवाया, वाग्देवता या स्मरणं विधाय ।
विभाव्यते सौ स्वपरोप कृत्यै, विशुद्धि हेतु शुचिरात्म बोधः ॥४॥

अर्थ—तीन जगत के मालिक जिनके कमल रूपी मुख से प्रकट हुई सरस्वती देवी उन को स्मरण करके यह आत्म प्रबोध नामक ग्रन्थ अपने वास्ते तथा अन्य भव्य जीवों के हित के वास्ते प्रकट करता हूं कैसा है यह आत्म प्रबोध ग्रन्थ, आत्मा की शुद्धि होने का कारण है ऐसे गुण सहित आत्म प्रबोध को प्रकट करता हूं । इस में ग्रन्थकर्त्ता ने सरस्वती देवी को नमस्कार करनरूप मङ्गल दिखाया है । फिर भी यहां पर भाव मङ्गल को दृढ़ करते हैं । प्रथम ग्रन्थ की आदि में संक्षेप रुचि के धरने वाले बाहुल्यता करके श्रेष्ठ समय अङ्गीकार करने के लिये ग्रन्थ समाप्ति होने के प्रतिबंधक याने अन्तराय (बाधा) पटकने वाले बहुत अज्ञान रूप अँधेरे का समूह उस को दूर करने के लिये अत्यंत दूषण रहित भले प्रकार करके उचित है कि अपने इष्ट देव की स्तुति

करनरूप भाव मङ्गल अवश्य करना चाहिये। ऐसा विचार करके शा... समस्त तीर्थ पति को नमस्कार करण रूप भाव मङ्गल दिखलाया । फिर ग्रन्थ... सरस्वती जी को प्रार्थना भी की है। जिस में भगवान के मुखारविंद से निकली वाणी याने सरस्वती उसका स्मरण रूप भाव मङ्गल दिखलाया है। तैसे ही श्रोताजनों की प्रवृत्ति के लिये प्रयोजन, अभिधेय और सम्बन्ध ये तीन पदार्थ निश्चय करके कहना योग्य है। इसलिये जो आत्म ज्ञान हैं सो निश्रेयश याने सम्पदा मोक्ष का कारण है । आत्मज्ञान बिना मोक्ष नहीं होता और यह जो आत्म प्रबोध है सो सर्व जीवों का उपकार करने वाला है। इस लिये अपनी आत्मा का उपकार और भव्य जीवों का उपकार करने वाला आत्म ज्ञान है तथा आत्म प्रबोध यह पद जो है अति विशुद्ध ज्ञान मार्ग को कारणपना करके निरूपण करते हैं। इस में कारण और कार्यभाव और वाच्य और वाचक भाव सहित दोनों भाव पूर्वक आत्म बोध निरूपण करते हैं। इस लिये वाच्य वाचक भाव की सूचना करके यहां पर आत्म बोध का वाच्य स्वरूप है। ग्रन्थ जो है सो वाचक है इस वाच्य वाचक के भाव के विषय में बहुत वक्तव्यता याने चर्चा है सो पंडित लोग अन्य ग्रन्थों से देख लेवें, कारण अधिक लिखने से ग्रन्थ बढ़ जायगा इस वास्ते नहीं लिखा है ॥

अब यहां पर अविधेय आदिक तीन पदार्थ सामान्य करके दिखलाया परन्तु अब तीनों पदार्थों को भिन्न करके दिखलाते हैं कि आत्म प्रबोध ग्रन्थ में क्या क्या अधिकार है यथा—

श्लोक—प्रकाश माद्यं वर दर्शनस्य ततश्चदेशाद्विरतेर्द्वितीयं ।
तृतीयमस्मिन् सु मुनि व्रतानाम् वक्ष्ये चतुर्थं परमात्मतायाः ॥

अर्थ—अब प्रथम प्रकाश में प्रधान दर्शन याने सम्यक्त का स्वरूप दिखलाया है तथा दूसरे प्रकाश में देश वृत्ति श्रावकों के स्वरूप दिखलाये हैं तथा तीसरे प्रकाश में उत्तम मुनियों का स्वरूप दिखलाया है तथा चतुर्थ प्रकाश में परमात्मा याने केवली महाराज तथा सिद्ध महाराज का स्वरूप दिखलाया है इति सम्बन्धार्थ ॥

अब श्लोक में वरदर्शन ऐसा पद रक्खा है उसका मतलब यह है कि उत्तम प्रधान अनेकान्त पक्ष सुदृष्टि पूर्वक सुदेव, सुगुरु, सुधर्म इन तीनों को दूषण रहित जानना इसी का नाम वर दर्शन कहलाता है परन्तु यह बात किसी भी मत में नहीं सिवाय सर्वज्ञों के धर्म सिवाय अन्य में नहीं पासकते इस लिये वर दर्शन लिखा है। इस ग्रन्थ में

सम्यक्त से लेके परमात्मा परयन्त चार प्रकाश में संबंध रक्खा है अर्थात् निगोद से ले के सिद्ध परयन्त तक अधिकार सूचित किया है इस प्रकार चार प्रकाश में याने बंधे भये निरूपण इस आत्मप्रबोध में करा गया है अर्थात् इस आत्मप्रबोध में चार प्रकाश रक्खे गये हैं अब इस आत्मप्रबोध के अधिकारी दिखलाते हैं ॥

श्लोक—न संत्य भव्या नहि जाति भव्या न दूर भव्या बहु संसृतित्वात् ।
मु मुक्षवो भूरि भव भ्रमंही आसन्न भव्या स्त्वधिकारिणोत्र ॥

अर्थ—इस आत्म प्रबोध के अधिकारी अभव्य नहीं हो सक्ते तथा जाति भव्य नहीं हो सक्ते कारण जाति भव्य कथन मात्र है अर्थात् सिद्ध कदापि काल में नहीं हो सक्ते उन को भी संसार में अनादि काल परयन्त याने अनंत काल भ्रमण करना है किस वास्ते कि वो नाम मात्र के जाति भव्य हैं किन्तु अव्यवहार राशि को छोड़ के व्यवहार राशि में नहीं आ सकते इस वास्ते उनकी मोक्ष नहीं होती वो नाम मात्र के भव्य कहे इस वास्ते इस आत्मप्रबोध के अधिकारी जाति भव्य नहीं हो सकते पंडित पुरुषों ने शास्त्र में अनंत संसारी लिक्खा है अब शेष रहे भव्यी याने भव्य वो जीव आत्मप्रबोध के अधिकारी हैं अन्य नहीं अब ये बात कहते हैं कि दुःख से जिनका अन्त नहीं ऐसे अनंत काल में चार गती में भ्रमण करने वाले जीवों को हित के कारक प्रशंसा करने योग्य समस्त जीवों के चित्त में चमत्कार करने वाले इन्द्रादिक की आज्ञा से देवताओं ने मनोहर समव सरण की रचना करी है जिन्हों ने उसमें आठ महा प्रातीहार्य्य करके समस्त चौंतीस अतिशय सहित ऐसे जगत के गुरू श्रीवीर परमेश्वर महाराज समस्त घनघाती कर्म के दलिये रूप पटल याने (परदा) अन्धकार को दूर करके केवल ज्ञान प्राप्त करा उस ज्ञान के बल से सकल लोक अलोक देखने रूप लक्षण ऐसा केवल ज्ञान से चौदह १४ राज लोक का भाव हस्तगत याने आंवले की तरह से देखने जानने वाले ऐसे वीर परमात्मा ने उस निर्मल केवल ज्ञान को प्राप्त किया उस केवल ज्ञान करके वीर परमात्माने तीन प्रकार के जीव बतलाये हैं सो कहते हैं एक तो भव्य, और अभव्य, और जाति भव्य, अब तीनों का भिन्न भिन्न भेद बतलाते हैं तहां पर वो जीव ने काल १ स्वभाव २ और नियत ३ पूर्वकृत ४ और पुरुषाकार ५ इन पांचों समवाय की सामग्री पाके निज सकती करके समस्त करमों को खपा के मोक्ष गये तथा जाते हैं और मोक्ष जांयगे इन तीनों काल की अपेक्षा करके उनको भव्य कहना चाहिये फेर उस जीव आर्यक्षेत्र में जन्म लिया और सामग्री का भी जोग मिल गया परन्तु जाति स्वभाव करके उनको श्रद्धा कदापि काल नहीं होती याने श्रद्धा करके रहित होते हैं वो जीव मुक्ति

को नहीं जाते, वर्तमान में जावें नहीं, आगामी काल में मुक्ति जावेंगे नहीं, अगाड़ी गये नहीं उन्हों को अभव्य कहना चाहिये मुक्ति जाने में मूल कारण सम्यक्त ही रहा है सो इस ग्रन्थ में पुष्टि करते हैं ॥

गाथा—दंसण भट्ठो भट्ठो दंसण भट्ठस्सनत्थि निव्वाणं।
सिझ्झंति चरण रहिया दंसण रहिया न सिझ्झंति ॥

अर्थ—सम्यक्त से भ्रष्ट जो है उन को भ्रष्ट कहना चाहिये सम्यक्त के भ्रष्ट वाले उनको निर्वाण नहीं होता पर जो चारित्र से भ्रष्ट हैं वो मुक्ति जाते परन्तु दर्शन रहित याने सम्यक्त रहित मुक्ति नहीं जाते इस वास्ते मुक्ती जाने में सम्यक्त का ही प्रधान्यपना है तथा वो जीव सूक्ष्म स्वभाव परित्याग करके बादर भाव में यदि आवें तो अवश्य ही सिद्ध अवस्था में चले जावें मगर समस्त संस्कार वर्जित खान के भीतर रहा हुआ पाषाण वो पैरों की ठोकर खाता हुआ कोमल होजाता है इस दृष्टान्त सहित सूक्ष्म भाव को त्याग करके कभी भी अव्यवहार रूप खानि से बाहर आया नहीं, आवे नहीं, आवेगा नहीं इन तीनों काल की अपेक्षा करके उन जीवों को जाति भव्य कहना चाहिये केवल कथन मात्र जाति भव्य है परन्तु सिद्ध साधकता नहीं यही ग्रन्थांतर से दिखलाया है ॥

गाथा—सामग्गी अभावाओ ववहार रासी अप्पवेसाओ।
भव्वाविते अणंता जे सिद्धि सुहं न पावन्ति ॥

अर्थ—सामग्री के अभाव से व्यवहार राशि में प्रवेश करते नहीं ऐसे भव्यी अनन्ते हैं जिन्हों को मुक्ती का सुख प्राप्त नहीं होता वहां अभव्य और जाति भव्य ये दोनों शुद्ध श्रद्धा करके रहित होते हैं याने भाव श्रद्धा रहित होते हैं इस वास्ते इन दोनों का अधिकार नहीं है आत्म प्रबोध के योग्य नहीं, शेष रहे भव्य वह दो प्रकार के होते हैं एक तो दूर भव्य औह दूसरे आसन्न भव्य याने निकट भव्य वहां पर अर्ध पुद्गल परावर्त सेती अधिक संसार भ्रमण करना है उन्हों को दूर भव्य कहना चाहिये याने वो जीव दूर भव्य हैं उन जीवों को प्रबलतर मिथ्यात्व के उदय करके कितने काल पर्यन्त सम्यक्त दर्शनादिक की प्राप्ति के अभाव करके इस अपार संसार रूप अटवी में भ्रमण करते थके आत्म बोध और शुद्ध धर्म का रास्ता पाना दुर्लभ है वे दूर भव्य कहना चाहिये याने उन्हों को दूर भव्य कहना चाहिये फेर उन जीवों को कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्त संसार बाकी रह गया हो उन को निकट भव्य कहना चाहिये उन्हों के

हलके कर्म पर्णेशेती तत्व श्रद्धान सुलभ है वह निकट भव्य जीव आत्मबोध के अधिकारी जानना चाहिये

अब यहां पर निकट भव्य के उपकार के वास्ते कुछ आत्म प्रबोध का स्वरूप निरूपण करते हैं, आत्मा की उत्पत्ति लिखते हैं निरन्तर भावों प्रते गमन स्वभाव है जिस का जिस २ भाव में गमन शील है जिस का उस को आत्मा कहते हैं वह आत्मा तीन प्रकार का कहा है (१) वहिरात्मा (२) अन्तरआत्मा (३) परमात्मा अब तीनों के लक्षण वतलाते हैं वहां पर जो जीव मिथ्यात्व के उदय सेती शरीर, धन, परिवार, मकान, नगर, देश, मित्र, शत्रु, वल्लभ, अवल्लभादिक वस्तु के विषे राग द्वेष की बुद्धि धारण करे फिर सर्व असार वस्तु को सारपने करके वहिरात्मा कहना चाहिये अब अन्तरआत्मा के लक्षण दिखलाते हैं जो जीव तत्व श्रद्धान सहित होके कर्म वंधन छोड़ना इत्यादिक स्वरूप जानता है उत्तम प्रकार करके यह जीव इस संसार में मिथ्यात्व १ अवृर्ती २ प्रमाद ३ कषाय ४ योग ५ इन पांच कारणों करके जीव को करम बँधता है जब यह कर्म उदय में आवें तब वह जीव दुख भोगता है उस समय में उस की कोई भी सहायता नहीं कर सकता है तथा कुछ द्रव्यादिक वस्तु चली जावे ऐसा विचार करे मेरे इस वस्तु के साथ में सम्बन्ध नष्ट होगया याने मेरा सम्बन्ध इस से कोई ताल्लुक नहीं मेरा द्रव्य तो आत्म प्रदेश में समवाय समवेत सहित ज्ञानादिक लक्षण पदार्थ रहा हुआ है वह तो कहीं भी नहीं जाता मेरी वस्तु मेरे पास है पर वस्तु थी वह चली गई तथा कुछ द्रव्यादिक वस्तु का लाभ होजाने से इस प्रकार मेरे इस पुद्गलीक वस्तु के साथ संबंध हुआ है ॥

इस के ऊपर किस वात को दरशाना चाहिये फिर वेदनी कर्म के उदय सेती कष्ट या तकलीफ हो जामे से शमभाव को धारण करे अपनी आत्मा को परभाव से भिन्न मान करके परभाव को छोड़ने का उपाय करे चित्त में परमात्मा का ध्यान करे आवश्यक आदि धर्म कृत्यों के विषय विशेष करके उद्यतवान होवे वो जीव चतुर्थ गुण स्थान से लेके द्वादश गुण पर्यन्त अन्तरंग दृष्टिपणा करके वो जीव अन्तर आत्मा कहलाता है ॥

अब फिरभी वो जीव शुद्ध आत्मा के स्वभाव के प्रति वंधक कर्म रूप शत्रु को हन करके उपमा रहित उत्तम केवल ज्ञानादिक निज संपदा पाकर के हथेली में आंवले की तरह से समस्त वस्तु का समुदाय को जाने और देखे परम आनंद सहित हो जाने से वो जीव तेरमा तथा चौदहवां गुण स्थानवर्ती जीव सिद्ध आत्मा के शुद्ध स्वरूप

करके परम आत्मा कहना चाहिये. बोधक नाम क्या है वस्तुओं को यथा वस्थित स्वरूप करके जानना उनको बोधक कहते हैं तथा आत्मा तथा चेतन इन से सम्यक्त गुण भी भिन्न नहीं है इस वास्ते आत्म बोध आत्मा को होता है इस वास्ते इस बात को पुष्ट करने के लिये उपचारक यह ग्रन्थ भी आत्म बोध है इस से आत्म बोधक होता है. इति आत्म बोध शब्दार्थ ॥

अब यहां पर आत्मबोध के महात्म का वर्णन करते हैं जिस प्राणी को आत्मबोध भया वह प्राणी परमानंद में मग्न हो गया इस वास्ते वो जीव संसारिक सुख का अभिलाषी कदापि काल नहीं हो सकता कारण संसारिक सुख अल्प और अस्थिर है दृष्टान्त पूर्वक कहते हैं जैसे कोई भी पुरुष विशेष वांछित पदार्थ का देने वाला कल्प वृक्ष को पाकर के रुक्ष याने रूखा अन्नादिक पदार्थ की प्रार्थना करने वाला नहीं हो सक्ता इसी तरह से समझ लेना चाहिये तथा जो प्राणी आत्म ज्ञान में लिप्त हो गया है ॥ उन को नरकादिक दुर्गति का दुख कभी नहीं हो सकता फिर भी दृष्टान्त पूर्वक कहते हैं जैसे अच्छे रास्ते में चलने वाला आंखों वाला पुरुष कुए में नहीं गिर सकता उसी प्रकार जिस को आत्म बोध प्राप्त हो गया वह कदापि काल दुर्गती को नहीं जाता फिर भी जिस पुरुष को आत्म बोध हो गया तिस को बाहिर की वस्तु का संसर्ग की इच्छा कभी नहीं हो सकती फिरभी हेतु दिखाते हैं जिस पुरुप को अमृत का स्वाद मिल गया तो फिर वह पुरुष खारे पानी पीने की इच्छा नहीं कर सकता इसी तरह से आत्म बोध जान लेना. जिस पुरुष को आत्म बोध नहीं हुआ प्राणी केवल मनुष्य की देह धारण करने वाला है मगर सींग पूंछ रहित पशु तुल्य समझना चाहिये कारण अहार और निद्रा और भय और मैथुन यह बातें मनुष्यों और पशुओं में बराबर हैं इस वास्ते दृष्टान्त युक्त हैं तथा फेर भी जिस प्राणी ने वस्तु गति करके आत्मा को नहीं पहिचाना उसको सिद्ध गति दूर है फिर उसने परमात्मा की संपदा को नहीं जाना इस वास्ते उसको संसारिक धन धान्यादिक रिद्धी के विषय परमानन्द का कारण हो जाता है फिर उस प्राणी को आशा रूपी नदी अपूर्ण रहा करती है तथा फेर भी कहते हैं कि जब तक जिस प्राणी को आत्म बोध नहीं हुआ उस को भव रूपी समुद्र से पार उतरना कठिन है जब तक मोह महा भट्ट दुर्जय वर्तते हैं तब तक ही कषाय भी अति विषम है इस वास्ते सर्वोत्तम आत्म बोध है या बात स्थित है अब कारण विना कार्य की उत्पत्ति नहीं हो सकती इस न्याय करके आत्मबोध प्रगट होने से सद्भूत छतापना कुछ भी होना चाहिये वह कारण क्या है वस्तु गति करके केवल तो सम्यक्त ही है। अन्य नहीं कारण सम्यक्त के

सिवाय आत्मबोध की उत्पत्ती शास्त्र में सुनने में नहीं आती इस वास्ते शुद्ध सम्यक्त धारण करने वाले को आत्म बोध होता है ॥

अब प्रथम यहां पर सम्यक्त का स्वरूप निरूपण करते हैं उस सम्यक्त की उत्पत्ती किस प्रकार होती है कोई भी अनादि काल के मिथ्या दृष्टि जीव ने मिथ्यात्व संबंधी अनंता पुद्गल परावर्त काल तक इस असार संसार चक्र में भ्रमण करे भव्यपणे के वस सेती जैसे पहाड़ की नदी में जो पत्थर पड़ा हुआ है वह पत्थर और पत्थरों की ठोकर खाता हुआ कोमल दशा को प्राप्त हो जाता है इसी माफिक वह जीव यथा प्रवृत्तिकरण परिणाम करके बहुत कर्म की निर्जरा करके दूर करता हुआ अल्प बंध को बंधता थका संज्ञीपणा को प्राप्त करके केवल आयुष को छोड़ के सातों कर्मों की प्रकृती को पल्लोपम के असंख्यात में भाग को न्यून करके एक कोड़ा कोड़ी सागरोपम की स्थित को बाकी रक्खे उस समय में जीव के खोटे कर्मों से उत्पन्न भया बहुत राग द्वेष का परिणाम कठोर सघन बहुत काल में पहुंच सके ऐसी टेढ़ी गांठ है वह दुख से भेद सकती हैं याने उस गांठ को तोड़ना बहुत कठिन है तथा आगे से उस गांठ को तोड़ सकता नहीं इस कर्म रूपी राग द्वेष की गांठ को अभव्य जीव यथा प्रवृत्ती करण करके कर्म को खपाने की इच्छा करे परन्तु वह कदापि काल तोड़ नहीं सकता ग्रन्थों भेदन का एक दफे देश मात्र में वर्तमान अभव्य या भव्य भी असंख्याता काल तक रह सकता है तथा अभव्य जीव कोई भी चक्रवर्ती आदि लेके बड़े राजा लोग प्रधान पूजा सत्कार सन्मान दान वा साधुओं की भकती होती देख करके तथा तीर्थंकरों की रिद्धी देखने के लिये वा देवलोक के सुख के वास्ते दीक्षा ग्रहण करते हैं केवल द्रव्य साधूपणा पैदा करके वा अपने मान्य के लिये भाव साधु की तरह प्रति लेखनादिक क्रिया इत्यादिक समुदाय को करते थके उस क्रिया के बल से वो अभव्य जीव द्रव्य साधु होके उत्कृष्टपणे से अगर ऊपर जावे तो नवमा ग्रैवेयक देवलोक के एक त्रिक में चला जावै फिर कोई भी अभव्य जीव केवल सूत्र मात्र नवमें पूर्व तक द्रव्य श्रुत पढ़ सकता है तथा कोई भव्य मिथ्यात्वी जीव कर्म की गांठ के देश मात्र में रहा हुआ द्रव्य श्रुत को कुछ कम दश पूर्व तक पढ़ सकता है इस वास्ते कुछ कम दश पूर्व तक पढ़े तो मिथ्यात्व श्रुत भी हो सकता है कारण मिथ्यात्वी ने ग्रहण किया इस वास्ते फिर जिस ने सम्पूर्ण दश पूर्व पढ़ लिया उनको निश्चय करके सम्यक्त होता है बाकी कुछ कम दश पूर्वधारी को सम्यक्त है भी यदि नहीं भी है ऐसे कल्प भाष्य में लिखा है ॥

गाथा–चौदश दशय अभिन्ने नियमा संम्मत्तु शेषये भणया।

अर्थ—चौदह पूर्वधारी या दश पूर्वधारी इन दोनों को निश्चय करके समकित होता है बाकी कमती वाले को दोनों बात जान लेना इसके बाद कोई भी महात्मा परमनिर्वाण का सुख नजीक जिस को चाहते हैं बहुत खुश होके दुःख दूर कर सके ऐसा उद्यम करते थके. कुल्हाड़ी की धार की तरह से उस गांठ को तोड़ते हैं उसका नाम अपूर्व करण है याने कोई काल में ऐसा कार्य उसने कभी नहीं किया उसको अपूर्व करण कहते हैं। इस अपूर्व करण में परम निर्मल प्रणाम की धारा विशेषरूप करके ऊपर कह आये हैं उस स्वरूप करके गांठ को भेदन करे जब अनुवृत्ति करण में प्राप्त होता है वहां पर समय २ में निर्मल प्रणाम की धारा करके उन कर्मों को निरन्तर खपाता हुआ नहीं उर्दीणा करी है जिसने उस मिथ्यांत्व को क्षय करता थका उपसम लक्षण करके अन्तर महूर्त कालवाद अन्तर करण में प्रवेश करे उसकी यह विधी है। अन्तर करण की स्थिति में से दलिया ग्रहण करके प्रथम स्थित में डाले इस माफिक समय २ में डालता जावे अन्तकरण के दलिये समस्त क्षय हो जावें अन्तर महूर्त काल वाद सम्पूर्ण दलियों को क्षय करके वाद अनुवृत्ती करण में प्राप्त होवे. मिथ्यात्व को उर्दीणा करके भोगवे इस माफिक परिणामों करके जैसे विना धान की ज़मीन पड़ी हुई है उसको ऊसर ज़मीन कहते हैं उसी तरह से परिणाम की धारा को शुद्ध करके मिथ्यात्व को पराजय करे जैसे संग्राम में सिपाहियों का मालिक वैरी को जीत करके अत्यन्त खुश हो जाता है इसी तरह से परम आनन्द मई अपोत गलिक उपसमिक सम्यक्त को अंगीकार करे जैसे ग्रीष्म ऋतु में कोई पुरुष धूप से तप गया हो उसको गोशीस चन्दन का लेप कर देवे तो उसको कैसा आनन्द आता है उसी माफिक जिस की आत्मा में समकित की शीतलता आगई है उसको तो आनन्द का पार नहीं वहां पर रहा हुआ जीव सत्ता में रहा हुआ मिथ्यात्व उसको तीन पुंज करके शुद्ध करे जैसे कोई जीव मदनवान द्रव्य दवाई विशेष करके शुद्ध करे वो शोधन होता थका कितना शुद्ध हो जाता है कितने अशुद्ध रहते हैं कितनेक सर्वथा शुद्ध नहीं होता ॥

इस दृष्टान्त सहित जीव भी अध्यव साथ विशेष करके जिन वचन रुची का प्रति वन्धक दुष्ट रस को उच्छेद कर्म करके मिथ्यात्व को शोधे तो वह भी शोधन होता है एक तो शुद्ध एक अर्द्ध शुद्ध एक अशुध ये तीन होते हैं वहां पर शुद्ध पुंज किसे कहते हैं सर्वज्ञ धर्म के ऊपर अनुराग और प्रीति होना अन्तकरण सहित उसको सम्यक्त पुंज कहते हैं तथा दूसरा अर्धशुध उसको मिश्र पुंज जानना चाहिये. उसके उदय करके जिन

धर्म के ऊपर उदासीनता होवे तथा अशुद्ध जो है उसके उदय से तीरथंकरादिक को विपरीत जाने तिस को मिथ्यात्व पुंज कहते हैं उस सेती अन्तकरण के अंतर महूर्त काल बाद सम्यक्त भोगता थका तिस के बाद नियम करे यही जीव शुद्ध पुंज के उदय सेती क्षयोप समिक सम्यक्त दृष्टि होता है अर्द्ध शुद्ध पुंज के उदय सेती मिस्र कहना चाहिये और अशुद्ध पुंज के उदय सेती सांस्वादन गुणस्थान को फरश के मिथ्यात्व दृष्टि होता है तथा और भी कुछ विशेषता दिखलाते हैं प्रथम सम्यक्त पाये बाद जीव सम्यक पाते के साथ देश वृतिपणा प्राप्त कर लेता है वही बात सतक वृहत चूरणी में लिखी है ॥

गाथा—उवसम संम्मदिट्ठी अन्तर करणठिओ कोई देश विरियंपी ।
लहई कोई वमत्त भावंपी सासायणों पुण न किपि लहे ॥

अर्थ—कर्म ग्रन्थ के अभिप्राय से कहते हैं उपसम समकित दृष्टि जीव अन्तकरण में रहके कोई जीव देश वृत्ति प्राप्त कर लेता है कोई प्रमाद भाव याने प्रमादी साधू छट्ठे गुण स्थानक में पहुंच जावे मगर सांश्वादन को अंगीकार नहीं करे । अब सिद्धान्त के अभिप्राय से दूसरी बात दिखलाते हैं कोई अनादि मिथ्या दृष्टि जीव ग्रन्थी भेद करके उस माफिक तीव्र परिणाम से तप करके अपूर्व करण में चढ़ करके मिथ्यात्व से आदि ले करके तीन पुंज करे वहां पर अनुवृत्ति करणसक्ती करके शुद्ध पुंज पुदगल को भोगता हुआ उपसम सम्यक पाये विना प्रथम सेती क्षयोप समिक सम्यक्त दृष्टि हो जाता है और कोई भी जीव यथा प्रवर्त्ती आदि तीनों को क्रमशः करके अन्त करण के प्रथम समय में उपसमय सम्यक्त कर लेता है तीन पुंज यह नहीं करता वहां पर उपसम सम्यक्त संगीर के अवश्य मिथ्यात्व में चला जावे विशेष तत्व केवली माहाराज जान अब यहां पर कल्प भाष्य के अनुसार से तीन पुंज संक्रम की विधी दिखलाते हैं मिथ्यात्य के पुदगल के दलियों को खेंच करके सम्यक्त दृष्टि जीव प्रवर्ध मान परिणाम करके सम्यक्त को मिस्र में संक्रमावे याने डाले और मिस्र पुदगलों को सम्यक्त दृष्टि सम्यक्त में डाले मिथ्यात्व दृष्टि मिथ्यात्व में डाले सम्यक्त पुदगलों को मिथ्या दृष्टि मिथ्यात्व में डाले परन्तु मिस्र में नहीं डाले फिर भी कहते हैं कि मिथ्यात्व क्षय नहीं होने से सम्मयक्त दृष्टि नियम करके तीन पुंज करके मिथ्यात्व क्षय होने से दो पुंज करे मिस्र क्षय होने से एक ही पुंज करे और समस्त क्षय होने से क्षेपक होजावे फिर भी कर्म ग्रन्थ के अभिप्राय दिखलाते हैं प्रथम प्राप्त किया है सम्यक्त को जिस जीव ने सम्यक्त को त्याग करके मिथ्यात्व में चला गया वहां पर फिर भी सर्व उत्कृष्ट स्थिति की कर्म प्रकृति बांध लेवे और अब का अभिप्राय दिखलाते हैं । फिर भी कर्म ग्रन्थ का अभिप्राय दिखलाते हैं

प्रथम प्राप्त किया है सम्यक्त को जिन जीव ने सम्यक्त को त्याग करके मिथ्यात्व में चला गया वहां पर फिर भी सर्व उत्कृष्ट स्थिति की कर्म प्रकृति को बांध लेवे अब सिद्धान्त का अभिप्राय दिखलाते हैं ग्रंठी भेद करके सम्यक्ती मिथ्यात्व में चला भी गया तोभी उत्कृष्ट स्थिति का वंन्ध नहीं करे सम्यक्त के विचार में बहुतसी चरचा है परन्तु ग्रन्थ बढ़ जावे इस वास्ते नहीं लिखा और ग्रन्थान्तर से देख लेना। अब कहते हैं कि कितने प्रकार का सम्यक्त होता है ऐसी शंका करने से उसका समाधान करते हैं॥

गाथा—एकविह१दुविह२ तिविह३ चउहा४ पंचविह दशविह सम्मं॥
होई जिणणाय गेहिं इयभणियं णंतना णिहिं॥

अर्थ—एक प्रकार का सम्यक्त दो प्रकार का सम्यक्त तीन प्रकार का चार प्रकार का पांच प्रकार का या दश प्रकार का सम्यक्त यावत अनंत ज्ञानियों ने कहा है अब यहां पर एक प्रकार का सम्यक्त किसे कहते हैं केवल तत्त्व रुची रूप सम्यक्त सर्वज्ञों का कहा हुआ जीवा जीवादिक पदार्थों के विषय सम्यक्त सिद्धान रूप तत्त्वों को कहते हैं उसको एक प्रकार का सम्यक्त कहना चाहिये. अब दो प्रकार का सम्यक्त दिखलाते हैं द्रव्य करके या भाव करके जानना वहां पर विशुद्ध विशेष करके शुद्ध करदिया है मिथ्यात्व पुद्गलों को जिसने उसको द्रव्य सम्यक्त कहते हैं फिर जिसके आधार भूत से पैदा हुआ जिनोक्त तत्त्व रुची का परिणाम जिसको भाव सम्यक्त कहते हैं फिर भी विशेषता दिखलाते हैं जो परमार्थ को नहीं जानता है ऐसा भव्य जीव को जिन वचन का तत्त्व सिद्धान होना उसको द्रव्य सम्यक्त कहते हैं और फिर जिस जीव को परमार्थ का ज्ञान होवे उसको भी भाव सम्यक्त कहना चाहिये तथा निश्चय और व्यवहार भेद करके दो प्रकार का सम्यक्त होता है वहां पर ज्ञान एक, दर्शन दो, चारित्र तीन ये तीन मई जो आत्मा का परिणाम है उसको निश्चय सम्यक्त कहते हैं ज्ञानादिक परिणाम से आत्मा भिन्न नहीं है इस वास्ते आत्मा ही निश्चय सम्यक्त है वही ग्रन्थान्तर में दिखलाया है॥

श्लोक—आत्मईव दर्शनं ज्ञानं चारित्रा निश्च वायतेः।
यत्त दात्मक एवै स शरीर मधितिष्ठति॥१॥

अर्थ—आत्मा ही दर्शन और ज्ञान है चारित्र भी आत्मा के आधीन है जो कुछ है सो शरीर को धारण करने वाला आत्मा ही है फिर भी कहा है कि निश्चय करके देव भी निसपन्न भया था या वह स्थिती स्वरूप वो जीव ही है तथा निश्चय करके गुरू भी

तत्त्व रमणता पूर्वक अपना जीव ही है तथा फिर निश्चय नय करके धर्म भी अपने आत्मा में ही है कारण जोवीआत्मा का धर्म ज्ञान दर्शन चारित्र ही है अन्य नहीं ऐसा तत्त्व का सिद्धान्त है जिस से उसको निश्चय सम्यक्त कहते हैं यह सम्यक्त ही मोक्ष का कारण है कहा भी है कि जीव का स्वरूप जाने विना कर्म क्षय रूप मोक्ष नहीं हो सक्ता सम्यक्त का स्वरूप दिखलाते हैं देव तो अर्हंत माहाराज और गुरू माहराज उत्तम धर्म उपदेश का दान देके मोक्ष मार्ग को दिखलाने वाले धर्म के केवलियों का कहा हुआ यह तीन तत्त्व का श्रद्धा रखना सात नय सहित चार प्रमाण चार निक्षेपा इन्हों करके जो श्रधान हैं उसको निश्चय सम्यक्त कहते हैं निश्चय समकित का कारण भूत व्यवहार सम्यक्त भी अंगीकार करना चाहिये इति रहस्यम अथ यहां पर शुद्ध देव का स्वरूप लिखते हैं जिन्हों का राग और द्वेष और मोह क्षय हो गया है उनको शुद्ध देव कहना चाहिये और हेम कोश में श्री हेमचन्द सूर्य पुज्य ने ऐसा लिखा है ॥

श्लोक—अर्हन जिन पारगत स्त्रिकाल वित क्षीणाष्ट कर्मा ।
परमेष्टिधी स्वरा शंभू स्वयंभूर्भगवान जगत प्रभू ॥
स्तीर्थंग कर तीर्थंकरो जिने स्वर स्याद द्वाद भयदाः ।
सर्वासर्वज्ञा दर्शी केवलिनो देवाधि देववोधित पुरुषोत्तम वीत रागत ॥

अर्थ—१ अर्हन, २ जिन, ३ पारगत इन तीनों काल के जानने वाले आठ कर्म के क्षय करने वाले परमेष्टी अधीश्वर शंभूस्स्वयंभू भगवान निर्थ कर स्यादवाद अभय दान देनेवाले सर्व जानने वाले सव देखने वाले देवाधि देव बोधबीज को देने वाले पुरुषों के वीच में उत्तम वीतराग और आत्म इत्यादिक स्वदेव का नाम है हेम कोष में लिखा है फिर साद विवाद रत्नाकर में आप्त का स्वरूप दिखलाया है ॥

टीका—आप्त स्वरूपम प्ररूपयन्ती अविधेयंग वस्तु यथा वस्थितंग यों जानाति सै आप्तः यदवा अप्यते प्राथव्य अर्थे अनेनेती आप्त यदवा आदि रागादि दोप क्षय साव्दित यश्सेत परसनादि त्वादि आप्त । तथा अठारह दूषण रहित होवे वो शुद्ध देव होते है सो हेमकोश में दिखलाते हैं ॥

श्लोक—अन्तराय दान लाभ बीर्य भोगोप भोगा ।
हासो रत्यरती भीती जुगुप्सा सो कण वचः ॥
कार्मो मिथ्यत्वम ज्ञानमनिद्राचा विरती स्तथा ।
रागद्वेसश्चनोदोसा स्तेसा मष्टा दशा प्यमी ॥

ऐसे अठारह दूषण रहित देव होते हैं परन्तु हरी हरादिक नहीं होते ऊपर लिखे माफिक देवश्रीअर्हंत महराज जानना चाहिये अन्य हरी हरादिक तो राग द्वेष से भरे हुये हैं उनके पास में स्त्री बैठी है कोई के हाथमें भयानक शस्त्र ग्रहण कर रक्खा है कोई माला ही फेरते हैं इत्यादिक राग द्वेष का लक्षण दीखता है इस वास्ते शुद्ध देवपणा नहीं अब वादी कहता है कि रागादिक के चिन्ह सहित हैं तो हमारे को क्या तो फेर उनको उत्तर देते हैं कि राग द्वेष करके दिल जिन्हों का मलीन हो रहा है वो मुक्ति कैसे होंगे जब खुद ही मुक्ति नहीं हो सकते हैं तो फेर दूसरे को मुक्ति कैसे करेंग अब पूर्व वादि कहता है यह देवतो नित्य मुक्ति है यह रागादिक करके लिप्त नहीं हैं उनको उत्तर देते हैं अगर नित्य मुक्त हैं तो उनको भव का अभावहोना चाहिये उन्हों के तो अवतार असंख्यात सुनने में आते हैं ऐसा पुराणों में लिखा है फिर वादी कहता है कि ये मुक्ति देने वाले नहीं हैं तो भी राज्य और धन रोगादिक कष्ट मिटाने वाले इत्यादिक सुख के देनेवाले साक्षात देखते है उसके वास्ते उत्तर देते हैं राज्य जो है वह तो राजा भी दे सकता है और वैद्य लोग रोगादिक कष्ट मिटाते हैं तो उनको भी देव मानना चाहिये अब वादी फिर कहता है कि राजा वगैरह दूसरे का राज्य वगैरह देवे तो कर्म के अनुसार से देते हैं परन्तु उनको कर्म सिवा कुछ नहीं मिल सकता इसी तरह से तुम्हारे भगवान भी देते होंगे परन्तु सर्व राज्य दे नहीं सकते और रोग रहित भी नहीं हो सकते क्यों कि इसमें कर्म की मुख्यता है कर्म जो हैं सो सुख दुख का देने वाला है कर्म के सिवाय कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता इस वास्ते कर्म प्रधान हुआ फिर अनुभव विरुद्ध ये बात है सो पुराणों में लिखी है ॥

श्लोक—यद्यावद्या द्रशंयेन, कृतकर्म शुभाशुभं।
तत्तावत्ताद्रशंतस्य, फलमीशः प्रयछती॥

अर्थ—जिस जीवने जैसा शुभाशुभ कर्म बांधा है उसी माफिक फल ईश्वर भी देता है परन्तु कर्म सिवाय कुछ देता नहीं इस वास्ते शुद्ध देवत्त्यपणा वीतराग में है अब गुरू का लक्षण वतलाते हैं प्रथम तो गूनाम अन्धकार काहै और रूनाम मिटाने काहै अज्ञान रूप अन्धेरे को दूर करते हैं उन्हों को गुरूकहना चाहिये फिर गुरू पृथ्वी काय आदीछः कायका रक्षा करते हैं उत्तमज्ञान के धरने वाले हैं उन्होंको गुरू जानना चाहिये परन्तु ब्राह्मण आदिक में गुरूपणा नहीं कारण सर्व आरंभमें मग्न हुये हैं सदैव छय कायों को मर्दनकरते हैं ग्रहस्थ आश्रम में लिन हैं वो गुरूके योग्य नहीं यहांपर वादीकहताहै कि छयकाय कामर्दन करते हैं तो करो परन्तु ब्राह्मण जाति से

क्या होता है संसकार क्रिया रहित ब्राह्मण भी शूद्र के बतौर जानना चाहिये ब्राह्मण नहीं भी थे परन्तु पारासर विश्वामित्र वगैरह भी पूज्यने योग्य हुये हैं उनको भी पुराणों में पूज्यलिखा है ॥

श्लोक—स्वः पा की गर्भ शंभूतो पारासर महामुनी तपसा ।
ब्राह्मत्रणो जा तः तस्मात जातीर कारणँ ॥

अर्थ—चंडालनी के गर्भ से उत्पन्न हुये पारासर नाम के महांमुनी जो तपस्या और क्रिया करके ब्राह्मण हुये इस वास्ते ब्राह्मण जाति का कोई कारण नहीं ॥

श्लोक—कई वर्ती गर्भ शम्भूतो व्यासो नामि महामुनी ।
तपसा ब्राह्मणो जातां तसमां जानीर कारणं ॥

अर्थ—धीवरनी के गर्भ से उत्पन्न हुये व्यास नाम के महामुनी उन्होंने जप तप दान क्रिया करके ब्राह्मण हो गये इस वास्ते जाति का कोई कारण नहीं ॥

श्लोक—शश की गर्भशम्भूतः सुको नाम महामुनी ।
तपसा ब्राह्मणो जाता तसमां जातीर कारणं ॥

अर्थ—सिसली नाम पशू जानवर होता है उसके गर्भ से उत्पन्न हुए सुक नाम के महामुनी जो तपस्या और क्रिया करके ब्राह्मण हो गये इस वास्ते जाति का कोई कारण नहीं ॥

श्लोक—न ते शाम ब्राह्मणीमाता संस्कारश्चन विद्यते ।
तपसा ब्राह्मणो जाता तसमां जातीर कारणं ॥

अर्थ—इस वास्ते इन्हों की न तो ब्राह्मणीमाता थी और न संसकार आदिक भी नहीं करवाया किन्तु तपस्या करके और क्रिया करके ब्राह्मण हुए इस वास्ते जाति का ब्राह्मण नहीं हो सकता परन्तु तपश्या और क्रिया करके ब्राह्मण होता है फिर ब्राह्मण के लक्षण इस माफिक होते हैं ॥

श्लोक—सत्य ब्रह्म तपो ब्रह्म ब्रह्मचेंद्रिय निग्रह ।
सर्वभूत दया ब्रह्मये तद ब्राह्मण लक्षणं ॥

अर्थ—सत्य बोलना, तप करना, इन्द्रियों को रोकना, सर्व भूतप्राणियों के ऊपर दया रखना यही ब्राह्मण का लक्षण जानना इस माफिक गुण सहित होवे तो ब्राह्मण जानना नहीं तो शूद्र के समान जानना चाहिये फिर भी यहां पर विशेषता दिखलाते हैं

श्लोक—शूद्रोपी शीलसंम्पंन्नों गुणवानब्रह्मणो भवेत।
ब्राह्मणोपी क्रिया हीना शूद्रा वत समो भवेत॥

अर्थ—यदि शूद्र जाति वाला शीलवान होवे गुणवान होवे तो ब्राह्मण तुल्य हो सकता है, ब्राह्मण भी क्रिया हीन होवे तो शूद्र के समान जानना चाहिये इस लिये लिखने का मतलब यह है कि जाति का कोई कारण नहीं है यह भी निश्चयनय करके जानना जो क्रिया वान है वही ब्राह्मण हो सकता हैं ज्ञान की और क्रियाकी मुख्यता सर्व जगह रही हुई है उस ज्ञानक्रिया विना गुरू भी हो गया परंतु तिर नहीं सकता इस लिये आपतो तिरे और दूसरे को तारे वह सच्चे गुरू जानना चाहिये तथा आपतो विशेय सेवन करे और दूसरा भक्त सेवन करे दोनो बराबर हो गये सो दिखलाते हैं॥

गाथा—दुन्नवि विषया सत्ता दुन्नवि धन धन्न संगह समेया।
सीस गुरू सम दोषा तारीजयीभणस को के ण॥

अर्थ—दोनों ही विषय में आसक्त और दोनों के धनधान्व का संग्रह बराबर हो रहा है तथा शिश्य और गुरू के दोप बराबर हो रहे हैं तो वो कौन किसको तार सक्ता है इंस वास्ते तो गुरू शुद्ध माहामुनी को धारण करता हूं तथा धर्म केवल ज्ञानियों का कहा हुआ मुझे प्रमाण है और धर्म प्रमाण नहीं कारण एक मूर्तीपना करके विरुद्ध विपरीत भाषण करनेवाले सर्वज्ञ नाम धराके विपरातकरनेवाले उन्हों की विपरीतता दिखलातेहैं विश्नु मत में विश्नु मूलश्रष्टी कहते हैं और शिवमत में शिवमूल श्रष्टि कहते हैं शुद्ध भी एकत्र जल और भस्म करके हो जाती है मोक्ष भी एकत्र आत्मा की तरफ लौ लगावे तो वो शुद्ध आत्मा हो जाती है फिर नव गुण का उच्छेद करना और असुरों का नाश करना भक्तों को वर देने वाले इन लक्षणों सहित सर्वज्ञ कैसे हो सकते इस वास्ते अज्ञान कथित धर्म तो मेरे कथित माफिक जान लेना चाहिये ऐसे विपरीत भाषण करनेवाले सर्वज्ञ नहीं हो सकते इस वास्ते सिर्फ केवली कथित धरम श्रेष्ठ है यहांपर सुगुरू, सुदेव, सुधर्म, इन तीनों का विपरीतपना भी बतलाया इनको शुद्ध समझना चाहिये और श्रद्धा रखने वाला है उनको

व्यवहार सम्यक्त कहते हैं कारण व्यहार विना भी चलता नहीं शासन की प्रवर्ती तथा तीर्थ की प्रवर्ती व्यवहार से ही हो रही है यदि व्यवहार उठा दो तो तीर्थ का उच्छेद होने का प्रसंग हो जावे इस लिये व्यवहार सम्यक्त की भी मुख्यता होनी चाहिये शास्त्र में भी व्यवहार की प्रशंसा ही करी है सो गाथा द्वारा लिखते हैं ॥

गाथा—जईजिणमयं पवज्जइ, तामाववहार निछयंमुयह।
ववहार उछेए तित्थुछे, ओजओवास्समिति॥ १ ॥

अर्थ—यदि नाम जो जिनमत को अंगीकार करने वाला है और जिसने अंगीकार करा है उसको व्यवहार अवश्य करना चाहिये यदि व्यवहार को उच्छेद कर देवे तो तीर्थ का उच्छेद करने वाला जानना इस लिये एक श्रद्धान रूप एक ही प्रकार का सम्यक्त जानना चाहिये तथा फिर पौद्गलिक अपौद्गलिक भेद करके दो प्रकार का सम्यक्त जानना वहां पर दूर हो गया है मित्थ्यात्व तथा सम्यक्त के पुंजमें रहके पुद्गलों को भोगने का स्वरूप जिसका उसको च्योप समीक पुद्गल कहते हैं तथा सर्वथा मिथ्यात्व मिश्रसम्यक्त पुंजपुद्गलों का च्य उपसम होने से उत्पन्न हुआ केवल जीवपरिणाम रूप चायक उपसमीक अपोद्गलिक सम्यक्त कहना चाहिये तथा फिर निसर्ग और अधिगमभेद करके दो प्रकार का सम्यक्त होता है अब निसर्गसम्यक्त बतलाते हैं वहां पर तीरर्थ करों के वा साधू इत्यादि के उपदेश बिना स्वभाव करके जीव के कर्म का उपसम पणा हो जावे शूद्ध श्रद्धा हो जाना उसको निसर्ग सम्यक्त कहते हैं तथा जो फिर तिरर्थकरों का उपदेश करके तथा जिन प्रतिमा के देखने से व्यवहार के निमित्त आधार से कर्म उप समादिक करके सम्यक्त होना उसको अधीगम सम्यक्त कहते हैं इस तरह से दो प्रकार का सम्यक्त दिखलाया अब तीन प्रकार का सम्यक्त दिखलाते हैं १ कारक २ रोचक ३ दीपक यह तीन भेद करके सम्यक्त दिखलाते है वहां पर जीवों का अच्छा अनुष्टान की प्रवर्ती करावे उसको कारक कहते हैं कहने का मतलव यह है कि परमविशुद्ध रूप सम्यक्त प्रगट होने सेती जैसा अनुष्टान शूत्र में कहा है उसी माफिक करे उसको कारक सम्यक्त कहते है यह सम्यक्त निर्मल चारित्रों में पाता है अन्य में नहीं यथा रोचक किस को कहते हैं कि केवल श्रद्धा पर रूची है आत्मा में रूच गया है तीनो पदार्थ उसको रौचक सम्यक्त कहते हैं उसका अभिप्राय यह है कि केवल धर्म में रूची है परन्तु कर सकता नहीं उसको रोचक कहते हैं यह सम्यक्त श्रेणि कादिक अवृतियों में पावे अव तीसरा भेद दीपक सम्यक्त वतलाते हैं तथा खुद आप मिथ्यात्व दृष्टि है अभ्यव्य वा दूर भव्य है कोई एक अंगार मर्द की तरह से धर्म कथादिक करके जिनोक्त जीव और

अजीवादिक पदार्थों को दूसरों को प्रकाश करे परन्तु खुद प्रकाश नहीं कर सके उसको दीपक सम्यक्त कहते हैं॥

अब वादी शिष्य प्रश्न करता है कि खुद आप तो मिथ्यात्व दृष्टि है उसको सम्यक्त कैसे कहा यहां तो वचन विरोध है अब उत्तर देते हैं कि मिथ्यात्व दृष्टि खुद है उसका परिणाम है सो वचन अंगीकार करने वालों को सम्यक्त का कारण है कारण से कार्य का उपचार कियागया इस वास्ते उपचार याने विवहार नये करके अभव्य में दीपक सम्यक्त पाता है तथा उपसमिप चायक चयोप समिक भेद करके तीन प्रकार का सम्यक्त जानो तथा उपसमिक चायक और चयोप समिक साश्वादन ये चार भेद करके सम्यक्त जानना फिर उपसमीप चायक चयोप समीक साश्वादन और वेदक ये पांच प्रकार के सम्यक्त जानना अब इन्हों का भिन्न भिन्न करके स्वरूप दिखलाते हैं उदीर्ण करके मिथ्यात्व को भोगलिया अथवा चयकर डाला मिथ्यात्व को जिसने परिणाम विशुद्ध करके सर्वथा उपसम गुण प्राप्त हो गया जिनसे जो गुण प्रगट होता है उसको उपसम सम्यक्त कहते हैं यह सम्यक्त किसमें पाता है सो लिखते हैं अनादि मिथ्या दृष्टि गांठ तोड़ने के लिये उपसम श्रेणी प्रारंभकर लिया है जिसको उसको यह सम्यक्त होता है तथा अनंतानुवंधी चार कसाय को चय करे वाद मिथ्यात्वमिश्र और सम्यक्त ये तीन पुंज लच्चण में तीन प्रकृती का चयकरे तथा दर्शन मोहनी कर्म सर्वथा चय होने से जो गुण प्रगट होता है उसको चायक सम्यक्त कहते हैं यह सम्यक्त किस में पाता है जो चपक श्रेणी अंगीकार करने वाले जीवों में पाता है तथा फिर जो उदय में आया मिथ्यात्व उसको विपाक उदय करके भोग रहा है वाद चय करदिया है जिसने कुछ वाकी सत्तामें या उदय में आया नहीं उसमें वर्ते हैं उसको उपसान्त करना चाहिये॥

मिथ्यात्व और मिश्र पुंजको शुद्ध करके शुद्ध पुंजमें मिथ्यात्व को दूर किया जिसने इसी तरह से उदीर्ण करके मिथ्यात्व को चय करदिया जिसने उदीर्णा नहीं करी केवल उपसम भाव से उपसमा रहा है उस गुण से उत्पन्न हुआ उसको चयोप समिप सम्यक्त कहते हैं यह चयोप समीप सम्यक्त किस माफिक होता है सो कहते हैं शुद्ध पुंज लच्चण मिथ्यात्व रहा हुआ है तौ भी अत्यंतनिर्मल वादल रहित आकाश हो जाने से स्वच्छ दिखाई देता है इसी तरह से जान लेना यथावस्थित तत्व रुचि का अच्छादित नहीं होता इसवास्ते उपचार से सम्यक्त कहना चाहिये यहां पर शिष्य प्रश्न करता है कि उपसमीप और चयोप समिप सम्यक्त में क्या अन्तर है और क्या विशेषता है इन दोनों में सो पूछते थके वादी कह रहा है कि दोनों सम्यक्त वालों ने अविशेष करके उदयमें आया हुआ मिथ्यात्व को चय करा और उदय में नहीं आया उसको उपसान्त भाव में रक्खे इस

वास्ते दोनों सम्यक्त का एक ही भाव होना चाहिये हमारा यह प्रश्न है अब गुरू महाराज उत्तर देते हैं कि कुछ भी विशेषता होनी चाहिये क्षयोप समिक सम्यक में मिथ्यात्वका भोगना नहींहै जैसे जङ्गलके छाना याने कंडा उसकी अग्निमें धूम रेखा रहतीहै इसी प्रकार मिथ्यात्व को भोग प्रदेश करके रहा हुआ है तथा उप समिप के विषय तो विपाक कर के प्रदेश कर के सर्वथा मिथ्यात्व का भोग वाकी नहीं रहा. इस वास्ते दोनों सम्यक्त में विशेषता दिखलाई तथा पहिले कह गये हैं कि उपसमिक सम्यक्त को वमन करती समय वाकी कुछ स्वाद मात्र रह गया तव एक स्वादरूप साश्वादन सम्यक्त होता है उपसमिक सम्यक्त से गिरती समय मिथ्यात्व तक पहुंचा नहीं परंतु कुछ सम्यक्त का स्वाद रह गया उसको साश्वादन सम्यक्त कहते हैं तथा फिर क्षेपक श्रेणी को अङ्गीकार करती समय चारों ही अनंतानवंधिया क्रोध को खपावे तथा मिथ्यात्व पुंज और मिश्र पुंज इन दोनों को क्षय करती समय में क्षयोप समिक शुद्ध पुंज उस संवंधी अन्त का पुदगल भोगती समय जो सम्यक्त है उस को वेदक सम्यक्त कहते हैं वेदक पाये वाद लगते समय में अवश्य कर के क्षायक सम्यक्त की प्राप्ती होती है अब पाचों ही सम्यक्त के काल का नियम कहते हैं—

गाथा—अन्त मुहत्तो वसमो छावली सासाण वेयगो।
समओ साहीय तित्ती सायर खइयो दुगुणो खओवसमो॥

अर्थ—उपसमिक सम्यक्त की उत्कृष्ट स्थिति अन्तर महूर्त प्रमाण जानना चाहिये साश्वादन की छः आंवली की स्थिति जानना तथा वेदक की एक समय की स्थिति जानना तथा क्षायक सम्यक्त की स्थिति संसार को अङ्गीकार कर के कुछ अधिक ३३ सागर की स्थिति जानना सर्वार्थ सिद्ध की अपेक्षा कर के समझना परन्तु सिद्धों की अपेक्षा कर के तो आदि है परन्तु अन्त नहीं और क्षयोप समिक की स्थिति क्षायक से दुगुणी समझ लेना चाहिये कुछ अधिक ६६ सागररूप की स्थिति जानना ये स्थिति विजयादिक पंचानोत्तर के विषय दो समय जाने की अपेक्षा से जान लेना अथवा वारवें देवलोक में २२ सागर की स्थिति हैं वहां तिगुणा समझ लेना यहां पर अधिक स्थिति रक्खी हैं सो मनुष्य भव की अपेक्षा कर के जान लेना चाहिये यह उत्कृष्ट स्थिति कही परन्तु जघन्य स्थिति तो प्रथम तीन सम्यक्तकी एक एक समय की स्थिति कही है तथा अन्त के दोनों सम्यक्त की स्थिति जघन्य अन्तर महूर्त की जानना चाहिये इस माफिक सम्यक्त की स्थिति वतला के अब कहते हैं कि इन सम्यक्त में कितने बार कौन सा सम्यक्त पावे सो दिखाते हैं—

गाथा–उक्को सं सासायण उवसम्यिां हुंति पंचवाराओ वेयग।
खयगाई क सि असंख वारा ओ खओव स मो॥

अर्थ—उत्कृष्ट करके इस संसार में सास्वादन सम्यक्त और उपसमिक सम्यक्त ये दोनों पांच दफे उदय आते हैं इसमें एक वार तो प्रथम सम्यक्त का लाभ हुआ और चार दफे उपसम श्रेणी की अपेक्षा करके जान लेना तथा वेदक सम्यक्त और क्षायक सम्यक्त एक दफे आता है तथा क्षयोप समिक सम्यक्त तो बहुत भव की अपेक्षा करके असंख्यात वार आता है यह वात कहके अब फिर कहते हैं कि कौन से गुणस्थान में कौनसा सम्यक्त पावे सोई कहते हैं॥

गाथा–वीयगुणे सासाणो तुरिया ईसू अट्ठीगार चौ चौ सू।
उवस मखायग वेयग खाओवसमा कमा हुंती॥

अर्थ—मिथ्यात्व को आद लेके अयोगी पर्यंत १४ गुणस्थान है तिसमें दूसरे गुनठाने में सास्वादन सम्यक्त होता है तथा चौथे गुनठाने से लेके उपसान्त और मोहनी के अन्त तक उपसमिक सम्यक्त होता है तथा चौथे गुनठाने से लेके ग्यारवें अयोगी के अन्त में क्षायक सम्यक्त होता है चौथे गुनठाने से लेके अप्रमत गुनठाने के अन्त तक वेदक सम्यक्त पाता है इन चारों गुनठानों में क्षयोप समिक सम्यक्त भी हो सकता है अब दूसरी वात कहते हैं प्रथम से ही जीव ने सम्यक्त को त्याग करके फिर सम्यक को ग्रहण करा नहीं उसको अकर्ष संज्ञा कही है ज्ञानियों ने सो आकर्षा निरूपण करते हैं कि एक जीव के एक भव में कितना आकर्षा होता है सो ही लिखते हैं॥

गाथा–तिन्हिंसहस पहुतं सय पहुंतं चहोईं विरइये।
येग भवे आग रीसाये वैया हुंति नायव्वा॥

अर्थ—इन तीन पदार्थों में उत्तमता दिखलाई है जिसमें एकतो भाव श्रुत दूसरा सम्यक तीसरा देश वृती सामायक सहित ये तीनों रहे हुये हैं इन्होंके एक भव में एक हजार प्रथक्त याने दो हजार से लेके नो हजार पर्यंत प्रथक्त का मायना ये हैं कि दो से लेके नौ पर्यंत गिन्ती करना उसको प्रथक्त संज्ञा कहते हैं सर्व वृत्ती के आकर्षे एक भव में सौ प्रथक्त होता है उत्कृष्ट करे तो उसी माफिक जानना और जो जघन्य करे तो एक ही होता है फिर कहते हैं कि संसार में रहा हुआ जीव को सर्व भव के विषय कितना आकर्षा होता है सो दिखलाते हैं॥

गाथा—तिन्ह सहस प्रसंखा सहस पुहतंच होई विरइये ।
नानाभव आग रीशा एवतिया हुंति नाय व्वा ॥१॥

अर्थ—नाना भव के विषय एक जीव को तीनों भाव श्रुत के आकर्षा असंख्याता हजार उत्कृष्ट होता है तथा सर्व वृत्ती के आकर्षा उत्कृष्ट होवें तो एक हजार प्रथक्त होवे तथा द्रव्य श्रुतके आकर्षा अनंते ही हो सकते हैं इतना करके पांच प्रकार के सम्यक्तका स्वरूप कहा अब दस प्रकार का सम्यक्त दस रुचि की अपेक्षा करके कहते हैं ऊपर कह गये हैं उपसमिकादिक पांच प्रकार के सम्यक्त उनके मोटे मोटे दो भेद वतलाये निसर्ग और अधिगम इन दोनों का भेद मिलाने से दस रुचि करके दस प्रकार का सम्यक्त होता है सोई पन्नोना जी में दस प्रकार की रुचि दिखलाई है निसर्ग रुचि से आद लेकरके दस प्रकार का सम्यक्त होता है सो दस रुचि दिखलाते हैं १ निसर्ग रुचि २ उपदेश रुचि ३ आज्ञा रुचि ४ सूत्र रुचि ५ बीज रुचि ६ अभिगम रुचि ७ विस्तार रुचि ८ क्रिया रुचि ९ संक्षेप रुचि १० धर्म रुचि अब प्रथम निसर्ग रुचि का स्वरूप कहते हैं निसर्ग नाम स्वभाव का है उस स्वभाव करके जिनोक्त तत्त्वों के विखे रुचि रहना श्री सर्वज्ञों का कहा हुआ जीवादिक स्वरूप पदार्थ ये इसी तरह से सच कहा है इसमें कोइ प्रकार का सन्देह नहीं इसी तरह तिरथं करों का कहा हुआ १ द्रव्य क्षेत्र ३ काल ४ भाव चार भेद करके नाम स्थापना द्रव्य भाव भेद करके इन चारों पदार्थों को पर उपदेश विगर तथा जाति स्मरणादिक ज्ञान करके वा अपनी बुद्धी पूर्वक श्रद्धा में लावें उसको निसर्ग रुचि कहते हैं अब उपदेश रुचि कहते हैं उपदेश गुरु लोगों का होके श्रद्धा होना गुरू महराज का उपदेश सुन करके तत्त्व रुचि होना कहने का मतलब यह है कि जीवादिक पदार्थों को गुरु छदमस्त होवे वा तिरथंकरों के उपदेश करके श्रद्धा हो जाना उसको उपदेश रुचि कहते हैं अब आज्ञा रुचि दिखलाते हैं आज्ञा सर्वज्ञों का वचन हैं उसी की आज्ञा प्रमाण करनी केवल सर्वज्ञों का वचन सत्य ही है परन्तु उसमें रुचि होना तथा विशेष अर्थ दिखलाते हैं जो भव्य जीव हैं सो देश करके भी राग द्वेष मोह अज्ञान वगैरह को छोड़ता नहीं है केवल तिरथंकरों की आज्ञा में श्रद्धावान है आज्ञा में धरम समझ रहा है तथा स्वयं तो बुद्धि हीन है इस वास्ते कुछ भी जानता नहीं पर केवल गुरू की आज्ञा में रहने सेती काम सिद्ध होगया सो आज्ञा रुचि ऊपर मास तुस साधू का दृष्टान्त कहते हैं एक किसी ग्रहस्थ ने गुरू महाराज के पास धर्म सुन करके प्रति बोध पाके दीक्षा को ग्रहण किया परन्तु उस माफिक तीव्रतर ज्ञानावर्णी कर्म के उदय से गुरू महराज बहुत पढ़ावें पर एक पद भी

सीखना या बोलना नहीं कर सकता तब गुरू महाराज बोले तुम को शास्त्र आता नहीं इस वास्ते मत पढ़ो तुम केवल मारुस और मातुस यह पद पढ़ो परन्तु तो भी वह साधू बुद्धी के मलीन पने सेती उतने वाक्यों को भी पढ़ने समर्थ नहीं हुआ केवल गुरू की आज्ञा प्रमाण करके आत्मनिन्दा करके उत्तम भावना भाता हुआ घनघाती चार कर्मों को खपा करके केवल ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष को गया इस माफिक आज्ञा रुचि जानना चाहिये अब सूत्र रुचि दिखलाते हैं सूत्र कहिये अंग उपंग आदिक लक्षण को सूत्र कहना चाहिये उस करके पैदा हुई रुचि यह भाव जानना चाहिये कि सिद्धान्त अध्यन करते समय उसी सिद्धान्त करके सम्यक प्राप्त हो जाता है प्रसस्थ अध्यवसायों से याने अच्छे अभिप्राय से श्रद्धा हो जाती है गोविन्द वाचक की तरह से सूत्र रुचि जानना जैसे कोइ एक गोविन्द नाम से साक्य मत का भक्त था वह जिनागम ग्रहण करने के लिये कपट से यती होके आचार्यों के पास सिद्धान्त ग्रहण कर रहा है परन्तु अध्यन करती दफे परिणाम विशुद्ध प्रकट होने से सम्यक्त पाके शुद्ध साधू होके आचार्य हो गये इस माफिक सूत्र रुचि समझ लेना अब वीज रुचि दिखलाते हैं जैसे एक वीज के बोने से अनेक वीज पैदा होजाता है इसी माफिक एक पद के अनेक पद का बोध होजाना उस करके रुचि पैदा हुई आत्मा को एक पद संवन्धी रुचि पैदा होने से अनेक पदों पर रुचि होना उसी को वीज रुचि कहते हैं अथवा जल में तेल के विन्दु की तरह जैसे जलके किनारे रहा हुआ तेल का विन्दु सब पानी को ढांक देता है इसी दृष्टान्त करके जानना तत्त्व के एक देश में रुचि हुई थी परंन्तु आत्मा के क्षय उपसम सेती तत्व में रुचि हो गई उसको वीज रुचि कहते हैं अब अभिगम रुचि कहते हैं अभिगम कहिये विशेष जानपना उस करके रुचि होना तथा छय द्रव्य को जानना आचारांग आदि सूत्र का जानपणा उपयादिकादि उपांगों का जानपणा उत्तराधेनादि प्रकीर्ण का जानपणा होना उसको अभिगम रुचि कहते हैं अब विस्तार रुचि कहते हैं विस्तार समस्त द्वादशांगी को सात नय करके भावार्थ को विचार करना तात्पर्य इस का यह है कि जिसने छय द्रव्यों का सर्व परियाय करके सर्वत्र पक्षादि प्रमाण करके सर्व नैगमादि नय करके यथा योग्य जानकार हो जाना उसको विस्तार रुचि कहना चाहिये अब क्रिया रुचि कहते हैं क्रिया किसको कहते हैं कि उत्तम संयम अनुष्टानादिक उसमें रुचि होना इससे कहना का मतलब यह है कि जिसके भाव करके ज्ञान दर्शन चारित्रादिक में रुचि होना उस को क्रिया रुचि कहते हैं अब संक्षेप रुचि दिखलाते हैं संक्षेप नाम संकोच का है उसमें रुचि होना कहने का मतलब यह कि विस्तार अर्थ का जानपणा नहीं है, जो जीव

जिन प्रणित जिन वचन में कुशल नहीं है तथा सोवत याने बोधादिक मत का अभिलाषी नहीं है संक्षेप करके चिलाती पुत्र की तरह से उपसम १ विवेक २ समवर ३ यह तीन पद रूप, धर्म मुनिराय से श्रवण करके रुचि पाके काम सिद्ध करलेना उसको संक्षेप रुचि जानना चाहिये चिलाती पुत्र का दृष्टान्त प्रसिद्ध है इस वास्ते यहां नहीं लिखा ॥

अब धर्म रुचि दिखलाते हैं यहां पर धर्म कौनसा अस्ति कायधर्म तथा श्रुतधर्मादिक में रुचि होना कहने का मतलब यह है कि जो जीव सर्वज्ञों का बतलायाहुआ धर्मास्तिक कायादिक का स्वभाव चलते हुये जीवों को सहाय देना तथाथिर रहेहुये जीवों को सहायदेना तथा अंग प्रविष्ठादिक आगम का स्वरूप जानना तथा सामाइकादिक चारित्र धर्म पर श्रद्धा रखना इस को संक्षेप रुचि कहते हैं यहां पर भिन्न भिन्नकरके सम्यक्त का भेद दिखलाया सो शिष्यकों को समझाने के लिये वारम्वार दिखलाया नहीं तो निसर्ग अभिगम और उपदेश रुचि में सर्व रुचि अन्तर गत जानलेना चाहिये तथा सम्यक्त के और जीव के भिन्नता नहीं हैं गुण गुणी संवंध जानना चाहिये इतने करके दश प्रकार का सम्यक्त दिखलाया तथा सर्व धर्म में सम्यक्त की मुख्यता है सो दिखलाते हैं ॥

गाथा—सम्मत्त मेव मूलं निद्दिठं जिन वरेहिं धम्मस्स एगं ।
पिधम्मकिच्चं नंतं विणासो है नियमा ॥ १ ॥

अर्थ—सम्यक्त ही एकमूल कारण है तिरथंकरोंने सर्व धर्म का मूल दिखलाया है एक भी धर्म कृत्य तथा नियम उस सम्यक्त विना सोभाका देने वाला नहीं हो सकता है अब कहते हैं इस अपार संसार में वहुत भ्रमण करते हुये खेदातुर हो गया भव्यजीव वहां पर ऊपर दिखलाया है नियमनिर्मल सम्यक्त ठहरने के लिये आत्मारूप जमीन को शुद्ध करना जिस में चित्रांम रूप सम्यक्त दुरस्त ठहर सकता है आत्मा की भूमि जवतक शुद्ध नहीं होवे तव तक सम्यक्त रूप चित्राम ठहरना मुश्किल है इस वास्तेजैसे प्रभासकर चित्रकार ने पेश्तर जमीन शुद्ध करी वह जमीन आसा धारण सोभा को धारण किया आत्म शुद्ध विगर कुछ भी धर्म कृत्य सोभा का देने वाला नहीं हो सकता इस वास्ते भव्य जीवों को आत्म भूमिको शुद्ध करने में उद्यम करना चाहिये यहां पर आत्म भूमि को शुद्ध करने के वारे में प्रभापकर चित्रकार का दृष्टान्त कहते इस जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र के भीतर बहुत मनोहर सफेद मकानों की श्रेणी उन में जिन मन्दिरों की श्रेणी करके विराजमान नाना प्रकार के नाग पन्नादिक झाड़ों करके सहित वहुत वृक्षों करके वन शोभित था ऐसा साकेत नाम का नगर होता हुआ वहां पर समस्त शत्रू वृक्षों को उखाड़ ने के समान महावल जैसा याने प्रचंड वायु जैसा महावल नाम राजा राज्य करता था

अब एक दिन किसी समय राजा सभा मंडप में बैठा था उस वक्त में राजा ने नाना देश की खबर लाने वाले दूतसे पूंछा कि अरे दूत मेरे राज्य में राज लीला के योग्य ऐसी कोई वस्तु बाकी रही है तब दूत बोला कि महाराज और तो सर्व है पर एक नेत्र को हरण करने वाली नाना प्रकार के चित्रांम सहित राज्य लीला योग्य चित्र सभा नहीं है ऐसा दूत का वचन सुन करके अत्यंत कौतूहल कर के पूरित है मन जिसका ऐसा राजा प्रधान मंत्री को बुलाके ऐसा हुक्म दिया कि जल्दी से चित्रांम सभा तैयार करो तब मंत्री ने भी स्वामी का हुक्म मस्तिक धारण करके जल्दी से लम्बी विशाल शाला करके सहित नाना प्रकार की रचना करके सहित एक महासभा तैयार कराई तब राजाने विमल और प्रभाप नामके चित्र कर्म में निपुण उन दोनों चित्रकारों को बुलवाया उन को आधा आधा भाग करके सुपुर्द करदी भीतर आड़ी चिक दीवार के लगवादी राजा उन दोनों चित्रकारों को ऐसा हुक्म दिया अहो तुम तुमारा चित्रांम सिवाय दूसरे का चित्रांम नहीं देखना अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार अपना अपना चित्रांम अलग अलग बनाओ ऐसा राजा का हुक्म सुन करके वो दोनों चित्रकार अपनी अपनी बुद्धि से बहुत उमदा चित्राम बनाने लगे इस माफिक काम करते थके दोनों को छः महिने पूरे हो गये अब उन्हों ने जल्दी के बस सेती चित्राम तैयार करे राजा ने उन दोनों को पूछा कि तुम्हारा चित्राम तैयार हो गया तब विमल चित्रकार बोला कि स्वामी मेरा भाग तो तैयार हो गया है तब राजा जल्दी से वहां आकरके नाना प्रकार की चित्राम की भूमि को देख करके प्रसन्न हो गया उसको विमलचित्रकार को बहुत द्रव्य देके उस पर बड़ी कृपा करी राजा ने दूसरे चित्रकार प्रभाषको पूछा कि तुम्हारा चित्रांम तैयार हो गया तब प्रभाष बोला कि महाराज मैंने तौ अभी चित्र का आरंभ नहीं किया केवल भूमि तैयार करी है अब राजा ने भी विचार किया कि किस माफिक जमीन का भाग तैयार करा है सो देखना चाहिये ऐसा विचार करके उस चिक को दूर करके देखते हैं तो रमणीक भूमि भाग में उत्तम चित्रांम देखा तब राजा बोला कि तू मुझको भी ठगता है यहां तो साक्षात चित्रांम दिखाई देता है तब प्रभाष बोला स्वामी यह चित्रका प्रतिबिंब दीखता है मगर चित्राम नहीं है ऐसा कहके उस चिकको उसने पीछे लगादी तब राजा उसके बल भूमिको देख के आश्चर्य पाके फेर चित्रकार से पूछाकि तैंने ऐसी भूमि कैसे रचना करी तब प्रभाष चित्रकार बोला कि महाराज इस माफिक जमीन तैयार करने से चित्राम बहुत अच्छा तैयार होता है ॥

वर्णों की क्रान्ति अधिक दे दीप्यमान होती है देखने वाले मुनीश्वरों का भाव

उल्लास हो जाता है इसमाफिक राजा सुन करके उसके ऊपर अत्यंत कृपा करके बहुत प्रसन्न हो के इनाम वगैरह दिया फेर इसमाफिक कहा कि ये मेरी चित्रसभा इस माफिक रह के अपूर्व प्रसिद्धि की धरने वाली हो याने इसी माफिक रहो यह दृष्टान्त कहा अब इसको द्रष्टान्तिक द्वारा घटाते हैं जो साकेत नाम नगर हैं उसको वड़ेभारी संसार की उपमा दी है और तथा जो महावल राजा है वह उत्तम उपदेश देने वाले आचार्य जानना चाहिये जो सभा है वो मनुष्य गती है जो चित्रकार है सो भव्य जीव है जो चित्रसभा की भूमि है उसके समान आत्मा है और जो भूमि संस्कार है वह सम्यक्त है और जो चित्रांम है वह धर्म है तथा फिरभी नाना प्रकार के चित्र रूप हैं सो नाना प्रकार के प्रणातिपात से रहित होना ऐसा अनेक वृत्त नियम का पालना तथा जहां पर चित्रके उद्दीपण करने वाले सफेद लाल नाना वर्ण के चित्रांम है सो धर्म की शोभाके करने वाले नाना प्रकार के नियम जानना वह भाव का उल्लापपणा है सो जीव का वीर्य है इसी तरह से दृष्टान्तिक दिखाके अब फिर भी पुष्ट करते हैं इसी तरह प्रभापकर चित्रकार की तरह से आत्म भूमि को पंडितजन जो हैं उनको शुद्ध करना चाहिये जिस करके उज्ज्वल नाना प्रकार का चित्र है उसकी शोभा का कुछ वर्णन नहीं इतने करके आत्म भूमि शुद्ध करने के ऊपर प्रभाषक चित्रकार का दृष्टान्त कहा है इस वास्ते कहने का मतलव यह है कि सर्व धर्म कार्यों के विषय केवल सम्यक्त की ही प्रधान्ता दिखलाई अव क्या कहते हैं कि विस्तार रुचि वाले प्राणियों के उपकार के लिये सम्यक्त का ६७ भेद दिखलाते हैं भिन्न भिन्न करके सो गाथा द्वारा लिखते हैं ॥

गाथा—चउसद्दहण तिलिंगे दशविणंय ति शुद्धि पंचगय ।
दोषं अट्ठप्प भावण भूषण लक्खणं पंच वियसंजुक्तं ॥
छविह जयणा गारं छय भावण भावियंच छट्ठाणंइय ।
सत सट्ठी लक्खंण भेय विशुद्धं च सम्मत्तं ॥

अर्थ—परमार्थ संस्तव और परमार्थ ज्ञाति सेवन व्यापन्न दर्शन वर्जन कुदर्शन वर्जन ये चार श्रद्धा जानना चाहिये तथा सुस्रुसा धर्म राग व्यावच यहतीन लिंग जानना चाहिये तथा अर्हंत १ सिद्ध २ चैत्य ३ श्रुत ४ धर्म ५ साधूवर्ग ६ आचार्य ७ उपाध्य ८ प्रवचन ९ और दर्शन १० इन दश पदों की भक्ती वहुमानता करनी इसको दश प्रकार का विनय जानना तथा जिन और जिनमत और जिनमत के विखे रहने वाले साधू साध्वी आदि इन तीनों को छोड़ के और सव असार है ऐसा विचारना उनको

तीन शुद्धी कहते हैं तथा संका और कांक्षा तथा विचिक्सा कुदृष्टि- मसंगसा इन्हों का परिचय इनको ५ दूपण कहते हैं तथा मवचन धर्म कथा वादी नैमेतिक तपस्वी मज्ञत्यादि विद्यावान चूर्ण अजंनादि सिद्ध और कवि यह आठ प्रभाविक जानना चाहिये तथा जिन शासन में कुशलता प्रभावना तीर्थ सेवा और स्थिरता और भक्ती इन पांचोंको सम्यंक्त का भूपण कहते हैं तथा उपसम समवेग निर्वेद अनुकंपा और आस्तायें यह सम्यक्त के पांच लक्षण कहना चाहिये तथा परतीर्थियों को वंदन तथा नमस्कार करना तथा आलाप याने भाषण करना तथा संग लाप याने वारंवार भाषण करना तथा अस्नादिक का देना तथा गंध पुष्पादिक भेजना ये सव सर्व त्याग रूप हैं इनको छः यतना कहतेहैं तथा राजाभियोग गणाभियोग वालाभियोग सूराभियोग का तार वृत्ति याने जङ्गल में रहा हुआ और गुरू का हठ इत्यादिक छः आगार जानना चाहिये तथा यह सम्यक्त चारित्र धर्म का मूल कारण है इन को द्वार के समान जानना चाहिये तथा प्रतिष्ठन आधार भाजन निधान के समान सम्यक्त को जानना चाहिये ये छः प्रकार की भावना वतलाई अब छः स्थानिक वतलाते हैं यह जीव है वह नित्य है वह फेर कर्म भी करता हैं करे हुए कर्मों का भोगने वाला यही जीव है फिर निर्वाणी भी है फिर मुक्ति का उपाय भी है यह जीव अस्तित्वादिक सम्यक्त के छः स्थानिक जानना चाहिये इन ६७ भेदों करके विशुद्ध सम्यक्त होता है यह गाथा का अर्थ निरूपण करा अब इन भेदों को विस्तार करके वर्णन करते हैं परमार्थ नाम तत्व का है जीव अजीवादिक पदार्थ तिन्हों के विपय परिचय रखना वहुमान करना तात्पर्य यह है कि बहुमानतापूर्वक जीवादिक पदार्थों को जानने के वास्ते अच्छा अभ्यास रक्खे यह प्रथम श्रद्धान है तथा परमार्थ जानने वाले आचार्य वगैरह की सेवा भक्ती करना यह दुसरा श्रद्धान है तथा नष्ट होगया है सम्यक्त जिन्हों से ऐसा निन्हवा आदिक चिन्हों का परिहार याने त्याग करना यह तीसरा श्रद्धान है तथा कुत्सित दर्शन खोटा है दर्शन जिनों का ऐसा वौद्धादिक उन को त्याग करना यह चौथा श्रद्धान है तथा जिन करके सम्यक्त की श्रद्धा पुष्ट होवे सो चार श्रद्धा बतलाई सम्यक्त दर्शनियों के गुण की शुद्धकारक परमार्थ संस्तवादिक को सर्वदा अङ्गीकार करना चाहिये तथा दर्शन को मलीन करने वाला कारण भूतविनीष्ट दर्शन वालों का संसर्ग नहिं रखना अगर रक्खे तो प्रधान अमृत वरावर गङ्गाजल है मगर लवण समुद्र का संसर्ग करके जल्दी खारा होजाता है इस वास्ते सम्यक्तवान कुदृष्टि गुणहीन की शोहबत से विगड़ जावे यह मतलब है, अब तीन लिङ्ग कहते हैं सुनने की इच्छा होवे उस को सुश्रूसा कहते हैं उत्तम वोध होने के वास्ते धर्मशास्त्र सुनने की इच्छा करना यहां फिर भी दृष्टांत द्वारा पुष्ट करते हैं जैसे कोई पुरुष सुखी और पंडित है राग रागिनी का जानने वाला वल्लभ स्त्री कर के युक्त होवे परन्तु

देवता का गांना सुनने की इच्छा करता है उस गाने सेती भी अधिक आनन्द सिद्धांत सुश्रूषा रूप सम्यक्त के होने से भव्य को आल्हाद और खुशी होती है यह प्रथम लिङ्ग जानना चाहिये तथा धर्म चारित्रादिक उस पर राग और प्रीति रखना उस को धर्मराग कहते हैं तथा जैसे कोई ब्राह्मण जङ्गल में चला गया वहां पर भूख प्यास से शरीर चीण होगया परन्तु उस को घेवर खाने की इच्छा हुई यह दृष्टांत दिया हैं उसी तरह से सम्यक्तवान जीव है परन्तु जिस प्रकार कर्म दोष सेती सद् अनुष्ठानादिक धर्म करने को अशक्त है परन्तु धर्म के ऊपर अभिलाषा ज्यादा रखनी यह दूसरा लिङ्ग जानना चाहिये तथा देवगुरू की वेयावच करना उस का नियम करना तथा विशेष अर्थ दिखलाते हैं देव अर्हन्त महाराज तथा गुरू महाराज धर्म उपदेश के देने वाले तथा आचार्यादिक महाराज इत्यादि सब की वेयावच करना तथा वंदना पूजना संस्थारादिक सर्वदान देने वाला यथाशक्ति कर के श्रेणिक राजा की तरह से अवश्य इन पूर्व कृत्य कृत्यों के करने वाला होना चाहिये श्रेणिक महाराज सम्यक्त में बहुत ही दृढ़ रहे हैं यह बातें सम्यक्त बिगर नहीं हो सक्ती हैं जैसे श्रेणिक राजा अव्रृति था मगर हमेशा १०८ नवीन स्वर्ण मई यवका स्वस्तिक चढ़ाना और पूर्व देव आदिक की पूजा करना ये नियम अंगीकार किया उस पुन्य के प्रभाव सेती तिरथंकर नाम कर्म पैदा करा इस तरह से और भव्य जीव को अंगीकार करना चाहिये यह सम्यक्त का तीसरा लिंग कहा यह श्रुसुसादिक तीनों लिंगों कर के सम्यक्त की उत्पत्ति है ऐसा निश्चय वाक्य है अब दस प्रकार का विनय निरुपण कहते हैं १ अर्हंततिरथंकर आठ कर्म रहित हो गये ऐसे २ सिद्ध महाराज ३ चैत्य जिन्द्रे प्रतिमा ४ श्रुत आचारांगादि ११ अंगो उपांगादि उन का विनय करना ५ तथा धर्म क्षमा आदिक उनका विनय वेयावच करना ६ तथा साधू वर्ग साधुओं का समुदाय इन्हों का विनय करना ७ तथा आचार्य महाराज ३६ गुणके धारने वाले गच्छ के मालिक उन्हों का विनय वेयावच आदिक करना ८ तथा उपाध्याय सूत्र अर्थ के पढ़ाने वाले उन्होंका विनय वेयावच करना तथा प्रवचन संघ साधू साध्वी श्रावक श्राविका चार प्रकार का संघ है उनका विनय वेयावच करना तथा सम्यक्त दर्शन कहिये उत्तम सम्यक्त दर्शन रूप सम्यक्त का विनय वेयावच करना तथा अभेद उपचार सेती जो सम्यक्त वान है वही दर्शनवान जानना चाहिये यह ऊपर कह आये हैं कि अर्हंतादिक दस स्थानों के विषय भक्ती करना सामने जाना आसन देना इस माफिक वाह्य सूचक सेवा मालूम पड़ती है तथा बहुमान मनमें प्रीतिरखना तथा वर्णन उन्हों का अतिशय और गुणों की तारीफ़ करना तथा अवर्णवाद त्याग करके तथा अपने आत्मा की तारीफ रहित होकें तथा उड्डाह कामों का गोपक होना चाहिये सम्यक्ती को चार

तथा आसातना का त्यागरूप प्रतिकूल मन वचन काया करके त्याग करे इतने करके दस स्थान संबन्धी है इस वास्ते दस प्रकार का दर्शन कहा यह दर्शन विनय भी सम्यक्त विगर नहीं हो सक्ता है इस वास्ते दर्शन विनय जुदा बतलाया है अब क्या कहते है कि विनय के दस भेद कहे उसके भीतर चैत्य विनय कहाहै वहांपर चैत्य तो कहे और जिन विंब कितने कहे तथा मन्दिर इन सबका क्या स्वरूप है ऐसी संका करी उससे गुरू महाराजने उसका विस्तार भेद दिखलाया है यहां पर गाथा लिखते हैं ॥

गाथा—भत्ती १ मंगल चेईय २ निसकड़ ३ अनिस्स चेई ।
ये वावी ४ सासयचेइय पंचमम मुग्वदिट्ठं जिन वरिं देहिं ॥

अर्थ—श्री जिन्द्रे महाराज ने पांचप्रकार का चैत्य निरूपण करा है वहांपर घर देरासर में यथोक्त लक्षण करके सहित निरन्तर तीनों काल में पूजा तथा वंदनादिक के वास्ते जिन प्रतिमा को बनवाई उसको भक्ती चैत्य कहते हैं तथा घरके दरवाजे के ऊपर तिरछे काष्ट के मध्यभाग में निसपन्न किया है जिन विंबको तिस को मंगल चैत्य कहते हैं सो दृष्टान्त द्वारा लिखते हैं मथुरा नगरी में घर घर में मंगल के निमित्त उतरंग लकड़े के विषय जो जिन प्रतिमा स्थापिन करी अगर नहीं करे तो मकान गिर जावे सोई श्री सिद्ध सेनाचार्य ने कहा भी है ॥

गाथा—ज़म्मी श्रीपास पड़िमं संतिकये करइ पड़ी गीह ।
दुआरे अज्ज बिजणा पूरितं महूर मधन्नानपे छंती ॥

अर्थ—इस का मतलब यह है कि जो काष्ट पर जिन प्रतिमा है वह सान्ती की कर ने वाली जानना चाहिये घर के दरवाजे के विभाग में स्थापिना करते हैं उन को धन्यवाद है वह जिन मूर्ती का हमेशा दर्शन करते हैं और जो पापी होता है वह जिन प्रतिमा का दर्शन नहीं कर सक्ता तथा फेर भी विशेषता बतलाते हैं हर एक कोई गच्छ सम्बंधी चैत्य होता है उसको निसिरा कृत चैत्य कहते हैं वहां पर उस गच्छ के आचार्यादिक प्रतिष्ठादिक कार्य करते हैं और गच्छ वाले वहां पर कोई भी प्रतिष्ठादिक नहीं कर सकते तथा इस से विपरीत अनिस्रा कृत चैत्य कहते हैं वहां पर सब गच्छ के नायक पद के धरने वाले प्रतिष्ठा तथा मालारोपनादिक क्रिया कार्य कर सकते हैं जैसे श्रेत्रूंजै मूल मन्दिर में सर्व आचार्यों का प्रतिष्ठा कराने का अधिकार है तथा पांचमा सिद्धायतन सास्वता जिन मन्दिर जानना चाहिये अथवा प्रकारान्तर कर के पांच चैत्य कहते हैं (१) नित्य चैत्य (२) अनित्य चैत्य (३) भक्ती चैत्य (४) मङ्गल चैत्य (५) साधर्म चैत्य इन भेदों कर के सहित पांच भेद जानना चाहिये वहां पर नित्य चैत्य तो सास्वाते मन्दिर तो देव लोकादि में रहे हैं तथा भक्ती कृत चैत्य भरत महाराज

ने वनवाया अष्टापद पर्वत ऊपर वनवाया वह निश्राकृत और अनिश्राकृत भी है तथा मङ्गल के वास्ते वनवाया उस को मङ्गल कृत चैत्य कहते हैं तथा मथुरा वगैरह नगरी में दरवाजे पर स्थापिन करे जिन प्रतिमा जी को दर्शन के लिये वीरत्वक मुनी का पुत्र रमणीक देव घर में अपने पिता की मूर्ति स्थापन करी उस को साधर्मिक चैत्य भी कहते हैं इस का विशेष मतलव दृष्टान्त से वतलाते हैं वारतक नामक नगर उस में अभय सेन नामक राजा तिस के वारतकना में उत्तम बुद्धि का निधान मंत्री था वह मंत्री एक दिन के समय में गामांतर सेती कोई पाहुना आया उस के साथ वार्तालाप करते हुए अपने दीवानखाने की जमीन पर वैठे हुए थे उस समय में एक धर्म घोष नामें महा मुनी महाराज भिक्षा ग्रहण करने के लिये उस मंत्री के घर पधारे तव उस मंत्री की स्त्री मुनी को भिक्षा देने के लिये घृत खांड़ सहित खीर का भरा हुआ पात्र उठाया तिस समय में कोई प्रकार कर के उस पात्र सेती खांड़ सहित घृत का विन्दु जमीन पर गिर गया तव उस प्रतें देख कर के वे महात्मा धर्म घोष नामें मुनी महाराज सर्वज्ञोक्त भिक्षा ग्रहण विधी के विषय उद्यम सहित होके छरदित यानेहिंसा दोष युक्तये भिक्षा होगई इस वास्ते मुझ को लेना नहीं कलपे ऐसा मन में विचार कर के भिक्षा ग्रहण किये विना घर से वाहर निकल गये तव वारतक मंत्री दीवानखाने पर वैठा हुआ मुनी को जल्दी निकलते देख कर के विचारने लगा कैसे इन्हों ने मेरे घर की भिक्षा नहीं ली एसा सोच कर रहा था इतने में तो उस जमीन पर खांड़ सहित घृत का विन्दु पड़ा था उस पर मक्खियां वैठ गई उन मक्खियों को भक्षण करने के लिये भग के छछूदर जानवर आई उस छछूदर पर भग के आया सरट जानवर याने कीरड़ा उस को भक्षण करने के लिये भगी विल्ली तथा तिस विल्ली के मारने के लिये भगा पाहुने का कुत्ता तिस का भी प्रति पक्षी भगा दूसरा कुत्ता उन दोनों कुत्तों का आपस में युद्ध हुआ उस पीछे अपने २ कुत्तों की पीड़ा मिटाने के लिये भग के आया मंत्री का आदमी तथा पाहुने का आदमी तव उन दोनों के लठियों कर के महा युद्ध हुआ वारतक मंत्री ने सव आंखों से देखा फिर लड़ाई को दूर कर के मंत्री ने विचार किया कि एक विन्दुमात्र घृतादिक जमीन पर गिरने से किस प्रकार अधिकर्ण अनर्थ हुआ है इसी अधिकर्ण अनर्थ से डर कर के मुनी ने भिक्षा ग्रहण करी नहीं अहो सुदृष्टीवान भगवान का धर्म उत्तम है भगवान वीतराग विना इस प्रकार धर्म उपदेश निर्दोष करने को अन्य कोई भी सामर्थवान नहीं इस लिये मुझ को भी वीतराग देव की सेवा करनी चाहिये इन्हों का कहा हुआ अनुष्ठान क्रिया पालना उचित है एसा विचार कर के वह मंत्री संसार सुख से विमुख होके सुभ ध्यान सहित उस को जातीस्मरण ज्ञान होगया उसी समय में सासन देवता ने ओघामूपत्ती दिया साधू का भेष ले कर के उसी वक्त में घर छोड़ कर के और जगह विहार कर गया अनुक्रम

से दीर्घ काल तक संजम पाल कर के और अन्त में केवल ज्ञान उपार्जन कर के वारतक नामें नगर में वारतक मंत्री मोक्षपधार गये तब उस का पुत्र स्नेह पूर्वक सुबुद्धी नामक एक रमणीक देव घर बनवा के उस में रजोहरण मुख वस्त्रिका सहित इत्यादिक परिग्रह धारक अपने पिता की प्रतिमा उस मन्दिर में स्थापन करी वहां पर शाला वनवाई उस का नाम साधर्मी शाला शास्त्र में कहते हैं इतना कर के वारतक कथानक साधर्मी चैत्य ऊपर दिखलाई गई इतने करके पांच प्रकार का चैत्य दिखलाया अब इन चैत्यों में भक्ती इत्यादिक चार प्रकार के कहे उस में कृतिम याने वनवाये भये इस वास्ते संख्या में न्यूनाधिकपना होता है तथा सास्वते जिन चेत्यतो नित्य हैं इस वास्ते तीन भुवन में रहे सास्वते मन्दिरों की तथा विंवों की संख्या कम होगी चैत्य वंदन के भीतर गाथा रक्खी है सो गाथा द्वारा दिखलाते हैं।

गाथा—सत्ताणवइ सहस्सा लक्खाछप्पन्न अठकोडी ओचउस याछाया सिय तिल्लुके चैय वन्दे वंदे नौ कोड़ी सयं पणवीसं कोड़ी लक्खते वन्ना अट्ठावीस सहस्सा चौसै अट्ठासिया पडिमा

अर्थ—८ करोड़ ५६ लाख ९७ हजार ४ सौ ८६ इतना तीन लोक में चैत्य है उन्हों को वन्दना करता हूं तथा २५ करोड़ अधिक ६ सौ कोटि ५३ लाख २८ हजार ४ सौ ८८ इतनी सास्वती जिन मन्दिर में जिन प्रतिमा है उनको नमस्कार करता हूं ये दो गाथा का अर्थ कहा तथा ऊपर कह आये हैं तीन भुवन के विषय सास्वते जिन मन्दिर तथा विम्ब रहे हैं सो दिखलाते हैं वहां अधोलोक के विषय दक्षिणोत्तर दिशा के विभाग में भवनपत्तियों के दशनिकाय के विषय सर्व संख्या करके ७ कोट ७२ लाख अधिक भवन रहे हैं एक एक भवन में एक एक चैत्य होने से तथा अधोलोक में सर्व चैत्य ७२ लाख अधिक ७ करोड़ प्रमाण है तिस चैत्यों के अन्तरगत सर्व संख्या करके ८ सौ करोड़ १३ करोड़ ७६ लाख प्रति चैत्य में एक सौ आठ विम्ब होने से इतने होते हैं अब तिरछे लोक में पांच मेरू में ८५ चैत्य हैं सो दिखलाते हैं मेरूप्रति में चार चार वन हैं उन बन में चार चार दिशा में चार चार चैत्य हैं फिर मेरू में एक एक चूलिका तिस पर एक एक चैत्य रहा है इस तरह से एक एक मेरू में सत्रह सत्रह चैत्य जानना सर्व मिलाने से ८५ हुये तथा प्रति मेरू के विदिशा विभाग में चार चार होने से २० गजदन्त पर्वत रहे हैं उसपर २० चैत्य जानना तथा पांच देव कुरू पांच उत्तर कुरू के विषय जम्बू सालमी आदि लेके दस वृक्ष हैं वहां पर दस चैत्य जानना तथा ८० वक्षार पर्वत हैं महाविदेहहादिक में सोलह सोलह संख्या होने से तिनके ऊपर ८० चैत्य हैं तथा प्रतिमहाविदेह में वत्तीस वत्तीस होने सेती फिर भरत में और ऐरावत में एक एक चैत्य जानना तथा १७० दीर्घ वैताढ पर्वत हैं जिन्हों के विषय १७० जानना तथा

जम्बू द्वीप में छः खंड होने से धातरी खंड पुष्कराधे खंड इनकी बारह २ संख्या होने से तिस प्रमाणे कुलगिरी तिनों के विखै ३० चैत्य जानना तथा धाती खंड पुष्कारध में दो दो इच्चुकार पर्वत हैं तिन चारों के ऊपर चार चार चैत्य जानना तथा समय खेत्र के सीमाकारी मानुसीतर पर्वत के ऊपर चार चार दिशा में चार चार चैत्य हैं तथा नन्दीस्वर नामें अष्टम द्वीप वहां पर ५२ चैत्य हैं सो इस प्रकार हैं पूर्व दिशा नन्दीसुर के मध्यदेश में अंजनवरणा अंजनगिरि पर्वत है उसके चार चार दिशा में चार बावड़ी के मध्य में चार स्वेत वर्णदधि मुख पर्वत है तथा उसी के चारों दिशा में दो दो होने से आठ आठ प्रमाणें रतिक पर्वत रहा है यह सब मिलाने से पूर्व दिशा में १३ होते हैं इती तरह से दच्चिण, उत्तर, पश्चिम यही तीनों दिशा में कह गये माफिक तेरह तेरह पर्वत मिलाने से ५२ पर्वत होते हैं तिनों के ऊपर एक एक चैत्य होने से ५२ चैत्य होते हैं तथा ग्यारहवें कुंडलदीप में चार दिशा में चार चैत्य जानना तथा तेरवें रुचिक द्वीप में चार दिशा में चार चैत्य हैं इस तरह से सर्व संकलना करके तिरछे लोक में ६३ अधिक ४ सौ चैत्य होते हैं उन चैत्यों के भीतर चार ऊपर ५ हजार बिम्ब की संख्या होती हैं यहां भी एक एक चैत्य में १०८ बिम्ब होने से अब उर्धलोक में सौ धर्म देवलोक सेती लेके पांच अनुत्तर तक ८४ लाख ९७ हजार २३ इतना विमान जानना एक एक विमान में एक एक चैत्य होनेसे ८४ लाख ९७ हजार २३ इतने चैत्य हैं तिनके भीतर बिम्ब कितने हैं सो कहते हैं ५१ करोड़ ७६ लाख ७८ हजार ४ सौ ८४ बिम्ब हैं एक एक चैत्य १०८ बिम्ब होने से इस प्रकार तीन लोक में रहे हुए सास्वते जिन सम्बन्धी चैत्य तथा बिम्बों की संख्या मिलाने से सत्तान्वे सहस्सा इत्यादिक दो गाथा में संख्या बतलाई सो दिखाई यहां पर चैत्य तथा बिम्ब की संख्या अविसंवाद करके समझाना तथा कितनेक आचार्य विसमवाद स्थान को अंगीकार करके ऊपर बतलाये गये हैं संख्या उसकी अपेक्षा करके अधिक भी चैत्य और बिम्ब की संख्या निरूपण करी है सो दिखलाते हैं संघाचार नामें चैत्य वन्दन भाष्यवृत्ता में लिखा है॥

गाथा—सगकोडी लक्खवी सयरी अहोयतिरी येदुती सपण सयरा
चुलसीलक्खा सगनवई सहस्सेते वीसु वरिलोये तेरस कोडी-
सया कोड़ी गुण नवई संड्ढिलक्ख अहलोये तिरये तिलक्ख
तेणवई सहस्स पडिमा दुस्सय चत्तावावननं कोडीसयं
चउणवईलक्ख सहस चउयाला सत्तसया सट्ठिजु आसासय
पडिमा उवरिलोये॥

अर्थ—७ करोड़ ७२ लाख अधोलोक में चैत्य रहे हैं भवन भवन में एक एक संख्या जानना अव तिरछे लोक में ३२ से ७५ ऊपर इतने चेत्य हैं पांच मेरू वीस गज दन्ता पर्वत जम्बू सालमलीका आदि लेके दस वृक्ष ८० वस्कार गिरि १७० दीर्घ वैताढ गिरि ३० कुल गिरि चार इच्छुकारगिर और मानसोतर पर्वत नन्दीसुर, कुंडल गिरि, रुचिक पर्वत इत्यादिक अविसंवाद स्थानों के विखै चार सौ त्रेसठ पहिले कहगये हैं उसी प्रमाण जानना वाकी संख्या करके चैत्य विसंवाद ठिकानोंमें वरते सो दिखलाते हैं पांच मेरु की अपेक्षा करके पांच भद्रसाल वन के विखै आठ आठ कूट हैं तिनके ऊपर जुदे जुदे एक २ चैत्य अंगीकार करने से ४० चैत्य जानना तथा तीन सौ अस्सी ऊपर संख्या प्रमाण तथा गंगा, सिन्धु आदि नदी प्रपात कुंड के विखै तीन सौ ८० चैत्य कहे हैं तथा ८० प्रमाणे पद्म द्रहादिकों में ८० चैत्य जानना तथा ७० प्रमाणे गंगा नदी महानदी के विखै ७० चैत्य जानना तथा ५ देव गुरू के विखै ५ उत्तर कुरू में दस चैत्य जानना तथा हजार कंचन गिरी के विखै एक हजार चैत्य जानना तथा वीस यमल गिरी के विखै बीस चैत्य जानना तथा बीस वैताढ में याने गोल वैताढ में वीस चैत्य जानना तथा जम्बू सालमी आदि मूल दस वृक्षों के विखै दस चैत्य जानना परन्तु प्रथम अविसवादी स्थान के चैत्य गिनाये हैं लेकिन उनके परिकर भूत ११ से ६० प्रमाणे जो लघु जम्बू को आदि लेके किर्णों के विखै उक्त प्रमाण चैत्य ग्रहण करा तथा ३२ राजधानी के विखै ३२ चैत्य जानना ये विसम्वाद स्थान की संख्या मिलाई तव ३२ से ७५ अधिक चैत्य जानना अव उर्ध लोक में ८४ लाख ९७ हजार २३ इतने चैत्य कहे प्रति विमान में एक एक चैत्य होने से इस प्रकार प्रथम गाथा का अर्थ कहा अव दो गाथा कर के कह गये हैं चैत्य उन्हों का अनुक्रम कर के विंव संख्या कहते हैं अधोलोक के विखै १३ सौ कोटि ५१ कोटि ६० लाख प्रतिमा हैं एक एक चैत्य में १८० विंव संख्या अङ्गीकार करने सेती तथा तिरछे लोक में ३ लाख ९३ हजार २ सौ ४० प्रतिमा जानना तथा नन्दीश्वर द्वीप रुचिक कुंडल द्वीप वगैरह में ६० चैत्यों के विखै प्रत्येक प्रत्येक १ सौ २४ अङ्गीकार करने से वाकी के स्थानों में रहे हुए २७ सौ ५२ चैत्यों के विखै जुदे जुदे १ सौ २० अङ्गीकार करने से जानना यथा ऊपर लोक के विखै ५२ कोटि अधिक १ सौ कोटि ९४ लाख ४४ हजार ७ सौ ८ इतनी सास्वती प्रतिमा रही हैं वारह देव लोक के विखै जो चैत्य हैं उन्हों में जुदे जुदे १८० विंव अङ्गीकार करने सेती जानना तथा नौग्रिवेक पंचानुत्तर के विखै जो चैत्य हैं उन्हों के जुदे जुदे १२० विंव अङ्गीकार करने से जानना ये दूसरी तीसरी गाथा का अर्थ कहा अव सिद्धान्तोक्त रीति से सर्व चैत्य तथा विंवों की संख्या निरूपण दो गाथा द्वारा करते हैं।

गाथा–सव्वेवी अट्ठकोड़ी लक्खा सगवन्नदुस्सय अड नौवा ।
तिहु अण चैयवन्दे असंख्य दहि दीव जोई वणे ॥
पंनरस्स कोडी सियांई कोडी बायाल लक्ख अडवन्ना ।
अड़तीस सहस वन्दे सा सय जिण पड़िमा तिय लोये ॥

अर्थ—सुगमार्थ है परन्तु कठिन शब्दों का अर्थ बतलाते हैं नवरङ्ग कहिये विशेपता समुद्र और द्वीप जोतिपी विमान व्यंतर नगर असंख्याता हैं तिनों के विखै असंख्याता ही चैत्य जानना उन्हों को मैं वन्दन करता हूं तथा यहां पर पहिले करि कूट आदि स्थानों का विसम्वाद बतलाया सो विसम्वाद जम्बू द्वीप पन्नति में नहीं दिखलाया मगर क्षेत्र समासादिक के विखै ये गाथा कही है—

गाथा–करि कूड कुंड दहनई कुरु कंचन जमलस द्दमवीय ढेसू ।
जिण भवन विसम्वाओ जोतं जाणन्ती गीयथा ॥

अर्थ—करि कूट द्रह नदी स्वर्ण पर्वत इनों के विखै जिन भवनों का विसम्वाद स्थान को बहु श्रुत तथा गीतार्थ जानते हैं तथा पहिले ये बात दिखलाई कि हर एक चैत्य में १०८ विंब ग्रहण करा सो जम्बू द्वीप पन्नति आदि सूत्र के अनुसार जानना तथा वैताढ़ में रहे हुए सिद्धायतन, कूट अधिकार में लिखा है

गाथा–तस्णं सिद्धायणंस्सेतीदि सओ दारा पन्नत्तातेणं दारा
पंच धनुसयांई उंढ़ उच्चतेणं अढाई जाई अद्ध कोसं
विखं भेणंदेसूणं कोसं उढं उच्चतेणं जाव भयाये थणं
महं एगेसीद्धातणे पन्नत्ते कोसं आयामेणं अद्ध कोसं
विखं भेणं देसूणं कोस उढंङ्ग उच्चतेणं जावभया
तस्सणं सिद्धायणंस्सतिदिशी तवोदारा पन्नत्ता तेणं दारा
पंच धनु सयाई विखं भेणं तावतियं चेव पवे सेणं सेया
वर कणगथू भी आगा दार वन्नो जाव वण माला
तस्सणं सिद्धाय तणस्स वहु समर मणि जस्स भूमि
भागस्स वहुमज्झ देश भागे तथणं महंयेगे देव छन्दये

पन्नते पंचधनु सयाई आयाम विखं भेणं सातिरे गाई पंच धनु सयाई उढ उच्चत्तेणं सव्वरयणा मये येथणं अट्ठसयं जिण पडिमा यन्नत्ता ॥

अर्थ—उनों का वर्णन करते हैं—

गाथा—तासिणं जिण पडिमाणं इमे आरुये वर्ण वासे पन्नत्तेतं जहातवणिज्ज मया हत्थ तलपादत लो अंका मयाई नक्खाई अन्तों लोहिअक्ख पडिसे काई कणगा मईयो जंघाओ कणगा मयाऊ जाणूं कणगा मयाऊ उरू कणगा मइयो गाय लट्ठिओ तवणि ज्जमया चुच्चुआ तवणिज्य मयाओ नाभियो रिट्ठमई रोमराइओ तविणिज्य मयासिर वत्था सिल्लप्पवाल मया ओट्ठा फलीहमया दन्ता तविणिज्य मई ओजिहा ओत वणिज्य मई तालुआक णगमइयो नासिकाओ अतोलोहि अरक पडि सेगाआ अंकाम-याणी अत्थीणी रिठ मइयाओ ताराओ रिट्ठामयाणी अत्थि पत्ताणी रिट्ठा मईयो ताराओ रिट्ठा मइयो भंमुहाओ कणगा मया सवणा कणगा मइओ निल्लाड पट्टिआओ वैरामइओ सीस घड़िओ तविणिज्य मइओ केशन्त केश भूमि औरिट्ठा मया उवरि मुघया तासिणंजिण घडिमाणं पिट्ठओ पत्तेयं पत्तेयं छत्तधरं पडिमा ओहि मरयय कुन्दी दुप्पगा साईस कोरंट मल्लदामाई धवलाईआय वत्ताई सलिलं धारे माणे ओचिट्ठंति तासिणं जिण घडि माणं उभ ओपासे पत्तेय चामरयारा पडिमाओ पन्नत्ताओ चंदप्पभवइ वेरु लाय नाणा मणि रयण खचिय चित्तडंडाओ सुहरययदीह वालाओ संख कुंद दग रयय अमयम हियफेणं पुंजस

निगासा ओचा मरायोगहाय सलिलविय माणाओ चिट्ठंत्ति तासिणं जिण पडिमाणं पुरओ दो दो नाग पणिमा ओ भूय पडिमाओ जिण जख पडिमाओ कुंधधार पडिमाओ सन्निखिताओ चिट्ठंतिताओणं सव्वरैणा मईयो अच्छाओ जावपडिरुआओ तत्थणं तासिणं जिण पडिमाणं पुरओ अट्ठसयं घन्टाणं अट्ठसयं भिंगाराणं येवं आयं साणं जावलोम हत्थ पुष्प चंगेरिणं लोम हत्थ पुष्प पडल गाणं तेलस मुग्गाणं जाव अंजण समुगाणं अट्ठसयं धूव कडुञ्च गाणं चिट्ठई ॥

अर्थ—इस प्रकार जम्बूद्वीप गत सर्व सिद्धायतनों के विखै प्रत्येक २ जिन प्रतिमा १०८ छट्टे उपांग वगैरह में दिखलाई है इसी के अनुसार तीनों लोकवर्ती सर्व सिद्धायतनों के विखै प्रत्येक १०८ ही जानना चाहिये इस कारण से कम्म भूमि इत्यादिक स्तोत्र के विखै यही संख्या रक्खी है परन्तु जो इस में कमती या वेशी चैत्यादिक कहोगे तो न्यूनाधिक कहने में तो महा दोष पैदा होजाता है ये वात सत्य है परन्तु इसी लिये स्तोत्र के अन्त में तीन लोकवर्ती संकल सास्वती असास्वती जिन चैत्यों को नमस्कार करना जङ्किंचनामतित्थं इत्यादिक गाथा कही है इस वास्ते कोई भी दोष नहीं तत्व का निर्णय केवलीवावहुश्रुत जानते हैं विवाद में सिद्धी नहीं सम्यक्त दृष्टियों को तो इस प्रकार विचारना चाहिये ।

गाथा—तमेवसच्चं निसंकं जंग जिण वरेदहं पव्वेईयं ॥

अर्थ—सोई सत्य है शंका रहित है सो सर्वज्ञों का कहा हुआ अव कहते हैं कि अविसंवाद स्थानों को अङ्गीकार कर के तीन भुवन में रहे हैं सास्वते जिन चैत्य उन का ऊंचा ही वगैरह का प्रमाण कहते हैं वहां पर वारदेव लोक नवग्रैवेक पंचानोत्तर के विखै तथा नन्दीश्वर कुंडल तथा रुचक नामें तीनों दीपों के विषय जो जिन चैत्य हैं वह ऊंचासपणे कर के ७२ जोजन प्रमाणे लम्वासपणें में एक सौ जोजन प्रमाणे और चौड़ा पचास जोजन प्रमाणे जानना तथा कुल गिरी देव गुरु उत्तर कुरु मेरुवन गजदन्तागिरि वखार इक्षुकार मानसोतर के विषय तथा असुरादि दस निकायों के विषय रहे हैं जो चैत्य उन का ऊंचापणा ३६ जोजन का जानना ५० जोजन का दीर्घपणा २५ जोजन

का प्रथुलपणा तथा दीर्घ वैताढ़ के विषय मेरु चूलिका तथा जम्बू आदिक वृक्षोंके विषय जो जिन चैत्य हैं सो ऊंचाईपणें में १४ से ४० धनुक प्रमाणे जानना लम्बाई में दो कोस प्रमाणे जानना चौड़ाई एक कोस की जानना तथा फिर कहते हैं कि नन्दीश्वर रुचक कुंडल इन तीनों द्वीपों में ६० चैत्य रहे हैं उन्हों के प्रत्येक २ चार दरवाजे जानना इन से वितरिक्त याने और अन्य द्वीपों में वहां पर सास्वते जिन चैत्य हैं उन्हों के तीन तीन दरवाजे जानना फिर भी विशेषता दिखलाते हैं सास्वते जो जिन विंब हैं वो रिसभानन चन्द्रानन वारिषैन और वर्धमान ये चार नाम सेती सास्वते जानना इतने कर के सास्वते चैत्य संबंधी वृत्तांत कहे. अब भक्तीकृत असास्वते चैत्य हैं उन के गुण दोष आदिक निरूपण करते हैं भालनासा मुखारविंद और नख हृदय नाभी गुह्य जांघ गोड़ा पिंड़री चरण इत्यादि ११ स्थानों के विषय वासतुक ग्रन्थोक्त प्रमाणे नेत्र कान कांधा हाथ तथा अंगुली वगैरह सर्व अवयवों कर के अदूषितसम चतुर संस्थान संस्थित पालथी काऊ सग कर के विराजमान सर्वाङ्ग सुन्दर विधिपूर्वक चैत्यादिकों में प्रतिष्ठित इस प्रकार श्री जिन विंब की पूजा करे तो सर्व भव्य जीवों के वांछित पदार्थ की सिद्धी होवे कहे हुए लक्षणों से विपरीत होवे तो अशुभ सूचकपणे से अपूज्य जानना चाहिये तथा यथोक्त लक्षण सहित होवे विंब परन्तु एक सौ वर्ष से कमती के हैं लेकिन अवयवों कर के दूषित हैं तो पूजा के योग्य नहीं परन्तु जो उत्तम पुरुषों ने विधी कर के चैत्य में स्थापन किये हैं विंब को मगर एक सौ वर्ष से आगू का तथा अङ्ग विकल भी हैं तौभी पूजने में दोष नहीं वही वात ग्रन्थांतर में वतलाई है ।

गाथा—वरस सया ओ ऊढं जं विंवं उत्तमेहीं सठवियं वियलंगू ।
विपुजई तं विंवं निक्कलं नजओत्ती ॥

अर्थ—एकसौ वरसके ऊपर जिस जिन विंबको उत्तम पुरुषोंने स्थापित करेहैं ऐसे विंब अगर उपांग रहित भी होजावें तोभी पूजा करना चाहिये फिरभी यहां पर विशेषता दिखलातेहैं मुख नेत्र नाक नस कमर वगैरह भंग होगया होतो मूल नायक विंब भी सर्वथा पूजाके अयोग्य है तथा आधार परिवार लांछनादिक प्रदेश में खंडित भी होगया हो तो पूजना चाहिये तथा धातु लेपादिक विंब तो अगर हीनांग होगया हो तो उस को फेर तैयार कर लेवे तो हरकत नहीं मगर काष्ट का रत्न का पाषाण का इन का विंब खंडित होगया होतो फेर दुरुस्त होना अयुक्त है तथा अती अङ्गादिक ठीक नहीं होवे तथा हीन अङ्ग होवे तथा पेट दुर्वल होवे या मोटा पेट होवे तथा दुर्वल हृदय होवे तथा नेत्र हीन होवे तथा तिरछी दृष्टि होवे तथा अधोमुख होवे तथा रौद्रमुखी होवे इस प्रकार प्रतिमा को देखने से भाव

पैदा नहीं होता तथा राजा का भय होवे स्वामी का नास या द्रव्य का नाश होवे तथा शोक सन्तापादिक अशुभार्थ सूचकपणे सेती इस वास्ते सज्जनों के अपूज्य हैं यथा योग्य अङ्गधारक शांत दृष्टि वाले जिन प्रतिमा उत्तम भावसूचक तथा शांति सौभाग्य की वृद्धि कारक इत्यादि शुभार्थ देने वाली प्रतिमा को पूजना चाहिये हमेशा जिस में आनन्द मङ्गल होवे. अब कहते हैं कि गृहस्थ लोगों को अपने घर में जिस प्रकार पूजा करना लायक योग्य प्रतिमा कही है सो दिखलाते हैं।

गाथा—समया वलि सुत्ताओ लवो वल कंठ दंत ।
लाहाणं परिवार माण रहियं घंरमि ना पुयण बिम्ब ॥

गृहस्थ जो हैं उन को पेश्तर दिखला आये हैं दोष रहित १ अंगुल से ११ अंगुल तक उनमान धारक परिवार सहित सोना रूपा रत्न पीतलमयी सर्वाङ्ग सुन्दर जिन प्रतिमा अपने घर में सेवा करना उक्त परिकर तथा मान कर के रहित भी होवे तथा पाषाण लेप दांत काष्ट लोहमयी तथा चित्रामयी इत्यादिक पूर्योक्त प्रतिमा की अपने घर में पूजा नहीं करना चाहिये तथा घर देरासर की प्रतिमा सामने वलविस्तार नहीं करना तो क्या करना चाहिये भाव से हमेशा स्नान करवा के तीन काल में पूजन करना चाहिये तथा ११ अंगुल से अधिक प्रमाणे जिन मूर्ती होवें तो मन्दिर में पूजा करना परन्तु घर देरासर में नहीं तथा ११ अंगुल से हीन प्रमाणे मूर्ती होवे तो मन्दिर में भी स्थापित नहीं करना तथा विधि माफिक पूजा करने वाले को तथा जिन विंब बनवाना तथा दूसरेसे उपदेश देके बनवाना इस प्रकार मनुष्योंके सर्वदा रिद्धी वृद्धी होतीहै यहां पर जिन विंब विचार के बारह में बहुत कुछ वक्तव्यता है सो पंडित जन बड़े ग्रन्थ से जान लेना इतने कर के पांच प्रकार के चैत्य की वक्तव्यता कही अब तिस के विनय का स्वरूप लिखते हैं।

श्लोक—द्वित्रि पंचाष्टादि भेदैः प्रोक्ता भक्ति रनैक धा ।
द्विविधा द्रव्य भावा भ्याम त्रिविधागांदि भेदतः ॥ १ ॥

व्याख्या—यहां पर विनय भक्ती बहुमानता लक्षण सो पहिले दिखला आये हैं परन्तु तिस के भीतर भक्ती के दो भेद भी हैं तथा तीन भेद भी हैं फिर पांच भेद भी हैं तथा आठ भेद भी हैं परन्तु भक्ती अनेक प्रकार की हैं तहां पर द्रव्य १ और भाव २ करके २ प्रकार की भक्ती जानना तथा अङ्ग १ अग्र २ और भाव ३ तहां पर अङ्गपूजा जल विलेपन पुष्प आभरणादि करके होतीहै तथा दुःखसे पाताहै ऐसा सम्यक्त रत्न स्थिर करने वाले विवेकवान गृहस्थ खुद शुचि होके प्रथम बादरजीवों के जैणा के लिये शुद्ध वस्त्रादि करके श्री जिन

समान मुद्रा सहित हैं श्री जिन विंब का प्रमार्जन कर के कपूर १ पुष्प २ केसरा दिसहित गंधोदक वा केवल निर्मल जल कर के स्नान करवाना तथा कपूर केसर चन्दनादिक उत्तम द्रव्य कर के विलेपन करना फिर पुष्प पूजा करना तहां पर सामान्य फूलों कर के पूजा नहीं सोई श्लोक में दिखलाते हैं।

श्लोक—नशुष्कैः पूजयेद्देवं कुसुमैनमहीगतैः नविशीर्णफलैस्पृष्टै नाशुभैं र्नाविकाशिभि ॥ १ ॥ पूति गंधीन्य गंधानि अम्ल गंधानि वर्ज्जयेत कीट कोशापविध्धानि जीर्ण पर्यू षिता निच ॥ २ ॥

व्याख्या—सुष्क फूलों कर के तथा जमीन पर गिरे हुए फूलों कर के तथा सड़े हुए फूलों का फरश होजाने से तथा अशुभ अविकाशी तथा खुशवो में फरक पड़ गया हो तो तथा खराव गंध आती हो तो तथा कीड़ा और सर्प बींद डाला हो तथा सड़ा हुआ तथा पुराना फूल इत्यादि मनाई है तथा फिर भी लिखते हैं कि—

श्लोक—हस्तात्प्रस्खलितं चितौनिपतितं लग्नं कुचित्या दयोर्य- न्मुर्द्धाध्वगतं धृतं कुवसनैना भैरधोयदधृतं स्पष्टं दुष्ट जनैर्धनै भिहतंयद्दूषितं कीटकै स्त्याज्यंत कुसुमं दलं फलमथो भक्तै जिनप्रीतये ॥ ३ ॥

व्याख्या—हाथ सेती चूक गया तथा जमीन पर गिर गया होतथा पैरों में लग गया हो सिर से ऊंचा चला गया हो खराव वस्त्र में रक्खे भये हैं तथा नाभी से नीचे भाग में धरे हुए हों दुष्ट पुरुषों का फर्श होगया हो छेद पड़ गया हो तथा जानवर के खाये भये हों इस तरह के फूल नहीं चढ़ाना चाहिये जो जिन भक्ती के प्रेमी हैं और प्रेम रङ्ग में भींगे हुए हैं ऐसे सम्यक्तियों को फूल चढ़ाना नहीं चाहिये अगर दोष युक्त पुष्प चढ़ाए तो वो नीचपणा को प्राप्त होवे सो श्लोक द्वारा दिखलाते हैं.

श्लोक—पूजां कूर्वन्नङ्ग लग्नै धरायां पतितैः पुनः यः करो त्यर्च्चनंपुष्पै रुचिष्टः सोभिजायते ॥ ४ ॥

व्याख्या—जो फूल पूजा करती समय में अपने शरीर से लग गया हो तथा जमीन पर गिर पड़ा हो अगर ऐसे फूलों से पूजा करे उस को उचिष्ट कहते हैं याने वे

फूल झूठे होगये इस में कहने का मतलब यह है कि बतला आये हैं दोषों कर के रहित इस प्रकार फूल पूजा करने से जिनराज की पूजा के योग्य जानना उस फूल पूजा के प्रभाव सेती धनसार सेठ की तरह से समस्त सुक्ख रिद्धी वृद्धी आदि लौकिक लोकोत्तर सुक्ख जिस से भव्य जीवों के घर में प्रगट होता है तथा दारिद्र शोक सन्तापादिक सब दूर होजाते हैं यह फल तो इस लोक के बतलाये मगर परभव में मोक्ष का सुक्ख मिले अब यहां पर धनसार सेठ का बृत्तांत कहते हैं। कुसुमपुर नाम का नगर में धनसार नामी सेठ तीनों काल में भगवान की पूजा वगैरह क्रिया में उत्कृष्ट था एक दिन अर्ध रात्रि के समय उस सेठ के दिल में विचार पैदा हुआ मैं ने निश्चय कर के पूर्व भव के विषय सधर्म करणी करीं थी जिस के बल से बढ़ती भई रिद्धी मिली अगर इस भव में भी धर्म करणी कर लेऊं तो परभव के बीच में सुक्ख मिले अगर तत्व कर के देखते हैं तो रिद्धी का स्वभाव चंचल है हाथी के कान की तरह से इस वास्ते इस लक्ष्मी को सफल करने के वास्ते परभव में सुख रिद्धी के वास्ते श्री जिन राज का मन्दिर बनवाऊंगा कारण शास्त्र में भी मन्दिर बनवाने का बड़ा फल लिखा है और बड़े पुन्य की प्राप्ती दिखलाई है इस वास्ते मन्दिर बनवाने रूप कार्य कर के अपना मनुष्य जन्म सफल करना चाहिये सकल सामिग्री पाने का सार यही है कि इस माफिक विचार करते २ बाकी सर्व रात्रि पूर्ण करी और सवेरे का समय हुआ जब वह सेठ अपने न्याय से पैदा किया हुआ द्रव्य उस द्रव्य को खरच करने के वास्ते बावन देहरी मंडित श्री जिनराज का मन्दिर बनवाना शुरू करा तब तिस सेठ के पुत्र हमेशा बहुत द्रव्य खर्च होता हुआ देख के इस माफिक बोले कि अहो पिता जी आप ने यह क्या सकल द्रव्य का नाशक निरर्थक कार्य क्यों शुरू करा है हमको तो ये काम रुचता नहीं अगर जो नवीन मंदिर को नहीं बना के अगर दागीना बनवाओ तो कोई कालांतर में मतलब तो देने वाले होवे तो भी अच्छा समझें तौ भी सेठ तिन पुत्रों का वचन सुन अनसुने के माफिक कर लिया बढ़ते हुए परिणामों कर के द्रव्य खरच कर के समस्त मन्दिर तैयार करवाया मगर जिस वक्त पूर्ण हुआ कर्मों के उदय सेती सर्व द्रव्य खरच होगया तब अपने पुत्र अन्य मिथ्यात्वी लोग कहने लगे कि इस ने मन्दिर बनवाया तब इस का धन चला गया तो भी सेठ तो जिन धर्म ऊपर निश्चल चित्त होके अपने द्रव्य के अनुसार थोड़ा २ पुन्य तो करता ही है इस माफिक काल जाते हुए एक दिन में सेठ का धर्माचार्य तहां पर पधारे बन्दना करने के वास्ते सेठ गये तब गुरू महाराज बोले अहो सेठ तुम्हारे सुक्ख है तब सेठ बोला कि आप की कृपा से हमेशा सुख है मगर जिन मन्दिर बनवाने से इसका धन चला गया इस माफिक धर्म की निन्दा कर रहे हैं यह बड़ा भारी दुःख ये मेरा द्रव्य गया उस का कुछ भी दुख नहीं है शुभ कर्मोदय से जीव के बहुत दफै द्रव्य होगया फिर चला भी

जाता है मगर स्वामी ज्ञान वल कर के देखिये मेरा इस भव में अन्तराय मिटेगा कि नहीं यह वचन सुन कर के प्रसन्न हो के ज्ञान वल कर के शुभ का उदय होना ऐसा गुरू महाराज ने देख के धर्म उन्नति करने के वास्ते तिस सेठ को नवकार मंत्राधिराज विधि सहित दिया सेठ भी अच्छे दिन में देव घर में मूल नायक जी के विंब के आगे बैठ के तेले की तपस्या कर के जाप करने लगा पारने के दिन एक अखंडित उत्तम सुगंधि पुष्प माला श्री जिनराज के गले में स्थापन कर के स्तवना करने लगे तब तक उन के आगे धरणेंद्र प्रगट होके वोला कि हे सेठ तुम्हारी भक्ती से प्रसन्न हुआ कुछ मन वंछित मांगो तव सेठ भी स्तुति पूर्ण कर के कहने लगा कि जो तुम प्रसन्न भये हो तो प्रभू के गले में चढ़ाई है फूलोंकी माला तिस का पुन्य मैंने पैदा किया तिस के अनुसार फल देना चाहिये तव धरनेन्द्र वोला कि तिस माफिक देने की शक्ती तो ६४ इन्द्रों की भी नहीं हैं इस वास्ते और मांगो तव सेठ वोला कि माला के भीतर के एक फूल का फल देओ तव इन्द्र वोला कि यह भी मेरी शक्ती नहीं है तो तिस के पत्र का फल दो तव इन्द्र वोला कि मेरी शक्ती विलकुल नहीं है तव सेठ वोला कि इतनी शक्ती तुम्हारे में नहीं है तो तुम अपने ठिकाने चले जाओ तव धरनेन्द्र ने विचार किया कि देवता का दर्श निष्फल नहीं होता है इस वास्ते सेठ के घर में रत्न का भरा हुआ कलशा स्थापन कर के अदृश्य होगया सेठ भी वहां से उठ कर और जहां गुरू महाराज थे तहां पर जाके वन्दना सहित सर्व हाल कह के अपने घर में जाके पारणा करा फिर श्री जिन धर्म की निन्दा करने वाला लड़का उन को बुलवा के पहिले हुआ था वृत्तान्त सव कह के वह द्रव्य दिखला के श्री जिनराज के पुष्प पूजा की महिमा का आनन्द तो दिखला के सर्व कुटुम्ब को श्री जिन धर्म में स्थिर कर के जावज्जीव सुखी भोगी का त्यागी हुआ इतने कर के पुष्प पूजा के ऊपर धनसार का दृष्टान्त कहा ॥ अब आभरण पूजा कहते हैं विवेकी प्राणी श्री जिनराज के विंब के विषय स्वर्णके रत्न के चक्षु तथा श्री वत्स हार कुंडल वाजुवंध छत्र मुकुट तिलकादिक नाना प्रकार का आभूपण खुद चढ़ावे वा अन्य को उपदेश देके चढ़वावे दमयन्ती की तरह से शुद्ध भाव से चढ़ाना चाहिये कि जैसे पूर्व भव में दमयन्ती का जीव वीरमती नामें थी सो रत्न के तिलक करवा के अष्टापद पर्वत के ऊपर २४ तिरथंकरों के ललाट के विषय चड़ाये थे तिस पुन्य के प्रभाव सेती जिस के लिलाट में अन्धकार में सहज प्रकाश हुआ जिस तिलक के प्रभाव सेती जिस समय निकलती थी अन्धकार में उद्द्योत होगया है इस माफिक तीन खंड के मालिक नल राजा की दमयन्ती पटरानी भई इस तरह से और भी भव्य जीव आभरण पूजा कर के नाना प्रकार का सुक्ख पावे इति अङ्ग पूजा कही ॥ अब दूसरी अग्र पूजा कहते

हैं नैवेद्य, फल, अक्षत, दीपादि द्रव्य कर के होती है तहां पर नैवेद्य कैसा प्रधान, खाजा, मोदक, भक्ष, वस्तु तथा फल, नारियल, बीजोरा, अक्षत अपने खाने से भी उत्तम अखंड उज्जवल शालि प्रमुख धान्य श्री जिनराज के आगे चढ़ाना तथा प्रभू के आगे प्रधान जयणा पूर्वक उत्तम घृत का दीपक करना चाहिये परन्तु विवेकियों को उस दीपक कर के घर का काम नहीं करना अगर जो उस दीपक से घर का काम करे तो देवसेनकी माताकी तरहसे तिरयंच योनी को प्राप्त होवे और दुख भोगे कहा भी है—

श्लोक—दीपं विधाय देवानांमग्रत; पुनरेवहिं गृह ।
कार्यं न करत्तव्यं कृते तीरियंग भवंभजेत् ॥ १ ॥

अर्थ—देवों के आगे दीपक कर के अगर उस दीपक से घर का काम करे तो तिरितयं चगती को जाके भजै अब यहां पर देव सैन की माता का दृष्टांत दीपक पुजा पे दिखलाते हैं इन्द्रपुर नगर अजीत सैन नामें राजा देव सैन नामें सेठ परम श्रावक था सदैव धर्म कार्य कर के सुख कर के काल पूर्ण कर रहा था अब तिस ही पुर में एक धन सैन नामें ऊंट का वाहक याने ऊंट फेरने वाला रहता था तिस के घर में एक ऊंटनी देवसैन के घर में निरन्तर आती थी धनसैन ने लकड़ी वगैरह से ताड़ना करी परन्तु वह ऊंटनी उस के घर में नहीं रहै तब देवसैन जिस का मन कि दया से भींजा हुआ चित्त था मोल ले के उस ऊंटनी को ग्रहण कर के अपने घर में रक्खा एक दिन के वक्त में तहां पर धर्म घोषाचार्य पधारे तब बहुत भव्य जीव गुरू महाराज को वंदना करने के लिये गये देव सैन सेठ भी तहां पर गया तब गुरू महाराज ने धर्म उपदेश दिया वो इस प्रकार है—

गाथा—धर्मो जगत; सार; सर्व सुखानां प्रधान हैतुत्वात् तस्पोत्पत्ति र्मनुजात् सारं ते नैवमानुष्यं १ अपिलभ्यते सुराज्यं लभ्यंते पुरवराणिरम्याणिनहिं लभ्यते बिशुध; सर्वज्ञोक्तो महा धर्म्म; १

अर्थ—धर्मोपदेश गुरू महाराज ने कहा कि अहो भव्य जीवो यह धर्म तीन जगत में सार भूत है सर्व सुखों का प्रधान कारण है तिस धर्म से ही मनुष्यों की उत्पत्ति है इस लिये मनुष्य जन्म का सार एक धर्म है और कुछ भी नहीं फिर धर्म कर के राज्य पावे फिर तिस धर्म कर के मनोहर रमणीक पुर मिले इस वास्ते सर्वज्ञों का कहा भया उत्तम धर्म है ऐसा दूसरा धर्म नहीं तथा धर्म को पुष्ट कर रहे हैं गाथा द्वारा—

गाथा—न धम्मकज्जा परमत्थि कज्जं नपाणीहिंसा परमं अकज्जं ।
न पेमरागो परमत्थि बंधो नवोहिलाभो परमत्थि लाभो ॥

अर्थ—धर्म सिवाय अन्य कार्य अच्छा नहीं प्राणी की हिंसा वरोवर अकृत्य नहीं प्रेमराग के वरोवर बंधनहीं वोधिलाभ के वरोबर उत्कृष्ट लाभ नहीं इस वास्ते भव्य जीवों प्रमाद छोड़ करके श्री जिन धर्म के विषय प्रीत करो जिस करके तुमारा सब काम सिद्ध हो जावे अब उपदेश के वाद देवसैन सेठ गुरू महाराज से पूछा स्वामी एक मेरे ऊंटनी वर्चे है वा मेरे मकान विगर कहीं भी जाती नहीं और जगे नहीं रहती इसका क्या कारण है तव आचार्य ने कहा कि ये ऊंटनी पूर्व भव्य में तेरी माता थी एक दिन के वक्त में इसने श्री जिनाग्र का दीपक वुझाके उस दीपक करके अपने घरका काम करा धूपके अंगारों से चूला जलाया कितनेक काल वाद मरगई आलोचना नहीं करी तिसकर्म के वश से तीय ऊंटनी भई पूर्व भव के स्नेह करके तेरा घर नहीं छोड़ती है ये वात सुनके सव सेठ लोग वगैरह देव सम्बन्धी वस्तु उपभोग करने का ऐसा फल जान करके तिसका त्याग करने में वलवंत भये तव गुरू महाराज को नमस्कार करके अपने २ ठिकाने गये यह प्रदीपाधिकार में देवसैन की माता का दृष्टान्त कहा इस दृष्टान्त को सुन करके संसार से डरने वाले भव्य जीवों को देवका दीपक करके घरका काम नहीं करना देव निरमायल द्रव्य थोड़ामात्र भी नहीं ग्रहण करना देव संबंधी श्री खंड करके तिलक नहीं करना देव सम्वन्धी जल करके हाथ पैर नहीं धोना देव द्रव्य व्याज करके नहीं लेना और भी देव वस्तु अपने कार्य में नहीं लाना ये दूसरी अग्र पूजा कहीं २ ॥

अब तीसरी भाव पूजा कहते हैं वो भाव पूजा जिनको वंदना करनी स्तवन पढ़ना तहां पर प्रथम चैत्य वंदन करना उचित स्थान में वैठके चैत्य वंदन करना शक्रस्तवादिक पढ़ना तथा लोकोत्तर गुणके धारक सद्भूत तीर्थ करके गुणका वर्णन दूसरों से सुनाना तथा हृदय कमल में श्री जिनेन्द्र को स्थापन करके तिनों के गुणों को स्मरण करना तथा प्रभु के आगू नाटक वगैरा भाव पूजा करने से लंकेश की तरह से अखंड भाव प्रते धारण करणा जैसे लंकेश्वर कहिये लंका का ईश्वर याने मालिक राजा रावण एक दिनके वक्त में अष्टापद पर्वत के ऊपर भरत ने करवाया अपने २ वर्ण सहित चौवीस तीर्थंकरों के मन्दिर में द्रव्य पूजा करके मन्दोदरी रानी को आदि लेके सोला हजार रानी सहित नाटक हो रहा था तंव वीणका तार टूट गया तव जिन गुण गाणें का एक रंग उसका भंग होने से डर करके अपने जांघ की नस खैंच करके तहां साधी भक्ती में भंग पड़ने नहीं दिया तिस भक्ती करके रावण ने तीर्थ कर गोत्र पैदा करामहा

विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर होगा इस प्रकार और भी भव्य जीव जिन भक्ती में यत्न करेंगे तो तीर्थंकर पद पाना कठिन नहीं तथा—

गाथा—गंधव्व नट्ट वाइय लवण जलारत्तियाइदीवाई ।
जंकिच्चंतंसव्व विउरई अग्ग पुयाए ॥ १ ॥

अर्थ—गांधर्व याने गाना नाटक वाजित्र लूण जल आरती दीपक वगैरा यह सर्व अग्र पूजा में है इस वास्ते नाटक भी अग्र पूजा में कहा गया कारण भाव पूजा में है इस वास्ते अग्र पूजा में दिखलाया ये तीसरी भाव पूजा कही यह करके तीन प्रकार की पूजा कही अब पांच प्रकार की पूजा कहते हैं फूलादि करके पूजा १ उन्हों की आज्ञा २ उन्हों का द्रव्य रखना ३ उत्सव करना ४ तीर्थ यात्रा करनी ५ श्री जिनेन्द्र देवकी भक्ती पांच तरह की होती है तहां पर केतकी चंपा जाई जुई शत पत्रादिक नाना प्रकार के पुष्प धूप दीप चंदनादिक करके जो पूजा करनी तिसको प्रथम भक्ति कहते हैं ॥ १ ॥ तथा श्री जिनेन्द्र देवकी आज्ञा मन वचन काया से पालन करनी ये दूसरी भक्ति है सर्व धर्म कार्य में मूल कारण जिनाज्ञा है तिस जिन आज्ञा विगर सर्व धर्म कार्य निरर्थक जानना चाहिये इस वास्ते जिनाज्ञा में यत्न करना सोई शास्त्र में लिखा है ॥

गाथा—आणा इतवो आणा इसंजमो तहयदाण माणाए ।
आणारहिउधम्मो पलोलपूलव्व परिहाई ॥ १ ॥

अर्थ—आज्ञा में तप आज्ञा में संजम दाण माण इत्यादिक कृत्यों में आज्ञा की मुख्यता है आज्ञा करके रहित धर्म है वो घास के पूले की तरह से त्यागन करने योग्य है फेरभी आज्ञा की पुष्टिता दिखलाते हैं ॥

गाथा—भमिओ भवो अणंतो तुह आणा विरह जीविहिं पुण
भमियव्वो तेहिं जेहिं नंगीकया आणा ॥ २ ॥ जोन
कुणइतुह आण सो आण कुणइतिहुअणजणस्स
जो पुण कुणइ जिणणं तस्साणा तिहु अणेचेव ॥ ३ ॥

अर्थ— अणंतेहि भवमें भमरहा है तुमारी आज्ञा विगर जीव फेर भी आज्ञा रहित होके घूमना पड़ेगा जिसने आज्ञा अंगीकार नहीं करी उसको घूमना पड़ेगा ॥ २ ॥ हे परमेश्वर आपकी आज्ञा नहीं करते हैं वो तीन लोक में मनुष्यों की आज्ञा में रहेगा अगर

जो कोई भगवान की आज्ञा में रहेगा तो तिस की आज्ञा तीन लोक के आदमी पालेंगे ॥ ३ ॥ तथा देव सम्बन्धी द्रव्य को अच्छी तरह से रखना बढ़ाना ये तीसरी भक्ति है इस संसार में अपने द्रव्य की रक्षा करने वाले तो बहुत हैं मगर देव द्रव्य की रक्षा करने वाला कोई उत्तम स्तोक होंगे जो देव द्रव्य की रक्षा करने के लिये उद्यम कर रहे हैं वे प्राणी इस लोक में और परलोक में सुख श्रेणी के भजने वाले होंगे जो देव द्रव्य भक्षण करते हैं वे दोनों जगह भयानक दुःख के भजन वाले होंगे सोई शास्त्र में लिखा है ॥

गाथा—जिण पवयण बुढि करँ पभावगं नाणदंसण गुणाणं ।
भरकं तो जिण दव्वं अणंत संसारि ओ होई ॥ १ ॥

व्याख्या—जिन प्रवचन की वृद्धि करना तथा ज्ञान दर्शन गुण की प्रभावना करे मगर जिन द्रव्य करके खाने वाला अन्त संसारी जान चाहिये ॥

गाथा—जिण पवयण बुढि करं पभावगं नाणदं सणगुणाणं ।
रक्खंतो जिण दव्वं परित्त संसारि ओ होई ॥ २ ॥

व्याख्या—जिन प्रवचन की वृद्धि करने वाला ज्ञान दर्शन गुण की प्रभावना करने वाला तथा जिन द्रव्य की रक्षा करने वाला होगा तो प्रमाणो पेते संसार बाकी जानना चाहिये ॥ २ ॥

गाथा—जिण पवयण बुढिकरं । पभावगं नाण दंसण गुणाणं ॥
बढंतो जिण दव्वं । तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥ ३ ॥

व्याख्या—जिन प्रवचन की वृद्धि करने वाला ज्ञानदर्शन गुण की प्रभावना करने वाला जिन द्रव्य को बढ़ाने वाला अपूर्व २ द्रव्य इकट्ठा करे तथा पनरे कर्मदान खोटा व्यापार वर्ज्जनरूप सद् व्यवहार करके द्रव्य बढ़ाना अच्छा है कारण धर्म तो आज्ञा में है सोई लिखा है गाथा द्वारा दिखलाते हैं ॥

गाथा—जिणवर आणारहिअं । वद्धारंताविकेवि जिण दव्वं ॥
बुड्डिंति भव समुद्दे मूढा मोहेण अन्नाणी ॥

व्याख्या—जिन राज की आज्ञा रहित कितनाक जिन द्रव्य की वृद्धि करते हैं मगर संसार में डूबने का काम करते हैं मूर्ख मोह और अज्ञान करके तथा फिर भी इस की पुष्टि करते हैं गाथा द्वारा लिखते हैं ॥

गाथा—चेइय दव्व विणासे । इसिघाए पवयणस्स उड्डाहे ।
संजइच उत्थ भंगो । मूलग्गी वोहि लाभस्स ॥ ४ ॥

व्याख्या—मन्दिर के द्रव्य का नुकसान करने वाला और रिषि की घात करने वाला साधु का चतुर्थ वृत का खंडन रूप मिथ्या हल्ला उड़ाना इन कारणों से वोधि लाभ में अग्नि जलाने वाला जानना चाहिये ॥ ४ ॥

यहां पर चैत्य द्रव्य की रक्षा करने ऊपर तथा भक्षण करने ऊपर दृष्टान्त तो वहुत हैं मगर एक सागर सेठ का दृष्टान्त जाहर विशेपता पूर्वक दिखलाते हैं साकेतनपुर नामें नगर तहां पर सागर सेठ परम अर्हंत का भक्त रहता था एक रोज क्या हुआ कि वहां सव श्रावक मिल करके विचार करा कि यह श्रावक उत्तम है ऐसा जान करके जिस सेठ को मन्दिर का द्रव्य सुपरत करा फिर ऐसा भी कहा कि मन्दिर का काम करने वाले सूंथार वगैरे कारीगर हैं उन लोगों को तुम द्रव्य दिया करो अव वो भी सेठ लोभ में पीड़ित होके सूंथार वगैरे कारीगरों को रुपये वगैर द्रव्य तो देवे नहीं मगर सस्ता धान्य गुड़, तेल, घृत वस्त्रादिक चैत्य के द्रव्य से खरीद करके तिन लोगों को देवे उसमें जो लाभ पैदा होवे सो अपने घर में स्थापन करै इस माफिक एक रुपये का अशीमा भाग उसको एक काकिणी संज्ञा करी है इस माफिक एक हजार काकिणी लाभ में खा गया उस करके बड़ा भारी घोर नरक जाने का कर्म पैदा करा तव कितने काल वाद तिस कर्म की आलोचना ली नहीं मर करके समुद्र में जल मानुप हुवा तहां पर रत्न ग्रहण करने वाले पुरुप उन्हों ने जल भीतर से उसको ग्रहण करके समुद्र के किनारे जलचर उपद्र निवारक जल में उद्योत कारक तेल ग्रहण करने के लिये वज्र के घड़े में डाला तहां पर मोटी तकलीफ से छै महीने में मर करके तीसरी नरक में नारकीया भया नारकी से निकल करके पांच सै धनुष वाला महामच्छ हुवा तहां पर फेर भी म्लेच्छ लोगों ने सर्व अंग काटने रूप कदर्थना दी तिस से मर करके चौथी नरक में गया इस तरह से एक दो भव का अन्तर करके सातों नरक में दो दफे उत्पन्न हुआ तथा एक हजार काकिणी देव द्रव्य खाया जिससे एक हजार दफे कुत्ता भया इस तरह से एक एक हजार वार सूकर होके खाड़ में गिरना भेड़िया हिरण संवर स्याल विल्ली उंदर नोलियो छिपकली गोह सांप विच्छू काछवा गधा भैंषा ऊंट घोड़ा हाथी इत्यादिक वहुत भवों में शस्त्र घातादि करके महा व्यथा सहन करता हुवा मरा तहां पर वहुत क्षय होगया कर्म जिस का ऐसा सागर सेठ का जीव वसंतपुर नगर में कोटि द्रव्य का मालिक वसुदत्त नामें सेठ तिसकी स्त्री वसुमती

नामें जिसके गर्भ में उत्पन्न हुआ तब गर्भ में आया जबसें द्रव्य चलागया जन्म के दिन सेठ मर गया पांचमें वर्ष में माता मरगई तब लोगों ने निपुण्यक नाम दिया तहां पर कंगाल वृत्ती से वड़ा हो रहा है एक दिनके वक्त में स्नेह पूर्वक मामें ने देखा अपने घर में लेगया मगर उसी रात्रि में मामें के घरको चोर लूट लेगया इस माफिक जहां पर एक दिन भी निपुन्निया बास करै तो तहां पर चोर धाड अग्नि घरके मालिक का भगना होना इत्यादिक उपद्रव होवें जब लोगों में वड़ा भारी त्रास हुवा लोग कहते हुये कि वड़ा कुपात्र है लोक दुर्वचन से बहुत त्रास देरहे उस निंपुण्यक ने सोचाकि यहां पर नहीं रहना ऐसा विचार करके तामलिप्ती पुरी में पहुंचा वहांपर विनय धर नामें धनवान सेठ के पास नौकर रहा मगर उसी रोज सेठ के घरमें आग लगगई उसी रोज निकाल दिया कुत्ते की तरह सें कदर्थना पूर्वक अब निपुण्यक कर्त्तव्यता करके असमर्थ हो गया अपने कर्मों की निन्दा करने लगा सो गाथा द्वारा दिखलाते हैं॥

गाथा—कम्मं कुणंति सवसा। तस्सु उदयंमिय परव्व साहुंति॥
रुरकदुरूहइसवसो। निव्वडइ परव सो तत्तों॥ १॥

व्याख्या—यह जीव अपने वस करके कर्म बांधता है मगर जब कर्म उदय में आते हैं उस वक्त परवस होके यही जीव भोगता है झाड़ पर आदमी अपनी इच्छा से चढ़ जाता है मगर उस झाड़ से निमटना मुसकिल हो जाता है उसमें कई तरह का विघ्न हो जाता है इसी तरह से यह जीव अपने वस से कर्म बांधता है मगर परवस होके कर्म भोगने वाला भी यही जीव है ऐसा विचार करके अन्य स्थान समुद्र के किनारे पहुंचा उसी रोज जहाज पर चढ़ा तहां पर धनावांह नामें सेठ के साथ सुख करके द्वीपान्तर में प्राप्त हुवा अवणिपुण्यक ने मनमें अहंकार करा मेरा भाग्य उघड़ गया किस वास्ते में जहाज पर चढ़ा तो भी जहाज फूटा नहीं अथवा कर्म मुझको भूल गये बो निपुण्यक ऐसी चिंता और खुस भक्ती दोनों कर रहा था इतने में तो कर्मों ने क्या किया कि लौटते हुये जहाज को अत्यंत प्रचंड वायु से जहाज का टुकड़ा २ हो गया तब निपुण्ये को एक पटीया मिला तिस करकेसमुद्र के किनारे कोई गांव में गया तहां पर ग्राम ठाकुर की सेवा करने लगा एक दिन का जिकर है कि चोर धाड़ी ठाकुर के मकान में पड़ा ठाकुर भग गया निपुण्यक को ठाकुर का लड़का जान करके बांध करके लेगये अपनी पल्ली में तहां पर भी अन्य चोर पल्ली में आके लूट ले गये तब उन्हों ने भी निर्भाग्य जान करके निकालदिया इस तरह से जहां जाता है वहां पर हजारों उपद्रव होता है इस माफिक कदर्थना सेहता हुवा महा दुःख देखता हुआ वांछित अर्थ को देने वाला सेलकना में यक्ष के मंदिर में पहुंचा तहां पर अपना दुःख कहके एकाग्रमन धारण करके आराधन

करने लगा इकवीस उपवासों करके प्रसन्न हुवा यक्ष कहने लगा हे भाई दोनों संध्या मेरे अगाड़ी हजार चांदले वाला सोनेकामोर नाटक करेगा नाटक हुये बाद हमेसा एकेक सोनेकी पांखमोर पटकेगा तिस पांख को लेजाना प्रसन्न हो के कितने दिन तक तो पांखें ग्रहण करी इस तरह से नव सै पांख तो हांथ लगी बाकी एक सै पांख रह गई तब इस निपुण्यक के दुष्ट कर्मों ने प्रेरणा करी तिस से विचारने लगा एकेक पांख लेने के वास्ते बहुत रोज तक जंगल में रहना पड़ेगा इस वास्ते येक मुट्ठी से सब उखाड़ लेऊं तो अच्छा है तिसी दिन मोर नाच कर रहा था उसकी पांख को एक मुट्ठी करके उखाड़ ने लगा तितने तो वो मोर कउवे का रूप बनाके उड़ करके चला गया पहिली ग्रहण करी थी जौनवसै पांखें वो भी चली गई अब वहां पर विचारने लगा कि ॥

श्लोक–देव मुल्लंध्ययत्कार्य । क्रीयते फलवन्ना तत् ॥
सरोभ श्चातके नासं । गलरंध्रेण गच्छति ॥१॥

कर्मों को उल्लंघन करके जो काम करते हैं तो फलदाई नहीं होता धिक्कार है मुझको बहुत जल्दी करने से काम बिगड़ता है जंगल में घूमता हुवा एक ज्ञानी मुनीराज को देखा उनको नमस्कार करके अपने पूर्व भवका स्वरूप पूछा तब गुरू महाराज सर्व यथावस्थित पूर्व भवका स्वरूप कहा और तेने देवद्रव्य खाया ऐसाकहातव प्रायश्चित्त मांगा निपुण्यक ने तब मुनी बोले कि अधिक २ देव द्रव्य देना तथा उसकी रक्षा करना वढ़ाना येही कार्य है इस दुष्ट कर्म का इलाज फेर अखीर में सर्व सामिग्री सहित भोग रिद्धी सुक्ख और लाभ प्राप्त होवें ऐसा सुन करके निपुण्यक ने नियम करा कि प्रथम खाया था देव द्रव्य उससे एक हजार गुण अधिक देव द्रव्य सें अदा न होऊंगा तब एक साधारण वस्त्र भोजन से निर्वाह करना ऐसा नियम अंगीकार करा मुनिराज के सामने निर्मल श्रावक का धर्म अंगीकार करा जबसे जो रूजगार करे उसमें फायदा होता जावे उस में से देव द्रव्य भी उतारता जाता है इस तरह से थोड़े से दिन में देव निमित्त दस लाख काकिणी देके रिण रहित होगया अनुक्रम से बहुत द्रव्य पैदा करा फेर अपने घर गया तिस शहर में सर्व में मुख्य हुया आपने मंदिर बनवाया तथा और भी जिन मंदिरों के विषय अपनी शक्ति और भक्ती करके हमेसा महा पूजा प्रभावनादिक करनी तथा देव द्रव्य रक्षा धर्म इस माफिक अर्हंत की भक्ति रूप प्रथम स्थानक अराधन करके तीर्थं कर गोत्र पैदा करा अवसर में गीतार्थ गुरू के पास दीक्षा अंगीकार करी तहां पर सिद्धांत का अध्ययन करना अनुक्रमसे गीतार्थ होके सधर्म देशनादि करके बहुत भव्य जीवों को प्रतिबोध देके आखिर में अनशन सहित काल धर्म करके सर्वार्थ सिद्ध विमान में देवपणा भोगके महा विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर रिद्धी भोग करके मोक्ष जांयगे

यह देव द्रव्य अधिकार में सागर सेठ का दृष्टान्त कहा ये तीसरी भक्ति कही अब उत्सव रूप चौथी भक्ति कहते हैं जो भव्य जीव हैं सो अपनी आत्मा करके अट्ठाहि महोछव स्नात्रमहोछव चैत्यबिंब प्रतिष्ठादिक उत्सव करते हैं तहां श्री पर्युशण पर्व के विषै कल्प सूत्र वाचना तथा प्रभावनादिक उत्सव करना वोभी जिन शासन की उन्नति है इस वास्ते उसको भी पूजा कहना चाहिये सो लिखते हैं श्लोक द्वारा ॥ यतः ॥

श्लोक—प्रकारेणाधि कांमन्ये। भावनातः प्रभावनां॥
भावना स्वस्यलाभाय। स्वान्ययोस्तु प्रभावना॥ १॥

व्याख्या—प्रकारान्तर करके अधिक मानना चाहिये भावना से प्रभावनां कों कारण भावना तो अपने लाभ के वास्ते है भावना प्रभावना दोनों को फल देने वाली है॥ या उत्सव रूप चौथी भक्ति कही ॥ ४॥ अब तीर्थ यात्रा रूप पांचवीं भक्ति कहते है॥

श्री शत्रु जय गिरिनार आवु अचलगढ़ अष्टापद सम्मेद शिखर आदि सकल तीर्थों के विषय जिन वंदन करना तिस क्षेत्र को दर्शन करने को जाना तिसको तीर्थ यात्रा कहते हैं ये भी जिन भक्ति है तहां पर सकल तीर्थ में मोटा तीर्थ श्रीशत्रु जय तीर्थ है उस वरोवर तीन लोक में भी अन्य तीर्थ नहीं सोई श्लोक द्वारा दिखलाते हैं॥

श्लोक—नमस्कार समोमंत्र। शत्रुंजय समो गिरि॥
वीतराग समो देवो। न भूतोनभविष्यति॥ १॥

व्याख्या—नमस्कार वरोवर कोई मंत्र नहीं शत्रुंजय वरोबर गिरि नहीं वीत राग वरोवर देव नहीं नहीं हुये और नहीं होगा श्री शत्रुंजय तीर्थ को फर्शण से महा पापी प्राणी भी देव लोक मुक्ति के सुख के भाजन हो गये है सुकृत करने वाले इस तीर्थ पर अल्प काल में सिद्ध हो गये हैं सोई बात दिखलाते हैं॥

श्लोक—कृत्वापाप सहस्राणि। हत्वाजंतु शंतानिच॥
इदंतीर्थं समासाद्य। तीर्यंचोपि दिवंगतः॥ १॥

व्याख्या—हजारों पाप करने वाला हजारों जानवर मारने वाला इस तीर्थकों सेवन करने वाले तीर्यंच भी देवलोक को गये हैं॥ १॥

श्लोक–एकै कस्मिन पदेदत्ते । शत्रुंजय गिरिं प्रतिं ॥
भव कोटि सहस्रेभ्यः । पातकेभ्यो विमुच्यते ॥ २ ॥

व्याख्या—एकेक कदमशत्रुजयगिरी के सामने रखना हज़ारों कोटों भव के पाप सेती दूर हो जाता है ॥

गाथा–छट्ठेणं भत्तेणं अप्पाणएणंच सत्तजत्ताजो- ।
कुणइसत्तुंजे सोतइय भवे लहइ सिद्धिं ॥ ३ ॥

व्याख्या—छट्ठ भक्त की तपस्या पाणी रहित अगर सात यात्रा जो शत्रुंजय की करते हैं वो तीसरे भव में सिद्धी में पहुंचे तिस वास्ते जो प्राणी दुर्लभ मानुष जन्म पाकरके श्री सिद्धाचल यात्रा करते हैं वे अपना जन्म सुफल करने वाला जानना जो फिर तिस माफिक सामग्री के अभाव करके आप यात्रा कर सक्ते नहीं मगर और यात्रा करने वालों की अनुमोदना करते हैं धन्य है यह प्राणी जीव सो श्री सिद्धाचल प्रतें अपनी नज़र करके देखते हैं अपने शरीर करके फर्श करते हैं तथा अपने हाथ करके श्री रिषभस्वामी की पूजा करते हैं फिर अन्य को उपदेश देते हैं यह वात फिर पुष्ट करते हैं ॥

श्लोक–वपु पवित्रं कुरुतीर्थयात्रया । चित्तं पवित्री कुरुधर्म वांछाया ॥
वित्तं पवित्री कुरुपात्र दानत । कुलं पवित्री कुरु सच्चरित्रतः ॥१॥

व्याख्या—शरीर काहे से पवित्र होता है कि तीर्थ यात्रा करने सेती, चित्त पवित्र काहे से होता है कि धर्म की वांछा करके, द्रव्य पवित्र करो सुपात्र दान देने सेती उत्तम प्रकार करके अच्छे चरीत्र करके कुल की पवित्रता होती है ॥ १ ॥ तथा मोक्ष रूप में हल में चढ़ने वालों को सुखसेती प्रधान पांवडियों की तरह से विराजमान श्री विमलाचल तीर्थ प्रत्येकवमें अपने नेत्र युगल करके कव देखूंगा कवमैं अपने शरीर का फर्शना करूंगा तिस तीर्थराज प्रते देखे विगर मेरा जन्म वृथा जा रहा है इत्यादिक भावना अपने दिल में विचार करै तथा भावन करते हैं जो प्राणी अपने ठिकाने बैठे हैं वे तीर्थ यात्रा का फल प्राप्त करते हैं तथा जो प्राणी सकल सामग्री सहित है मगर वे तीर्थ यात्रा नहीं करते हैं वे अज्ञानी और दीर्घ संसारी जानना चाहिये तथा श्री शत्रुंजय पर्वत ऊपर थोड़ा भी पुन्य करने से मोटे फल का कारण समझना चाहिये यह वात तीर्थों द्वारा में दिखलाई है सो गाथा लिखते हैं ॥

गाथा—नवितं सुवन्नभूमी। भूसण दाणेण अन्नतित्थेसु।
जंपाव इ पुन्य फलं। पूयान्हवणेण सत्तुंजें ॥ १ ॥

व्याख्या—और तीर्थों में सोने की जमीन तथा दागीणा अन्य तीर्थों के विषय फल मिलता है मगर केवल शत्रुंजय ऊपर तो पूजा स्नान करने से बड़ा लाभ होता है तथा तीर्थ यात्रा करने वालों को छैरीकार पालना अवश्य उचित है जिस छैरीकारों के पालने से मनवांछितफल अधिक तर होता है अब वे छैरीकार दिखलाते हैं। एक अहारी १ भूमासंथारी २ पैदल चारी ३ शुद्ध सम्यक्त धारी ४ सचित्त अपहारी ५ ब्रह्मचारी ६ यह बात श्लोक द्वारा दृढ़ करते हैं ॥

श्लोक—एकाहारी भूमि संस्तारकारी पदभ्यांचारी शुद्ध सम्यक्तधारी।
यात्रा कालेयः सचित्तापहारी पुन्यात्मा स्याब्रह्मचारी विवेकी।१।

व्याख्या—एक दफे भोजन करना १ जमीन पर सोना २ पैदल चलना ३ शुद्ध सम्यक्त सहित ४ सिचत्त का त्यागी ५ और ब्रह्मचारी ६ इस प्रकार तीर्थ यात्रा में छः रीकार पालना चाहिये वोही पुण्यात्मा है तथा फिर भी तीर्थ राज की महिमा दिखलातेहैं,

श्लोक—श्री तीर्थपांथरजसाविरजी भवंति तीर्थेषुवं भ्रमणतोनभवेभ्रमंति।
द्रव्यव्ययादिहनरा;स्थिरसंपद;स्युपूज्याभवंति जगदीशमथार्चयंतः

व्याख्या—श्री तीर्थ राज जाने का रास्ता उस की रज के फर्श होने से कर्मरूप रज रहित भव्य जीव होजाते जो प्राणी तीर्थ करने के लिये घूमता है वों संसार में बहुत नहीं घूमेगा जो प्राणी तीर्थ में द्रव्य खर्च करता है उस का धन और सम्पदा थिर रहेगी तथा जगदीश कहिये तींन जगत के मालिक उन की पूजा करने सें जगदीश समान हो जावे ॥ १ ॥ इत्यादिक तीर्थ यात्रा का फल जान कर के भव्य जीवों को शत्रुंजयादिक महा तींर्थ उन की यात्रा के विषय उद्यम करना चाहिये और अपना द्रव्य सफल करना चाहिये तथा तीर्थ जाने वाले साधर्मी हैं अगर उस के पास द्रव्य नहीं होवें तो उन को द्रव्य देके यात्रा में मदद देना तथा फिर तींर्थ यात्रा करनें वाले प्राणी में मुख्य धन सेठ की तरह से तीर्थ उन्नति करना मगर लघुता नहीं दिखानीं यह सम्यक्तवंत का व्यवहार हैं तीर्थ उन्नति के ऊपर धन सेठ का दृष्टांत कहते हैं हस्तिनापुर नामें नगर में अनेक कोटि द्रव्यों का मालिक धन सेठ नामें परम श्रावक रहता था वो सेठ एक दिंन रात्रि समय में धर्म जागरण कर रहा था उस वक्त में अपने दिल में ऐसा विचार करा कि मैंने पूर्व जन्म में

सुकृत किया था इस सबब से मनुष्य जन्म पाया तथा आर्य क्षेत्र जाति कुल रूप धन सम्पदा वगैरः सब मिली तथा भगवान वर्धमान स्वामी का धर्म भी मिला मगर जबतक श्री विमलाचल गिरनार आदि महातीर्थ श्री रिषभ देव श्री नेमिश्वर भगवान तीर्थ के मालिक उन्हों का दर्शन वंदन पूजन सत्क्रिया में नेम किया तबतक प्रधान सोना मणि माणिक्य स्वजन मकान वगैरः सब वृथा है इस वास्ते तीर्थ राजों को फर्श करना चाहिये ऐसा विचार कर के सबेरे के वक्तमें सेठ सब की सलाह लेके तीर्थयात्रा जाने के वास्ते डुंडी पिटवाते हुए तथा बहुत संघ इकट्ठा किया तब फिर वो सेठ भी अच्छे दिन में हस्तिनापुर सेती निकल कर के बहुत संघ करके सहित तहां से शासन के मालिक श्री महावीर स्वामी के चैत्य का दर्शन करने के वास्ते चल रहे हैं रास्ते में ठिकाने २ बड़ी रिद्धी कर के चैत्य पूजन करते हुए पुराने चैत्य का उपचार करते हुए मुनियों के चरण कमल को वंदना करते हुए तथा साधर्मी बात्सल्व करते हुए दया कर के सहित दीन दुखी प्राणियों को वांछितार्थ देते हुए अनुक्रम कर के सुख सहित श्री शत्रुंजय पहाड़ पर आते हुए तब धन सेठ बड़ी रिद्धी करके श्री युगादि जिनेन्द्र देव प्रतें वंदना पूजना तथा अट्ठाहिम होछव करके सिद्ध क्षेत्र फर्श करके अपना जन्म सुफल हुवा मान कर के तहां से चल कर के अनुक्रम कर के श्री गिरनार नामें पहाड़ पर पहुंचे तहां पर मूल नायक जी महाराज यादव कुल के मंडन सर्व ब्रह्मचारियों में चूडामणि रत्न के समान श्री नेमिनाथ जिनेन्द्रप्रतें तीन प्रदक्षिणा देके प्रणाम नमस्कार करके सुगंधमई जलला कर के स्नान करवाया पीछे रस सहित गोशीर्ष चंदनादि द्रव्य का विलेपन करवाया तथा उत्तम वस्त्र सहित मणिकनक रत्न के दागीणा इत्यादिक द्रव्य से नेमि भगवान को सुशोभित करे तथा पांच वर्णारस सहित खुसबूदार फूलों की माला प्रभू के गले में विराजमान करी है तथा फिर अगांड़ी आठ मङ्गल बणाया तथा नालेर है फल चड़ाना धूप क्षेवणा दीप चढ़ाना छत्र चामर चंदनादिक बड़ी ध्वजा का विस्तार करा है जहां पर नाना प्रकार की पूजा भक्ती कर के साढ़े तीन करोड़ रोमराजी विकस्वर होगई है जिस की इस प्रकार होके सेठ श्री नेमिनाथ स्वामी के मुख कमल तरफ देख रहा है तितने वहां पर क्या हुआ सो कहते हैं महाराष्ट्र मंडल के भीतर मलय नामें पुरकारहणेंवाला कोटि द्रव्य का मालिक स्वेतांबर का द्वेषी वो ठीक दिगम्बर पाखंड का भक्त वरुण नामें सेठ बड़े संघ करके सहित तहां गिरनार ऊपर आया अब तहां पर धन सेठ ने रचना करी है श्री नेमिनाथ स्वामी की ध्वजा तिस प्रतें देख कर के अपने दिल में बड़ा द्वेष लांके वो वरुण नामें सेठ ऐसा बोला हा हा इति खेदे यह तत्व कर के रहित है स्वेतांबर का भक्तों ने इन निग्रन्थ भगवान को ग्रन्थ सहित कैसे कर दिया इस प्रकार मिथ्या

बुद्धि धारक उसी वक्त कपड़े गहणा पुष्पादिक भगवान के विंब से दूर करवाया हाथी पग कुंड से जल मगधा के विंब को स्नान करवाया इस माफिक अविधि कर रहा था वरुण वामें सेठ तिस अविधी को धन सेठ देख कर के आपस में दोनों के बहुत वचन विवाद हुआ तब दोनों सेठ महा द्वेष सहित अपने २ परिवार सहित उसी वक्त पर्वत से नीचे उतरे तहां से गिरनार नगर का मालिक श्री विक्रम राजा तिन के नजदीक पहुंचे तहां पर दोनों संघपती परिवार सहित अपने २ तीर्थ की स्थापना करने के वास्ते आपस में वड़ा विवाद हुआ तिस वक्त में लोगों के मुख सेती सुना हकीकत विक्रम राजा जल्दी आके दोनों की लड़ाई दूर करवा के ऐसा कहा कि सवेरे तुम्हारा विवाद दूर करूंगा इस समय कोई भी लड़ाई मत करो ऐसा कह के अपने २ ठिकाने गये दोनों सेठ अपने स्थान को पहुंचे वहां पर विचारने लगे कि सवेरे के समय में किस का तीर्थ स्थापन करेंगे राजा वगैरः ऐसा मन में है दुःख जिस के तिस कर के रात को नींद नहीं आई केवल शासन देवी का ध्यान है जिस को ऐसे धन सेठ को रात्रि के समय में शासन देवी प्रकट होके इस प्रकार कहा।

गाथा—वरसिठसिट्ठ धम्मिठ जिठसुपइठ समयल घठा।
भयनठ मामणागवि नियमयमणेकुण सुदुक्खमिणं॥ १॥
जंकिंचियवंदणमझे गाहं उज्जिंतसेलइच्चाइं।
परिक विय निवस हाए जयं धुवंतुझदाहामि॥ २॥

व्याख्या—सेठ में प्रधान है धर्मिष्ट है मोटा है सुप्रतिष्ठित है समय सहित अर्थ को जानने वाले हैं तुमारा भय गया अपने मनमें कोई प्रकार का भय मत करो जो चैत्य वंदन के अन्दर गाथा है उज्जिंत से लसिहरे इत्यादिक उसमें डाल करके तुमारा सहाय करके तुमको निश्चय करके जय दिलांयगे ऐसा शासन देवी का वचन सुन करके वड़ी खुशी होके सुख सेती सेठ को नींद आगई अव सवेरे की वक्त में राजा दोनों संघपती अपने पास बुलवाया अपनी २ हकीकत कहने लगे तव राजा बोला कि तुम दोनों जिन मत के जानने वाले जिन धर्म पर श्रद्धावान जिनवर प्रवचन के प्रभावना करने वाले तुम दोनों प्रवीण होके विना विचारे ऐसा काम किस वास्ते करा तव धन सेठ बोला कि हे स्वामी अपने तीर्थ पर हम लोक वस्त्र गहिणादि करके हम पूजा करते हैं तो उनको यह दुराशय विधंश करने वाला कौन है तब वरुण सेठ बोला कि हे राजन हम लोक हमारे तीर्थ पर किसी को अविधि नहीं करने देंगे अव इस माफिक दोनों सेठों का वचन सुन

करके संशय में प्राप्त होके राजा बोला कि कौन जानता है यह तीर्थ किस का है तब धन सेठ बोला कि हे स्वामी हमारा ही यह तीर्थ है और हमारे चैत्यवंदन में प्राचीन गाथा उज्जिंत से लसिहरे इत्यादिक है अगर जो तुम लोकों की अप्रीतीत होवे तो हमारे संघ के बीचमें सर्व बालक जवान तथा वृद्ध प्रतें इस वक्त में चैत्य वंदन सूत्र पढ़वावो तब बरुण बोटिक भक्त बोला कि कौन जाने इनने नवीन गाथा बनवा के लोगों को सिखा दी होगी तब राजा को प्रतीत आने के वास्ते एक अपना पुरुष भेज करके परम वेग सांड़नि पर सवार करवा के सिए वल्ली नामें गाम सेती शीलादिक गुणों करके प्रसिद्ध परम जिन धर्म रागि धनदेव सेठ की पुत्री प्रतें जल्दी तहां पर बुलवाई बाद दोनों संघ स्वेतांबर और दिगंबर के सामने राजा उस पुत्री से पूंछा हे पुत्री तुझ को चैत्य वंदन आता है तब वो लड़की बोली स्वामी उत्तम प्रकार से आता है अगर आता है तो जल्दी कहदे तब वो कन्या भी राजा की आज्ञा पाकर के अत्यंत गंभीर स्वर करके सकल चैत्य वंदना पढ़ती दफे यह गाथा आई।

गाथा—उज्जिंत सेलसिहरे। दिक्खानाणं निसीहिया॥
जस्स तंधम्मचक्क,वट्टिं। अरिट्ठनेमिनमं सामित्ति॥ १॥

व्याख्या—उज्जिंत सेल शिखर नाम गिरनार पहाड़ का है इस पर दिक्षा कल्याणक ज्ञान कल्याणक निर्वाणक कल्याणक तिस धर्म चक्रवर्त्ती अरिष्ट नेमिनाथ स्वामी प्रतें नमस्कार करता हूं इस माफिक बात सुन करके विक्रम राजा सकल लोक सहित हरख से उल्लसित हो गया है मन जिन का ऐसा विक्रम राजा बोला स्वेतांबर संघ जयवंतार हो निश्चय करके यह तीर्थ इन स्वेतांवरीयों का है अब वरुण सेठ हारखा के अपने संघ सहित लोगों के मुख सेती दिगंवर निन्दा और स्वेतांबर प्रसंशा सुन करके दिलगीर हो के अपने ठिकाने गया अब उसी दिन से लेके या गाथा चैत्य वंदन में पढ़ते हैं या गाथा अव्रती देवता की रचना करो भई विरति वंतो के पढ़ने योग्य नहीं मगर शासन की उन्नति के कारण से गीतार्थों ने मना नहीं करी लाजिम है सज्जन लोगों को पढ़ना पूर्वाचार्यों का अंगीकरी भई बात को कोई अन्यथा करे तो तिस को सिद्धान्त में वड़ा भारी दंड कहा है सो इस माफिक श्रीभद्रवाहु स्वामी कहते हैं।

गाथा—आयरिय परंपरएण। आगयं जो उच्छेय बुद्धिए॥
कौवय इच्छय वाई। जमालिनासंसन्नासि हित्ति॥ १॥

व्याख्या—आचार्यों का परंपरा को तुच्छ बुद्धी वाले उच्छेदन करे तो उसको

जमाली की तरह से निन्हव जानना चाहिये अब विक्रम राजा ने बहुत सत्कार सन्मान और दान पूर्वक धन सेठ को सीख दी फेर भी धन सेठ दूसरी दफे अपने संघ सहित गिरनार पहाड़ ऊपर गये तहां पर श्री नेमि जिनेन्द्र भर्ते प्रधान वस्त्र गहणा फूलादिक से विशेष पूजा करके याचकों को दान देके अष्टाहिम महोछव करके तहां से चल करके अपने संघ सहित अनुक्रम करके हस्तिनापुर नगर में आया तहां पर राजा वगैरः सब लोगों ने बहुत सन्मान करवो धन सेठ बहुत काल तक श्रावक धर्म पाल करके बहुत जिन शासन की प्रभावना करके आखिर में सुगती का भजने वाला हुवा यह तीर्थ यात्रा अधिकार के ऊपर धनसेठ का दृष्टान्त कहा ॥ इतने करके पांचमी भक्ति रूप पांच प्रकार की पूजा कही ॥ ५ ॥ अब यहां पर अष्ट प्रकारी पूजा निरूपण करते हैं.

गाथा—वर गंध धूवचुरक रकएहिं। कुसुमेहिं पवरदीवेहिं ॥
नेवज्ज फलजलेहिय। जिण पूया अठहाहोई ॥ २ ॥

व्याख्या—प्रधान गंध उत्तम चंदनादि द्रव्य धूपादि द्रव्य से मिले हुवे अगर कपूर कस्तूरी इत्यादिक द्रव्य उत्पन्न सुगंध द्रव्य तथा अखंड उज्वल शाल्यादिक धान्य स्वस्तिक करने के वास्ते तथा पुष्प पांच वर्ण सुगंध पुष्प प्रधान दीपक घृत सहित स्वर्ण मयी दीपक नैवेद्य लड्डू आदि लेके फलनालेर आदि जल निर्मलपवित्र पानी लाना इनपूर्वोक्त आठों द्रव्यों करके जिन पूजा होती है इस वास्ते यह अष्ट प्रकारी पूजा है ॥ ८ ॥ अब आठ द्रव्यों का प्रत्येक फल दिखलाते हैं ॥

गाथा—अंगसुगंधवन्न। रुवंसुहंचं सोहगां ॥
पावइपरम पयंपिह। पुरिसोजिणगंधपूयए॥

व्याख्या—शरीर में खुशबोई खुबसूरती सुख और सौभाग्य अनुक्रम से परम पद में प्राप्त होगा किस करके जो पुरुष भगवान की गन्ध पूजा करता है उसमें उतना गुण मिलता है ॥

गाथा—जिण पूयणेण पुज्जो। होई सुगंधो सुगंध धूवेण ॥
दीवेणदित्तमंतो। अरकऊअरकए हिंतु ॥ २२ ॥

व्याख्या—जिन पूजा करने से पूज्यपना पावे सुगंध धूप चढ़ाने से शरीर में

सुगंध होवे तथा भगवान के दीपक चढ़ाने से दीप्तिवंत गोया तेज वान होवे तथा भगवान के सामने अक्षत कहिये क्षय नहीं भया ऐसा चांवलों का स्वस्ति करना गोया अक्षत पूजा करने से अक्षय सुख मिलता है ॥

गाथा—पूयई जो जिण चंदं । तिणि विसंझा सुपवर कुसुमेहिं ॥
सो पावइ सुर सुक्खं । कमेण मुक्खं सया सुक्खें ॥ २३ ॥

व्याख्या—तीनों ही संध्या में प्रधान फूलों करके जो जिन चन्द की पूजा करता है उसको देवलोक का सुक्ख मिले अनुक्रम करके मोक्ष का सुक्ख कैसा है स्वतेहि जिस स्थान में केवल सुक्ख ही दुःख का अन्त भाव जानना चाहिये ऐसा मोक्ष प्राप्त करे ॥

गाथा—दीवाली पव्वंदिणे । दीवं काऊण वध्य माणगे ॥
जो ढोवई वरस फले । वरसं सफलं भवेतस्स ॥ २४ ॥

व्याख्या—दीवाली पर्व के दिन वर्धमान स्वामी के आगूं दीपक चढ़ाना प्रधान्य सफलता के लिये जो दीपक चढ़ाते हैं तथा उत्तम फल चढ़ाते हैं उस के चढ़ाने से गोया वरस भर सफल हो गया ॥

गाथा—ढोय इवहुभत्ति जुओ । नेवज्जं जोजिणंद चंदाणं ॥
भुंजइ सोवर भोए । देवा सुर मणु अनाहाणं ॥ २५ ॥

व्याख्या—बहुत भक्ति युक्त होके जो जिनेन्द्र चन्द्र के आगूं नैवेद्य चढ़ावे तो प्रधान भोग मिले और देवता तथा असुर तथा मनुष्य नाथ कहिये उत्तम राजा वगैरे का सुख प्राप्त होवे ।

गाथा—जोढोय इजलभरियं । कलसंभत्तीइवीय रागाणं ॥
सोपावइ परम पयं । सुपसत्थं भाव सुद्धीए ॥ २६ ॥

व्याख्या—जो प्राणी भक्ति पूर्वक जल का कलसा भर करके वीतरागदेव को चढ़ावे तो वो पुरुष परम पद याने मोक्ष पद में जावै उत्कृष्ट भाव शुद्धी होवें तो सर्व यह जिन पूजा भव्य जीव मन वचन काया से करोगे तो फल का कारण अवश्य है कहा

भी है शुद्ध भाव करके स्तोक मात्र भी जिन भक्ति करो तो भी वड़े फल का कारण समझना चाहिये सोई भाव शुद्धी ऊपर एक श्लोक दिखलाते हैं देखो कितना वड़ा भारी फल कहा है केवल भाव शुद्धी का वो श्लोक यह है।

श्लोक—यास्याम्यायतनं जिन स्यलभते ध्यायं चतुर्थं फलं।
षष्टं चोत्थित उद्यतोष्टम मथोगंतुंप्रवृत्तो ध्वनि॥
श्रधालु दर्शमे वहिर्जिनगृहे प्राप्तस्ततो द्वादशं।
मध्ये पाक्षिकमीक्षिते जिन पतौ मासोववासं फलं॥ १॥

व्याख्या—में परमेश्वर के मन्दिर में दर्शन करने के वास्ते जाउं ऐसा ध्यान करने से एक उपवास का फल मिलता है दर्शन के लिये उठा उस वक्त में दो उपवास का फल मिलता है तथा दर्शन को जाएें के लिये मौजूद हुवा उस वक्त तीन उपवास का फल मिलता है रस्ते के वीच में पहुंचने से श्रावक को चार उपवास का फल मिलता है जिन घर में पहुंचे वाद पांच उपवास का फल होता है मूल मंडप में पहुंचने से पन्दरा उपवास का फल मिलै तथा जिन पती को नजर से देख लेवे तो एक मास उपवास का फल मिलता है इत्यादिक भाव शुद्धी करके फल जानना चाहिये केवल मुख्याता भाव की है इतने करके अष्ट प्रकारी पूजा दिखलाई अव आदि शब्द सेती सतरे प्रकारी पूजा भी दिखलाई है तथा इक वीस प्रकारी पूजा भी दिखलाते हैं न्हवण पूजा १ विलेपन पूजा २ वस्त्र युगल पूजा ३ गंध पूजा ४ पुष्प पूजा ५ माल पूजा ६ चूर्ण पूजा५ वा सक्षेप ८ ७ ध्वज पूजा ८ आभरण पूजा १० पुष्प घर पूजा ११ अष्ट मंगल १२ धूप १३ गीत १४ नाटक १५ वाजित्र १६ गुलाव जल १७ अवइक वीस प्रकारी पूजा का भेद दिखलाते हैं॥

जल पूजा १ चन्दन पूजा २ भूषण पूजा ३ पुष्प पजा ४ वास पूजा ५ धूप पूजा ६ फल पूजा ७ दीप पूजा ८ अक्षत पूजा ९ नैवेद्य पूजा १० पत्र पूजा ११ सुपारी फल पूजा १२ गुलाव जल पूजा १३ वस्त्र पूजा १४ छत्र पूजा १५ चामर पूजा १६ वाजित्र पूजा १७ गीत पूजा १८ नाटक पूजा १९ स्तुति पूजा २० भंडार वृद्धि पूजा २१ इतने करके इक वीस प्रकारी पूजा का भेद दिखलाया इस तरह से १०८ एक से आठ पूजा का भेद है सो औरग्रन्थों से जानना यह चैत्य विनय है उसके भीतर दर्शन विनय का यह तीसरा भेद जानना वाकी रह गया विनय के भेद उनको अन्य ग्रन्थ से जान लेना अव अनुक्रम सेती न शुद्धि निरूपण करते हैं जिन १ जिन मत्त २ जिन मत

स्थित ३ तहां पर जिन कोण वीतराग देव १ जिन मत किसको कहना स्यातशब्द करके सहित तीर्थंकरों का फिर माया भया यथा वस्थित जीव अजीवादिक तत्व उनको जिनमत कहते हैं २ ॥ तथा जिनमत स्थिती तथा जिनमत से रहे हुये अंगीकार करा है परमेश्वर का प्रवचन कहिये शासन उनको अंगीकार करने वाला साधू १ साध्वी २ और धर्म आदिक इन तीनों को छोड़के संसार में कुछ भी नहीं है सब असार है कहने का मतलब यह है कि वो पूर्वोक्त जिनादिक तीन पदार्थ सार है और सब कचरा है ऐसा विचारना करने से सम्यक्त शुद्ध होता है इस वास्ते इन तीनों को तीन शुद्धि कहते हैं तथा प्रकारान्तर करके यहां पर तीन शुद्धि फेर भी दिखलाते हैं ॥

गाथा—मणवयण कायाणं । सुद्धी समत्त साहणा तत्थ ॥
मण सुद्धी जिणं २ मय । वज्जम सारंमुणइलोए ॥ १ ॥
तित्थंकर चलणाराहणेण । जंमभ्कसिभ्कइनकज्जं ॥
पत्थेमितत्थनन्नं । देव विसे संचवयसुद्धी ॥ २ ॥
छिज्जंतो भिज्जंतो पीलिज्जंतो । विड़भ्कमाणोवि ॥
जिणवज्ज देवयाणं । ननमइ जो तस्सतणु सुद्धी ॥ ३ ॥

व्याख्या—मन १ वचन २ काया ३ इन तीनों करण शुद्धि करना सम्यक्त के साधनभूत जानना इन तीन करण शुद्धी से सम्यक्त पैदा होता है तथा जिनमत को छोड़ करके सर्वलोक को असारपणों मानते हैं तब मन सुद्धी होवे या प्रथम शुद्ध कहा ॥ १ ॥ तथा तीर्थंकर महाराज के चरण आराधन से मेरा काम सिद्ध नहीं भया तो इस कार्य में अन्य देव की प्रार्थना करता नहीं कहने का मतलब यह है कि जिन भक्ति करके अपना काम न हुवा तो फिर अन्य से होना नहीं इस माफिक मुख करके भाषण करना उसको वचन सुद्धी कहते हैं ॥ २ ॥ तथा शस्त्रादि करके काट डाले भेदन कर डाले आग से जला डाले मगर जिन राज देव को छोड़ करके मन करके काया करके नमें नहीं तिसको तीसरी तनु शुद्धि कहवे हैं यह तनु शुद्धि तीसरी कही अब पांच दूषण निरूपण करते हैं शंका १ कांक्षा इत्यादि । तहां पर शंका कहते हैं रागद्वेष रहित यथार्थ उपदेशक इस माफिक सर्वज्ञों का कहा हुआ जो वचन है उनमें

संशय करना उसको संका कहते हैं वो संका तो सम्यक्त का नाश करने वाली है इस वास्ते सम्यक्तियों को त्याग करना चाहिये लौकीक में भी संका करने वाले का काम सिद्ध नहीं होता जो संका नहीं करता है उसका काम अवश्य ही सिद्ध हो जायगा दो व्यवहारी का दृष्टान्त कहते हैं. एक नगर में दो जना व्यवहारी रहते थे वो दोनों जणें पूर्व कृत कर्म सेती जन्म के ही दरिद्री भये अन्यदा इधर उधर घूमरहे थे तब वहां पर एक सिद्ध पुरुष को देख करके अपने धन सिद्धि के वास्ते तिस सिद्धि की सेवा करने लग गये वो भी एक दिन की वक्त उनकी सेवा से प्रसन्न होके उन दोनों को कंथा दो दिवी इस माफिक कहा इन कंथावों को छै महिना तक गले में धारण कर के रक्खो अखीर में पांच सै मोहोर हमेसा देवेगी अब दोनों जणें कंथा लेके अपने ठिकाने गये उन दोनों व्यवहारी मांय से एक व्यवहारी नें दिल में विचार करा कि कौन जानता है ये कंथा छै महिना बाद फल की देने वाली होगी वा नहीं इस माफिक एक विचार पैदा हुवा शंका तथा लज्जा करके उस कंथा को त्याग दी तथा दूसरे ने शंका भी नहीं करी और लज्जा भी नहीं करी छै महिना तक गले में रक्खी तिस करके वड़ा रिद्धि वाला हो गया तिस के रिद्धि का विस्तार देख करके कंथा को त्याग करने वाला वणीया पश्चाताप करने लगा और दूसरा वणिया जावज्जीव तक सुखी भोगी त्यागी भया इस वास्ते भव्य जीवों को उत्तम पदार्थ में किंचित मात्र भी शंका नहीं करना यह शंका करने ऊपर दो वणियों का दृष्टान्त कहा ॥ १ ॥ तथा कांक्षा अन्य २ दर्शन की अभिलाषा करनी परमार्थ करके भगवान अर्हंत का कहा हुआ आगम पर विस्वास नहीं रक्खा तो वो भी सम्यक्त में दूषण जानना चाहिये इस वास्ते सम्यक्तियों को त्याग करना चाहिये कहा भी है लोकीक में कांक्षा करने वाला मनुष्य बहुत सा दुःख का भजने वाला होता है ऐसा दिख रहा है अब कांक्षा ऊपर दृष्टान्त कहते हैं ॥ एक नगर में कोई भी ब्राह्मण वसता था वो निरन्तर धारा नामें गोत्र देवी की आराधना करता था कोई वक्त में लोगों ने कहा कि चामुंडा वड़ी चमत्कारी देवी है उस का प्रभाव सुन करके तिसको भी आराधना करने लगा इस तरह से दोनों देवियों की उपासना करते हुये कितना काल गमाया अब एक दिन के वक्त में वो ब्राह्मण कोई ग्राम जा रहा था मार्ग में जल्दी करके आया चौतरफ से नदी का पूर उस करके वहता जाता था मगर बाहर निकलने को समर्थ नहीं हुआ दौड़ २ हे धाराकुल देवि दौड़ २ चामुंडा देवि मेरी रक्षा करो इत्यादिक वचन करके दोनों देवी का स्मरण करने लगा तव दोनों देवी ईर्षा करके आई मगर उन दोनों मांय से एक ने भी ब्राह्मण की रक्षा करी नहीं तहां पर आर्त्तरौद्रध्यान ध्याता हुवा जल में डूब के मर गया ब्राह्मण इस वास्ते हित इच्छा वालों को कांक्षा नहीं करना

चाहिये तथा अन्य भव्य को भी कांक्षा नहीं करनी इतने करके कांक्षा ऊपर एक ब्राह्मण का दृष्टान्त कहा ॥ २ ॥ तथा तीसरी विचिकित्सा श्री जिनाज्ञा के अनुसारे शुद्ध आचार धारक साधू मुनीराज वगैरे उत्तम पुरुषों की निंदा करना वो भी सम्यक्त में दोष लगाने वाली है इस वास्ते त्याग करना उचित है कारण सम्यक्त रत्न के धारक और तिस में यत्न करने वालों को अगर जो दूषण वाला भी है मगर सम्यक्ती दोष प्रकाशित नहीं कर सक्ते बलके निंदा करनी तो दूर रही तिस में निर्दोष मुनीराज की निंदा तो सर्वथा त्याग करना मुनासिब है तथा जो फेर श्रावक नाम धरा के दूसरों के आगू अपने गुरवों का अवर्णवाद कहते हैं तथा महा मंगल के कारण भूत गुरु वादिक को सामने आते हुवे देख करके अमंगल हो गया कैसे मेरा कार्य सिद्ध होगा इत्यादिक मन में विचार करने वाले महा मूर्ख जिन प्रवचन से मूं फेर के बैठने वाला एकान्त मिथ्यात्वी महा दुष्कर्म बांधने वाला जानना चाहिये क्या बहुत कहैं तिन पुरषों की इस भव में और पर भव में सिद्धिक भी होने की नहीं ॥ ३ ॥ विचिकित्सा दिखलाई ॥

अब कुदृष्टि प्रसंशा रूप चौथा दूषण दिखलाते हैं तथा खोटी है दृष्टि दर्शन जिनों की उनको कुदृष्टि कहते हैं ऐसे कौन कुतीर्थ तिनोंकी प्रशंसा तारीफ करनी उनको कुदृष्टि प्रशंसा कहते हैं उन का भी त्याग करना चाहिये जो सकल कुतिर्थियों का कुछ अतिसयादिक देख करके कहे कि इनका मत उमदा है इस में इस माफिक अतिशय वानरये हुये हैं इत्यादिक प्रशंसा करने वाले महा मूर्ख हैं मतलब विगर शुद्ध सम्यक्त रूप रत्न को मैला करते हैं यह कुदृष्टि प्रशंसा चौथा दूषण जानना ॥ ४ ॥ अब पांचवां दूषण कहते हैं कुदृष्टि संसर्ग याने उस कुदृष्टियों से आलापसंलापकरणा परिचय रखना यह कुदिष्टि संसर्ग पांचमा दूषण है यह कुदृष्टि संसर्ग भी सम्यक्त में दूषण देने वाला है इस वास्ते त्याग करना उचित है शुद्ध दृष्टि वाले साधू वगैरे से हमेसा परिचय रखना चाहिये अन्यथा नंदमणिकार की तरह से पाया हुवा सम्यक्त रूप धर्म मगर कुदृष्टि परिचय से चला गया इस वजे से पांचवां दूषण कुदृष्टि परिचय के ऊपर नंद मणिकार का दृष्टान्त कहते हैं। राजगृह नगर में एक दिन की वक्त श्री वर्धमान स्वामी समवसरे तब श्रेणिकराजा को आदि लेके श्रावक लोक वंदना करने वास्ते गये तब सौधर्म देवलोक में रहने वाला दुदुरांक नामे देवता चार हजार सामानिक देवता के परिवार सहित महावीर स्वामी प्रतें वंदना करने के लिये आया और सूर्याभि देवता की तरह से श्री वीर प्रभु के आगू बत्तीस बध नाटक करके अपने देवलोक में गया तब श्री गौतम स्वामी ने प्रश्न पूछा कि हे भगवान इस देवने ऐसी रिद्धि कौन पुन्य करणी से पाई सो फरमाइये तब भगवान ने फरमाया इस पुर में एक धनवान नंद मणिकार सेठ रहता

था वो एक रोज हमारे मुख से धर्म सुन करके सम्यक्त पूर्वक श्रावक धर्म अंगीकार करा बहुत काल तक पालन करा अब कदाचित कर्म योग्य करके तथा कुदृष्टियों की संगते करके तिस माफिक साध्वादिक के परिचय के अभाव सेती तिस के मिथ्या बुद्धि बढ़ने लगी उत्तम बुद्धि धीरे २ मंद होने लगगई अब मिश्र परिणामों करके काल पूर्ण कर रहा है वो सेठ एक दिन ग्रींष्मकाल की मोसममें अष्टमतप सहित पोषध किया तब तीसरे दिन मध्य रात्री में प्यास में पीडित होके आर्त्तध्यान उत्पन्न हुआ फेर ऐसा मन में विचार करने लगा ॥

श्लोक–धन्यास्तएव संसारे। कारयंति वहूनिये॥
वापी कूपादि। कृत्यानिपरोपकृतिहेतवे ॥ १ ॥

व्याख्या—धन्य है वेई संसार में बावड़ी कुवा वगैरे कृत्य करते हैं बहुत से पापी कूप बगैरे वनवाते हैं पर उपगार के वास्ते ॥ १ ॥

श्लोक–धर्मोपदेशके श्चापि । प्रोक्तोसौधर्म उत्तम ॥
येत्वाहुर्दुष्टतामत्रतदुक्ति । द्रश्यते वृथा ॥ २ ॥

व्याख्या—धर्म उपदेश देने वालों ने भी यह धर्म उत्तम कहा है जो लोग इस कृत्यों को खराव बताते हैं सो उनका कहना वृथा है ॥ २ ॥

श्लोक–ग्रीष्मर्त्तौ दुर्वलासत्वा। स्तृषार्त्ता वापीकादिषु॥
समागत्य जलं पीत्वा। भवंति सुखनोयत ॥ ३ ॥

व्याख्या—ग्रीष्मरितू याने जेठ असाढ़ यह दोनों मास ग्रीष्म रितु में कहा है गोया धूप रितू में दुर्वल सत्व प्राणी भूत जीवादिक प्यास में पीडित होके उन पूर्वोक्त बावड़ी कुवा तालावादिकों में पानी पीने के लिये आते हैं तहां पर जल पीके सुखी हो जाते हैं इस वास्ते यह काम भी धर्म का है ॥ ३ ॥

श्लोक–अतोहमपिच प्रात। वापी मेंकां महत्तराम् ॥
कारयिष्यामितस्मान्मे। सर्वदा पुण्य संभवः॥ ४ ॥

व्याख्या—इस वास्ते मैं भी सवेर बड़ी भारी एक बावड़ी करवाउंगा तिसका पुन्य

हमेशा होता रहेगा और पुन्य का कारण रहा हुवा है इस माफिक ध्यान ध्यारहा था सर्व रात्रि को पूरण करके सवेरा होने से पारणा करके श्रेणिक राजा का आदेश लेके वैभार गिरी के पास एक मोटा पुष्करणी बावड़ी बनवाई तिस बावड़ी के चौतरफ नाना वृक्षों करके शोभित दान शाला तथा मठ मंडप देहरीयें याने छत्रीयें मंडितवन बनवाया उस वक्त में बहुत कुदृष्टि परिचय सेती सर्वथा प्रकार करके धर्मत्यक्त कर दिया जिसने तिस मणि फारकै बहुत दुष्कर्म के उदय सेती शरीर में सोले मोटे रोग उत्पन्न हो गये उनका नाम दिखलाते हैं ॥ कास रोग १ स्वास रोग २ ज्वर रोग ३ दाह रोग ४ पेट सूल रोग ५ भगंदर रोग ६ हरस रोग ७ अजीर्ण रोग ८ दृष्टि रोग ९ पृष्टसूल रोग १० अरुचि रोग ११ कंडू १२ जलोयरे १३ सासे १४ कमवंदन १५ कुष्ट १६ यह सोले महारोग गाथा द्वारा फिर भी दिखलाते हैं ॥

गाथा—कासे, सासे जरे दाहे । कुच्छि सूले भगंदरे ॥
हरसा अजीरए दिठी । पिट्ठ सूले अरोअए ॥ १ ॥
गंडूजलोयरे सीसे । कन्ने वेयण कुट्ठए ॥
सोल सएएमहारोगा । आगमंमि विया हिया ॥ २ ॥

व्याख्या—इन सोला रोगों करके पीडित सेठ होगया मोटी व्याथा से मर करके उसी बावड़ी में जाने का रहा ध्यान एकाग्रता पूर्वक ध्यान के वस सेती बावड़ी में गर्भज मेंडक पणें उत्पन्न हुआ तहां पर तिसकों अपनी बावड़ी देखने से तिस मेंडक को जाती स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुवा तब वो दुर्दुरनामें मेंडक इस माफिक धर्म विराधना का फल जान करके उसको वैराग्य उत्पन्न हुवा और फिर ऐसा नियम कर लिया आज से वेले २ तप करना चाहिये पारणें के दिन बावड़ी के किनारे पर मनुष्यों के स्नान करने सेती फासू होगई मट्टी वगैरे खाना चाहिये ऐसा नियम लेके कालपूर्ण कर रहा था अब तिस अवसर में तिस बावड़ी पर स्नान करने वाले लोक जाते थे उन लोगों के मुखसेती हमारे आने की प्रवृति सुन करके मुझको पिछले भव का धर्माचार्य जान करके वन्दना करने के लिये निकला तब लोगों ने करुणा बुद्धि करके पानी के भीतर डालने लगे मगर चित्त एकाग्रता वन्दनों में रहा इस माफिक फिर भी जल के बाहर निकला तितने में क्या बात हुई है कि भक्ति करके सहित बहुत परिवार संयुक्त श्रेणिक राजा मुझको वन्दना करने के वास्ते आ रहा था तब कर्म योग सेती मेंडक भी तहां पर आया तब श्रेणिक राजा के घोड़े के खुर से चोट लगी तहां पर शुभ ध्यान सेती मर

करके सौ धर्म देव लोक में दुर्दुरांक नामें देवता मोटी रिद्धि वाला उत्पन्न हुवा उत्पत्ति के बाद अवधि ज्ञान सेती सब अपना पूर्व भवस्मरण करा मुझको यहां पर समवसरे जान के जल्दी आके वन्दना करके अपनी रिद्धि दिखलाके अपने देवलोक में चला गया इस देवता ने हे गौतम इस करणी करके इतनी रिद्धि पाई है तब गौतम स्वामी ने फिर प्रश्न पूछा कि हे स्वामी यह देवलोक से चव करके कहां जावेगा तब भगवन्त बोले कि महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होके मोक्ष जावेगा इस माफिक कुदृष्टियों के परिचय का फल देख करके सम्यक्तियों को सर्वथा त्याग करना चाहिये इतने करके कुदृष्टिपरिचय के ऊपर नन्दमणिकार का दृष्टान्त कहा ॥ ५ ॥ यह पांच सम्यक्त के दूषण हैं सम्यक्त में दोष लगजावे जिस करके उनको दूषण कहते हैं शंका को आदि लेके पांच दूषण कहा है इनों से सम्यक्त मैला हो जावे इस वास्ते सम्यक्तियों को त्याग करना उचित है अब आठ प्रभाविक बतलावे हैं ॥ प्रवचन १ इत्यादि प्रवचन नाम बारे अंग के जानने वाले वा बारे अंग का रचन करने वाले वो अतिशय जिनों में रहा है उनको प्रवचनी कहते हैं वर्तमानकाल के योग्य सूत्र अर्थ को धारण करने वाले तीर्थ रक्षा करने वाले आचार्य यह देवर्धि गणीक्षमा श्रमण की तरह से आदि का प्रभावक याने शासन की प्रभावना करने वाले यह प्रथम हुवे। यह प्रवचनी नामें प्रथम प्रभावीक जानना चाहिये ॥ १ ॥ तथा दूसरा धर्म कथीक धर्म कथा कहने के मुख्य आचार्य जानना और उनका नाम भी धर्म कथा सार्थक है जो क्षीरा श्रवादि लब्धि करके सहित जल सहित मेघ गर्ज्जार व ध्वनी करके आक्षेपणी १ विक्षेपणी २ समवेदनी ३ निर्वेदनी ४ यह चार प्रकार की धर्म कथा कह करके भव्य जीवों के मन में आल्हादता उत्पन्न कर देवे। तथा इस माफिक धर्म कथा कहके बहुत भव्य जीवों को उपदेश देके प्रति बोध देवे ऐसा नंदिषेण धर्म कथा जानना चाहिये अब यहां पर चार कथा का लक्षण निरूपण करते हैं ॥

श्लोक—स्थाप्यते हेतु दृष्टांतैः। स्वमतंयत्रपंडितैः ॥
स्याद्वादध्वनि संयुक्तं। साकथा क्षेपणीमता ॥ १ ॥

व्याख्या—हेतु दृष्टान्त करके अपने मत को स्थापन करना पंडितों ने कहा तथा फिर वो मत कैसा है कि जिस में स्याद्वादध्वनि करके सहित ऐसा कथा का नाम आक्षेपणी कहते हैं ॥ १ ॥

श्लोक—मिथ्यादृशां मतंयत्र। पूर्वा पर विरोधकृत ॥

तन्निराक्रीयते सद्भिः । साचविक्षेपणी मता ॥ २ ॥

व्याख्या—मिथ्यात्वियों के मत में पहिली पीछे विरोधता के उनको खंडन करना पंडित लोगों ने जहां पर उस कथा का नाम विक्षेपणी जानना ॥ २ ॥

श्लोक—यस्याः श्रवण मात्रेण । भवेन्मोक्षाभिलाषिता ॥
भव्यानांसाचविद्भिः । प्रोक्तासंवेदनी कथा ॥ ३ ॥

व्याख्या—जिस कथा के सुनने सेती भव्य जीवों के मोक्ष अभिलाषा हो जाना उतको पंडित जन संवेनी कथा कहते हैं ॥ ३ ॥

श्लोक—यंत्र संसार भोगांग । स्थिति लक्षन वर्णनं ॥
वैराग्य कारणं भव्यं । प्रोक्ता निर्वेदनी कथा ॥ ४ ॥

व्याख्या—जहां पर संसार के भोग तथा अंग के स्थिति लक्षण का वर्णणकरणा उनको पंडित जन निर्वेदनी कथा कहते हैं । अब यहां पर धर्म कथा ऊपर नंदिषेण का वृत्तांत कहते हैं । एक नगर में एक धनवान सुखप्रिय नामें ब्राह्मण रहता था वो मिथ्यात्व में मोहित होके एक रोज यज्ञ करना सुरू करा तहां पर रांधे भये अन्न की रक्षा के वास्ते भीम नामें अपने दास को ऐसा हुक्म दिया तब तिस दास ने अपने मालिक ब्राह्मण से विनती करी अगर ब्राह्मण के भोजन करै बाद जो कुछ बाकी रहे तो मुझको दोगे तो मैं भी रक्षा करने वाला हो जाउंगा ऐसा दास का वचन सुन करके बात मंजूर करी तब घर के मालिक ने ब्राह्मण जिमाया बाकी जो बच गया था अन्न उससे दास को दे दिया तिस दास ने सम्यग् दृष्टि साधुवों को दान दिया तथा अनुकंपा लाके अन्य मतीयों को भी दान पात्र किया तिस करके महाभोग कर्म पैदा करा अब कितने काल बाद वो दास मर करके देवता हुवा तहां सेचव करके राज गृह नगरी में श्रेणिक राजा के पुत्र पणें उत्पन्न हुआ तिसका नाम नंदिषेण रक्खा गया तब तिस वक्त में ब्राह्मण का जीव कोई भवों मते भटक करके कदली वन में हुस्तिनी के समुदाय में एक हथिणी की कूख में गर्भ पणें उत्पन्न हुवा तिस यूथ में यूथ पती हाथी दूसरे हाथीयों को तकलीफ देवे उस संका से जिस वक्त में हाथिणी के बच्चे के जन्म का मौका आवे उस वक्त में पैदा होते हुये बच्चों को मार डाले और हथिणी की रक्षा करे तब तिस वक्त में जिस की कूख में उत्पन्न हुवा है वो ब्राह्मण का जीव

तब वो हथिणी गर्भ के अकुशल समझ करके कपट करके पैरों से लंगड़ाती हुई धीरे २ हाथियों के पिछाड़ी से आवे दो पैहर तथा चार पैहर में समुदाय में मिल जावे इस तरह से दो दिन वा तीन रोज में आके मिले इस तरह से चेष्टा करती तापश आश्रम में जाकरके शुंड सेती तापशों के चरण को फर्शती भई तापसों को नमस्कार करे तापस भी जिसको गर्भणी जान करके तेरे गर्भ के कुशल रहो ऐसा आशीश दियी एक दिन तापस आश्रम में हथिणी के बच्चा हुवा तापस पुत्रों ने तिस की पालना करी. हथिनी भी तहां आके तिसको दूध पिलावै इस माफिक हथिनी का बच्चा तापस पुत्रों के साथ खेले क्रीड़ा करते रहे तिन बालकों के साथ शुंड करके नदी से पानी लाके तापसों के वृक्ष को सींचे इस तरह से वृक्ष सींचन क्रिया देख करके तिस बच्चे का नाम सेचनक ऐसा नाम रख दिया इस तरह से बढ़ता हुवा तीस वर्ष का वो हाथी होगया एक दिन के वक्त में वन में घूमता हुवा तिस यूथपती हाथी को देखा तब यह जवान पट्ठा था बलवान था तिस वृद्ध हाथी को मार करके आप यूथपती पणें में होगया इनसे विचार करा कि जैसे मेरी माता तापस आश्रम में मेरे को जणा तिस तरह से अन्य की माता नहीं जण सके ऐसा विचार करके उस यूथपति ने तापस आश्रम को तोड़ डाला तब गुस्सा खाके तापश जाके श्रेणिक राजा मतें गज रत्न की हकीकत कही तब राजा भी कोई एक प्रयोग करके बंधन के ठिकाने लाये बंधन के ठाण में सांकल से बांधा तब तापश देख करके वचनों से तर्ज्जना करी जैसा कर्म करता है तैसा ही फल भोगना पड़ता है इत्यादिक वचन सुन करके वो हाथी क्रोध करके बंधन तोड़ के तापसों को मारने वास्ते भगा तब तापश सब भग गये लोकों की आवाज सुन करके श्री श्रेणिक राजा का लड़का नंदिषेण नामें तिस हाथी को वश करने के वास्ते तहां पर आया तब नंदिषेण को देखने से तत्काल स्वस्थ होके यहां अवाय धारण इत्यादिक विचार करते हुयेमें तिस हाथी को अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया तब तिसने अपना पूर्व भव जानलिया नंदिषेण भी पूर्व भव स्नेह कर के तिस हाथी को मिष्ट वचन कर के संतोषित करा फिर हाथी के स्कंध पै विराजमान होके बांधने के ठिकाने ला करके तिस को बांधा तब प्रसन्न हुआ श्रेणिक राजा तिस नंदिषेण का सत्कार सहित पांच सौ कन्या के साथ लग्न करा एक दिन के वक्त में श्री महावीर स्वामी राजगृही नगरी में समवसरे तिन्हों को वंदना करने के वास्ते पिता के सङ्ग नंदिषेण भी गया तहां पर भगवान की देशना सुन कर के प्रति बोध को प्राप्त होके दिक्षा की आज्ञा भगवान से मांगी तब भगवान भी धर्म वृद्धि जान करके यथा सुखं देवानुप्रिये ऐसा कहा परन्तु मा प्रति बंधं कार्षी गोया देरी मत

करो यह दूसरा वचन व्रत में विघ्न होता देख कर नहीं कहा अब घर में माता पिता की आज्ञा सहित दीक्षा महोत्सव होरहा है तिस वक्त में आकाश में शासन देवी बोली भो नंदिषेण तुम्हारे अभी तक भोगावली कर्म बाकी है इस वास्ते कितने काल तक ठहरो पीछे दीक्षा ग्रहण करना ऐसी मन में दृढ़ता विचार करके श्री भगवान के पास दीक्षा ग्रहण करी अनुक्रम से दश पूर्व पढ़े दुःकर तपस्या तपर्खों से लब्धीवान होगये अब इन के भोग कर्म के उदय सेती मन में चंचलता प्रथम भोग भोगे थे वो याद आने लग गये तब अत्यन्त प्रगट भई काम व्यथा उसको सहन नहीं कर सका तब सूत्र में जो विधी कही है उस प्रकार मन को रोकने के वास्ते शरीर सुखाने वास्ते बहुत सी आतापना विशेष कर के तपस्या करी तौभी भोग की इच्छा दूर नहीं होती भई तब वृत भङ्ग होने के भय से मरने के वास्ते गलफांसी ग्रहण करी परन्तु उस को भी देवी ने तोड़ डाली तब फिर विष खाया वो भी देवी कैसा हाय से अमृत समान होजावे तब फिर जलन प्रवेश करा परन्तु आग भी बुझ गई इस तरह से मरने का प्रयोग सर्व निर्फल होगया अब एक रोज राजगृह नगर में अष्ट मतप के पारने के वास्ते मुनी वेश्या के घरमें भिक्षा के वास्ते प्रवेश करा फिर ऐसा कहा है घर की मालिकनी अगर तेरी श्रद्धा है तो मुझ को भिक्षा दे तुझ को धर्म लाभ होगा तब वेश्या हंसती हुई बोली धर्म लाभ में सिद्धी नहीं है यहां तो अर्थ लाभ में सिद्धी है ऐसा वेश्या का वचन सुन करके मुनि मान पर चढ़ कर कहा कि तेरे कहने माफिक अर्थ सिद्धी भी होगी ऐसा वार्तालाप कर रहे थे कि उसी समय तप लब्धि कर के वेश्या का घर साढ़े बारा करोड़ सैनियों कर के पूर्ण कर दिया सोई बात महा निसीथ सूत्र के छटे अध्ययन में कहा है॥

गाथा—धम्मलाभंतउ भणइ अत्थ लाभं विमग्गिउ।
तेणाविलब्धि जुत्तेण एवंभवउत्तिभाणियं॥ १॥

व्याख्या—धर्म लाभ के कहने से अर्थ लाभ मांगा तिन्हों ने भी लब्धि युक्ति सेती कहा कि इसी माफिक होगा तथा रिषि मंडल की टीकादिक में ऐसा भी लिखा है कि वेश्या के घर में तणखूं का झाड़ पड़ा था उस को खैंचने के साथ ही सौनैयों की वरसात होगई तत्व तो केवली जानते हैं अब वो वेश्या आश्चर्य होके जल्दी उठ के मुनी के चरणों में नमस्कार करके हाव भाव सहित मुनि के चित्त को खेच लिया फिर मुनि को ऐसा कहा कि हे स्वामी आपने इन सौनैया करके मुझको खरीद ली इस वास्ते प्रसन्न होके तुम्हारा धनं भोग वो इत्यादिक मोह प्रकृति की तरह से स्नेह रूप वचन करके मुनी के मन को भेद लिया तब यह वेश्या के वश होके कर्म उदय करके वेश्या के यहां

रहे मगर मुझको हमेशा दश पुरषों को धर्म वाशित करना चाहिये अगर इस नियम में एक भी कमि हो जावे तो दश में के जगे अपने मेंसे हो जांयगे उसके बाद मुनी वेश्याके यहां रहे तहां पर कामी लोग आते हैं तिन लोगों को नाना प्रकार की युक्ति कर के युक्त आक्षेपणी आदि चार प्रकार की धर्म कथा करके धर्म ग्रहण कर वाया इस तरह से हमेसा प्रतिवोध देकर के धर्म कथा करके भी भगवान के पास पांच महांवृत ग्रहण करवावे कितनों को वारे वृत ग्रहण करवावे खुद आप श्रावक धर्म पाल रहे थे इस तरह से वारे वरस पूर्ण करके भोगावली कर्म को जीर्ण करके एक दिन के वक्त में नव जणों को तो प्रतिवोध दे चुके थे मगर दशमाएक सोनार आया तिस को नाना प्रकार की युक्ति सहित प्रतिवोध दे रहे हैं मगर धेठाई पणा से प्रतिवोध लगा नहीं उलटा इस माफिक वोला कि आपतो खुद विषय रूप का दे में खुत रहे हो अपने को प्रतिवोध दो दूसरे को प्रतिवोध लगैगा नहीं जितने तो वेश्या नंदिषेण को भोजन करने के वास्ते बुलाया मगर प्रतिज्ञा पूर्ण हुये विगर भोजन करते नहीं दो तीन दफे रसोई ठंडी हो गई तव वेश्या तहां आकर के हास्य पूर्वक कहा कि हे स्वामी आज दशमें पुरुष के ठिकाने आपहि हो जावो इस माफिक प्रतिज्ञा पूर्त्ति करके आके भोजन करा इस माफिक समाप्तहो गया है भोग का उदय जिस सेती नंदिषेण जी फेर साधू का भेष लेके श्री भगवान के पास आकर के पांच महा वृत ग्रहण करके निर्मल चारित्र पाल करके आखिर में समाधी से मर करके देव लोकको गये तहां सें ८ भव करके महा विदेह क्षेत्र में मोक्ष जावेगा यह वात श्री वीर चरित्र के अनुसार कहा है तथा श्री महा निशीथ सूत्र के विषय केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा लिक्खा मगर तत्व तो सर्वज्ञ जानते हैं इतने करके धर्म कथा नामें दूसरा प्रवचन प्रभावीक जानना चाहिये नंदिषेण का वृत्तान्त निरूपण करा ॥ २ ॥

अब वादी नामें तीसरा प्रवचन प्रभावीक कहते हैं। वादी प्रति वादी सभ्य सभा पति ये चार प्रकार की परिषदा होती है इस परिषदामें वादी प्रति पक्षियों को खंडन करके स्याद्वाद पक्ष की स्थापना करनी उन को वादी कहते हैं यह वादी किस माफिक जानना चाहिये उपमा रहित वाद करने कि लब्धि सहित वचन विलास सेती वड़े २ पंडित श्रेणीमेयशारोपण, करने वाले कोई भी विवाद में जय पास के नहीं ऐसे वादी कौन हैं कि मल्लवादी जो वहुत जवर पंडित और वादी हो गये हैं यह मल्ल के से भये कि प्रत्यक्ष को आदि लेके समस्त प्रमाणों में कुशलता वाले अन्य वादीयों को जीते हैं राजद्वार के विषय जय रूप माहात्म मिला यह तीसरा प्रभाविक जानना मल्लवादी का दृष्टान्त तो अन्य ग्रन्थ से जान लैना ॥ ३ ॥

अब चौथा प्रवचन प्रभावीक कहते हैं। निमित्त निमित्त के तीन काल का लाभ अलाभ का स्वरूप निरूपण करना उसको निमित्त वादी कहते हैं तथा जिनमत के द्वेषी है उनको जीतने के वास्ते भद्र बाहु स्वामी की तरह से निश्चय करके निमित्त कहना तिसको निमित्तिक नामें चौथा प्रवचन प्रभावीक कहते हैं भद्र बाहु स्वामी का संबंध प्रसिद्ध है इस वास्ते यहां पर नहीं दिखाया ॥ ४ ॥

अब पांचमा प्रभावीक दिखलाते हैं। तपस्वी नाना प्रकार के तपषष्ट अष्टम को आदि लेके मुसकिल की तपस्या करने वाले उन को तपस्वी कहते हैं जो प्राणी परम उपशम रस से भरा हुवा है उनको नाना प्रकार के तप तीन उपवास चार उपवास पनरे उपवास तथा मास क्षमणादिक तपस्या जिन मत की महिमा करते हैं ऐसे कौन हो गये है काकंदिक धन्ना हो गये है काकंदि नगर के धन्ने नामें अणगार ने नौमास तक तप करा जिससे श्री महावीर स्वामी जी ने तारीफ करी गोया चौदा हजार साधवों में धन्ना अणगार उत्कृष्ट रहा है ऐसा वीर प्रभू ने फरमाया नव में अंग में तारीफ करी है यह तपस्वी नामें पांचमा प्रभावीक जानना ॥ ५ ॥

अब छट्ठा प्रवचन प्रभावीक दिखलाते हैं। तथा विद्यावान विद्या कौनसी सोले विद्या देवी मांहसे दो चार विद्या सिद्ध हो जाना तो भी उन को विद्यावान कहना चाहिये तथा फेर जिनों के शासन देवी वगैरे भी सहाय कारक हो उस में ताजुब क्या है यह श्री वज्र स्वामी की तरह से छट्ठा प्रभावीक जानना तथा श्री वज्र स्वामी का चरित्र प्रसिद्ध है इस वास्ते यहां पर नहीं कहा ॥ ६ ॥

अब सातमा प्रभावीक कहते हैं तथा सिद्ध पुरुष चूर्ण अंजन पादुलेपतिलिक गोली वगैरे का जान कार तथा समस्त भूत प्रेतादिक का आकर्षन के जानने वाले तथा वेक्रिय लब्धि सहित नाना प्रकार कि सिद्धियों के जानने वाले यह प्रभावीक संघादिक कार्य साधन करने के वास्ते तथा मिथ्यात्व कों हटाणें के वास्ते जिन प्रवचन की प्रभावना करने के वास्ते चूर्ण अंजनादि विद्या सिद्धियों को अवसर में दिखलाने वाले श्री आर्य समित सूर जी की तरह से सातमा प्रवचन प्रभावीक जानना चाहिये अब यहा पर सिद्धि पुरुष के ऊपर श्री आर्य समित सूर जी का वृत्तान्त कहते हैं ॥

आभीर देश में अचलपुर नामें नगर था तिस में बहुत से जिन प्रवचन के प्रभावना करने वाले बड़े रिद्धिवान श्रावक बसते थे तिस अचलपुर के नजदीक कन्ना १ और बेन्नना २ इन दोनों नदियों के मध्य भाग में एक ब्रह्म नामें द्वीप था तहां पर बहुत तापस रहते थे तिन तापसों में एक तापस पैर लेप की क्रिया में चतुर था पैर लेप करके हमेसा

जल मार्ग में भी स्थलमार्ग की तरह से गमन करके लोकों को आश्चर्य पैदा करै. बेन्ना नदी को उतर करके पारणे के वास्ते अचलपुर में चला आवे तव उसको इस माफिक देख करके वहुत भोलेलोक दुःसह मिथ्यात्व ताप में तप्त होके भेषों की तरह से तापस के मतरूप कीच में मग्न होगये इससे जिनमत ऊपर प्रेम नहीं उलटे अवज्ञा करने वाले वे लोक श्रावकों से इस माफिक कहने लगे हमारे मत में प्रत्यक्ष गुरु का प्रभाव देखा तिस माफिक तुम्हारे यहां कोई नहीं इस वास्ते हमारे धर्म वरोवर और दूसरा धर्म दिखाता नहीं अव एक दिन की वक्त में श्रावक लोगों ने ऐसा विचार करा कि इन दुष्टों की संगत से मिथ्यात्त्व स्थिर नहीं हो जावे ऐसा विचार करके श्रावक लोग युक्ति से हटाकें तिस तापस को दृष्टी से भी नहीं देखे अव एक दिन के वक्त में सकल सूरि गुण सहित श्री वज्र स्वामी के मामा नाना प्रकार की सिद्धि सहित श्री आर्य समितसूर जी महाराज पधारे तव श्रावक लोग सर्व मिलके वड़े आडंवर करके तहां जाके श्री गुरु महाराज के चरण कमलों को नमस्कार करके अति दीन वचनों करके, जिनमत की निन्दा का कारण सर्व तापस से हुवा यह वृत्तान्त गुरु महाराज से निवेदन करा तव गुरु महाराज वोले कि अहो श्रावक लोगो यह कपट बुद्धि वाला श्रावक तापस है मूर्ख लोगों को कोई भी पैरों के लेपादि प्रयोग करके ठगता है मगर उसमें कोई भी तप शक्ति नहीं है यह वात सुन करके वे श्रावक लोग विनय करके गुरु महाराज को नमस्कार करके अपने घरों में आकरके परीक्षा करने के वास्ते तिस तापस को अति आदर करके भोजन के वास्ते वुलवाया तव तो तापस भी खुश होके वहुत लोक सहित एक श्रावक के घर गया तव तिस तापस को आया देखके अवसर को जानने वाले श्रावक भी जल्दी उठकरके तिस तापस को योग्य स्थान में वैठा के वहुत प्रकार से वाहिर की खातिरी खूव करी तिस तापस की इच्छा नहीं भी थी मगर गरम पानी मंगा के तापस के पैर धुलाया इस कदर धुलाया कि जिस में लेप का अंश भी रहशक्ता नहीं तथा नाना प्रकार की रसोई वनवाके तिस तापस को भोजन करवाया मगर भोजन करने का स्वाद अच्छा लगा नहीं किस वास्ते पैर का लेप मिट जाने से अगाड़ी कदर्थना होनेवाली है उसके भय से भोजन अच्छा नहीं लगा अव भोजन कीये वाद जल स्थंभन होने रूप कौतुक देखने के लिये सव श्रावक इकट्टे होके तिस तापस के साथ जा रहे थे तव वो तापस भी नदी के किनारे पहुंचा उस वक्त ऐसा विचार करने लगा कि धोये वाद भी कुछ लेपका अंश वाकी होगा ऐसा विचार करके नदी में प्रवेश करा उसी वक्त वुडवुडार शब्द करके डूवने लगगया अव अनुकंपा करके श्रावक लोगों ने वाहिर निकाला तव लोक कहने लगे कि अहो

इस कपटी ने हमको बहुत काल तक ठगा इत्यादिक विचार देखने से मिथ्यात्वी लोक भी जिन धर्म के रागी हो गये इस माफिक जिन शासन का प्रभावना करने कराने वाले नाना प्रकार के योग के जानने वाले सकल लोगों को चमत्कार दिखलाने के वास्ते श्री आर्य समित सूरि महाराज तहां पधारे तब नदी के वीच में चूर्ण वगैरे द्रव्य डाल करके सब लोगों के सामने कहने लगे हे वन्ने हम पार पहुंचेंगे ऐसी इच्छा है तब तो जल्दी से दोनों कुल मिल गया गोया दोनों धारा एक हो गई ऐसा स्वरूप देख करके सर्व लोग आश्चर्य पाया तथा जिस आनन्द का कुछ पार है नहीं ऐसे आनन्द सहित चार प्रकार के संघ सहित आचार्य महाराज पार भूमि पहुंचे गोया नदी के उस किनारे पर पहुंचे तहां पर बहुत धर्म उपदेश दान करके सर्व तापसों को प्रति वोध दिया तिस से सर्व का मिथ्यात्व दूर होगया सर्व तापस श्री गुरु के पास दीक्षा अंगीकार करी तिन तापस साधुवों से ब्रह्म द्वीपि शाखा सिद्धान्त में प्रसिद्ध भई अव श्री आर्य समितसूरि जी महाराज इस माफक प्रचंड पाखंड मतके खंडन करने वाले वहुतसी जिनमत की प्रभावना करके तथा परम जिन धर्म के रागियों के मन रूप कमल को विकस्वर करने वाले ऐसे गुरु महारज और ठिकाने विहार करा वे श्रावक लोग भी नाना प्रकार की धर्म क्रिया करके जिन शासन की उन्नति करने वाले सुख करके गृहस्थ धर्मपाल करके अच्छी गती में उत्पन्न हुये। यह आर्य समित सूरि जी का वृत्तान्त कहा इतने करके सिद्ध नामें सातमा प्रभावीक जानना ॥ ७ ॥ अब कवी नामें आठमा प्रभावीक कहते हैं। तथा कवी नाम उसका है नये २ वचन की रचना करना श्रोता के मन को आल्हाद पैदा करे नाना प्रकार की भाषा करके सहित गद्य पद्य बन्ध करके वणवकरणा याने वरणन करना उसको कवी कहते हैं। यह कवी भी उत्तम धर्म वृद्धि के वास्ते तथा प्रवचन प्रभावना करने के वास्ते सोभायमान वचन रचना करके राजादिक उत्तम पुरषों को प्रतिवोध देनेवाले श्री सिद्धसेन दिवाकर की तरह से आठमा प्रभावीक जानना अब यहां पर श्री सिद्धसेन का वृत्तान्त दिखलाते हैं। उजयनी नगरी में विक्रमादित्य राजा तिस के पुरोहित का पुत्र देव सिका की कूख में उत्पन्न हुवा सर्व विद्या का जानने वाला मुकुन्द नामें ब्राह्मण एक दिन के वक्त में विवाद करने के वास्तें भडोंच नगर में जाने लगा तव रस्ते में श्री वृद्धवादी सूरि गुरु महाराज मिले तब ऐसा विचारा कि जो हार जायगा वोई शिष्य हो जायगा ऐसी प्रतिज्ञा करके पास में थे गोवा लीये लोगों को साक्षी करके आर्चय महाराज के साथ विवाद करने के लिये संस्कृतवानी करके पूर्व पक्षग्रहण करा तब तिस को सुन करके गोवालीया बोले इस वानी में हम कुछ भी

नहीं समझते हैं इस वास्ते यह कुछ भी नहीं जानता तव अवसर के जानने वाले वृद्ध-वादी जी गुरु महाराज ओघे को कमर में वांध के चिमटी बजा के नाटक करके इस माफक गाना किया ॥

गाथा—नविचोरीय इन विमारि यइ। परदारा गमण निवारिये॥
थोड़े थोड़े सयइ । सग्गमटामठजायइ ॥१॥

तथा फिर भी दूसरा दोहा कहा॥

दोहा—कालउकंवल अरुनीछट्ट । छासइ भरियोदीवडथट्ट ॥
एवड़ पड़ियोनी लइझाड़ । अवरकिसुंछै सग्गनिलाड ॥२॥

व्याख्या—इस माफिक वाणी सुन करके खुश होके गोवालिया वोले यह वृद्ध जीता जीता तव वृद्धवादी गुरु महाराज राज सभा में जा करके तहां पर भी विवाद में जीत के अपना शिष्य कर लिया तव तिस का नाम कुमुदचन्द दिया तथा सूरि पद भी मिला तथा फिर भी श्री सिद्धशेश दिवाकर नाम रक्खा वे एक दिन कोई भट्टविवाद के वास्ते आया तिस भट्ट को सुनाने के वास्ते णमो अरिहंताणं इत्यादिक पाठ के ठिकाने नमोर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः इस माफिक चौदे पूर्व के आड़ी में रहा हुवा प्राकृत उसको संस्कृत कहके वतलाया तव फिर भी एक दिन के वक्त सिद्ध सेनाचार्य गुरु महाराज से ऐसा कहा यह सर्व सिद्धान्त प्राकृत मई है तिस सर्व को संस्कृत वचन करकेवणाउं तव गुरु महाराज वोले॥

श्लोक—बालस्त्रीमंद मूर्खाणां । तृणांचारित्र कांक्षिणां॥
अनुग्रहायतत्वज्ञे; । सिद्धान्त प्राकृतःकृतः ॥ १ ॥

व्याख्या—वालक १ स्त्री २ मंद ३ और मूर्ख ४ तथा मनुष्य ५ तथा चारित्र की वांछा करने वाला इतनों के आग्रह सेती तत्व के जानने वाले सिद्धान्त को प्राकृत किया इस वास्ते ऐसा वोलने से तुझ को महा प्रायश्चित लगा ऐसा कहके गछ के वाहिर कर दिया तव श्री संघने आके विनती करी हे स्वामी यह कवी है और महागुण सहित है और प्रवचन का प्रभावीक है इस वास्ते गछ के वाहिर मत करो इस माफिक अति आग्रह करने से गुरु महाराज वोले अगर द्रव्य करके मुनी का भेष छोड़ के दूसरा भेष वणा के रहे और भाव करके मुनि स्वरूप को छोड़े नहीं नाना प्रकार की तपस्या करके आखिर में अट्ठारे राजावों को प्रतिवोध देके जैनी करेगा तथा नवीन एक तीर्थ प्रगट

करेगा तव गच्छ में लेगें अन्यथा नहीं तव ऐसा गुरु महाराज का वचन सुनके यथोक्त रीती से विचर करके उज्जयनि गये तहां पर एक रोज घोड़े चलाने के वास्ते जा रहा था श्री विक्रम राजा गली में जाता हुवा देखके सिद्धसेनाचार्य को पहिचान के ऐसा पूछा तुम कौन हो तब आचार्य महाराज बोले कि हम सर्वज्ञ पुत्र हैं तव राजा मन में नमस्कार किया तब आचार्य महाराज हाथ ऊंचा करके ऊंचे स्वर करके धर्म लाभ दिया तव राजा बोला किस को धर्म लाभ देते हो तव आचार्य महाराज बोले जिसने हमको नमस्कार करा तिसको धर्म लाभ दिया तव प्रसन्न हुवा राजा सिद्धसेन दिवाकर को ऐसा कहा कि आप अपने चरणों करके मेरा सभा स्थान है उसको पवित्र कीजियेगा ऐसा कहके राजा अपने स्थान चले गये अब एक दिन के वक्त में श्री सिद्ध सेनाचार्य श्री विक्रम राजा के नवीन श्लोक चार रचन करके राजद्वार में पधारे प्रतीहार के मुखसेती श्लोक द्वारा कहलाया ॥

श्लोक-दिदृक्षुर्भिक्षुरायातो । द्वारे तिष्ठति वारितः ॥
हस्तन्यस्तचतुश्लोको । यद्वागच्छ तुगच्छतु ॥१॥

व्याख्या—आप को देखने के वास्ते एक भिक्षुक आया है सो दरवाजे वाहिर ठहरा हुआ है सिपाही भीतर आने देता नहीं तथा हाथ उसके चार श्लोक रक्खा हुवा है भीतर आनेदूं या जानेदूं तब राजा बोला कि ॥

श्लोक-दीयतां दसलक्षाणि । शासनानि चतुर्दशः ॥
हस्तन्यास्त चतुश्लोको । यद्वा गछतुगछतु ॥ २ ॥

व्याख्या—दस लाख द्रव्य दे देवो. चौदे ग्राम दे देवो तव विक्रमा राजा भीतर बुल वाया पूर्व दिश के सिंहासन में वैठा हुवा तिस वक्त में आचार्य महाराज एक नया श्लोक पढ़ा ॥

श्लोक-आहते तवनिःस्वाने । स्फुटितेरिपुहृध्वटे ॥
गलिते तत्प्रिया नेत्रे । राजंश्चित्रमिदं महत ॥ ३

व्याख्या—ऐसा सुन करके राजा दक्षिण दिशा के सामने मुख करके बैठा और विचार करा कि पूर्व दिशा का राज्य तो दश भिक्षुक को दे चुका तव आचार्य महाराज भी दक्षिण तरफ जाके दूसरा श्लोक सुनाया ॥

श्लोक—अपुर्वेयं धनुर्विद्या । भवता शिक्षिता कुतः ॥
मार्गणौघ समभ्येति । गुणोयाति दिगंतरं ॥ २ ॥

व्याख्या—ऐसा सुन करके राजा पश्चिम दिशा की तरफ बैठ करके रहा है उस वक्त में आचार्य महाराज भी राजा के सामने जाके तीसरा श्लोक सुनाया ॥

श्लोक—सरस्वती स्थिता वक्रे । लक्ष्मी कर सरोरुहे ॥
कीर्ति किंकुपिता राजन । येन देशांतरे गता ॥ ३ ॥

व्याख्या—ऐसा सुन करके राजा उत्तर दिशा की तरफ बैठ गया तब आचार्य महाराज भी राजा के सामने जाके चौथा श्लोक सुनाया ॥

श्लोक—सर्वदा सर्वदोसीति । मिथ्या संस्तू यते बुधै ॥
नार योले भिरे पृष्टं । नवक्षः परयोषित ॥ ४ ॥

तब तो राजा बहुत प्रसन्न होके जल्दी सिंहासन से उठ करके बोला कि चार दिशावों का राज्य तो अचार्य को दिया तब आचार्य महाराज ने फरमाया कि मुझ को राज्य की जरूरत नहीं तब राजा बोला कि तो आप क्या मांगते हैं तब आचार्य महाराज ने फरमाया कि जिस वक्त हम तुमारे पास आवें उस वक्त हमारा उपदेश सुना करना तब राजा ने भी प्रमाण किया बाद सिद्ध सेना चार्य महाराज भी धर्म शाला में पधार गये अब एक दिन के वक्त आचार्य महाराज महा काल के मंदिर जाके शिव पिंडी ऊपर अपना पैर रखके सो गये तब पुजारी वगैरे बहुत लोगों ने उठाया मगर तौभी उठे नहीं तब लोग जाके राजा से बिनती करी कि हे स्वामी कोई एक भिक्षु आके शिव पिण्डी के ऊपर पांव करके सोता है उठाया मगर उठै नहीं तब राजा बोला कि मार पीट कर के दूर करो तब राजा के आदेस सेती वे पुरुष कुशा लकड़ी वगैरे का प्रहारों करके मारने लगे मगर वो प्रहार जो है रणवास में रानियों के शरीर में लगे लेकिन आचार्य के नहीं लगे बड़ा भारी कोलाहल हुआ राजा भी आश्चर्य और बिस्मय सहित तथा खेद पूर्वक विचार ने लगा कि ये बात क्या भई सब से पूछा तब किसी ने कहा हे स्वामी कोई एक भिक्षुक को महा काल के मंदिर में मारते हैं उसी का घाव रानियों के लगते हैं तब राजा आप महाकाल के मंदिर में गया तहां पर आचार्य को देख के पहिचान लिये तब पूछा कि ये बात क्या है महादेव के सिर ऊपर पांव रखना उचित नहीं महादेव

तो मोटे देव हैं इनों की आशातना करनी मुनासिब नहीं तब आचार्य महाराज बोले कि महादेव तो अन्य ही हैं जो महादेव हैं उसकी स्तुति मैं करता हूं आप सावधान होके सुनो। कल्याण मंदिर स्तोत्र रचन करने लगे यावत इग्यारमा काव्य रचन कर रहे थे उस वक्त में जमीन कंपायमान भई लिंग फट गया धूम्र निकली प्रथम तेज फैल गया तब धरणेंद्र सहित श्री पार्श्वनाथ स्वामी की मूर्त्ति निकलि पेस्तर यहां पर अयवंती सुकमाल का पुत्र महाकाल नामें लोक में प्रसिद्ध अपना पिता नलिनिगुल्म विमान में चला गया तब काउसग्ग की जंगों के ठिकाने नवीन मन्दिर बनवा के स्थापन किया तब फेर भी कितने काल गये बाद मिथ्या दृष्टियों ने तिस मूर्ति को ढांक करके रुद्र का लिंग स्थापन कर दिया अब इस वक्त में मेरी स्तुति करके लिंग फूट गया तिंस मांय सेती श्री पार्श्व नाथ स्वामी की मूर्ति प्रगट भई यहबात देखने और सुनने से विक्रम राजा के दिल में चमत्कार सहित खुश भक्ती पैदा भई उसी वक्त राजा कों जिनोक्त तत्व रुचि रूप उत्तम सम्यक्त रत्न की प्राप्ति भई तब राजा श्री पार्श्वनाथ स्वामी के मन्दिर के खरच के लिये शौ गाम दिये तब फेर भी आचार्य महाराज के पास सेती सम्यक रत्न अंगीकार करा श्रावक भया तब सिद्ध सैनाचार्य महाराज विक्रक राजा के अनुयायी और अट्ठारे राजा था उन्हों को भी प्रति बोध दे दिया तब तिनों के गुण में प्रसन्न होके विक्रम राजा आचार्य को पालखी दिया तिसपर चढ़ करके हमेसा राज भवन में जावे तब वृद्धवादी गुरु महाराज को मालूम पड़ा और विचार किया कि सिद्धसेना चार्य जिस काम कौ गये थे वो काम तो सिद्ध कर लिया मगर खुद प्रमाद रूप कादे में मग्न हो गया तिसवास्ते तहां पर जाके तिस को प्रतिबोध देऊं ऐसा विचार करके उज्जयिनी नगरी में पधारे तहां पर कोई प्रकार करके भी गुरु महाराज तिनों के पास जा सक्ते नहीं इस वास्ते पालखी उठाने वाला भोई का रूप बना के तिस के घर के दरवाजे पर बेठ गये जिस वक्त में पालकी ऊपर चढ़ करके राज भवन प्रतें चलने लगे तब वृद्धवादी गुरु एक भोई के ठिकाने लग गये वृद्ध था इससे धीरे २ चलने लगा तब सिद्ध सेनाचार्य बोले।

श्लोक—भूरि भार भरा क्रांत । स्कंधः किंतव वाधति इति॥
आत्मने पदस्थाने परस्मै । पदमित्तइति अपशब्द गर्वेण न ज्ञात॥

व्याख्या—बहुत भार के बजे से तेरे स्कंध में तकलीफ होती है यहां पर वांधती ऐसा आत्म के पद के ठिकाने पर स्मैपद अशुद्ध निकाल दिया गर्व करके मालूम पड़ा नहीं तब गुरु महाराज बोले॥

श्लोक—नतथा वाधते स्कंधो । यथा वाधति वाधते ॥
नहीं है वाधा खंधों पर । मगर वाधती यह वाधा करें हैं ॥

व्याख्या—ऐसा सुन करके सिद्धसेनाचार्य चमत्कार मानकर के दिल में विचार करा कि यह कौन है मगर गुरू छिपे नहीं रहते वृद्धवादी गुरू को जान करके जल्दी पालखी सेती उतर करके पावों में पड़ गये मेरा अपराध क्षमा करियें ऐसा वारंबार कहा तब गुरु महाराज फिर प्रतिबोध देके श्री संघ के सामने मिथ्यादुःकृतदिलाके तथा और भी क्रिया कांड करवा के गच्छ में लाये ऐसे श्री सिद्ध सेन दिवाकर बहुत काल तक वीरतीर्थ की प्रभावना करके अन्त में देवलोक में पधारे यह सिद्धसेन का वृत्तान्त कहा यह कवी नामी आठमा प्रभावीक जानना यह प्रवचनी कों आदि लेके आठ प्रभावीक कहे यह स्वभाव करके देशकाल के योग्य सहाय कारक प्रकाशन करनेवाले इस वास्ते इनों को प्रभाविक कहा ॥ इनों की सेवा भक्ती प्रभावना करने से सम्यक्त निर्मल होता है अब अन्य प्रकारान्तर करके आठ प्रभावीक दिखलाते हैं ॥

गाथा—अइसेसइड्डि १ धम्म कहि २ वाई ३ आयरिय ४ खवग ५ निमित्ति ६ विज्ञाव ७ रायगणसमयाय ८॥ तित्थप्पभावंति १.

व्याख्या—अति शेश अवधि मनपर्यव ज्ञानी आमौषधी को आदि लेके लब्धिरूप रिद्धि जिनमें रहती है उनको अति श्रेष्ठ रिद्धि धारक कहते हैं तथा क्षपक तपस्वी नृपवल्लभ महाजनादि संमत यह नाम दिखलाके प्रवचनी ऊपर देवर्द्धिगणि क्षमा श्रमण का दृष्टान्त देते हैं एक दिन के वक्त राजगृह नगरी में श्री वर्धमान स्वामी समवसरे देवतों ने समवसरण की रचना करी वारे पर्षदा मिली तहां पर सौ धर्मेंद्र भी आके भगवान प्रतें तीन प्रदिक्षिणा देके बन्दना करके योग्य जगह बैठे तब भगवान सकल भव्यों के उपगार के वास्ते जल करके सहित मेघ गरजारव ध्वनि करके परम आनन्द अमृत समान अज्ञानरूप अन्धकार को मिटाने वाले समस्त जीवों के चित्त को चमत्कार पैदा करने वाले महा मनोहर धर्म देशना दीये तब देशना के वाद इन्द्र महाराज ने पूछा कि हे स्वामी अब इस अवसरपनी में आपका तीर्थ कितने काल तक प्रवर्त्तन होगा कौन रीति से विच्छेद जावेगा तब भगवान ने फरमाया हे इन्द्र एक बीस हजार वर्ष प्रमाण पंचम आरा तक मेरा तीर्थ रहेगा तब पंचम आरे के अन्त दिन में प्रथम दिन में श्रुत १ सूरि २ धर्म ३ संघ ४ इत्यादिक विच्छेद जांयगे तथा दो पैर को विमल वाहन राज सुधर्म मंत्रि तथा तिस का धर्म विच्छेद होगा तथा सांझ की वक्त वादर, अग्नि

विच्छेद होगा इस माफिक तीर्थ विच्छेद होगा तब फिर इन्द्र ने पूछा कि हे स्वामी आप का पूर्वगत सिद्धान्त कितने कालतक रहेगा भगवान ने फरमाया कि भोइन्द्र एक हजार बरस तक मेरा पूर्व रहेगा पीछे विच्छेद होगा तब फिर इन्द्र ने पूछा कि कौन आचार्य सेती सर्व पूर्व की विद्या जावेगी तब स्वामी ने फरमाया कि देवर्द्धि गणि क्षमा श्रमण सेती तब फिर इन्द्र ने पूछा कि हे स्वामी अभी देवर्द्धि गणि क्षमाश्रमण का जीव कहां है तब स्वामी ने फरमाया कि जो तेरे पास में बैठा है हरिण गमेपी देवता है सो तेरे पैद लोका अधिपती है यहि देवर्द्धि का जीव रहा है यह सुन करके आश्चर्य सहित हरिण गमेषी की तारीफ करी हरिण गमेषी ने हकीकत सुनी तब परिवार सहित इन्द्र भगवान को नमस्कार करके अपने देवलोक में गया अब हरिण गमेपी देवता का अनुक्रम करके आयुकर्म के दलीये क्षय होने से छै महीना बाकी रहगया तब मनुष्य भव का आयु बांधा तब अपनी फूल माला मैली होने लगी कल्प वृक्ष कंपायमान भया इत्यादिक च्यवन का लक्षण देख के इन्द्र प्रतें विनती करी कि हे स्वामी सर्व प्रकार कर के आप पोषन करने वाले मालिक हो इस वास्ते मेरे ऊपर कृपा करके ऐसा करो कि जिस में परभव के विषय भी धर्म प्राप्त होवे किस वास्ते अगर धर्म नहीं मिलने से फिर योनी रूप यंत्र के संकट में पड़ जाने से दोनों तरफ से अंधकार से लुप्त होगया है चेतन तथा चक्षु जिस का सात धातु से बंधा हुआ शरीर अग्नि वर्ण जैसा बहुत सी सुइयों को तपा करके इकदम शरीर में चुभावें तिस से भी गर्भ में वेदना ज्यादा है तिस वास्ते अगाड़ी भव में देवता में सुख में धर्म करनी विस्मृत होजायगी इस वास्ते मेरे ठिकाने जो उत्पन्न होवे हरिणे गमेपी देवता को मेरे पास प्रतिबोध देने के लिये भेजना जिस करके प्रभू की प्रभुताई परभव में भी सफल होजावे इन्द्र महाराज ने भी यह बात मंजूर करी तब फिर हरिणेगमेषी देवता अपने विमान भीत पर वज्र रत्न कर के ऐसा लिखा जो इस विमान पर हरिणे गमेषी उत्पन्न होवे वो मुझ को परभव में प्रतिबोध देना अगर नहीं देवे तो इन्द्र के चरण कमल की सेवा से पराङ्मुखपने का दोष लगेगा अब आयु क्षय करके तहां से चव करके इस जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र में सौराष्ट्र देश में वेलाकुलपत्तन नाम नगर में अरि दमन राजा तिस का सेवक कामर्धि नामी क्षत्रिय तिस की भार्या काश्यप गोत्र की धरने वाली कलावती नामी तिस की कूख में पुत्रपणें पैदा हुआ तब कलावती ने स्वप्न में रिद्धी वाला देवता का स्वप्न देखा अनुक्रम से शुभ लग्न में पुत्र जन्म भया तब स्वप्न के अनुपाई देवर्द्धि ऐसा नाम दिया पांच धायों कर के लालन पालन होरहा है अनुक्रम से बारह वर्ष का लड़का भया तब पिता ने दो कन्या परणाई तिनों के साथ विषय सुख भोग रहे थे तथा फिर अधर्मियों की सङ्गत कर के हमेंसा

अपने सदृश उमर वाले ऐसे क्षत्रिय पुत्रों के साथ शिकारादिक करने का शौक़ लग गया धर्म वार्त्ता जाने नहीं और सुने भी नहीं इस तरह से काल पूरा कर रहा है अब तिस विमान में नवीन हरिणेगमेषी देवता उत्पन्न हुआ वो उपजने के समय जो करणी चैत्य पूजादिक देव कर्म कर के सुधर्म सभा में इन्द्र की सेवा करने के वास्ते गया तब इन्द्र आश्चर्य होके तिस से कहा कि तूं नवीन उत्पन्न हुआ है तब वो देवता बोला कि जीहां मैं नवीन उत्पन्न हुआं हूं तब इन्द्र बोले कि प्रथम के हरिणेगमेशी को तुं जाके प्रतिबोध देना तिस ने भी मंजूर करा अब एक दिन के वक्त में वो हरिणेगमेषी देवता अपने विमान की भीत पर लिखा हुआ अक्षर देख कर के तिस भीत पर ऐसा लिखा हुआ था उस श्लोक को पत्र पर लिख दिया॥

श्लोक—स्वभित्ति लिखितं वाक्यं मित्रत्वं सफलं कुरु।
हरिणेगमेसि को वक्ति संसारं विषमंत्यज़ ॥ १ ॥

व्याख्या—अपने विमान की दीवाल में ऐसा लिखा हुआ है सो अपना मित्रपणा सफल करो हरिणेगमेषी कहता है विषम संसार का त्याग करो तब देव सेवक प्रति बुलवाके वो पत्र लिखा हुआ था उस देवता को देके कहा कि तू यह पत्र देवर्द्धि को देआना ऐसा हुक्म पाके वो देवता जहां पर देवर्द्धि था वहां पर आकाश में रह के उस पत्र को भेज दिया तब देवर्द्धि भी आकाश में पड़ा हुआ पत्र देख कर के वांचा मगर अर्थ समझै नहीं तब कितना काल गये बाद वो देवता स्वप्न में उस श्लोक को कहा तौभी अर्थ समझै नहीं अब एक दिन के वक्त आखेटक कहिये शिकार करने के वास्ते जंगल में गय तहां पर विराह के ऊपर घोड़ा भगाया तहां पर इकेला होके दूर चला गया तब वो देवता इस माफिक महाभय दिखलाया अगाड़ी केशरी सिंह उठा और पिछाड़ी में मोटा खाड तिस के पास में मोटा वराह जानवर घुरघुराय माण शब्द कर रहे हैं तथा नीचे धरती कंपायमान हो रही है तथा ऊपर से पत्थर गिर रहे हैं इस तरह से मरणांतभय के कारण देख के वो देवर्द्धि भय में विकल हो गया चौतरफ देखने लगा कोई भी यहां पर मुझ को मरने से बचाने वाला तो नहीं है ऐसी चिन्ता कर रहा है उस वक्त में वो हरिणेगमेषी देवता रुद्र दृष्टी करके बोला कि अभी तक मेरा कहा हुवा श्लोक का अर्थ नहीं जानता है तब वो देवर्द्धि बोला कि मैं तो कुछ भी नहीं समझता तब देवता पूर्वभव सम्बन्धी सर्व वृत्तान्त कहने पूर्व कथन करा अगर जो तुम व्रत ग्रहण कर लेवो तो इस मरणांत कष्ट से रक्षा करें ऐसा सुन करके तिनने भी मंजूर करा तब देवता

तिस को उठाके लोहिताचार्य के पास रक्खा तहां पर तीनों के पास दीक्षा ग्रहण करी तब देवर्द्धि पढ़ गुण करके गीतार्थ हुवा तथा अपने गुरु के पास पूर्व श्रुत का अभ्यास करा तथा श्रीगणधर संतानीय देव गुप्तगणी के पास प्रथम पूर्व अर्थ सेती अध्ययन करा तथा द्वितीय पूर्व पढ़ रहे थे तब विद्या गुरु का अन्त काल हो गया तब गीतार्थ जान करके गुरु महाराज अपने पाट ऊपर स्थापन करा तब एक गुरु ने गणि ऐसा पद दीया तथा द्वितीय गुरु ने क्षमा श्रमण ऐसा नाम दिया तिस वास्ते देवर्द्धिगणि क्षमा श्रवण ऐसा नाम हुवा तथा तिस काल के विषै वर्तमान में मोजूद थे पांस सो आचार्य उनों में मुख्य युग प्रधान पद धारक कलि काल केवली सर्व सिद्धान्त की याचना देने वाले जिन शासन के प्रभावीक श्री देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण कोई वक्त श्री शत्रु जय के ऊपर श्री वज्र स्वामी ने स्थापित करी श्री पित्तलमई श्री आदि नाथ स्वामी के बिंव प्रतें प्रणाम नमस्कार करके कपर्दिक यक्ष की आराधना करी बाद अत्यक्ष यक्ष आय पूछा कि क्या प्रयोजन है ऐसा सो मुझ को याद करा तब आचार्य बोले कि जिन शासन के कार्य के वास्ते सो दिखलाते हैं अब बारे वरस का दुष्काल आने वाला है इस से श्री स्कंदिलाचार्य ने तो माथुरी वाचना करी तो भी समय के अनुभाव से मन्द बुद्धि पणा करके साधू लोक सिद्धान्त को भूल गये भूल जाते हैं तथा भूल जांयगे तिस वास्ते तुमारे सहाय सेती ताड़ पत्रों पर सिद्धान्त लिखवाने का मनोर्थ हैं किस वास्ते जिन शासन की उन्नति का कारण है तथा मन्द बुद्धि वाले भी पुस्तक का आलंबन करके सुखसेती शास्त्र पढ़ने वाले हो जांयगे तब देवता बोला कि मैं सहाय करूंगा तिस वास्ते आप सर्व साधू लोगों को इकट्ठा करिये स्याहि और ताड़ पत्रादिक बहुत पूर्ण करूंगा लिखने वालों को इकट्ठा करिये तथा साधारण द्रव्य इकट्ठा करिये ऐसा कहके श्री देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण वल्लभी नगरी में पधारे तहां पर देवता ने सर्व पुस्तक सामग्री भेजी तब वृद्ध गीतार्थों ने जैसे २ अंग उपांग का पाठ कहा तिनं को पेश्तर खरड़ा करवा लिया फेर सब को जोड़ करके देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण महाराज ने ताड़ पत्र पर लिखवाया इस वास्ते अंगों के विषै उपांगों का पाठ दिखता है तथा बीच में विसंवाद भी अनियमिक तथा बीच २ में माथुरी वाचना भी दिखती है तथा पहिली आर्य रक्षित आचार्य ने सिद्धान्त के विषै अनुयोग जुदा करा था तथा फिर स्कंदिला आचार्य ने वाचना करी तथा देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण ने पुस्तक लिख वाया इस वास्ते सिद्धान्त में विसंवादपणा दिखाता है सो दुक्खम आरे का प्रभाव है मगर जिनागम में सम्यग दृष्टियों को संशय नहीं करना चाहिये तथा तिस वक्त में देव सहाय करके एक

वर्ष में जैन पुस्तक कोटि प्रमाणों लिखवाया इस माफिक किंचित पूर्व श्रुत धारक श्री वीर निर्वाण सेती व वर्ष ऊपर अस्सी वर्ष जाने से सर्व सिद्धान्त के लिखने वाले युग प्रधान पद के धारक श्री देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण बहुत जिन शासनकी प्रभावना करके आखिर में श्री शत्रुजय पहाड़ ऊपर अनशन करके देवलोक गये इस माफिक प्रवचना ऊपर देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण का दृष्टान्त जानना इस माफिक आचार्य जिन प्रवचन का प्रभावीक जानना चाहिये इतने करके आंठ प्रभावीक निरूपण करे ॥ ८ ॥

अब सम्यक्त के पांच भूषण दिखला ते हैं। तहां पर प्रथम भूषण तो यह है जिन शासन तथा अर्हद् दर्शन विषय में कौशलता याने निपुणता उसी से सम्यक्त सुशोभित होता है इस वास्ते सम्यग दृष्टियों को सम्यक्त में कौशलता रखना चाहिये तथा तिस में उद्यम करना चाहिये तथा जो अर्हद् दर्शन में कुशल होता है वो पुरुष द्रव्य १ क्षेत्र २ काल ३ भाव ४ अनुसारे नाना प्रकार के उपायों करके अज्ञकों भी सुखें करके प्रतिबोध दे सकते हैं जैसे कमल प्रतिबोधक गुणाकरसूरि भये अब यहां पर अर्हद् दर्शन में कौशल होना उसपर गुणा कर सूरि का दृष्टान्त कहते हैं ॥

एक नगर में एक धन नामें सेठ परमश्रावक धनवान् और बुद्धवान सर्व जनमान्य रहता था तिस के एक पुत्र कमल नामा सर्व कलावान था मगर धर्म तत्व विचार में अरुचिवान था मगर पिता जिस वक्त में कुछ तत्व विचार की शिक्षा देवे तब यह उठ के चला जावे तब सेठ तिस लड़के को कोई भी प्रकार करके भी प्रतिबोध देने को समर्थ नहीं भया तब उदास होके विचार करने लगा अगर जो कोई आचार्य यहां पर पधारे तो उत्तम है कारण उत्तम पुरुषों की सेवा करने से इस लड़के को भी धर्म प्राप्ति हो जावेगा अब एक दिन के वक्त में कोई एक आचार्य माहाराज तिस नगर के नजदीक वन में समवसरे तब नगर के लोगों के साथ धन सेठ भी वंदना करने के वास्ते गया तब गुरू महाराज भी धर्म उपदेश दिया तब दर्शन के बाद सर्व लोग अपने २ ठिकाने चले गये तब सेठ आचार्य माहाराज से विन्ती करी हे स्वामी मेरा पुत्र कमल नाम धर्म विचार में अत्यंत अग्य है आप गीतार्थ हो तिस को कोई प्रकार से बोध देना चाहिये आचार्य ने भी मंजूर करा तब सेठ भी घर आके अपने पुत्र से ऐसा कहा अहो पुत्र गीतार्थ गुरू माहाराज इस वन में आया है सो तूं उन के पास जाके तिनों का वचन सुना कर तब पिता की प्रेरणा करके कमल भी तहां जाके नीची दृष्टि करके गुरू के आगू बैठ गया तब आचार्य माहाराज सात नय सहित द्रव्य गुण पर्याय के विचार से पूर्ण देशना दी अब देशना के बाद आचार्य ने पूछा हे भाई इतनी देर में क्या समझा तब कमल बोला कि कुछ जाना है तब फिर आचार्य माहाराज बोले कि क्या

जाना सो हमारे आगू निरुपण कर तब कमल बोला कि इस बेरी वृक्ष के मूल सेती बिलमांय से मकोड़ा एक सौ आठ निकल करके दूसरे बिल में चले गये यह जाना तब आचार्य बोले अरे हमारा कहा हुवा कुछ समझा कि नहीं तब कमल बोला कि कुछ भी नहीं जानता तब आचार्य माहाराज उसको अयोग्य जान करके मौनधारण करके रहे तब कमल उठ करके अपने घर गया तब दूसरे दिन वन्दना करने के वास्ते आया सेठ तिसकों हकीकत आचार्य माहाराज सुनाई बाद और ठिकाने विहार कर गये अब एक दिन के वक्त में और दूसरे आचार्य माहाराज पधारे तिसी बन में समवसरे तिनोंका आगमन सुन करके सेठ तहां पर जाके प्रथम की हकीकत कही फिर पुत्र को प्रतिबोध देनेके वास्ते पूर्वोक्त प्रकार करके विन्ती करी तब गुरु माहाराज फरमाया कि अहो सेठ अवसर में तुमारे पुत्र को भेजना और फिर इतनी शिक्षा जरूर देनी वो क्या बात है कि प्रथम तो गुरु के सामने नीची नजर करके बैठना नहीं गुरु के सामने देखना गुरु जो कहे उसमें उपयोग देना ऐसा शिक्षा तुम्हारे लड़के को देओ तब सेठ ने भी आचार्य का वचन प्रमाण करा अपने घर आके पुत्र को तिस माफिक शिक्षा दियी बाद गुरु माहाराज के पास भेजा तब वो जाके गुरु माहाराज के मुख को देखता हुवा बैठा हैं तब गुरु माहाराज बोले कि तत्व जानता है तब वो बोला की तत्व तो तीन जानता हूं अच्छा भोजन पाणी और सोणा तब आचार्य माहाराज हंस करके बोले अरे यह तो ग्राम के लोगों का वाक्य है मगर ज्ञेय पदार्थ तथा हेय पदार्थ तथा उपादेय पदार्थ इण मांय में से कुछ जानता है कि नहीं तब कमल बोला सो तो नहीं जानता आप फरमाइये मैं सुनुगा अब आचार्य माहाराज भी तिस को प्रतिबोध ने के वास्ते दो तीन घड़ी तक तत्व निर्णयात्मक देशना दे करके ठहरे तब कमल प्रतें पूछा क्या तत्व तैंने जाना तब कमल बोला कि अहो गुरु माहाराज आप बोल रहे थे उस वक्त में आपकी हिंड की एक सौ आठवार नीचे ऊपर गई मेरे को मालूम पड़ी और तो आप का कहा हुवा आपहि जानो ऐसा कहना सुनके आचार्य माहाराज खेदातुर होके बोले कि अहो अन्धे को दर्पण दिखलाने की तरह से इसको उपदेश देना वृथा है ऐसा विचार करके उस लड़के की हकीकत सेठ कों कह करके और ठिकाने विहार कर गये अब एक दिन के वक्त द्रव्य क्षेत्रकाल भाव के अनुसारे प्रतिबोध देने में कुशल तीसरे आचार्य पधारे तब नगर के लोग इसी तरह से वन्दना करने को गये देशना के बाद धन सेठ गुरु माहाराज से कहा कि हे स्वामी मेरा पुत्र धर्म विचार में अत्यन्त अग्य है पेस्तर पधारे थे आचार्य माहाराज उन्हों ने बहुत प्रतिबोध दिया मगर प्रतिबोध लगा नहीं पेस्तर इसने मकोड़ों की गिन्ती करी तिस पीछे हिंड़की

फ़ुरणों की गिन्ती करी इस वास्ते कोई उपाय करके आप इसको प्रतिबोध देवो जिस करके मिथ्यात्वरूप अन्धकार का नाश होके कम्यक्त रत्न की प्राप्ति हो जावै इसमें आप को मोटा लाभ होगा तब आचार्य माहाराज ने फरमाया कि तुमारा लड़का लौकीक व्यौवहार में कुशल है वा नहीं तब सेठ बोले यह धर्म विचार विगर और सब वातों में निपुण है तव आचार्य वोले की तव तो इन का प्रति बोध लगाना सहज है अवसर में भेज देना हमारे पास तिस पीछे सेठ उठ करके अपने घर जाके पुत्र के सामने आचार्य का गुण प्रतें कहा अहो आचार्य माहाराज तीन कालके देखने वाले तथा जानने वाले तथा सबके सुख दुख की प्रवृत्ति जानने वाले हे पुत्र तें भी तिनों के पास जावो तब प्रमाण करी या वात अवसर में तहां जाके तिनको नमस्कार करके सामने वैठा तव आचार्य माहाराज भी तिसके मनके भाव को आराधन करने के वास्ते वोले भो कमल तेरे हाथ में मणि बन्ध मच्छ मुख संयुक्त मोटी धन रेखा दिखाई तव कमल वोला कि इसका क्या फल है तब आचार्य माहाराज फरमाया कि मच्छ करके हजारों रुपये का धन पास में रहना चाहिये इत्यादिक फल है तथा फेर भी तेरे हाथ रेखा देखने का फल हम जानते हैं तुमारा शुक्र पक्ष में जन्म भया तथा और भी ग्रह देखना हम जानते हैं तब चमत्कार में प्राप्त भया कमल जल्दी उठ करके अपने घर से जन्म पत्री लाके गुरूमहाराज को दिख लाई तब गुरू माहाराज भी ग्रह यथार्थ वतलाया अमुक बरस में तेरी सादी भई अमुक वरस में तेरे को ताप वगैरे पीड़ा भई थी इत्यादिक गुरू माहाराज का वचन सुन करके कमल घर में आके पिता प्रतें ऐसा कहा कि अहो पिता जी पूज्य तो तीन कालके देखने वाले अब हमेसा गुरू माहाराज को वंदना करने बास्ते जावे तब पूज्य भी लाभ जानके तिसी नगर में चौमासे में रहे तहां पर निरन्तर शुभाषित कौतुक कथा करके कमल के चित्तको आराधन करा कौतुक कथा के वाद धर्म विचार भी वक्त पर में फरमावे इस माफक कितने काल वाद कमल विशेष करके धर्मका जानकार हो गया अनुक्रम करके गुरू माहाराज के पास वारे वृत्त ग्रहण करा तथा गुरू की कृपा सेती पिता से भी ज्यादा धर्म में अधिक तरह दृढ़ भया तब आचार्य माहाराज और ठिकाने विहार कर गये कमल वहुत काल तक श्रावक धर्म पाल करके आखिर में देवलोक में गया इस माफिक और भी सम्यग दृष्टियों को श्री जिनेन्द्र शासन में कुशल पना रखना चाहिये जिस करके सम्यक्त रत्न मैला नहीं होवे यह अर्हद्दर्शन निपुण के ऊपर कमल प्रति वोधक गुणाकर सूरिका दृष्टान्त कहा ॥ १॥

अव दूसरा भूषण कहते हैं श्री जिन शासन की प्रभावना सिद्धान्त के वल करके वहुत आदमियों के अन्दर की जिनेन्द्र शासन की सोभा वढ़ाना यह आठ प्रभावीक भेद

करके बतला चुके मगर उपगार के वास्ते और अपने उपगार के वास्ते तीर्थंकर गोत्र बंधने का कारण मुख्य है इस वास्ते बारम्बार प्रधान्यता दिखलाई और सद्बोध का कारण है तथा तीर्थंकरों ने भाव बतलाया है उन भावों को सभा में भय रहित प्रकाश करे यह दूसरा भूषण कहा ॥ २ ॥

तथा तीसरा भूषण तीर्थसेवा रूपदिखलाते हैं तथा तीर्थ दो प्रकार का कहा है जिस में एक तो द्रव्य तीर्थ और भाव तीर्थ तहां पर द्रव्य तीर्थ करके तो शत्रुं जयादिक तथा भाव तीर्थ ज्ञान दर्शन चारित्र के धारक अनेक भव्य जनतारक साधु मुनी राजों को आदि लेके इस माफिक दोनो तीर्थ की सेवा और पर्यूपासना दूसरी तिस विधि पूर्वक करते हैं उन भव्य जीवों का सम्यक्त भूषित होता है तथा परम्परा करके आखिर में सिद्धि का सुख प्राप्त होवे सोई बात श्री पंच मांग सूत्रके द्वीतीय शतक के पंचमोद्दे से में कही है ॥

अलावा—तहां रूवेणं भंते—समणंवा महणंवा पज्जुवासमाणस्सकिंफला पज्जुवासणा। गोयमा सवणफला सेणंभंते सेणंभंते सवणेकिंफलेणाणफले सेते नाणेकिंफले विन्नाणफलेएवं विन्नाणेणं पच्चारकाणफले—पच्छरकाणेणं संजम फले संजमेणं अणएहय फले अणएहएणंतव फल तवे णंवोदाण फले—वोदाणेणं अकिरिया फले से णंभंते अकिरिया किंफला गोयमा सिद्धि पज्जव साण फला पन्नात्तेत्ति ॥

व्याख्यान—हे भदंत तिस माफिक उचित स्वभाव के धरने वाले श्रमण वा साधू वा महान उनो की श्रावक सेवा करे तो उसजीव को क्याफल पैदा होता है क्या फल आपने फरमाया है सो फरमाइये यह तो प्रश्न भया अब भगवान उत्तर फरमाते हैं कि हे गौतम पूर्वोक्त साधुओं की सेवा भक्ती करने से सुनने का फल पैदा होता है सिद्धान्त सुनने का क्या फल है श्रुतज्ञान का फल होता है कहा भी है श्रवण करने से ज्ञान की प्राप्ति होती है श्रुत ज्ञान से क्या फल होता है विशिष्ट ज्ञान कहिये विशेष ज्ञान होय ज्ञेय उपादेय का विवेक करने वाला उसको विशेष ज्ञान कहते हैं विशेष ज्ञानका क्या फल है प्रत्याख्यानफल कारण विशेष ज्ञान वाला पाप का प्रत्याख्यान करा करते हैं जब पाप का त्याग भया तब संयम का फल हुआ जब प्रत्याख्यान करता है तो उसके तो संयम होना ही चाहिये जब पाप त्याग कर दिया तो बाद संयमी भया पीछे अनाश्रई भया कारण नवीन कर्म पैदा नहीं करे जब अनाश्रई भया तो फेर लघु

कर्म सेती तपका फल होना चाहिये तथा तपस्या सेती पुरातन कर्म की निर्ज्जरा होती है नवीन कर्म बंध का अभाव हो रहा है तथा अकिरिया फल पैदा करे तिससे योग निरोध फल करे आखिर में मोक्ष में पहुंचावे है इस वास्ते अहो भव्य जीवो इस माफिक तीर्थ सेवा का फल जान करके सम्यक्तियों को तीर्थ सेवा में उद्यम करना चाहिये। यह तीर्थ सेवा रूप सम्यक्त का तीसरा भूषण निरूपण करा ॥ ३ ॥

अब थिरता रूप चौथा भूषण कहते हैं जिन धर्म से लोक चलायमान करे तो भी चलायमान होवे नहीं पर तीर्थिकों की रिद्धि देख करके भी सुलसा की तरह से जिन प्रवचन में अचल धर्म रखना चाहिये कारण यह है कि सर्व प्रकार करके धर्म में दृढ़ता रखना और दृढ़ धर्मीयों की जिना गममें तारीफ करी है तथा ठाणांगजी के चौथे ठाणे में चार तरह का पुरिस वतलाया है ॥

सूत्र—चत्तारिपु रिसजायापन्नत्ता। तंजहा पियधम्मे नामं एगेनोदढ़धम्मे १ दढधम्मे नामं एगेनोपियधम्मे ॥ २ ॥ एगेपिय धम्मे विदढ धम्मेवि ३ एगेनोपिय धम्मे नोदढधम्मे ॥ ४ ॥

यहां पर तृतीय भंग उत्कृष्ट है। अब यहां पर थिरता भूषण ऊपर सुलसा का दृष्टान्त कहते हैं ॥ इस जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र मगध देश राजगृह नगर तहां पर प्रसेनजित राजा के चरण सेवा में तत्पर योग्य कौशलता में श्री नाग नामा सारथी रहता था तिसके पति व्रतादिक गुण धारक प्रधान जिन धर्म अनुरागीणी सुलसा नाम स्त्री होती भई एक दिन के वक्त में नाग सारथी कोई एक गृहस्थ के घरमें कोई गृहस्थ खुश भक्ती पूर्वक अपने पुत्रों का लाड़ करके क्रीड़ा कर रहा था उसको देखके अपने पुत्र का अभाव होनेसे मन में बहुत दुक्ख करा और विचारने लगा मैं मंद भाग्य का धारक हूं इससे मेरे एक भी लड़का नहीं धन्य है यह पुरुष जिसके आनंद कारक बहुत लड़के हैं इस माफिक चिंता समुद्र में मग्न भया अपने पती को देख करके सुलसा विनय सहित मधुर वाणी करके कहने लगी हे स्वामी आपके दिलमें क्या चिंता आज पैदा भई तब नाग सारथी बोला हे प्रिये और तो कुछ भी चिन्ता नहीं है मगर पुत्र नहीं है इस वास्ते चिंता है तब सुलसा बोली हे स्वामी चिंता मत करो पुत्र होने के वास्ते सुख करके दूसर लग्न करें तब नाग सारथी बोला कि हे प्राण प्रिये मुझे इस जन्म में तो तुमही प्राण प्रिये हो तेरे से अन्य स्त्री को मन करके भी नहीं चाहता तेरी कूख में उत्पन्न

होगा उसी को पुत्र रत्न चाहता हूं तिस वास्ते हे प्राण प्रिये कोई देवता आराधन करके पुत्र की याचना करो तब सुलसा बोली कि हे नाथ वांछितार्थ सिद्धि के वास्ते अन्य देव समूह प्रतें मन वचन काया करके जीव का अंत हो जावेगो या शरीर का त्याग हो जावें तौभी आराधन नहीं करूं मगर सर्व इष्ट सिद्धि का कारण श्रीमान अर्हतदेव का ध्यान करूंगी तथा फेर आमल वगैरे तप विशेष करके धर्म कृत्य करूंगी इस माफिक उत्तम वचनों करके भर्त्तार को संतोषित करके वा सुलसा सती तीनों काल में श्री परमात्मा की पूजा करती है तथा और भी धर्म कृत्य विशेप करके करती थी इसमाफिक काल व्यतीत कर रही है एक दिन के वक्त इन्द्र महाराज अपनी सभामें धर्म कर्म के विषै तत्पर सुलसा की तारीफ करी तब एक देवता तिसकी परीक्षा करने के वास्ते मनुष्य लोक में आके साधु व्रतों करके एक दरिद्री साधु का भेप धारण करके सुलसा के घरमें प्रवेश किया तब सुलसा मुनिराज को अपने घर आयादेख के भगवान की पूजा कर रही थी मगर जल्दी उठ करके भक्ती सहित प्रणाम नमस्कार करके अपने घर आने का कारण पूछा जब वो साधु बोला रोगी साधु का रोग मिटाने के लिये लक्षपाक तेल चाहिये है तिस वास्ते यहां आया हूं यह बात सुन करके अत्यंत संतुष्ट हो गया मन जिसका ऐसी सुलसा घरमें जाके लक्षपाक तेल का बड़ा घड़ा भराभया उसको उठाने लगी तितने तो देवता के प्रभाव करके घड़ा फूट गया तब मन करके भी सुलसा दीनता नहीं करके दूसरे घड़े को उठाने लगी तब वोभी फूट गया इस तरह से देवता के प्रभाव करके सात घड़ा फूटा तोभी दिलमें विषवाद नहीं भया केवल इस माफिक बोलने लगी मैं बड़ी मंद भाग्य की धरने वाली हूं सो मेरा तेल रोगी साधू के उपकार के लिये काममें नहीं आया तब वो देवता सुलसा का ऐसा भाव देख करके आश्चर्य सहित अपना देवता का रूप प्रगट करके कहने लगा हे कल्याणि इन्द्र ने अपनी सभामें तेरे श्रावक पने की तारीफ करी इससे तेरी परीक्षा करने के लिये यहां आया इन्द्र ने तारीफ करी उससे अधिक थिरता देख के मैं प्रसन्न भया इस वास्ते मेरे पास कुछ मांग तब सुलसा भी मिष्ट वाणी करके तिस देवता प्रतें कहने लगी हे देव जो तू प्रसन्न भया है तो मुझ को पुत्र रूप वांछित वरदे तब देवता भी सुलसा को बत्तीस गोली देके ऐसा कहा कि तू इस गोलियों को अनुक्रम से खाना तेरै महा मनोज्ञ लड़के होवेंगे तिस पीछे मेरे लायक कार्य होने से फेर मुझको याद करना ऐसा कहके देवता अपने ठिकाने गया अब सुलसा ने विचार किया कि इन गोलियों को अनुक्रम करके खाने से बहुत लड़के हो जायेगे तिनोंका बहुत मल मूत्र अशुची मर्दन करनी पड़ेगी तिस वास्ते इन गोलियों को इकट्ठी करके खानी ठीक है जिस करके बत्तीस लक्षण

सहित एक ही पुत्र होवे ऐसा विचार करके उन गोलियों को खा गई मगर कर्म योग सेती तिस की कूख में बरोबर बत्तीस गर्भ प्रगट भया तब गर्भों का महा भार को नहीं सहन करने वाली सुलसा का उसगा करके तिस देवता प्रतें याद करा तब वो देवता भी याद करने से जल्दी तहां आके इस माफिक बोला किस वास्ते मुझको याद करा तब सुलसा अपनी सर्व हकीकत कही तब देवता बोला कि हे बाइ तैंने यह काम अच्छा नहीं करा अब तेरे अमोघ शक्ति के धारक पुत्र होगा जो तेरें तकलीफ है या गर्भ व्यथा है उस को दूर करता हूं दिलगीरी मत कर ऐसा कह करके तिस देवता ने तकलीफ को मिटा के अपने ठिकाने गया अब सुलसा भी स्वच्छ शरीर से होके गर्भ को धारण कर के पूर्ण काल में बत्तीस लक्षण सहित बत्तीस पुत्र भया तब नाग सारथी भी बड़े आडंबर कर के तिनों का जन्म उत्सव करा वे पुत्र क्रम से बढ़ते २ यौवन पणें में प्राप्त भया तब श्रेणिक राजा के जीवित की तरह से हमेशा पास में रहते थे अब एक दिन के वक्त श्रेणिक राजा पहिली दिया था संकेत चेडे राजा की पुत्री सुजेष्टा को गुप्त लाने के वास्ते वे शाला नगरी के रस्ते में नीचे सुरंग दिखा के रथ ऊपर चढ़ा के बत्तीस नाग सारथी के पुत्रों को साथ में लैके सुरंग मार्ग करके विशाला नगरी में प्रवेश करा अब सुजेष्टा भी प्रथम देखा था चित्राम तिस के अनुमान सेती मगधेश्वर को पहिचान करके अपनी अत्यंत प्यारी चेलणां नामें छोटी वहिन प्रतें सर्व हकीकत कह करके मगर तिसका वियोग सहन होता नहीं इस वास्ते पेस्तर तिसी प्रतें रथ पर चढ़ा के आप रत्न के आभूषण का करंडिया लेने के वास्ते गई तितनें तो सुलासा का पुत्र राजा प्रतें कहा हे स्वामी यहां पर शत्रू घर में हमारा वहुत काल रहना ठीक नहीं तब तिनों की प्रेरणा करके राजा चेलणां कोहि लेके पीछे लौट गये सुजेष्टा भी आप रत्न का आभूषण तिस का करंडिया लैके तहां पर आई तितनें तो श्रेणिक राजा को देखा नहीं तब वा अपूर्ण मनोर्थ वहिन के वियोग रूप दुःख में पीड़ित होके ऊंचे स्वर सेती हा इति रेवदे चेलणा को हर के ले जाते हैं ऐसी पुकार करी यह सुन के क्रोध करके सहित चेडो राजा खुद लड़ाईके वास्ते गया तब वो वैरंगभट जल्दी तहां जाके सुरंगसे बाहर निकल रहेथेसुलसा के पुत्रों प्रतें एक बाण करके मारे तथा तहां पर सुरंग का रस्ता संकीर्ण करके बत्तीस रथों को खेंच रहा था तितने तो श्रेणिक राजा वहुत मार्ग उल्लंघन करके चला गया तब वैरंगिक भट भी पूर्ण अपूर्ण मनोर्थ सहित तहां से लौट करके चेटक राजा को हकीकत कह करके अपने घर गया अब श्रेणिक राजा जल्दी अपनी राजगृही में आके अत्यंत प्रिय चेल्लणा प्रतें गांधर्व विवाह करके परणी जा तथा नाग सारथी और सुलसा ने राजा के मुख सेती पुत्र मरण वृत्तांत सुन करके तिनों के दुक्ख में पीड़ित होके वहुत

विलाप करने लगे तब शोक रूप समुद्र में मग्न होगये नाग और सुलसा इन दोनों को प्रति बोध देने के वास्ते श्रेणिक राजा अभय कुमार सहित तहां पर आके इस माफक उपदेश देने लगे अहो तुम दोनों विवेकवान हो इस वास्ते तुम को इस माफिक शोक नहीं करना चाहिये कारण इस संसार में जो कुछ दिख रहा है यह सर्व भाव वे सर्व विनाशी है और मौत सर्व प्राणियों के साधारण है इस वजह से शोक को त्याग करो धर्म साधन करने में धैर्य धारण करो इस माफिक वैराग्य वचनों से प्रति बोध देके राजा अभय कुमार सहित अपने ठिकाने गये अब दोनों स्त्री भर्त्तार यह सर्व पूर्व कृत दुष्कर्मों का फल जान करके शोक त्याग करके विशेष करके धर्म कर्म के विषै यत्नवंत होते भये, अब एक दिन की वक्त चम्पा नगरी में श्री वीर स्वामी सम व सरे पर्षदा मिली भगवान ने देशना प्रारंभ करी तब भगवान वीर प्रभू का उत्तम श्रावक दंड छत्र तथा गेरू रंग से रंगा हुवा कपड़ा धारण करने वाला अंबड नामें परि व्राजक चंपा नगरी में आके जगत प्रभू को नमस्कार करके योग्य ठिकाने बैठ के धर्म देशना श्रवण करी तब देशना के बाद अंबड भक्ति पूर्वक नमस्कार करके प्रभू प्रतें ऐसा कहा हे स्वामी राजगृह नगर जाने की इच्छा है मेरी इस वक्त में उतने में तो भगवान ने फरमाया हे देवानु प्रिय तहां जाता है तो वहां नाग सारथी की स्त्री सुलसा नामें श्राविका प्रतें हमारी तरफ से मिष्टता पूर्वक धर्म शुद्धि पूछना तब अंबड भगवान के वचनों को प्रमाण करके आकाश मार्ग से जाके राजगृह नगरी में जाके पेस्तर सुलसा के घर के दरवाजे पर क्षण मात्र ठहर करके ऐसा विचार किया कि अहो इति आश्चर्य जिस प्रतें तीन जगत के स्वामी ने धर्म शुद्धि पुछवाया है वा सुलसा किस माफिक दृढ़ धर्मिणी होगा इस वास्ते मैं इस की परीक्षा करूंगा यह विचार करके वैक्रिय लब्धि सेती जल्दी दूसरा रूप बना के तिस सुलसा के घर जाके भिक्षा मांगने लगा तब वा सुलसा उत्तम पात्र बिगर भिक्षा अन्यको देने की इच्छा नहीं कर सक्ती खुद सुलसाने पहिली प्रतिज्ञा करी व्रतोच्चार समयमें उसको भूली नहीं वो अंबड भिक्षा मांगी मगर उस को भिक्षा दी नहीं तब वह अम्बड तिस सुलसा के घर सेती निकल करके शहर के बाहर पूर्व दिशा में चार भुजा ब्रह्म सूत्र याने जनेऊ तथा अक्ष माला गोया रुद्राक्ष माला करके विराजमान हंस की सवारी सावित्री पास में बैठी भई इस माफिक साक्षात ब्रह्मा का रूप बना के चार मुख कर के वेदध्वनि उच्चारण कर रहे थे तब इस माफिक देख के लोग कहने लगे आज तो शहर के बाहर पूर्व दिशा के भाग में साक्षात ब्रह्मा आया है इस माफिक लोगों के मुख सेती सुन करके कितनेक नगर के लोग तिसकी भक्ती के वास्ते कितनेक कौतुक देखने के वास्ते इस माफिक बहुत आदमी वहां पर गया मगर सम्यक्त में अत्यन्त निश्चल चित्त वाली सुलसा अपना व्रत रखने के वास्ते तिस

बात को सुन कर के भी नहीं सुनने माफिक करके तहां पर नहीं गई. तब तिस सुलसा को नहीं आई जान के अम्बड दूसरे दिन दक्षिण दिशा में गरुड़ आसन पीत वस्त्र शंख चक्र गदा शारंग धनुष धारक लक्ष्मी गोपियों के साथ नाना प्रकार की भोग लीला करने वाले विष्णु का रूप कर के नगर के बाहर रहे तो भी मिथ्या दृष्टियों के सङ्गत से डरने वाली सुलसा तहां पर नहीं गई अब अम्बड भी तीसरे दिन पश्चिम दिशा में व्याघ्र चर्मका आसन वृषभ वाहन तीन नेत्र चन्द्र शेखर से लड़ाई करने वाला मस्तक में जटा धारण करी है भस्म करके शरीर भरा हुआ है जिस का एक हाथ में त्रिशूल दूसरे हाथ में रुन्ड माला पार्वती सहित साक्षात महादेव का रूप कर के दुनियों को पैदा करने में मेरी शक्ति है मेरे से जुदा और कोई भी ईश्वर नहीं है इत्यादिक शहर के लोगों के आगू कहता हुआ रहता है तब मनुष्यों के मुख सेती ईश्वर के आने की बात सुन कर के शुद्ध श्रावक धर्म में रक्त ऐसी सुलसा ने तो तिस के दर्शन को मन करके भी प्रार्थना करी नहीं तब यह चौथे दिन उत्तर दिशा में अत्यंत अद्भुत तोरण सहित चार मुख कर के विराजमान समवसरण की रचना बना के आठ प्राती हार्य कर के सहित साक्षात तीर्थंकर का रूप बना के रहा तहां पर भी सुलसा बिगर और बहुत से लोग तिन को बंदना करने के वास्ते गया तिनों को धर्म उपदेश सुनाया अब तिस वक्त में सुलसा का आगमन नहीं जान कर के अम्बड तिस सुलसा को चलायमान करने के वास्ते तिस सुलसा के घर में एक आदमी को भेजा वो भी तहां पर जाके तिस से ऐसा कहा हे सुलसा तेरे अत्यन्त वल्लभ श्रीमान अर्हत वन में समवसरे हैं तिन को नमन करने के वास्ते तू क्यों नहीं गई तब सुलसा बोली हे महाभाग इस जमीन पर इस वक्त श्री महावीर को छोड़ के और तीर्थंकर नहीं है तथा श्री महावीर स्वामी तो और देशमें विहार कर रहे हैं इस वास्ते उनोंके पधारने का संभव नहीं होता तब इस माफक सुन करके वो पुरुष फेर बोला हे मुग्धे भोली यह पच्चीस मा तीर्थ कर अभी उत्पन्न हुवा है इस वास्ते तू जाके क्यों नहीं वंदना करती है तब सुलसा बोली हे भद्र इस क्षेत्र में पच्चीसमा तीर्थ कर कभी भी नहीं होता तिस वास्ते यह कोई कपटी आदमी है सो भोले आदमियों को ठगता है तब वो पुरुष बोला हे भद्रे जो तैंने कहा सो सत्य है मगर इस माफिक करने से भी अगर जिन शासन की उन्नति होती हो तो क्या दोष है तब सुलसा बोली ऐसी बाते कहने वाला तूं भोला दिखता है मगर ज्ञान दृष्टी करके विचार कर खोटे व्यवहार करने में क्या शासन की उन्नति होती है लेकिन उल्टी लोको में हास्य रूप निंदा हो जावे तब वो पुरुष उठ करके पीछे जाके अंबड के अगाड़ी सर्व हकीकत कही तब अंबड भी सुलसा का धैर्य पना अनुत्तर समझ करके अहो इति आश्चर्य भगवान महावीर स्वामी सभा के सामने सुलसा

को धर्म शुद्धि कहलाई इसवास्ते येयुक्त है मैंने चलायमान करने के वास्ते बहुत इलाज किया मगर मन करके भी चलायमान नहीं भई ऐसा विचार करके तिसप्रपंच को समेट करके अपना मूलरूप करके सुलसा के घरमें प्रवेश करा तब तिस अंवड को आता देख के सुलसा भी साधर्मी की भक्ति के वास्ते जल्दी उठ करके तिसके सामने जाके बोली हे तीन जगत के भर्तार श्रीवीर प्रभू की सेवा करने वाला तुमारे कुशल वर्ते हैं ऐसा प्रश्न पूर्वक तिस अंवड़ का पाव धुला के तिसको अपने घर देरा शरमें दर्शन कराने के लिये लेगई तब अंवड़ भी विधि सहित चैत्य वंदन करके तिस सुलसा को कहने लगा हे महा सती इस नगर में तू अकेली पुन्यवांन रही है जिस वास्ते तुझको श्री महावीर स्वामीं ने खुद मेरे मुख सेती धर्म शुद्धि रूप प्रश्न कहलाया ऐसा सुन करके अतिशय आनंद सहित भगवान जिस देश में विचर रहेथे उस देश के सामने कदम रख करके दोनों हाथ जोड़ करके श्री वीर प्रभू को दिलमें धारण करके उत्तम वाणी करके स्तवना करी तब अंबड़ भी विशेष करके तिस के दिल का आशय जानने के वास्ते फेर सुलसा से कहने लगा कि मैं यहां आया तब लोगों के मुख सेती ऐसी बात सुनी कि इस शहर में ब्रह्मा आदिक आयेथे तिनके दर्शन के वास्ते तूं गई थी या नहीं तब सुलसा बोली है धर्मज्ञ जो श्री जिन धर्म में रक्त है वे पुरुष सकल राग द्वेष रूप अरी को जीतने वाले समस्त भव्यजनों का उपगार करने वाले सर्व जानने वाले सर्व अतिशय करके सहित अपने तेजसे सूर्यके तेजको जीतने वाले ऐसे श्री महावीर स्वामी जी देवाधिदेव को छोड़ करके और देव राग द्वेष मोह करके पीड़ित निरंतर स्त्री सेवा में रक्त शत्रु वध बंधनादिक क्रिया में तत्पर आत्म धर्म के अज्ञात खद्योत समान ब्रह्मादिक देवों को देखने को कैसे उत्साह होवे दृष्टांत देके दिखलाते हैं जिस पुरुष ने परमा ल्हाद कारक अमृत पी लिया तिस को खारा पानी पीने की इच्छा कैसे होवे, फेर जिस पुरुष ने वहुत मणि रत्नादिक को व्यापार करा वो पुरुष काच के टुकड़ों का व्यापार करना कैसे इच्छा करेगा इस वास्ते हे अंवड तू जिनोक्त भावों को जानने वाला होके श्री महावीर स्वामी के धर्म में तत्पर में मतें इस माफिक वचन क्यों कहा अब अंवड भी इस माफिक धर्म में अत्यंत स्थिर सुलसा को जान के मन वचन काया करके चलायमान नहीं भई तथा इस माफिक दृढ़ पने का वाक्य सुन करके सुलसा की तारीफ करके आपने रचा था ब्रह्मादिक का रूप वगैरह सब प्रपंच मैंने रचा था ऐसा सुलसा के आगू कह करके मिछामिदुक्कडं देके यथा रुचि और जगह गया तिस अंवड के शिष्य सातसै था जिन्हों ने श्री वीर स्वामीके पास द्वादस व्रत ग्रहण करा ऐसे शिष्य समुदाय एक दिन के वक्त कांपिल्यपुर नगर सेती पुरिम ताल नगर जा रहे थे वीच में तृषा से व्याकुल होगया रस्ते में गंगा महानदी आई तहां पर

और किसी को जल देने वाले पुरुष को देखा नहीं तथा इन लोगों ने सर्वथा ग्रहण करा अदत्तादान का नियम आपस में अन्य २ को बोलने लगा अहो देवानु प्रिय अपने सातसैं पुरुष हैं उन माय से एक भी अपना व्रत भंग करके अगर जल पिलावे तो बाकी सर्व का व्रत रक्षण हो जावे मगर अपने व्रत खंडन के भय से किसी ने प्रमाण करा नहीं तब अदत्तादान दूषण कारक जल लायं विगर सर्वे ने तहां पर अनशन ग्रहण करा दिल में श्री महावीर स्वामी का ध्यान तथा अंबड नामें अपने गुरु को नमन कर रहे थे समाधि पूर्वक काल धर्म करके पांचमें देवलोक में गया अंबड जो है स्थूल हिन्सा का त्याग करा नदी वगैरे में क्रीड़ा करे नहीं तथा नाटक विकथादिक अनर्थ दंड का त्याग करा तथा तुंबा १ लक्कड २ और मट्टी ३ इन तीनों का पात्र रखना अन्य का त्याग तथा गंगा की मट्टी को छोड़ करके और विलेपन नहीं करे कंद मूल फलादिक नहीं भोग में लावे तथा आधा कर्मादिक दोष सहित आहार नहीं करै सिर्फ अंगूठी मात्र अलंकार धारण तथा गेरू वगैरह धातु से रंगे भया वस्त्र धारण करे तथा बहुत निर्मल कोई गृहस्थ ने छान करके उत्तम रीति पूर्वक देवे तो ग्रहण करे मगर पीने के वास्ते और स्नान के वास्ते प्रमाण से सेवन करते हैं श्री जिन राज के धर्म ऊपर बुद्धि रही है अपना जन्म सफल करके एक महीने की सलेखना करके ब्रह्म देव लोक में गया तहां पर देवता का सुख भोग करके मनुष्य जन्म पाकर के संयम आराधन पूर्वक मुक्ति जावेगा तथा सुलसा श्राव कणी भी अपने हृदय कमल में एक परमेश्वर का ध्यान ध्या रही है सर्वोत्तम स्थैर्य भूषण करके अपने सम्यक्त को भूपित कर के तीर्थंकर नाम कर्म उपार्जन करा इस ही भरत क्षेत्र में आगू की चौवीसी में चौंतीस अतिशय कर के सहित निर्मम नामें पनरमां तीर्थंकर होगा इस तरह से और भी भव्य जीव सम्यक्त रत्न की शोभा वढ़ाने वाली थिरता धर्म में रखने का उद्यम करना जिस करके मोक्ष पद की प्राप्ति होवे यह सम्यक्त के थिरता रूपगुण ऊपर सुलसा का दृष्टान्त कहा। यह चौथा भूषण कहा॥

अब पांचमा भूषण भक्ति रूप कहते हैं प्रवचन का विनय वेयावच करना अगर यह भक्ति उत्कृष्ट भाव से बन जाय तो सम्यक्त की सोभा होवे अनुक्रम करके देव नर की सम्पदा पाके महा आनंद दायक मोक्ष मिले इस भक्ति के ऊपर वाहु सुवाहु का दृष्टान्त जानना जैसे वाहु साधूने खुशभक्ती से पांचसै साधुवो को आहार लाके भक्ती करी जिससे भोग कर्म पैदा करा तथा सुवाहु साधूने पांचसै साधुवों का विस्तरादि से भक्ति करके अतुल वाहु वल पैदा करा तिससे दोनों ही इस भक्ति करके सम्यक्त भूषित करके आखिर में समाधि परिणामों से मर करके देव सुखभोग करके

ऋषभ देव स्वामी के पुत्र पणें उत्पन्न भया तहां पर प्रथम भरत चक्रवर्त्ति पद प्राप्त करी तथा दूसरा बाहुवली तिसने चक्रवर्त्ति से भी अधिकतर महाबल पैदा करा तब दोनों जनें उपमा रहित मनुष्य सुख भोग व करके चारित्र पाल करके मुक्ति के भजने वाले भये इन्हों का विस्तार सम्बंध तो विशेष ग्रन्थ से जानना । इस माफिक प्रवचन भक्ती जान करके भव्य जीव को निरन्तर यत्न करना चाहिये ॥ ५ ॥

यह पांच सम्यक्त के भूषण जानना इन गुणों करके सम्यक्त शोभा देता है । इतने करके सम्यक्त के पांच भूषण दिखलाया । अब पांच लक्षण निरूपण करते हैं । उपशम १ इत्यादि तहां पर उपशम किसको कहते हैं मोटे अपराध करने वाला है तो भी क्रोध का सर्वथा त्याग करना कदाचित् कषाय परिणति करके कडुवा फल मिलता है किसी के क्रोध कारण से होवें और किसी के स्वभाव करके होये यह क्रोध कैसा है कि सम्य का नाश करने वाला जानना तथा क्रोध के उदय सेती नष्ट कार्य भी उपशम करके फेर गुण प्रगट हो जाता है अन्यथा होता नहीं सोई कहा भी है॥

श्लोक—कोहेण वहार वियं । उप्पज्जं तंच केवलं नाणं ॥
दमसा रेणय रिसिणा । उवसम जुत्तेण पुण
लद्धं ॥ १ ॥

व्याख्या—क्रोध करके हार दिया उपजता हुवा केवल ज्ञान को दमसार नाम ऋषी ने उपसम गुण करके फेर भी केवल ज्ञान हो गया इसका भावार्थ तो दमसार ऋषी की कथा से जानना सो कहते हैं । इस जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र में कृतांगला नाम नगरी होती भई तहां पर सिंहरथ राजा तिस के सुनंदा पटरानी तिस की कूख से उत्पन्न भया दम सार नामे पुत्र वो बालक अवस्था में बहोत्तर कला में निपुण भया पिता के हृदय में आनंद का देनेवाला अत्यंत वल्लभ भया यौवन उमर में पिता ने उत्तम राज कन्या के साथ पाणि ग्रहण करवा के युवराज पद दिया सुख सेती काल पूर्ण कर रहा था एक दिन के वक्त में तिस नगर के पास भगवान श्री महावीर स्वामी समवसरे देवतों ने सम व सरण की रचना करी पर्षदा मिली तब सिंहरथ राजा भी पुत्र सहित और परिवार भी साथ में है बड़ी रिद्धी पूर्वक वंदना करने के वास्ते गया तहां पर छत्र चमरादिक राज चिन्ह दूर करके परमेश्वर प्रतें तीन प्रदक्षिणा देके परम भक्ती करके वंदना करके योग्य स्थान में बैठे तब स्वामी तिस मनुष्य और देवतों की पर्षदा में धर्म का उपदेश दिया परिषदा चली गई तब दमसार कुमर भी भगवान को नमस्कार करके विनय पूर्वक

ऐसा वचन कहा हे स्वामी आपका फरमाया हुवा धर्म मुझ को रुचा इस वास्ते देवानु मियों के पास में दीक्षा ग्रहण करूंगा इतना विषेश है माता पिता की आज्ञा ले आऊं तब स्वामी बोले यथा सुखं देवानु प्रिया मा प्रति वंधं कुरू जैसे सुख होवे वैसा काम करो मगर उत्तम कार्य में देरी मतकरो तब कुमर घर आके माता पिता के आंगू ऐसा कहा भो माता पिता जी आज मैंने स्वामी प्रतें वंदना करी तिनोंका कहा हुवा धर्म मुझको रुचा अब आपकी आज्ञा होवे तो मैं संयम ग्रहण करने चाहता हूं तब माता पिता बोले हे पुत्र अभी तूं बालक है भोग भोगवे नहीं संयम मार्ग अति दुष्कर है तीक्ष्णखड्ग धारा ऊपर चलने जैसा है वो जो संयम है सो तेरे जैसा सुकमाल शरीर वाला पालशक्ते नहीं तिस वास्ते संसार संबंधी सुख भोग करके वृद्धा वस्था में चारित्र ग्रहण करना यह बात सुन करके दमसार बोला अहो माता पिता जी आपने संयम में दुष्करता दिखलाई तिस में संदेह नहीं मगर दुष्करता किसको है कायर पुरषों को है धीरवंत पुरषों को कुछभी मुसकिल नहीं है सोई शास्त्रमें लिक्खा है ॥

—तातुंगो मेरूगिरी। मयर हरोताव होई दुत्तारो॥
ता विसमा कज्जगई। जावन धीरा पवज्जंति॥ १॥

व्याख्या—तबतक मेरू पर्वत ऊंचा है तथा कामदेव को वशकर नाभी मुशकिल है तब तक कार्य की गति टेढ़ी है जबतक धैर्यवान उद्यम नहीं करे तब तक मुसकिलात है तथा भोग अनंती दफे भोग वे मगर तृप्त होता नहीं इसमें कुछ भी सार नहीं ऐसे संसार संबंधी सुखके विषै मेरी इच्छा नहीं तिस वास्ते देर मत करो और मुझको आज्ञा देवों मैं संयम ग्रहण करूं इस माफिक दम सार का संयम में निश्चय जान करके माता पिता जी तिसका दीक्षा महोत्सव करा तब दमसार कुमर प्रवर्द्धमान परिणामों करके श्री वीर स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण करी तब माता पिता परिवार सहित अपने घर गये तब दमसार रिषी षष्ट २ उपवास अष्टम ३ उपवास दशम ४ उपवास वगैरे नाना प्रकार की तपस्या करके कालपूर्ण कर रहे हैं तथा एकदिन के वक्त में श्री वीर प्रभू के पास ऐसा अभिग्रह ग्रहण करा हे स्वामी में जाव ज्जीव मास क्षमण तप अंगीकार करके विचरूं तब स्वामी बोले यथा सुखं देवानुप्रिय तब वे मुनि बहुत मास क्षमण तप करके शरीर को शोस करके नाड़ी हाड़ मात्र शरीर रह गया तिस समय में भगवान वर्द्धमान स्वामी चंपा नगरी में समव सरे तब दमसार भी तहां गया अब एक दिन के वक्त में पारणे के दिन प्रथम पौरषी में स्वाध्याय करके दूसरी पोरषी में ध्यान ध्यारये थे तब तिस के मनमें इस माफिक विचार उत्पन्न हुवा आज मैं स्वामी प्रतें पूछूं क्या मैं भव्य

हूं अभव्य हूं चरम वा अचरिम हूं मुझको केवल ज्ञान होगा कि नहीं इस माफिक विचार करके वे मुनि जहां पर भगवान विराजमान थे तहां पर आके भगवान प्रतें तीन प्रदक्षिणा करके वंदना पूर्वक सेवा भक्ती साचव न कर रहा था तव श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी जी दमसार प्रतें ऐसा कहा भो दमसार आज ध्यान ध्यारं एथे तव तुमारे हृदय कमल में यह अध्यवसाय उत्पन्न भया कि मैं स्वामी प्रतें पूछूं क्या में भव्य हुंवा अभव्य हूं इत्यादिक वात सत्य है तव मुनी बोला कि इसी माफिक है तब स्वामी वोले कि भो दमसार तूं भव्य है मगर अभव्य नहीं तथा फेर तूं चरम शरीरी है मगर अचरिम नहीं है तथा तेरेको केवल ज्ञान तो एक पैरमें हो जाता मगर कषाय के उदय से विलंव हो जायगा तब दमसार बोला कि कषायके उदय को त्याग करूंगा अब तीसरी पोरषी में दमसार मुनि भगवान की आज्ञा ग्रहण करके मास क्षमण के पारणे के भिक्षा के वास्ते युगमात्र दृष्टि करके ईर्यावहि देखते भये जहां चंपा नगरी है तहां पर आया तव मस्तक ऊपर सूर्य तप रहा था पांवके नीचे ग्रीष्म के ताप में तपगई वालु रेती अग्नि की तरह से जल रही थी तिस की पीड़ा में व्याकुल हो गया मुनी नगर के दरवाजे पर बैठ करके विचार करने लगा अभी इस वक्त में सूर्य का ताप अति दुःसह है यदि कोई भी नगरी में रहने वाला मनुष्य मिले तो तिस प्रतें नजीक रस्ता पूछूं तिस वक्त में कोई मिथ्यात्वी कोई काम के वास्ते जा रहाथा वो भी वहां पर आया तव साधू सामने मिले देखके अपशकुन हो गया मुझको ऐसा विचार करके दरवाजे पर ठहरा तब तिस मिथ्यात्वी से साधू मुनि राजने पूछा भो भद्र इस सहर में कौन रस्ते करके नजीक घर मिलेंगे तव तिसने विचार करा कि यह नगर का स्वरूप नहीं जानता है तिस वास्ते में इनको महा दुक्ख में पटकों जिस करके मुझको इस खोटे शकुन का फल मिले नहीं यह विचार करके बोलाकि अहो साधू इस रस्ते से जावो जिस करके गृहस्थों का घर जल्दी मिलेगा तव सरल स्वभाव वाले साधु तिसने जो रस्ता वतलाया था उस मार्ग से चले मगर वो मार्ग अत्यंत विषम था अपथ जैसा था जहां पर कदम मात्र भी चलना वनता नहीं सर्व घरों का पिछवाड़ा नजर में आ रहे थे मगर कोई भी सामने मिला नहीं तव इस माफिक मार्ग का स्वरूप देख करके क्रोध रूप अग्नि में जल करके साधु विचार करने लगा अहो इस नगर के लोग वड़े दुष्ट हैं जिस वास्ते इस पापी ने विगर प्रयोजन मुझको ऐसे दुक्ख में पटका इस माफिक दुष्ट प्राणियों को तो शिक्षा देना उचित है सोई नीति में लिक्खा है ॥

—मृदुत्वं मृदु षुश्लाघ्यं। काठिने कठिने षुच॥
भृंगःत्तणोति काष्टानि। दुनोति न कुसुमानि॥ १॥

व्याख्या—कोमल के साथ में कोमलता रखनी काठिन्य के साथ कठोरता रखनी जेसे भमरा काष्ट को खोदता है मगर फूलों को तो विलकुल तकलीफ नहीं देवे। तिस वास्तेमें भी इन दुष्टों कूं संकटमें पटकूं ऐसा विचार करके कोपाकुल में होके दमसार का हां पर छाया की जमीन पर वैठके उत्थान श्रुत को पढ़ने लगे तिस श्रुत के भीतर उदवेग का कारण सूत्र थे जिसके प्रभाव सेती ग्राम नगर वा देश अगर अच्छे वसते होवें तो भी उजाड़ सदृश हो जावे अव वे साधू को पकर के जैसे २ श्रुत को पढ़ते जावें तैसे २ नगर में अकस्मात् पर चक्रादिक की वार्त्ता प्रगट भई तव सर्व नगर के लोग भय भीत होके शोका कुल सहित सर्व धन धान्यादिक छोड़ करके केवल जीवित व्य ग्रहण करके दश दिशों में भाग गया राजा भी राज्य छोड़ करके भाग गया नगर शून्य कर दिया तिस वक्त में पड़ना, चूकना, भगना इत्यादिक क्रिया करके सहित नाना प्रकार के दुःख में पीड़ित हो गये नगर के लोगों को देख के क्रोध से शान्त होके साधु महाराज विचारने लगे अहो मैंने यह क्या किया मतलब विगर सर्व लोगों को दुःखी किये, मगर सर्वज्ञोंका वचन अन्यथा होवे नहीं तिस वास्ते स्वामी ने जो फरमाया था वो उसी माफिक होगया मैं ने वृथा कोप करके करीव केवल ज्ञान को हार दिया इस माफिक पश्चाताप कर रहे थे वाद दिल स्थान पै लाके अत्यंत करुणा रस में मग्न हो के वे मुनी सर्व लोगों को थिर करने के वास्ते समुच्छान श्रुत को पढ़ने लगे तिस के अन्दर वहुतसे आल्हाद पैदा करने वाले सूत्र हैं जिन के प्रभाव सेती उजाड़ ग्रामादिक होगये हों तो जल्दी सुवश हो जावे गोया पीछे शहर ग्राम आवादी हो जावे अव जैसे २ श्रुत को पढ़ते जावे तैसे २ खुशी होके सर्व लोग नगर में चले आये राजा भी हर्ष सहित अपने राज्य में आया भय वात सव भग गई सर्व लोग आनंद भये अव तप करके सूक गया है शरीर जिस का परम उपशम रस में मग्न हुवा दमसार मुनि आहार लिये विगर पीछे चले गये भगवान के पास विनय सहित गया तव स्वामी वोले भो दमसार आज दिन चंपा नगरी में भिक्षा के वास्ते जा रहा था तहां पर मिथ्या दृष्टी के वचन सेती क्रोध उत्पन्न हुवा था नत कहां तक उपशांत क्रोध होके पीछा सव शहर को वसा के पश्चाताप करके तूं यहां आया यह वात सच है जव दमसार वोला कि सर्व सत्य है तथा फेर भगवान ऐसा फरमाया कि हमारा सधू वा साध्वी कषाय करेंगे वे दीर्घ संसारी होगा तथा जो उपशम भाव रक्खेगा तिस के संसार अल्प होगा यह वचन सुन करके

मुनि बोला हे भगवान मुझ को उपशमसार प्रायश्चित् दीजिये तब स्वामी उपशम सार तप प्रायश्चित् दिया अब दमसार मुनि स्वामी के पास इस माफिक अभिग्रह ग्रहण करा जब मुझ को केवल ज्ञान होगा तब मैं आहार ग्रहण करूंगा इस माफिक अभिग्रह ग्रहण करके दमसार मुनि संजम तप करके आत्मा को भावित करते हुये विचरते हैं तब वो साधु प्रमाद जनित दोषोंकी गर्हा कर रहे थे तिसके शुभ अध्यवसाय करके सातवें दिन केवल ज्ञान उत्पन्न होगया देवतोंने महिमा करी तिस पीछे दमसार रिषी बहुत भव्य जीवों को प्रति बोध के बाराबर सतक केवल पर्ययपाल करके आखिर की संलेखना करके मोक्ष में प्राप्त भये। यह उपशम के ऊपर दमसार का दृष्टांत कहा इस माफिक और भव्य जीव सम्यक्तियों को समस्त ताप दूर करने के वास्ते अपना तथा पर का उपगार कारक परम उपशम रस में गलती नहीं लाना जिस करके परम आनंद सुख श्रेणी प्राप्त होवे। यह उपशम नामें सम्यक्त का प्रथम लक्षण कहा ॥ १ ॥

अब संवेगना में सम्यक्त का दूसरा लक्षण कहते हैं। तथा देवता और मनुष्य के सुख को छोड़ करके केवल मुक्ति के सुख की अभिलाषा करनी उसको संवेग कहते हैं कारण गुण गुणी सम्बंध नहीं होने से निरर्थक नाग समझना चाहिये तथा सम्यग् दृष्टि है सो चक्रवर्त्ति के सुख को और इन्द्रादिक के सुख को अनित्य समझते हैं केवल दुःख का कारण इस वास्ते दुःखदायक मानना चाहिये सुक्ख तो किसमें है कि जहां पर नित्य आनंद का स्वरूप है ऐसा मुक्ति का सुक्ख है उन को सुक्ख मानना चाहिये यह सम्यक्त का संवेग नामें दूसरा लक्षण कहा ॥ २ ॥

अब निर्वेदना में सम्यक्त का तीसरा लक्षण कहते हैं। तथा नार की तीर्यंच आदि दुःख से डरना उसको निर्वेद कहते हैं तथा सम्यग् दर्शनीयों को ऐसा विचार करना चाहिये जन्म जरामरण रोग शोक भय इत्यादिक नाना प्रकार का दुःख संसार में यह चिदानंद भोग रहा है इस संसार रूप कैद खानेमें बड़े भारी कर्म रूप कोट वाल कदर्थना दे रहे हैं इस वास्ते यह संसार ही दुःख का भाजनहै इस संसारमें सार कुछ भी नहीं है। यह निर्वेदना में सम्यक्त का तीसरा लक्षण जानना ॥ ३ ॥ यह संवेग और निर्वेद मुक्ति के देने वाले हैं सुदृष्टि पुरुषों को दृढ़ प्रहारी की तरह से हमेसा अंगीकार करना ॥

अब संवेग निर्वेद ऊपर दृढ़ प्रहारी का दृष्टान्त कहते हैं। माकंदी नगरी में सुभद्र नामे सेठ वसता था तिसके दत्त नामें लड़का वो बरोबर के लड़कों के साथ खेल करता दृढ़ प्रहार करके तिन लड़कों को मार देवे तब लोगों ने दृढ़ प्रहारी ऐसा नाम रख दिया अब हमेसा उसको इस माफिक करते हुये को देख करके लोक सेठ को उपालंभ देने

लगे तब सेठ ने बहुत मना किया मगर क्रूर बुद्धि करके लड़कों को मारता रहे तब लोगों ने जाके राजा सेती हकीकत कही तब राजा के हुक्म सेती सेठ ने उस लड़के को निकाल दिया तव अति क्रूर स्वभाव वाला वो लड़का उसको रहने के लिये कहां भी स्थान मिला नहीं मगर चौर पल्ली में रहने लगा तहां पर भी कुसंगत सेती चोरी करने से चोर हो गया एक दिन के वक्त एक दरिद्री ब्राह्मण के घरमें चोरी करने के लिये प्रवेश करा तहां पर एक गौ सींगों से मारती हुई चोरी में अंतराय करने वाली सामने भगी तिस गायको दया रहित जल्दी करके तरवार से मार डाली तब ब्राह्मण भाग करके हाथ में लकड़ी लेकर सामने आया तब तिसको भी तिसरी तीसे मारा तब तिसके पिछाड़ी पुकार करती हुई गर्भ सहित ब्राह्मणी को भी मार डाली पीछे जमीन पर गर्भ पड़ा हुवा देखा उसको देख करके तिसके कोई शुभ कर्मोदयसे मनमें वैराग्य उत्पन्न हुवा तब वो चोर निर्वेद गुण करके युक्त विचारने लगा आः मैंने यह क्या किया धिक्कार हुवो मुझको मनुष्य जन्म पाया वृथा है इस माफिक महा भयानक पाप करने वाले को धिक्कार है इत्यादिक विचार करके पांच मुष्टि मयी लोच करके चारित्र ग्रहण करा तथा फेर यह अभि ग्रह ग्रहण करा जबतक मेरे पाप मेरेको याद आवेंगे तब तक अन्न पानी ग्रहण नहीं करूंगा इस माफिक अभि ग्रह ग्रहण करके तिस शहर केपूर्वदिशा के पोल पर का उसगा ध्यान में रहते हुये तब नगर के लोग पत्थर तथा लकड़ी बगैरे के घाव दे रया था मगर मुनी ने तो क्षमा अंगीकार कर लीया मन करके भी चित्त में क्षोभायमान नहीं हुए तहां पर डेढ़ महिने तक ध्यान में रहे तिस पापको कोई भी याद दिलावै नहीं तब दूसरे दरवाजे पर का उस गामे रहे तहां भी तिसी तरह से हकीकत भई इस माफिक चौथे दरवाजे पर ध्यान में रहे इस माफिक दुःखमई संसार में विरक्त है परम संवेग रंगमें मग्न होके छैः महिने के अन्दर उस सर्व पापको उखाड़ करके दूर फेंक दिया तब केवल ज्ञान पा करके मोक्ष नगर में गये। यह संवेग निर्वेद के ऊपर दृढ़ प्रहारी का दृष्टान्त कहा। इस दृष्टान्त को सुन करके और भी भव्य जीव अपने आत्मा के हित के वास्ते यत्न पूर्वक संवेग और निर्वेद इन दोनों के ऊपर समझना चाहिये॥

अब अनुकंपा रूप चौथा लक्षण संवेग का बतलाते हैं तहां पर दुःखि प्राणियों को पक्षतात रहित दुःख दूर करने की इच्छा रखना उसको अनुकंपा कहते हैं मगर पक्षपात करके तो केवल दुष्ट स्वाभाव वाले बाघ चीता वगैरे हिंसक जीवों के अपने बच्चों के ऊपर करुणा होती है स्वभा करके मगर वस्तु करके वा करुणा नहीं होती है इस वास्ते करुणा में पक्षपात नहीं होना चाहिये जिसमें पक्षपात होता है वा करुणा नहीं है उस अनुकंपा के दो भेद हैं॥ द्रव्य सेती १ भाव सेती २ तहां पर द्रव्य करके तो अनुकंपा

किस को कहना अन्य को दुखी देख के शक्ती पूर्वक तिसके दुःख को दूर करना यह द्रव्य अनुकंपा १ और भाव अनुकंपा किसको कहते हैं कि हमेसा हृदय को कोमल और दया में रंगित होना यह दो प्रकार की अनुकंपा इन्द्र दत्त को अंगीकार करके तथा सुधर्म राजा की तरह से सम्यक्रियों को निरन्तर अंगीकार करना चहिये अब यहां पर सुधर्म राजा का दृष्टान्त कहते हैं ॥ पंचाल देशमें वर शक्ति नामें नगर तहां पर करुणा में रंगित होगया है अन्तःकरण जिस का परमधर्म जैन मतोपाशिक सुधर्म नामें राजा राज्य करता था तिस राजा के नास्तिक वादी जय देव नामा मंत्री था एकदिन के वक्त में कोई ग्राम सेतीं आकरके एक दूत सभा मंडप पर बैठा हुवा राजाके आगूं विनती करी हे स्वामी महाबल नामें सीमाल राजा है वो ग्राम में घात करता है द्रव्यादिक लूट करके लोगों को अत्यंत तकलीफ देता है वो राजा महादुष्ट है सो उसको तुमारे बिगर कोई भी बसकरने को सामर्थ वान है नहीं यह बात सुनकरके राजा मंत्री के सामने देखा तब मंत्री बोला कि हे स्वामी वो कंगाल तब तक गर्जारव कर रहा है जब तक आपका पधारना नहीं होवे वहां तक इत्यादिक मंत्री का वचन सुन करके राजा दिल में विचार किया जो अपने मंडल का कांटा होवे उसको अवश्य दूर करना चाहिये अन्य था राज नीत के भंग का प्रसंग होता है तथा नीति में लिखा है कि दुष्टका निग्रह और शिष्ट का पालना यह राजा का धर्म है। इस वास्ते इस काम में देरी नहीं करना चाहिये ऐसा विचार करके राजा जल्दी अपनी फौज मिलाके अपना शत्रु महाबल के ऊपर चढ़ाई करी अनुक्रम करके तिस के देशमें जाके लड़ाई में जय पाके तिसको लूट करके मोटे आनंद सहित अपने नगर के पास आया तब शहर में प्रवेश करती वक्त में महाजन लोगों ने बड़ा महोत्सव करा बहुत फौज सहित राजा नगर के दरवाजे के पास पहुंचा तितने में तो पोल गिरगई तब अपशकुन जान करके लौट करके नगर के बाहर रहा तब मंत्री ने तत्काल तिस ठिकाने पर नवीन पोल बनवादी अब दूसरे दिन राजा फेर भी सहर में प्रवेश करने के लिये आया तो फेर भी पोल गिरगई इस माफिक तीसरे दिन भी हुवा तब बाहर रह करके राजा मंत्री प्रतें पूछा भो जयदेव या पोल वारम्वार कैसे गिरती है अब कोई उपाय करके थिर होना चाहिये तब मंत्री जल्दी करके कोई निमित्तज्ञ पुरुष को बुलाके पूछा पूछ करके राजा सेती कहा हे महाराज मैंने पिछाड़ी सेती एक निमित्तिये को पूछा था तब निमत्तिये ने ऐसा कहा इस पोलकी अधिष्ठायि का कोई एक देवी को पायमान भई है वा देवी निरन्तर पोल को गिराती है अगर जो राजा माता पिता के पास सेती एक मनुष्य को मार करके तिसके खून करके पोल को सींचे तब पोल थिरहोवे मगर पूजा बलिदान नै वैध वगैरे से कुछ भी

नहीं होगा यह वचन सुन करके राजा बोला इस माफिक जीव वध करके या पोल थिर होवे तो इस पोल करके नगर करके मेरे कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सोई नीति में कहा है॥

—क्रीयतेकिं सुवर्णेन। शोभने नापिते नच॥
कर्णस्त्रुटतिये नांग। शोभा हेतु निरंतरं॥ १॥

व्याख्या—शोभा देने वाला ऐसा सोना पैर ने की कुछ जरूरी नहीं है जिस के पैर ने से कान टूट जाने ऐसी शोभा और सोने को जरूरी नहीं तिस वास्ते जहां पर रहूंगा वहां पर नगर समझना चाहिये तब मंत्रवी इस माफिक राजा का निश्चय जान करके सर्व महाजन लोगों को बुलवाके ऐसा कहा अहो महाजन लोग श्रवण करो मनुष्य मारे विगर या पोल थिर नहीं होगी तथा मनुष्य का वध तो राजा के आदेश विगर हो सकता नहीं तिस वास्ते तुम लोगां के जैसा विचार में आवे तेसा करना चाहिये तब महाजन लोग राजाके पास आ करके बोले हे स्वामी हम सब लोग यह काम करेंगे आप बे फिकर रहिये तब राजा बोला प्रजा लोग जो पुन्य पाप करते हैं तिसका छटा हिस्सा मुझ को आवेगा तिस वास्ते इस पाप कार्य में सर्वथा मेरी अभिलाषा नहीं है तब फेर भी महाजन लोग अति आग्रह से कहने लगे हे स्वामी पाप का भाग हमको और पुन्य का भाग आप को ऐसा हमारा वचन अब धारो इस वक्त में आप को कुछ भी बोलना नहीं चाहिये तब राजा तो मौन धारके बैठ रहा तब महाजन लोगों ने घर २ में द्रव्य की उघरानी करके तिस द्रव्य से एक सोनेका पोरषा वनवाया पीछे तिस स्वर्ण पुरुष को गाड़ी में रख करके कोटि द्रव्य तथा एक चिट्ठी तिसके आगू रख करके नगर में ढूंडी पिटवाई जो माता पिता अपने हाथ करके पुत्र का गला मरोड़ करके देवता को वलिदान देवे तो यह सोने का पुरुष और कोट द्रव्य दिया जावे अब तिसी नगर में महा दरिद्री वरदत्त नामें ब्राह्मण था तिस के स्त्री रुद्रसोमा नामें दया रहित थी तिसके सात पुत्र थे तिस वरदत्त ने तिस ढूंडी को सुन करके अपनी स्त्री से पूछा हे प्यारी छोटा लड़का इन्द्रदत्त है इसको दे करके यह द्रव्य ग्रहण कर लेवो तो श्रेष्ठ है किस वास्ते द्रव्य प्राप्ति होने से सर्व गुण हो जायगा सोई नीत में कहा है॥

श्लोक—यस्यास्ति वित्तं सनरः कुलीनः। सपंडितः सश्रुत
वान् गुणज्ञः॥ सएव वक्ता सचदर्शनीयः। सर्वे
गुणाः कांचनमाश्रयंति॥ १॥

व्याख्या—जिसके पास द्रव्य है वो कुलवान है वो पंडित है शास्त्रवान है गुणज्ञ है वोई देखने लायक है इस वास्ते सर्व गुण कंचन में है। फेर भी हे भद्रे, धन का महात्म देख ॥

श्लोक—पूज्यतेयद पूज्योपि यदगम्योपि गम्यते। वंद्यति यद् वंद्योपि ॥ तत्प्रभावोधनस्यच ॥ १ ॥

व्याख्या—धन में ऐसी शक्ति है कि नहिं पूजने योग्य है तो भी द्रव्य के वास्ते पूजा करते हैं जिस के पास जाने लायक नहीं है मगर तोभी द्रव्य के वास्ते भंगी के वहां चले जाते हैं नहीं वंदन करने के योग्य है मगर द्रव्यवान है तो वो वंदन करने योग्य हो गया यह सब प्रभाव धन का है तिस वास्ते हे प्यारी इतना धन घर आने से बहुत ब्राह्मणों को भोजनादिक धर्म कृत्य करने सेती जल्दी पाप दूर कर देंगे इस वास्ते इस वारे में कुछ भी चिंता नहीं करना तब वा ब्राह्मणी भी धन की लोभणी होके करुणा रहित तिसने वचन प्रमाण किया तब वरदत्त ने उस हुंडी को फर्श करके बोला कि मुझ को यह द्रव्यादिक देवो. मैं तुम को पुत्र देता हूं तब महाजन लोग बोले अगर तूं तेरी स्त्री सहित पुत्र का गला मोस करके देवता को बलिदान देवो तो यह सर्व द्रव्य तुम को दे देवें इस तरह से करोगे तो द्रव्य मिलेगा और कारण से नहीं तब वरदत्त ने सर्व वात प्रमाण करी तब पास में बैठा हुवा था इन्द्रदत्त इस माफिक पिता की चेष्टा नेष्टा देख के दिल में विचार करा अहो इति आश्चर्ये इस संसार में सर्व को स्वार्थ प्रिय है परमार्थ कर के कोई किसी का नहीं है नीति में लिखा भी है ॥

श्लोक—वृक्षं क्षीण फलंत्पजंतिविहगाःशुष्कंशरः सारसा ।

इत्यादिक जिस वृक्ष में फल नहीं होता है उसको सारस त्याग कर देते हैं तथा फेर भी इन्द्रदत्त ने विचार किया कि जो दरिद्री होता उस के करुणा नहीं होती इस बात को नीति में पुष्ट करी है ॥

श्लोक—वुभुक्षितः किंनकरोतिपापं। क्षीणानरानिःकरुणा भवंति ॥

इत्यादिक ॥ गोया भूख मरने वाला आदमी क्या पाप करता नहीं द्रव्य रहित आदमी के करुणा होनी मुसकिल है अब क्या कहते हैं कि वो जो वरदत्त है सो द्रव्य लेके तिस इन्द्रदत्त पुत्र को महाजन लोगों को दे दिया तब महाजन लोगों ने भी उमदा वस्त्र चन्दन पुष्प तांबूल तिलक कुंडल, कड़ा मोती का हार इत्यादिक आभूषणों करके

सुशोभित करा फेर राजा के पास ले गया तब राजा भी अलंकार सहित तथा पिता माता युक्त बहुत नगर लोगों के सहित विकश्वर मुखारविंद इन्द्रदत्त को देख करके चमत्कार पूर्वक राजा बोला अरे पुत्र इस वक्त में उदासी के मौके पर खुश भक्ती सहित दिख रहा है मरने का डर नहीं है तब इन्द्रदत्त बोला हे देव जब तक भय नहीं आता है वहां तक डर है अगर भय आ गया तो उसको संका रहित सहन करना चाहिये तथा फेर भी इन्द्रदत्त बोला अहो राजन् एक नीति का वचन कहता हूं आप लोग सर्व साव धान होके श्रवण करो लौकिक में एक बात है कि पिता के संताप करके पुत्र माता के सरणें जाता है तथा माता के संताप से पुत्र पिता के शरण जाता है दोनों के संताप कर के पुत्र राजा के शरणें जाता है तथा राजाके संताप सेती पुत्र महाजन लोगों के शरणें जाता है मगर स्वामी खुद माता पिता पुत्र का गला मोस करें और उस में राजा प्रेरणा करने वाला होवे और महाजन लोग द्रव्य देके ग्रहण करके मारने के वास्ते मौजूद भये तहां पर परमेश्वर विगर किसका शरण अंगीकार करूं और किसके आगूं अपना दुःख कहूं कोई भी नहीं है तिस वास्ते अहो राजा केवल परमेश्वर को शरणों अंगीकार करके धैर्य सहित मरने का दुःख सहन करना चाहिये तब इस माफिक इन्द्रदत्त का वचन सुन करके अति करुणा रस में मग्न होके राजा बोला अहो लोगो किस वास्ते तुम लोगों ने इस बालक को मारने के वास्ते प्रयास कर रहे हो इस माफिक पाप का कारक तथा नगर वा पोल करके मुझ को प्रयोजन नहीं है जिस कारण से इस संसार के विषय जितने प्राणी हैं वे सर्व जीने की इच्छा करते हैं मगर मरने की नहीं करते तिस वास्ते आत्मा के हित की वांछा करने वाले पुरुषने कोई भी जीव की हिंसा नहीं करना चाहिये तथा सर्व जीवों के ऊपर अनुकम्पा रखनी चाहिये इस माफिक धैर्यता राजा की और अनुकम्पा में तत्पर इस माफिक राजा को सत्ववंत तथा लड़के की खुशी देख के पोलकी अधिष्ठायिक देवी प्रसन्न होके दोनों के ऊपर फूलों की बरसात करी तब क्षण मात्र में पोल अचला हो गई तब प्रसन्न होके सर्व लोग सत्य मान करके राजाके गुणों की तारीफ करने लगे तथा दया मयी श्री जिन धर्म की अनुमोदना करने लगे अपने २ ठिकाने प्राप्त भया राजा भी मोटे उत्सव करके तिसी पोल करके शहर में प्रवेश करके अपने मकान पर गया तहां इन्द्रदत्त भी खुश भक्ती सहित अपने मकान पहुंचा सर्व लोग खुशी भये तथा सुखी भये तब बहुत भव्य जीवों ने दया मयी श्री जिन धर्म अंगीकार करा इस माफिक अनुकम्पा के ऊपर इन्द्रदत्त को अंगीकार करके सुधर्म राजा का दृष्टांत जानना इस माफिक और भी भव्य जीव आत्म धर्म के पहिचानने वाले तथा सर्व सुख श्रेणी का कारण इस वास्ते सर्व जगत्र के जीवों ऊपर अनुकम्पा रखनी चाहिये। यह अनुकम्पा नामें चौथा लक्षण जानना ॥ ४ ॥ अब पांचमा सम्यक्त का आस्तिक्य का लक्षण दिखलाते हैं ॥

श्लोक—अस्ती इति मतिः अस्य इति आस्तिकः।

व्याख्या—अस्ति पदार्थ रहे हुये पदार्थ हैं इसी माफिक पदार्थ हैं अन्यथा नहीं ऐसी बुद्धि है जिसकी उसको अस्ती कहते हैं अगर एक तत्व से दूसरा तत्व भी श्रवण कर लेने तो मगर जिनोक्त तत्वों में एकान्त रुचि है जिन्हों की गोया जिन वचनों में संका और कांक्षा नहीं है ऐसे अस्तिक्य गुण धारक गोया सर्वज्ञों के वचन पर दृढ़ता रखते हैं उनको अस्तिक्य गुण कहते हैं। अब इसी अस्तिक्य गुण को पुष्टि करते हैं। गाथा द्वारा॥

गाथा—मन्नइतमेव सच्चं। निस्सं कंजं जिणेहिं पन्नत्तं॥
सुहपरिणामो सम्मं। कंखाइविसुत्तियारहिओ॥ १॥

व्याख्या—जो सर्वज्ञों ने फरमाया है वे उसी माफिक पदार्थ रहा है उन पदार्थों को संका रहित सत्य समझे शुभ परिणामों में सम्यक्त है और कांक्षादिक करके भी रहित होने से भी सम्यक्त होता है अब यहां पर आस्तिक्य गुण ऊपर पद्म शेखर राजा का दृष्टान्त कहते हैं। इस जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र के विषै पृथ्वी पुर नामें नगर था तहां पर पद्म शेखर नामें राजा राज्य करता था एक दिन के वक्त में तिस नगर के नजदीक बगीचे में बहुत साधुवों करके सहित श्री विनयंधर सूरि महाराज सम व सरे तब राजाभी बहुत लोगों करके सहित आचार्य को वंदना करनेको गया तब गुरू महाराज भी समस्त भव्य जीवोंके उपगार के लिये धर्म का उपदेश दिया तब पद्मशेखर राजा श्री गुरू महाराज के पास सेती सम्यग जीवादि तत्व परमार्थ जान करके बज्र लेप की तरह से अपने हृदय में धारण करता भया तथा और भी भव्य जीवों ने सम्यक्त रत्न अंगीकार करा तब राजादिक सर्व लोग विनय सहित गुरू महाराज को नमस्कार करके अपने ठिकाने गया तब गुरू महराज भी तहां से विहार करके और ठिकाने गये अब पद्मशेखर राजा श्री जिनोक्त तत्वों के विषय परम आस्तिक्यता धारण करके सुख करके काल पूर्ण कर रहा था यथा जो कोई मंद बुद्धि वाला जीवादि तत्व को नहीं माने तिस को प्रधान सारथी की तरह से दम करके अच्छे रस्ते ले आवै तथा फेर राजा जो है सो सभा में बहुत प्रकार करके समस्त मनुष्यों के आगूं भक्ति राग करके गुरू महाराज के गुणों की तारीफ करै सो इस माफिक है अहो लोगो सुनो इस लोक में ममत्व रहित तथा जीव दया के प्ररूपक तथा राग द्वेष रहित तथा भव सेती विरक्त तथा कामदेव को जीतने वाले मोक्ष रूप रमणी बरणे के लिये उद्यम कर रहे हैं तथा त्याग दिया है जिनों ने सकल द्रव्य। उत्तम प्रकार सेती चारित्र रत्न ग्रहण करा है जिनों ने तथा सर्व सत्व प्राण भूत जीवों के ऊपर करुणा करने में उद्योग कर

रहे हैं तथा दुःख से धारण करने में आवे ऐसा प्रमाद रूप हाथी उसको विघातन करने में सिंहसमान जानना इस गुणों करके सहित श्री गुरू महाराज हैं तथा जो प्राणी मनुष्य भवादिक समस्त धर्म सामग्री पा करके इस माफिक गुण सहित गुरूकी सेवा करते हैं वे धन्य हैं तथा जो फेर तिनों के वचन रूप अमृत का पान करते हैं व धन्यतर हैं तथा इस माफिक वचन रस करके वो राजा बहुत भव्य लोगों के पाप रूप मैलको धो डाला और जिन धर्म में स्थाप न करे मगर वहां पर एक विजय नामें सेठ का पुत्र था वो राजा के बचन ऊपर अप्रतीति करके कहने लगा अहो नर नाथ आप जो मुनियों का वर्णव कर रहे हो सर्व वृथा है घास के पूले की तरह से निष्फल है तथा पवन से चलायमान भया ध्वज पट याने ध्वजा वस्त्र चंचल है इस माफिक मन भी चंचल है तथा अपने २ विषयों को इन्द्रियां ग्रहण करती है इस वास्ते मनका रुकना मुसकिल है तथा देवता भी मन और इन्द्रियों को जीतशक्ते नहीं या वात सुन करके राजा ने दिलमें विचार करा यह दुष्ट बुद्धि वाला है और वा चाल है विगर विचार से वोलता है इस वास्ते और भी भोले लोगों को उत्तम मार्ग सेती गिरा देगा इस वास्ते इसको कोई भी इलाज करके उपदेश रूप शिक्षा देनी चाहिये ऐसा विचार करके अपना परम सेवक यक्ष नामें पुरुष प्रतें एकान्त में बुलवाके कहा कि भो यक्ष तूं विजय के साथ मित्राई करके तिस प्रते अपना अति विश्वास पैदा कर तथा कोई एक प्रकार करके तिसके रत्न करंडीए में मेरा बहु मोला रत्नाभूषण डाल देना तव यक्ष नेभी मंजूर करा प्रमाण करके विजय के साथ मोटी मित्राई पैदा करी तिसको बहुत विश्वास देके एक दिन के वक्त अवसर जान करके वो रत्ना भरण विजय के रत्न करंडीये में डाल करके राजा प्रतें सर्व वृत्तान्त कह दिया तव राजा शहर में तीन दफै डूंडी पिटवाई अहो लोगो सुनो आज एक महा मौल्यवाला राजाके रत्नका आभूषण मिलता नहीं अगर किसी ने ग्रहण कराहोवे तो जल्दी देवो अगर नहीं देने से कदाचित् राजा को मालूम पड़ने से ग्रहण करने वाले ऊपर बड़ा दंड पड़ेगा इस माफिक डूंडी पिटवा करके सर्व शहर के लोगों का मकान शोधने के वास्ते सिपाइओं को भेजा तव घरकी तालासी लेते २ विजय के घरमें रत्न करंडीये के भीतर राजा का रत्नाभरण देख करके पूछा अहो यह क्या है तव विजय बोला कि मैं नहीं जानता यह क्या वात है तव सेवक लोग बोले अहो तुम खुद यह आभूषण चोर करके मैं नहीं जानता ऐसा क्यों कहता है तव विजय भय करके कुछभी बोल सका नहीं मौन धारन करके रहा तव सिपाई लोग भी विजय को सघन वंधन से वांध करके राजा के पास लाया तव राजा ने ऐसा कहा कि तुम लोग मारना नहीं ऐसा गुप्त कहदिया फेर सभा के सामने इस माफिक कहा कि यह चोर है इसको मार डालना ऐसा कह

करके मारने के सुमत किया तब तिस विजय का स्वजन संबंधी आदि लेके सर्व लोग देख रहे थे मगर प्रत्यक्ष करके चोर जानके कोई भी छोड़ा शक्के नहीं तब जीवित से निराश होके विजय दीन वचनों करके यक्षप्रतें कहने लगा कि हे मित्र तूं कोई प्रकार करके राजा को प्रसन्न करके कोई भी भयानक दंड करके मुझको जीवितव्यपणा दिलावे तब यक्ष भी तिसका वचन अवधारण करके राजा प्रते विनती करी हे स्वामी यथा योग्य दंड देके इस मेरे मित्र को छोड़ देना चाहिये और समस्त कल्याण को आश्रय करने वाला जीवित दान देवो तवतो राजा कुपित की तरह से दृष्टि करके कहा कि अगर जो यह हमारे मकान से तेलसे भरा हुवा पात्र ग्रहण करके एक बिन्दु मात्र भर जमीन पर नहीं गिरना चाहिये तथा सकल नगर में घूमा करके तिस पात्र को हमरे पास में रक्खे तब तो इसको जीवितदान देवें अन्यथा नहीं इस माफिक राजाज्ञा हुक्म सुन करके यक्ष ने विजय के अगाड़ी कहा तब विजय ने भी मरण के भय सेती अपने जीवित के वास्ते सर्व अंगीकार किया तब पद्म शेखर राजा भी सर्व नगर के लोगों को बुलवा करके ऐसा हुक्म दिया भो लोको आज सहर के भीतर ठिकाने २ वीणा वेणु मृदंग आदि नाना प्रकार के वाजित्र बजवावों तथा अत्यंत मनोहर रूप को धरने वाली सर्व इन्द्रियों का सर्वस्व लूटने वाली ऐसी वेश्या उनको घर २ में नचावो तब सब लोगों ने राजाके वचन सेती तिसी माफिक कार्य करने में उद्यम किया अब वो जो विजय था सो शब्द रूप आदि विषयों का अति रसिक था मगर मरने के भय सेती इन्द्रिय विकार जीत करके मनको रोकने पूर्वक वो तेलका पात्र तेल से परिपूर्ण भरा हुवा समस्त शहर में फिरा करके पीछे राजा की सभा में आकर के तिस पात्र प्रतेयत्न पूर्वक राजा के आगूं रख करके राजा को प्रणाम किया तब राजा भी कुछ हसके विजय प्रते कहने लगा भो विजय देख यह गीत और नाटक अत्यंत हो रहा था इस के अन्दर बिजली की तरह से चंचल मन और इन्द्रिया तैने कैसे वस करी तब विजय राजा को नमस्कार करके कहने लगा हे स्वामी मरने के भय सेती कारण ग्रन्थों में कहा भी है कि मरण समंनत्थिभयं इत्यादिक तब राजा बोला कि अगर तैने एक भवके मरने सेती इस माफिक प्रमाद को दूर करा तब अनंत भव भ्रमण भटकने के भय से मुक्ति होने वाली जिनोंने तत्व जाना है ऐसे साधु मुनि राज अनंत अनर्थ का पैदा करने वाला ऐसे प्रमाद को कैसे सेवन करेंगे इस माफिक राजा का वचन सुन करके दूर हो गया है मोह का उदय जिसका ऐसा विजय भी जाना है जिन मत रहस्य को जिसने आखिर में श्रावक धर्म अंगीकार किया तब राजा भी अपना साधर्मिक जान करके तिसका बहुमान करके बड़े आडंबर सहित तिस विजय को घर पहुंचाया तब सर्व

लोग प्रसन्न होके कदम २ में राजा के गुणा के गीत गाने लगे इस तरह से पद्मशेखर राजा बहुत भव्य जीवों को जिन धर्म में स्थापन करके हमेसा स्वधर्म की महिमा विस्तार करके बहुत काल राज्य पाल करके तथा परम आस्तिक्य गुण को अराधन करके उत्तम देवलोक भवन में प्राप्त भया। यह आस्तिक्य गुण ऊपर पद्मशेखर का दृष्टान्त। इस दृष्टान्त को भव्य जीवों को अपने जिगर में रमणता करनी और आस्तिक्य गुण में विशेषयत्न करो जिससे सुख सेती मोक्ष पद प्राप्त हो जावे यह आस्तिक्य नामें पांचमा लक्षण कहा ॥ ५ ॥ यह पूर्वोक्त उपशम को आदि लेके पांच सम्यक्त के लक्षण ॥ यह प्रत्यक्ष परोक्ष करके सम्यक्त दृढ़ होने का कारण जानना चाहिये ॥

अब सम्यक्त के छै प्रकार की यतना निरूपण करते हैं ॥ पर तीर्थ कादि वंदन इत्यादि तथा पर तीर्थ किसको समझना चाहिये ॥ परि व्राजक भिक्षुक भौतिकादिक यह सब पर दर्शनी गोया पर मती समझना चाहिये आदि शब्द सेती रुद्र और विष्णु तथा बौद्धादिक तथा और भी परतीर्थिक देवता समझना चाहिये तथा अर्हत प्रतिमा रूप स्वदेवभी दिगंबरादिक कुतीर्थ समझना चाहिये तथा भौतिकादिक ने ग्रहण करी मूर्त्ति महाकालादिक उन सबको वंदना तथा स्तवना नहिं करणा चाहिये तथा नमस्कार किसको कहते हैं ॥ कि सिर करके वंदना करनी तथा वंदना और नमस्कार करनी सम्यक्तियों के त्याग होता है अगर वंदन नमस्कार करे वो तिन के भक्त जो है सो मिथ्यात्व की पुष्टि कर रहे हैं तथा प्रवचन सारो द्धार वृत्ती में ऐसा कहा :—

—वंदनं शिर साभिवादनं १ नमस्कार करणंप्रणाम पूर्वकं प्रशस्तध्वनि

कर के गुण की तारीफ करनी तथा अन्यत्र ग्रन्थ में भी इस माफिक कहा है सोई लिखते हैं ॥

गाथा—वंदणयं कर जोडण। सिर नामण पूयणंच इहं नेयं
वायाइ णमुक्कारो नगंसणं मणपसा यत्ति ॥

व्याख्या—वंदना किस को कहते हैं दोनों हाथ जोड़ना तथा सिर का नवाना उस को पूजा कहते हैं तथा वचन करके भी नमस्कार तथा मन प्रसन्नता पूर्वक सब होता है तथा पर तीर्थियों के साथ कभी भाषण करा नहीं तौभी सम्यग् दृष्टि तिनों के आलापन गोया किंचित् भाषण करे उसको आलापन कहते हैं और वारम्वार संभाषण करना उस को संलाप कहते हैं इन दोनों का त्याग करना चाहिये सम्यग दृष्टियों को

तथा तिनों से संभाषण करने से तिनोंके साथ परिचय होवे तथा तिन विनष्ट आचारियों का मत श्रवण करने तथा देखने से कोई जीव को मिथ्यात्व का उदय हो जावे॥ अगर कुतीर्थिक भाषण प्रथम से करे तो भी सम्यक्तियों को भाषण नहीं करना चाहिये तथा लोक अपवाद के भय सेती भी भाषण करे नहीं तथा तिन पर तीर्थियों को अशन १ पान २ खादिम ३ स्वादिम ४ वस्त्र पात्रादिक सुदृष्टियों के देने लायक नहीं कारण तिस के देने सेती अपने तथा दूसरे के देखते होवें तो तिनों का बहुमान करने से मिथ्यात्व प्राप्ति होती है तथा यहां पर परतीर्थियों को असनादिक का देना अनुकंपा छोड़ कर के मना है अनुकम्पा लाके तो उन को भी दान देना चाहिये यही बात दृढ़ करते हैं।

—सव्वेहिं पिजिणेहिं दुज्जय जियराग दोसमोहेहिं।
सत्ताणुकंपणठ्ठा दाणंनकहिं पिपडि सिद्धंति॥ १॥

व्याख्या—दुर्जित राग द्वेष मोह को जीतने वाले ऐसे सर्व तीर्थंकरों ने सत्वप्राण जीव की अनुकम्पा के वास्ते कहीं भी मनाई नहीं करी मतलब यह है कि भगवान ने अनुकम्पा दान की मनाई करी नहीं॥ तथा तिन परतीर्थिक देवों को तथा तिनोंने ग्रहण कर लई जिन प्रतिमा उन के पूजा निमित्त गंध द्रव्यादिक सम्यग दृष्टि नहीं भेजे तथा आदि शब्द सेती विनय और वेयावच्च यात्रा स्नात्रादिक भी सम्यक्ति नहीं करे इस के करने सेती लोकों में मिथ्यात्व स्थिर होजावे ये पूर्वोक्त परतीर्थिकादिक को वंदन त्याग करना आदि लेके छः प्रकार की जयनापूर्वक यत्न करना भव्यात्मा को पालन करना चाहिये अगर छः प्रकार की यतना करके सम्यक्त पालन करे तो भोज राजा का पुरोहित धनपाल की तरह से सम्यक्त में दूषण नहीं लगे अब यहां पर यतना के ऊपर धनपाल का दृष्टांत कहते हैं॥ अयवंती नगर में सर्वधर नाम पुरोहित रहता था तिस के धनपाल १ और शोभन २ यह दो लड़के थे वे दोनों लड़के पंडिताई के गुण से राजा के बहुत मान करने योग्य भया अब एक दिन के वक्त तिस नगरी में सिद्ध सेना चार्य संतानीय श्री सुस्थित आचार्य अन्य पुस्तकों में ऐसा भी कहा है श्री उद्योतन सूरि के शिष्य श्री वर्द्धमान सूरि बहुत भव्य जीवों को प्रतिबोध देने के वास्ते पधारे तब सर्वधर पुरोहित के भी तहां पर जाने आने से गुरू महाराज के साथ प्रीत्ति होगई तथा एक दिन के वक्त उस गुरू महाराज से सर्वधर पुरोहित ने पूछा। हे स्वामी घर के अंगन भूमि में गड़ा भया कोटि द्रव्य है सो तिस को बहुत देखा मगर मिलता नहीं अब कोई तरह से मिल जावे तो कृपा करो तब गुरू महाराज इस करके बोले अगर धन मिल जावे तो हम को क्या फ़ायदा तब सर्वधर बोला हे स्वामी आधा देदूंगा तब गुरू महाराज तिस

पुरोहित के घर जाके कोई भी प्रयोग कर के तत्काल सर्व द्रव्य प्रगट कर के दिखला दिया तव सर्वधर तिस द्रव्य की दो ढेरी वना के गुरू महाराज से विनती करी हे स्वामी आधा द्रव्य ग्रहण करिये तब गुरू महाराज बोले द्रव्य करके हमारे कुछ भी प्रयोजन नहीं है ऐसा द्रव्य तो हमारे पास था उस का भी त्याग कर दिया तव ब्राह्मण बोला कि आपने आधा क्यों मांगा था तव गुरू महाराज बोले घर में जो सार वस्तु है उस मांय से आधा देना चाहिये, तव पुरोहित बोला कि मेरे घर में और तो कुछ भी सार वस्तु है नहीं तव गुरू बोले कि तेरे सार भूत दो पुत्र हैं तिस मांय सेती एक पुत्र हमको देदेवो ऐसा सुन करके विषाद पूर्वक मौन धारण कर के रहा तब गुरू महाराज और ठिकाने विहार कर गये अब वो ब्राह्मण गुरू महाराज के उपगार को याद कर रहा है मगर गुरू प्रतें प्रति उपगार नहीं कर सका उसी चिंता में शल्य पीडित की तरह से काल गमाता हुवा आखिर में कोई वक्त में रोग पीडित हो गया तव पुत्रों ने अंत्य अवस्था के योग्य धर्म क्रिया करवाके अपने पिताको मानस दुःखमें पीडित देख करके ऐसा पूछा। भो पिताजी तुमारे दिल में जो वात होवे सो प्रकाशक करिये गोया कहिये तव पिताजी सर्व हकीकत कहके ऐसा वोला भोपुत्रो तुम दोनों मांय से एक जनों चारित्र ग्रहण करके मुझको रिण रहित करदो यह वचन सुन करके धनपालतो डर करके नीचा मुंह करके वैठगया तब शोभन वोला अहो पिता जी मैं दीक्षा ग्रहण करूंगा आप रिण रहित हो जावो चित्तमें परम आनंद धारण करो ऐसा पुत्र का वचत सुन करके सर्व धर ब्राह्मण तो देव लोक में पहुंचा तव लड़को ने सव क्रिया करके वाद शोभनने श्री वर्द्धमान सूरि के शिष्य श्री जिनेश्वर सूरि गुरू महाराज के पास दीक्षा ग्रहण करी अब धनपाल को पायमान होके उसी दिन से जैन धर्म का द्वेषी हो गया तिसने अयवंती नगरी में जैनी साधुवों का आना जाना वंद कर दिया तव अयवंती के संघने श्री गुरू महाराज के पास चिट्ठी भेजकर के ऐसा कह लाया हे स्वामी आप शोभन को दीक्षा नहीं देते तो क्या गच्छ सून्य तो नहीं होता कारण गच्छ तो रत्ना कर है गोया रत्न की खदान के वतौर है शोभन को दीक्षा देने से तिसका भाई धनपाल पुरोहित मिथ्या बुद्धि सहित कोप करके बहुत सी धर्म की हानी करता है अब तिसका वृत्तान्त जान करके आचार्य महाराज शोभन को गीतार्थ समझ करके शुभदिन में वाचना चार्य करके दो मुनि के साथ में उपद्रव शान्त करने के वास्ते उज्जयिनी नगरी प्रतें भेजते भये तव शोभना चार्य भी गुरू महाराज की आज्ञा करके तहां से विहार करके अनुक्रम से उज्जयिनी नगरी में आये तहां पर शहर का दरवाजा ढका भया देख करके सहर में प्रवेश करते थे तितने में धनपाल सामने मिला वो जैनधर्म का द्वेषि था

उसने शोभन को पहिचाना नहीं और इस माफिक हांसी का वचन कहा गई भदंत भदंत नमस्ते गद्धे जेसे दांत वाला हे पूज्य तुमको नमस्कार है तब शोभन भी भाई को पहिचान करके तिसके योग्य प्रति वचन कहा । कपि वृषणा स्यवयस्य सुखंते । बंदर के आंड़ जैसा मूं वाला तेरे सुक्ख है ऐसा वचन सुन करके धनपाल बोला कुत्र भवेन्द्र वदीय निवासः ।। कहां पर होता है तुमारा निवास । तब शोभनाचार्य बोला । यत्र भवेन्द्रवदीय निवासः ।। १ ।। जहां पर तुमारा रहना है वहां पर हमारा भी रहना है अब धनपाल भाईका वचन पहिचान करके कार्य के वास्ते बाहर चला गया तब शोभन आचार्य भी शहर में प्रवेश करके सर्व मन्दिरों में चैत्य वंदन करके मन्दिरों से बाहर निकले तब श्री संघ भी मिल करके गुरू महाराज के चरण कमल प्रतें नमस्कार करके अगाड़ी बैठे । तब शोभनाचार्य भी शोभन वाणी करके धर्म देशना देके सर्व संघयुक्त अपने भाई के घर गये तब भाई भी सामने जाके परम विनय करके नमस्कार करके रमणीक चित्र शाला रहने के वास्ते दीवी तब माता और स्त्री भोजन सामग्री करने को लगी तब शोभना चार्य ने मना कर दीवी कारण आधा कर्मि आहार साधुवों के ग्रहण करने योग्य नहीं इस माफिक गुरू की आज्ञा याद आ गई तब शोभनाचार्य की आज्ञा करके साधू आहार लेने के वास्ते श्रावकों के घर गये तब धनपाल भी तिनों के साथ गया तिस अवसर में कोई एक श्रावक के घर में एक कोई द्रव्य हीन और कृपण श्रावकनी थी तिस्ने साधुवो के सामने दही का बरतन रखदिया तब साधुवों ने तिससे पूछा यह दही शुद्धमान है तब वो श्रावकणी बोली तीन दिना का है तब मुनी बोले तो यह दही अयोग्य है जिनागममें मनाई है यह बात सुन करके धनपाल ने पूछा कि हे साधो यह दही अयोग्य कैसे है तब साधू बोले तुम अपने भाई से पूछो तब धनपाल दही का वर्तन लेके शोभनाचार्य के पास जाके ऐसा पूछा यह दही अशुद्ध कैसे है लोक में तो दही को अमृत समान कहते हैं अगर जो इस दही में जीवों को दिखलावो तो मैं भी श्रावक हो जाऊं नहीं जब भोले लोगों को ठग रहेहो ऐसा भाई का बचन सुन करके शोभनाचार्य बोले कि मैं तो तिस दहीमें जीवों प्रतें दिखलाऊंगा मगर तुम अपना वचन निर्वाह करना तब धनपाल ने भी मंजूर किया तब शोभनाचार्य अलक्त एक किसम का नरम पदार्थ और चिकना होता है उस को नीचे बिछा दिया तथा दही के बर्तन के मुख पर ढक्कन दिलाके और पसवाड़े एक छेद करवाया क्षण मात्र उस भांडयाने बरतन को घाम पै रखवा दिया तब तो दही के बरतन के छेदसे जानवर सुफेद जाती के निकल करके उस अलक्त याने अलकतरा और एक रंग भी होता है उस अलक्त में लग गया उन जानवरों को आपने देखा, तब धन

पाल को दिखलाया तब धनपाल भी चलते हुए जानवरों को देख करके मन में आश्चर्य माना और कहने लगा कि धन्य है जगत्र में यह जैन धर्म ऐसा वारम्वार कहने लगा। तिस वक्त में धनपाल के चित्त में सम्यक्त रत्न पैदा होगया तब श्री गुरू महाराज के पास सेती सम्यक्त मूल वारे व्रत अंगीकार करता हुवा तथा मन में केवल पंच परमेष्ठि का ध्यान करते भये. गोया परम श्रायक हो गया और धर्म को चित्त में धारण करै नहीं अब शोभनाचार्य भी इसी तरह से भाई को प्रति वोध देके अपने गुरू महाराज के पास गये तथा धनपाल छै प्रकार की जतना करके यत्न करने वाले सुख करके सम्यक्तादिक धर्म आराधन करके काल व्यतीत कर रहा था तिस वक्तमें कोई दुष्ट ब्राह्मण भोज राजा के आगूं ऐसा कहा कि हे महाराज धनपाल आप का पुरोहित जिन विना और देव को माने नहीं और नमें नहीं तव राजा वोला अगर इस माफिक है तो परीक्षा करनी चाहिये अब एक दिन के वक्त राजा भोज महा काल के मन्दिर में जाकर के सपरिवार सेती रुद्र प्रतें नमस्कार किया. मगर धनपाल ने नमस्कार नहीं करा मगर अपने हाथ में मुंदरी है उसमें जिन विंव था उन को नमस्कार करा तव भोज राजा तिस धनपाल का यह स्वरूप जान करके अपने ठिकाने आकरके धूप पुष्पादिक पूजा की सामग्री मंगवा के धनपाल प्रतें ऐसा हुक्म दिया, भो धनपाल देव पूजा करके जल्दी आवो तब धनपाल राजाकी आज्ञा करके उठ करके पूजा की सामग्री ग्रहण करके प्रथम भवानी के मंदिर में गया तहां पर चकित होके वाहर निकल करके रुद्र के मन्दिर में गया तहां भी इधर ऊधर देख करके जल्दी से निकल करके विश्नु के मंदिर में गया तहां पर अपने उत्तरासन दुपट्टे से आच्छादन करके वाहर निकल करके श्री रिषभ देव के मन्दिर में जा करके प्रशान्त चित्त होके पूजा करके राज द्वार में गया मगर राजा ने पिछाडी हेरो रखने वाला आदमी को भेजा था तिन्हों की जवानी से राजा को मालूम पेश्तर हो गई थी तो भी राजा ने धनपाल को पूछा तैने देव पूजा किस तरह से करी तब धनपाल वोला कि हे महाराज अच्छी तरह से पूजा करी तब राजा वोला कि भवानी की पूजा करी भी नहीं और चकित होके वाहर निकल गया तब धनपाल वोला कि हे महाराज खून से लिप्त हाथ थे तथा ललाट में भृकुटी चढ़ाई भई और भैंसें को मर्दन करने वाली भवानी को देख करके डर करके जल्दी वाहर निकल गया कारण इस वक्त में युद्ध कामों का है ऐसा विचार करके पूजा करी नहीं तब फेर राजा वोला कि रुद्रकी पूजा किस वास्ते नहीं करी तब धनपाल वोला।

श्लोक—अकंठस्य कंठे कथं पुष्पमाला । बिना नासिकाया
कथं गंध धूपः ॥ अकर्णस्य कर्णे कथंगीतनादः ।
अपादस्य पादे कथंमे प्रणामः ॥ १ ॥

व्याख्या—विगर गले विगर फूलमाला कहां पहिनावें तथा नासिका विगर खशबोई किस को देवें विगर कान विगर गीतनाद किस को सुनावें जिसके पांव हैई नहीं उसको प्रणाम मैं किस तरह से करूं तब राजा बोला कि विश्नु की पूजा करे विगर तिन्हों के सामने वस्त्र ढांक करके कैसे जल्दी बाहर निकल गया तब धनपाल बोला कि विश्नु आप अपनी औरत को गोद में लिये बैठे थे तब मैंने विचार करा अभी इस वक्त में अंते उरमें रहे हुये हैं इस वास्ते पूजा का अवसर नहीं अगर कोई सामान्य आदमी भी अपनी औरत के पास बैठा हुवा हो तो सत्पुरुष उनके पास जावे नहीं तथा यह तो तीन खंड के मालिक हैं इस वास्ते उन्हों के पास जाना लाजिम नहीं ऐसा विचार करके दूर सेती पीछा लौट के चार रस्ते के बाजार में जाने आने वाले मनुष्यों की दृष्टी पात याने नजर का पड़ना दूर करने के वास्ते तिन्हों के सामने कपड़ा ढांक दिया तब फेर भी राजा ने पूछा मेरी आज्ञा विगर रिषभ देव की पूजा कैसे करी तब धनपाल बोला कि हे राजन् आपने देव पूजा करने की आज्ञा दी थी मैंने देवपना रिषभ देव स्वामीमें देखा इस वास्ते उन्हों की पूजा करी तिस देव के स्वरूप का बर्णन इस माफिक है सो श्लोक द्वारा कहते हैं.

श्लोक—प्रशम रस निमग्नं दृष्टि युग्मं प्रसन्नं । बदन कमल
मंकः कामिनी संग सून्यः ॥ कर युगमहिधत्ते शस्त्र
संबंध बंध्यं । तदसि जगति देवो वीत रागस्त्वमेव ॥ १ ॥

व्याख्या—दोनों दृष्टि समता रस में मग्न हो गई है जिनों की तथा प्रसन्नता पूर्वक तथा मुख रूप कमल विकश्वर हो गया है जिनों का फेर स्त्री के संग करके सून्य है तथा फेर हाथ में शस्त्र भी नहीं है ऐसा जगत्र में देवतो बीत राग तूई है और नहीं ॥ १ ॥ तब धनपाल फेर भी बोला हे राजन् जो राग द्वेष करके सहित होता है उन को अदेव कहना तथा संसार के तारक भी नहीं देव तो संसार के तारक होते हैं तैसे तो श्री जिन राज है लोक में इस वास्ते मोक्ष के लिये पंडितों को उन देव की सेवा करनी चाहिये इस माफिक नाना प्रकार की युक्ति सहित धनपालका वचन सुन करके भोज राजा कुदेव

के ऊपर सन्देह सहित चित्त होके तिनों की प्रशंसा करने लगा अब एक दिन के वक्त राजा मिथ्यात्वी ब्राह्मणोंकी प्रेरणा से यज्ञकरना प्रारंभ किया तहां पर यज्ञ करने वालों ने होम के वास्ते आग में बकरेको डाल रहे थे तब बकरा पुकार करता था तिस को देख राजा धनपालसे पूछा हे धनपाल यह बकरा क्या कहता है तब धनपाल बोला हे महाराज जो यह बकरा बोलता है सो श्रवण करिये ॥

श्लोक—नाहं स्वर्ग फलोप भोग रशिको नाभ्यर्थित स्त्वंमया ।
संतुष्टस्तृण भक्षणेन सततं साधोन युक्तं तव ॥
स्वर्गे यांति यदित्वयाविनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो ।
यज्ञं किंन करोषिमातृ पितृभिः पुत्रै स्तथा बांधवैः ॥ १ ॥

व्याख्या—देवलोक के भोग का रसिक में नहीं हूं मैंने कुछ प्रार्थना भी करी नहीं हम तो घास खाने में संतुष्ट रहते हैं निरन्तर इस वास्ते भले आदमी का यह काम नहीं है अगर तुम्हारा मारा हुवा स्वर्ग में जाता है तो फेर माता पिता पुत्र और बांधव इन्हों का यज्ञ करोगे तो देवलोकमें पहुंच जांयगे ऐसा सुन करके राजा अन्तःकरणमें कोपायमान होके मौन धारण करके रहा अब एक दिन के वक्त राजा ने एक मोटा तालाब बनवाया तिस को वर्षाकाल में निर्मल जल से भरा हुआ सुन करके पांच सै पंडितों के परिवार सेती तिनको देखने को गये तहां पर पंडितों ने अपनी २ बुद्धि के माफिक नवीन काव्यों करके तालावका वर्णाव करा तब धनपाल तो मौन धारण करके रहा तब राजा धनपाल सेती कहा तें भी तालाव का वर्णाव कर तब धनपाल बोला ॥

—एषातडागमिषतो वतदान शाला । मत्स्यादयोरसवती
प्रगुणा सदैव ॥ पात्राणियत्र वकशारस चक्रवाकाः ।
पुण्यं कियद्भवति तत्तुवयं नविद्म ॥ १ ॥

व्याख्या—तालाव वहाने से गोया एक दानशाला बनवाई है मत्स्यों को आदि लेके रसोई हमेसा तइयार रहती है पात्र जहांपर वगले सारस चकवा इसमें कितना पुन्य होगा सो हम नहीं जानते हैं यह धनपाल का वचन सुन करके राजा अत्यंत कोपायमान भया दिलमें ऐसा विचार करने लगा कि अहो यह धनपाल वड़ा दुष्ट है मेरी कीर्त्ति का कारण इसको अच्छा नहीं लगता है क्या करूं इन वचनों करके पहिचान

लिया मेरा गुरू रूप द्वेषी वर्त्ते हैं अन्यथा और ब्रह्मणों ने तारीफ करी और तिसकी यह निंदा कैसे करी इस वास्ते में कुछ इसको दंड दूंगा और दंडतो नहीं देवें मगर केवल इसकी आंखें निकालना चाहिये ऐसा मनमें निश्चय करके राजा मौन धारण करके तहां से उठकरके वाजार में आ रहा है तितने तो एक वूढ़ी डोकरी का एक लड़का ने हाथ पकड़ा है वा सामने आई तिसको देख करके राजा वोला अहो पंडित लोगों श्रवण करो ॥

—कर कंपावै सिर घुणें बुढ्ढीकहा कहेइ। हक्कारंता यम भड़ा नन्नंकार करेइ ॥ १ ॥

ऐसा सुनके अवसर का जानने वाला धनपाल पंडित कहने लगा अहो राजा या डोकरी जो कहती है सो श्रवण करो ॥

—किंनंदिकिंमुरारिः किमुरतिरमणः किंनलः किंकुवेरः। किंवा विद्या धरो सौ किमथ सुर पतिः किंविधुः किंविधाता ॥ नायं नायंन चायंनख लुनहि नवाना पिनासौनचैषः। क्रीड़ा कर्त्तुं प्रवृत्तोय दिहम हितले भूपति भेजि देवः ॥ १ ॥

व्याख्या—यह क्या नंदी है क्या क्रश्न है क्या कामदेव है क्या नल है क्या कुबेर है वा अथवा विद्याधर है वा इन्द्र है वा चन्द्र हैं क्या विधाता है यह पूर्वोक्त मांय से एक भी नहीं है नई है यहतो क्रीड़ा करने के वास्ते पृथ्वी तलमें ऐसा भोज राजा यह है तब राजा यह काव्य सुन करके प्रसन्नता सहित ऐसा वोला भो धनपाल मैं प्रसन्नभया यथोचित वर मांग तब धनपालने जान लिया बुद्धिवल करके तालाव के वर्णाव की वक्त में राजा ने खोटा अध्य वसाय किया था उनको जान करके धनपाल वोला हे राजन् प्रसन्न होके मन वांछित देते हो तो दोनों आंख देना चाहिये ऐसा वचन सुन करके राजा अत्यंत विस्मय हो करके विचारने लगा जिस वात को मैंने किसी के आगू प्रकास करी नहीं उसबात को इसने कैसे जानी क्या इसको हृदय में ज्ञान है इस वजह से जानली इत्यादिक विचार करके वहुत दान मान करके राजा ने धनपाल की पूजा करी तथा फेर पूछा भी मेरे मनका अध्यवसाय तैंने कैसे जाना तब धनपाल श्री जिन

धर्म सेवन करने से उत्पन्न भई बुद्धि उसके बल सेती जानता हूं ऐसा सुन करके राजा श्री जिन धर्म की प्रशंसा करी तब धनपाल भी प्रसिद्ध जिन धर्म को पाल रहा है तब धनपाल ने उत्तम काम करना शुरू किया सो गाथा द्वारा दिखलाते हैं ॥

गाथा—यत्थ पुरे जिण भवणं। समय विऊसाहुसा वयाजच्छ ॥
तत्थ सया वसि अव्वं। पवरजल इंधणं तत्थ ॥ १ ॥

व्याख्या—जिस पुर में भगवान का मंदिर होवे और समय के जानने वाले साधु और श्रावक जहां पर होवें तथा बहुत जल लकड़ी होवे वहां पर श्रावक निवास करे तथा मन्दिर दान शाला धनपाल ने बहुत बनवाई तथा श्राद्ध विधी प्रकरण तथा रिषभ पंचाशि कादिक ग्रन्थ बनाया और बहुत सी जिन शासन की उन्नति करी इस माफिक जावज्जीव पर्यंत छै प्रकार की यतना करके सहित सम्यक्तादिक धर्म आराधन करके आखिर में संयम पाल करके धनपाल देवता भया ॥ यह यतना के ऊपर धनपाल का दृष्टान्त कहा इतने करके छै प्रकार की यतना दिखलाई। अब छै प्रकार के आगार निरूपण करते हैं राजाभियोग इत्यादि ॥

अब कहते हैं कि राजा का अभि योग क्या है गोया हठ उसको राजा भियोग तत्र अभियोजन अनि छतो व्यापारणं अभियोग। तहां पर अपनी इच्छा विगर जबरदस्ती से कोई काम करवावे तो उसको राजा भियोग कहते हैं तथा सम्यक्त वंतों को जो कार्य करना मना है वो काम राजा के आग्रह रूप कारण वस से इच्छा बिगर द्रव्य करके अंगीकार करेतो भी भव्य जीवका कोशा वेश्या की तरह से सम्क्तादिक धर्म का नाश नहीं होता अब राजा भियोग पर कोशा वेश्या का दृष्टान्त कहते हैं ॥

पाड़लीपुर नगर में पेश्तर श्री स्थूल भद्र मुनी के पास द्वादश व्रत ग्रहण करा था ऐसी गुण धारक कोशा नामें वेश्या रहती थी तिस वेश्या को एक दिन राजा प्रसन्न होके रथिक गोया रथकार को दीवी तब वा कोशा वेश्या अन्तः करण में नहीं चाहती है मगर राजा के आदेश वससे अंगीकार करा मगर उस रथिक के सामने हमेसा स्थूल भद्र मुनी के गुण का वर्णाव करती थी सो दिखलाते हैं इस संसार के अन्दर बहुत उत्तम जीव है मगर श्रीस्थूलभद्र के सदश अन्य पुरषोत्तम नहीं यह सुन कर के वो रथिक कोशा वेश्या को रंजन करने के लीये अपने घर उद्यान में जाकर के तिस के साथ गोख ऊपर वैठ करके अपनी चतुराई दिखलाने लगा सो, चतुराई वताते हैं पहिली अपने बांण करके आंबकी लूंब कों वींधी फेर और बांण करके तिस बांणको

वींशा इस तरह से अपने हाथ तक बांण श्रेणी बणा करके और आंबकी लूंबी खांच करके तिस कोशा को देकरके सामने देखने लगा तब वा कोशा वेश्या भी कहने लगी कि अब मेरी चतुराई देखो ऐसा कह करके एक थाल के अन्दर सरसूं की राशि बणा करके तहां पर फूलों से ढांक करके सूईयें रखदी तिसके ऊपर देवी की तरह से मनोहर गती करके नाटक किया। मगर सूईयों करके पांव वींधा नहीं गया और सरसूं की राशि भी बिखरी नहीं तब इस माफिक कोसा की चतुराई देख करके वो रथिक बोला हे सुभगे में तुमारी चतुराई देख करके प्रसन्न भयाहूं कहो तुमको क्या देऊं तब वा बोली भो मैंने क्या मुशकिल काम करा है जिस से तुम प्रसन्न भये अभ्यास करके इस से भी अधिक कार्य मुशकिल नहीं तथा फेर भी थूल भद्र मुनी की तारीफ करने लगी ॥

—सुकरंनत्त नंमन्ये। सुकरं लु विकर्त्तनं ॥ स्थूलभद्रो हियच्चक्रे । शिक्षितंतत्तु दुष्करं ॥ १ ॥

व्याख्या—नाचना भी सहज मानती हूं आंवकी लूंबी का आकर्षन सहज मानती हूं मगर श्री स्थूल भद्र स्वामी ने जो मुसकिलात काम किया है सो बहुत दुःकर काम जानना चाहिये ॥ १ ॥ तथा फेर भी वा बोली शकडाल मंत्री का पुत्र श्री स्थूल भद्र स्वामी बारेवरस तक मेरे साथ पहिली भोग भोगे थे पीछे चारित्र ग्रहण करके इसी चित्र शाला में शुद्ध शील वान हो गये थे तिस वक्त में एक २ विकार का कारण ऐसा दिखलाया कि जिस करके अगर लोह का पुतला भी होवे तोभी पुरुष व्रत का नाश हो जावे यह एक दृष्टान्त दिया है दृढ़ताई के लिये ॥ काम विकार के कारण षट्रसका भोजन चित्र शाला में रहना यौवन ऊमर वरसात का आना इत्यादिक विकार का कारण तिस महा मुनी प्रतें पर्वत ऊपर सिंह के फाल की तरह से शोभायमान करने समर्थ नहीं भूये तथा तिस मुनी श्वर के विषे मेरा हाव भाव आदि विकार पानी में प्रहार देने के वतौर तथा विरागीणी स्त्री को हार पहिराने की तरह से निरर्थक हो गये तथा फेर अपना व्रत अक्षय रखने के वास्ते इच्छा करने वाले मनुष्य जहां परस्त्री के पास एक क्षण मात्र भी नहीं रहना चाहिये तहां पर श्री स्थूल भद्र भगवान् अक्षत व्रत होके सुखे करके चौमासे रहे अब में क्या बहुत तारीफ करूं श्री स्थूल भद्र के बरोबर अत्यंत दुष्कर कार्य करनेवाला पृथ्वी में अन्य पुरुष दिखाता नहीं इस माफिक स्थूल भद्रमुनीका वर्णाव सुन करके प्रति बोध पाके रथिक कोशा वेश्या प्रतें वारम्वार नमस्कार स्तवना करके कहने लगा कि तुमने मुझको संसार रूप समुद्र में डूबते भये को रक्खा इत्यादिक कह करके जल्दी से गुरु महाराज के पास जा करके व्रत

ग्रहण करा तथा कोशा वेश्या भी अपने सम्यक्त रत्न करके सहित बहुत काल तक श्रावक धर्मपाल करके देव लोक में गई। यह राजाभियोग के ऊपर कोशा वेश्या का दृष्टांत कहा ॥ १ ॥

अब दूसरा गण नाम स्वजनादिक का समुदाय तिस का अभियोग याने हठ उनको गणाभियोग कहते हैं कहने का मतलब यह है कि सम्यक्तियों के करने लायक कार्य नहीं है वो काम गण याने समुदाय तिनके आग्रह के वश सेती अगर द्रव्य करके करे तो भी सम्यक् दृष्टियोंका विश्नु कुमारजी की तरहसे सम्यक्त रूप धर्म नहीं जा सक्ता जैसे विश्नु कुमार ने गच्छ के आग्रह करके वैक्रिय रूप रचनाकि प्रकार करके अत्यंत जिन मत का द्वेषी नमुंची नाम पुरोहित तिस को अपने पांव प्रहार करके मार करके नरक का पावणा कर दिया तथा आप खुद मुनी तिस पाप की आलोचना ले करके अपना सम्यक्तादिक धर्म अच्छी तरह से आराधन करके परम सुखी भये, इसी तरह से आगूं भी भावना पूर्वक उदाहरण बांचना यह दूसरा आगार कहा ॥ २ ॥

अब तीसरा आगार निरूपण करते हैं। तथा बलं नाम बलवान पुरुष का हठ प्रयोग तिसका अभियोग इच्छा विगर कार्य करना पड़े उसको बलाभियोग कहते हैं ॥ ३ ॥

अब चौथा सुराभियोग आगार कहते हैं। तथा सुर नाम कुल देवतादिक का हठ होना और कार्य वन जावे, तो उस को सुराभियोग कहते हैं ॥ ४ ॥

तथा कांतार वृत्ति यांने कांतार नाम जंगलका है वहां पर निर्वाह करना या कांतार याने जंगल भी हैं मगर पीड़ाका कारण जानना इस वास्ते तकलीफ करके निर्वाह करना गोया कष्ट करके प्राण का निर्वाह करना उसको कांतार वृति कहते हैं ॥ ५ ॥ तथा गुरू महाराज और माता पिता को आदि लेके और भी लिखा है ॥

श्लोक—माता पिता कला चार्यः। एतेषां ज्ञातय स्तथा ॥
वृद्धा धर्मोपदेष्टारो । गुरू वर्गं सतांमतः ॥ १ ॥

व्याख्या—मातापिता कलाचार्य तथा इन्हों की जात वाले और बड़े तथा धर्म का उपदेशिक इन को गुरू वर्ग सज्जन पुरुष कहते हैं तिन्हों का निग्रह निर्बंध याने हठ उन को गुरु निग्रह कहते हैं ॥ ६ ॥

यह छव प्रकार का श्री जिन शासन में आगार गोया अपवाद जिसको छंडी भी कहते हैं यहां पर यह मतलव है कि जिस जीवने सम्यक्त अंगीकार करा है उसको परती र्थिक का वंदनादिक निषेध किया है मगर राजा भियोगादिक छै कारणों करके द्रव्य से अंगीकार करे तो भी सम्यक्तियों का सम्यक्त नहीं जा सक्ता यहां मर अपवाद क्यों कहा अल्प सत्व के धारण वाले जीवों को अंवीकार करके दिखलाया है मगर महा सत्व वालों के वास्ते नहीं है वे तो उत्सर्ग और अपवाद दोनों मार्ग को धारण करते हैं सोई ग्रन्थान्तर में कहा भी है ॥

श्लोक—नचलंति महा सत्ता । खुभिज्जमारणाउशुद्धधम्माउ ॥
इयरे सिंचलण भावे । पइन्न भंगोन एएहिं ॥ १ ॥

व्याख्या—महा सत्व वाले पुरुष राजादिक करके शुद्ध धर्म सेती भेदन करके चलायमान करे तौ भी चलायमान होवे नहीं मगर अन्य जीव अल्प सत्व वाले कदाचित् चलायमान हो जावे तौभी इन आगारों करके प्रतिज्ञा भंग नहीं हो सक्ती इस वास्ते आगार आगम में ग्रहण करा है अब छै भावना निरूपण करते हैं। यह सम्यक्त पांच अणुव्रत तीन गुणाव्रत और चार शिक्षाव्रत रूप के तथा पांच महाव्रत रूप चारित्र धर्म का मूल की तरह से मूल कारण जानना चाहिये तथा तीर्थंकरों ने फरमाया है जैसे मूल रहित वृक्ष प्रचंड हवा से कंपायमान होके उसी वक्त गिर जाता है इसी तरह से धर्म रूप वृक्ष भी सुदृढ़ सम्यक्त मूल रहित कुतीर्थिक मत रूप वायु से चलायमान होके थिर पना नाश हो जाता है इस वास्ते तिस सम्यक्त को मूल सदृश वतलाया । १ ॥ तथा यह सम्यक्त धर्म के दरवाजे की तरह से दरवाजे जैसा है गोया प्रवेश करने का मुख है तथा जिस नगरके दरवाजा नहीं वनाया चौतरफ पड़कोटसे घेर दिया तोभी वो नगर अनगर की तरह से मनुष्य प्रवेश और निकलने का अभाव सेती इसी दृष्टान्त करके धर्म रूप महा नगर भी सम्यक्त द्वार करके शून्य होने से प्रवेश करना अशक्य हो जाता है इसी वास्ते सम्यक्त को द्वार तुल्य कहा । २ ॥ तथा जिस नीव करके मंदिर वा मकान थिर होता है जिस मंदिर मकान की नींव पुखता होगी वो मकान पायवंध होगा इसी तरह से सम्यक्त भी है सो धर्म रूप मकान के पायवंधी का कारण है जैसे जल पर्यंत पृथ्वी का तला खाडपूर करके पीठ रहित मंदिर मकान दृढ़ नहीं हो सक्ता तिसी तरह से धर्म रूप देव घर भी सम्यक्त रूप नींव रहित निश्चल नहीं हो सक्ता इस वास्ते सम्यक्त को नींव की उपमा दी गई है । ३ ॥ तथा सम्यक्त धर्म का आधार भूत है गोया आश्रय भूत है जैसे जमीन विगर आधार विगर यह जगत याने दुनियां नहीं ठैर सक्ती इसी तरह से

धर्म रूप जगत भी सम्यक्त लक्षण आधार विगर ठैर सक्ता नहीं इस वास्ते सम्यक्त आधार जैसा कहा । ४ ।। तथा यह सम्यक्त धर्मका भाजनके बतौर है गोया पात्र समान है जैसे कुंडी आति बरतन रहित क्षीर को आदि लेके वस्तु विनाश हो जाती है इसी तरह से धर्म वस्तुका समुदाय भी सम्यक्त रूप भाजन विगर नाश हो जाता है इस वास्ते सम्यक्तको भाजन समान कहा । ५ ।। तथा यह सम्यक्त धर्मका निधान है गोया निधान जैसा है जैसे प्रधान निधान विगर वहुत मौल्य वाले मणि, मोती और सोना वगैरे द्रव्य नहीं पा सक्ता हैं तिसी तरह से सम्यक्त रूप महा निधान नहीं पाने से निरूपम सुख की श्रेणी का देनेवाला चारित्र धर्म रूप धन नहीं मिल सक्ता इस वास्ते सम्यक्त को निधान की उपमा दी गई ।। ६ ।। इन छै प्रकार की भावना करके भावित यह सम्यक्त जल्दी करके मोक्ष सुखका साधक होता है अब सम्यक्तके छव स्थान निरूपण करते हैं ।।

अस्तिजीव इत्यादि यह जीव सनातन है सर्व प्राणियों के अन्दर रहा हुआ है तथा यह चेतन जो है सो भूतों का धर्म नहीं है अगर भूतों से चैतन्य होता हो तो चैतन्य की अनुपपत्ति होजायगी चैतन्य का गुण तो ज्ञानादिक है और भूत में प्रथम प्रथ्वी है सो उस का काठिन्य धर्म रहा है इस वास्ते धर्म धर्मी का विरोध होता है और चैतन्यपना सर्व भूतों में दिखाई नहीं देता है पत्थरादिक में मृत अवस्था मालूम पड़ती हैं चैतन्य भूतों से पैदा नहीं होता चैतन्य का गुण ज्ञानादिक और अरूपी पदार्थ हैं और पृथ्वी का काठिन्य स्वभाव है तो इन के कार्य कारण का अभाव होगया इस वास्ते भूत भिन्न है और चैतन्य भिन्न है इस वास्ते जिस के चैतन्य वही जीव है यह कहने से नास्तिक मत का परास्त होगया ।। १ ।। तथा वो जीव नित्य है और उत्पत्ति विनाश रहित है तिस जीव के उत्पादन करने के कारण का अभाव है अगर अनित्य पदार्थ होता है तो जीव के बंध मोक्षादिक का अभाव होजाता है इस वास्ते बंध मोक्ष जीव को होता है यह जीव ही कर्त्ता और जीव ही भोक्ता है अगर बांधने वाला जुदा है और भोगने वाला जुदा हो तो फिर ऐसा होगया कि अन्य को बंध और अन्य को मोक्ष और भूख भी और को और तृप्ति भी और को और ही भोगने वाला और और ही स्मरण करनेवाला और कोई दुख भोगता है और व्याधि रहित होता है और अन्य तप क्लेश करे और अन्य को स्वर्ग का सुख मिले और अन्य शास्त्र अभ्यास करता है और अन्य ही शास्त्र का रहस्य पाता है इस वास्ते यह जीव कर्त्ता है और भोगता है यह कहने से बौद्धमत का खंडन होगया ।। २ ।। तथा उस जीव को मिथ्यात्व अविरति कषायादिक बंध का कारण कहा है और कर्म का कर्त्ता है रचन भी कर्मों को कर्त्ता है नहीं जब प्राणी २ में प्रसिद्ध है नाना प्रकार के सुक्ख दुक्ख के भोगने की अनुपपत्ति होजायगी लोक में नाना

प्रकार का सुक्ख दुक्ख जीव कर्म करके भोगते हैं गोया यह जीव भोगने वाला है और यह नाना प्रकार के सुक्ख दुक्ख का भोगना निर्हेतुक नहीं है गोया सहेतुक है याने कारण सहित रहा है इस वास्ते सुक्ख और दुक्ख के भोगने का कारण अपना करा कर्म जानना चाहिये मगर और नहीं यह कहने सें कपिल का मत खंडन भया अब वादी प्रश्न करता है कि यह जीव सर्वदा सुक्ख को अभिलाषा करता है और दुक्ख की वांछा नहीं करता तब यह जीव आप ही कर्मों का करता है तो कैसे दुक्ख फल का देने वाला कर्म क्यों करता है अब उत्तर देते हैं जैसे रोगी जो है सो रोग दूर होनेकी इच्छा करता है मगर रोग करके पीड़ित होरहा है इस वास्ते कुपथ्य क्रिया सेवन करनी चाहता है आगूं काल में दुक्ख होने वाला है उस कुपथ्य के सेवन से मगर कष्ट जानता है तौ भी कुपथ्य क्रिया सेवन करनी चाहता है तिसी तरह से यह जीव मिथ्यात्वादिक में पीड़ित होरहा है जान रहा है कि इस से मुझ को दुक्ख मिलेगा मगर कर्म के वश से विपरीत बुद्धि होजाती है ॥ ३ ॥ यह जीव अपना करा हुआ कर्म शुभ अशुभ आप ही भोगने वाला है अगर जो अपना करा भया कर्म फल का भोगता जीव को मंजूर नहीं करोगे तो सुक्ख और दुक्ख के भोगने का कारण साता वेदनी कर्म है सो उस का उपभोग नहीं होगा इस वास्ते सुक्ख और दुक्ख का भोगना सर्व प्राणियों के सदृश है इस वास्ते अनुभव प्रमाण सेती जीव को अपना करा हुआ कर्म के फल का भोगना निष्फल भया तथा लोक में भी कहते हैं कि कोई एक पुरुष को देख कर के लोग कहा करते हैं कि यह बड़ा पुन्यवान है सो इस माफिक सुख भोग रहा है तथा आगम में जैन सिद्धांत में ऐसा कहते हैं यह जीव भोगता है और कर्त्ता है, और सिद्ध है ।

—सव्वंचपएसतया भुंजइ । कम्म मणुभावउ भइयं ॥

व्याख्या—सर्व जीव प्रदेस करके कर्म भोगता हैं तथा अनुभाग करके भी भोगता है ऐसा जानना ॥

—नभुक्तं चीयते कर्म । कल्प कोटि शतैरपि ॥

व्याख्या—विगर भोगवे विगर कर्म क्षय नहीं होता चा है क्रोड़ों कल्प क्रिया कांड कर लेवो तोभी आपही भोगेगा जब छूटैगा ॥ इस वास्ते यह जीव सिद्ध है अपने कर्म का फल भोक्ता यही है यह कहने से क्या सिद्ध भया ऐसा कहते हैं कि यह जीव कर्म का भोक्ता नहीं है इस माफिक कहने वालों कामत खंडन करा ॥ ४ ॥ तथा फेर इस जीवका निर्वाण गोया मोक्ष है अब अर्थ कहते हैं कि मोक्ष किस को कहते हैं मौजूद है

यह जीव इनके रागद्वेष मद मोह जन्म जरा मरण रोगादिक का क्षय होना गोया क्षय रूप अवस्था का होना उसको मोक्ष कहते हैं सो इस जीव को है इस वास्ते जीवका नाश तो तीनों कालमें नहीं हो सक्ता जैसे प्रदीप होने से निर्वाण कहते हैं कि आज दीवाली के रोज भगवान का निर्वाण भया है तिसी तरह से जीव भी कर्म रहित केवल अमूर्त्त जीव है ऐसा स्वरूप लक्षण जिसका उसको निर्वाण कहते हैं तिस वास्ते दुक्खादिक का क्षय रूप होना ऐसा जीव अवस्था को निर्वाण कहते हैं ॥ ५ ॥ तथा इस जीवके मोक्ष का उपाय भी है सम्यक्त साधन रहा है सम्यग् दर्शन ज्ञान चरित्र यह पदार्थ करके मुक्ति घट मान दिख रही है जैसे मिथ्यात्व अज्ञान प्राणी हिंसा इत्यादिक दुष्ट कारण के समुदायक कर्म जाल को पैदा करता है और पैदा करने की शक्ति रही भई है तो इस के विपरीत सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र इस का अभ्यास करने से सकल कर्म को दूर करने की शक्ति नहीं है क्या अर्थात् है तथा मिथ्यात्वि का करा भया मुक्ति का साधन नहीं है कारण तिनोंके मिथ्यात्वियों का करा भया उपाय हिंसादिदोष सहित है इस वास्ते संसार का कारण जानना चाहिये यह कहने सेती मोक्ष का अभाव मानने वालों का मत खंडन करा ॥ ६ ॥ यह जीव अस्तित्वादिक छै प्रकार के सम्यक्त के स्थान निरूपण करके दिखलाया है इनोंके होने से सम्यक्त होता है यहां पर प्रत्येक स्थान पर आत्मादिक सिद्ध के बारे में वक्तव्यता बहुत है इस वास्ते यहां पर नहीं कहते कारण ग्रन्थ मोटा होजावे इस वजहसे॥ इतने करके ६७ सड़सठ भेदों करके सम्यक्त दिखलाया फेर क्या कहते हैं कि जो भव्य जीव परस्पर अपेक्षा सहित कालादिक पांचों कों मानेंगे वो सम्यक्ती है तथा अनेकांतिक है। तथा काल १ और स्वभाव २ नियती ३ पूर्व कृत ४ और पुरषाकर ५ गाथा द्वारा दिखलाते हैं॥

गाथा—कालो १ सहाव २ नियई ३ पुव्व कयं ४ पुरिस
कारणे पंच ५ समवाए सम्मत्तं । एगं तेहोई मिच्छत्तं ॥ १ ॥

व्याख्या—काल १ स्वभाव २ नियती ३ पूर्वकृत ४ और पुरषाकार ५ इन पांचों कों मानते हैं वो सम्यक्ती हैं अब सम्पूर्णता का श्लोक कहते हैं॥

श्लोक—इत्थं स्वरूपं परमात्म रूपं । निरूपकं चित्र गुणं
पवित्रं ॥ सम्यक्त रत्नं परि गृहस्य भव्या । भजंतु
दिव्यं सुख मक्षयंच ॥ १ ॥

व्याख्या—इस माफिक परमात्मा के स्वरूप को निरूपन करके दिखलाया नाना प्रकार के गुण सहित और पवित्र इस माफिक सम्यक्त रूप रत्न को ग्रहण करके भव्य जीव अक्षय सुख के भजने वाले होते हैं प्रवचन सारो द्वारा ॥

—अनु सारेणैषवर्णितोमयका सम्यक्तस्य विचारो ।
निज पर चेतः प्रसत्ति कृते ॥ २ ॥

व्याख्या—प्रवचन सारोद्धार सेती लेके मैंने यह ग्रन्थ रचन करा सम्यक्तका विचार अपने चित्त और अन्य भव्य जीवों के वास्ते कहा । २ ॥ इति श्री जिन भक्ति सूरीन्द्र के चरण कमल में भमरे सदृश श्री जिन लाभ सूरि संग्रह करा आत्म प्रबोध ग्रन्थ का सम्यक्त निर्णय नाम प्रथप प्रकाश निरूपण करा ॥ १ ॥

अब दूसरा देश विरती नाम प्रकाश निरूपण करते हैं । तहां पर आत्मबोध का स्वरूप गोया आत्म बोध प्रगट होने का कारण केवल सम्यक्त ही है और पदार्थ नहीं जब सम्यक्त आत्म बोध प्रगठ हो गया तो कितनेक नजदीक भव्य जीवों के चारित्र मोहनीय कर्म क्षय उपशम के वश सेती देश विरती आदि मिलने का लाभ प्राप्त होता है सो श्लोक द्वारा दिखलाते हैं ॥

श्लोक—सदात्म बोधे नविशुद्धि भाजो । भव्याहि केचित्स्फु
रितात्मवीर्या ॥ भजंति सार्वोदित शुद्ध धर्मं । देशेन
सर्वेणच केचिदार्याः ॥ १ ॥

व्याख्या—सत् आत्म बोध करके विशेष शुद्धि के भजने वाले कितनेक भव्य जीव आत्म वीर्य को दे दीप्यमान करके सर्वज्ञों का कहा भया शुद्ध धर्म को भजै गोया अंगी कार करै देशें करके कितनेक आर्य लोग गोया सत्पुरुष कितनेक देशें करके और कितनेक सर्वे करके गोया देश विरती अर्ते कितनेक जीव अंगीकार कर करने वाले जानना । तहां पर देश विरती के प्राप्ती का स्वरूप निरूपण करके दिखलाते हैं श्लोक द्वारा निरूपण करते हैं ॥

श्लोक—इह द्वितीयेषु कषाय केषु । क्षीणोप शांतेषु विशा
तिरश्चा ॥ सम्यक्त युक्ते नशरीरिणैषा । लभ्येत
देशा विरति विंशुद्धा ॥ २ ॥

व्याख्या—दूसरा कषाय कोई जीव क्षय करे वा क्षीण उपशांत भाव में रक्खे तब तीर्यंच और मनुष्य सम्यक्त सहित होने से विशुद्ध देश विरती को प्राप्त करे देशेन गोया एक देश करके प्राणाति पातादिक अठारे पाप स्थान से निवृत गोया देश करके त्याग करना उस को देश विरती कहते हैं वा निर्मल देश विरती त्याग पणा है तथा दूसरा अप्रत्याख्यान क्रोधमान माया लोभ इन चारों का क्षय उपशम होनेसे इस संसार में देश विरती किसके उदय आता है गोया सम्यक्त करके सहित मनुष्य और तीर्यंच इन दोनों में देश विरती होता है अन्य में नहीं होता है तथा देवता और नार की में इस की प्राप्ती का असंभव है। कारण सम्यक्त प्राप्तीके समय सेती होने वाली जो कर्म की स्थिति तिस के भीतर से पल्योपम पृथक्त गोया दो पल्योपम से लैके नव पल्योपम तक इस माफिक स्थिति कर्मो की क्षय करने से देश विरती प्राप्त करता है सोई प्रवचन सारोद्धार के दोय से गुण पचास में ध्वार में कहा है सो गाथा द्वारा दिखलावे हैं॥

---सम्मत्तंमियलद्धे पलेय पहुत्तेण साव ओ होई चरणे
वशम खयाणं। सायर संखंतराहुंति ॥ १ ॥

व्याख्या—जितनी कर्म की स्थिति में सम्यक्त पाया तिस मांय से पल्योपम पृथक्त याने दो पल्योंपमासे नव पल्योपम तक पृथक्त संज्ञा है इस माफिक स्थिति क्षय करने से श्रावक देश विरति होता है तिस पीछे देश विरती पाये बाद संख्याता सागरी पमक्षय करने से चारित्र प्राप्त करता हैं तिनसे भी संख्याता सागरीपम क्षय होने से उपशम श्रेणिको अंगीकार करता हैं तिस पीछे संख्याता सागरीपम क्षय होने से क्षपक श्रेणि अंगीकार करता है तिस बाद उसी भव में मोक्ष होता है इत्यादिक जानना तथा देश विरती के रहने का काल प्रमाण कहते है जघन्य तो अंत मुहुर्त्त और उत्कृष्ट देशे कम पूर्व कोड़ वरस की स्थिति जानना चाहिये इस माफिक देश विरती जिनों में मौजूद है उन श्रावक को देश विरती धारक कहना चाहिये तथा श्रावक दो प्रकार का कहा है जिसमें एक श्रावक तो विरती याने व्रत धारक १ और दूसरा अविरती गोया व्रत रहित वहांपर विरती किस को कहना चाहिये देश विरती गोया देशे पच्चक्खाण ग्रहण करने वालों को देश विरती कहते हैं तथा गोया आणंदादिक जानना तथा अविरती किसको कहना अंगीकार करा है क्षायक सम्यक्त जिनों ने ऐसे कौन सत्यकि श्रेणिक और श्रीकृश्न इत्यादिक जानना तथा इस प्रकार के विसेष सेती अंगीकार करा है देश विरती जिनोंने उन श्रावकों का स्वरूप कारण करके दिखलाते हैं तहां पर प्रथम श्रावक पणें के योग्य श्रावक के एक वीस गुण बतलाते हैं सो गाथा लिखते हैं

—धम्मरयणस्सजुग्गो । अखुद्दोरूववंपगइ सो मो ॥
लोगप्पिओ अक्रूरो । भीरूअसढोसदक्खिन्न ॥ १ ॥
लज्जाजुओदयालू मभ्भत्थो सोमदि ट्ठिगुण रागी ।
सक्कहमुपक्ख जुत्तो । सुदीह दंसी विसे सन्नू ॥ २ ॥
वुड्ढाणु गोविणीओ । कयन्नु ओपर हियत्थकारीय ॥
तहचेव लद्ध लरकी । इग वीस गुणो हवइसडढो ॥३॥

व्याख्या—परम तीर्थं कर कथित सर्व धर्मों के भीतर प्रधान याने जो रत्न की तरह से वर्त्ते हैं उनको धर्म रत्न कहते हैं तथा सर्वज्ञ प्रणीत देश विरती . रूप शुभ आचार तिसके योग्य गोया उचित इस माफिक श्रावक होता है ॥

अब श्रावक के गुण दिखलाते है अक्षुद्र इत्यादिक तहां पर क्षुद्र के अनेक अर्थ लिखते हैं क्षुद्र नाम तुच्छका भी है तथा क्षुद्र नाम क्रूर का भी है तथा क्षुद्रनाम दरिद्री का भी है तथा क्षुद्रनाम छोटे काभी है गोया इन अर्थों से विपरीत होवे उसको अक्षुद्र कहते है वो जो है सो सूक्ष्म बुद्धि करके सुखें करके धर्म को जान सकता है ॥ १ ॥ तथा श्रावक दूसरे गुण धारक रूपवान होना गोया सम्पूर्ण अंग उपांग करके मनोहर आकार होना चाहिये गोया तिस माफिक रूप सहित होने से और सत् आचार की प्रवृति होने से भव्य लोको को धर्म में गौरवपणा पैदा करता है तथा प्रभावीक होता है ॥ तहां पर शिष्य संवाद करता है कि नंदिषेण और हरि केशवल इनको आदि लेके कुरूप वान थे मगर धर्मवान सुनते हैं इस वास्ते रूपवान को ही धर्म में अंगीकार कैसे करते हो यह सत्य है तुमारा कहना मगर रूप दो प्रकार का होता है एकतो सामान्य अतिशय वान तहां पर सामान्य अति शयवान किस को कहते हैं कि सामान्य करके सम्पूर्ण अंगोपांगादिक ऐसा तो नंदिषेणादिक भी थे इस वास्ते विरोध नहीं तथा और सर्व गुण होने से अगर कुरूप भी होवे तौ भी दोष नहीं इस माफिक आगूं भी अतिशय रूप तो तीर्थंकरादिक में होता है तथा जिस स्वरूप कर के कोई देश में कोई काल में कोई वय में वर्तमान पुरुष रूपवान है यह ऐसी मनुष्यों में प्रतीति होजाना वो रूप यहां पर अङ्गीकार करना चाहिये ॥ २ ॥ तथा प्रकृति सौम्य प्रकृति स्वभाव कर के सौम्य होना भयानक आकृति नहीं होना वो विश्वास करने के योग्य होता है इस माफिक होवे तो प्रायः कर के पाप व्यापार में प्रवर्त्ते नहीं तथा सुखें कर के अङ्गीकार करने के योग्य होता है ॥ ३ ॥ तथा लोक प्रिय लोक कहिये सर्व

पुरुपों में तथा इस लोक परलोक विरुद्ध त्यागन करने से दान शीलादिक गुणों कर के प्रिय और वल्लभ वो भी सबों को धर्म में बहुमान पैदा करता है ॥ ४ ॥ तथा अक्रूरो अक्लिष्ट अध्यवसाय तथा क्रूर होता है पराया छिद्र देखे तथा लंपटपना सेती मैला है मन जिस का ऐसा पुरुप अगर धर्म अनुष्ठान करे तो भी फल नहीं मिल सक्ता इस वास्ते क्रूरपना चाहिये नहीं ॥ ५ भीरू गोया इस भव में परभव में पाप से डर कर के चले छति शक्ति कर के निःशंक धर्म में प्रवर्त्ते ॥ ६ ॥ तथा अशठो कपट रहित आचार जिस का अगर शठ होगा तो ठगने में चतुर होके सर्व मनुष्यों के विश्वास करने के योग्य नहीं होता इस वास्ते अशठपणा होना चाहिये ॥ ७ ॥ तथा सदा क्षिण्यः अपना कार्य को छोड़ कर के पर कार्य करने में रशिक है अन्तःकरण जिस का ऐसा पुरुप सर्व के पीछे चलने वाला जानना चाहिये ॥ ८ ॥ लज्जालु तथा लज्जावान वो जो है सो अकृत्य की वात भी सुन लेवे तो भी लज्यातुर होजावे तथा आप ने अङ्गीकार करा है सत् अनुष्ठान उसको त्यागकरै नहीं ॥९॥ तथा दयालु दयावान् दुक्खी जीवकी रक्षा करना ऐसी अभिलापा करना कारण धर्मका मूल दयाहै ॥१०॥ तथा मध्यस्थो रागद्वेप रहित होके प्रवर्त्तै तो विश्वास करने योग्य आदेय वचनवान होवे ॥ ११ ॥ तथा सौम्य दृष्टि किसी को उद्वेग कारी नहीं देखने मात्र प्राणियों को प्रीति करने योग्य गोया प्रीति विस्तारने वाला होवे ॥ १२ ॥ गुण रागी । गांभीर्यस्थैर्य प्रमुख गुण सहित होवे उस का रागी होजावे गुणवान का पक्षपात कारी गुणवान का वहुत मान करे और निर्गुणी का त्याग करै ॥ १३ ॥ तथा सत्कथ सपक्षयुक्तः ॥ सत्कथा सत् आचार के धारक शोभन कथा के कहने वाला होवे उसी का पक्ष करै। इस माफिक सत्कथा और सत्पक्ष गुण के धारक होवे तो परमती उन्मार्ग में ले जा सक्ते नहीं तथा अन्य आचार्य सत्कथा और सुपक्ष युक्त इन दोनों गुणों को भिन्न मानते हैं तथा मध्यस्थ और सौम्य दृष्टि तत्व में एक ही गुण है ॥ १४ ॥ तथा सुदीर्घ दर्शी विचार कर के कार्य के करने वाला मगर जल्दीपना नहीं करै वो पुरुप है सो परिणाम की वुद्धि कर के उत्तम परिणाम सहित कार्य करै ॥ १५ ॥ तथा विशेपज्ञः अच्छी और वुरी वस्तु का जानने वाला अविशेपज्ञ गोया विशेप जानने वाला नहीं वो दोपों को भी गुण समझ लेता है और गुणों का दोप समझता है इस वास्ते विशेपज्ञ ही उत्तम है ॥ १६ ॥ तथा वृद्धानुगः अपने से वड़े हैं और गुणवान् हैं उनों की सेवा करने से गुण हासिल होता है ऐसी वुद्धि लाके सेवा करनी तथा अपने से मोटे हैं और वहु श्रुत हैं उनोंके पिछाड़ी चलने से कभी भी आपदा नहीं होवे ॥ १७ ॥ तथा विनीतो गुरुजन गौरव कृत तथा विनयवान अपने से वड़े हैं उन का गौरव करना गोया मोटा समझ करके विनय करना विनयवान के जल्दी ज्ञानादिक संपदा प्रगट होजाती है ॥ १८ ॥ तथा कृतज्ञ थोड़ा

भी इस भव का और परभव का जिस ने उपगार किया मगर उस को बहुत समझे और उपगार को लोपै नहीं अगर कृतघ्नी होता है सो सर्व जगह पर बहुत निंदा का पात्र होता है इस वास्ते कृतज्ञपना अङ्गीकार करना चाहिये ॥ १६ ॥ तथा पर हितार्थ कारी पर कहिये और गोया अन्य के हित के करने का शील आचार है जिस का उस को पर हितार्थ कारी कहते हैं अब यहा पर शिष्य प्रश्न करता है प्रथम दिखला गये सदा क्षिण्यता और यहां पर बतलाया पर हितार्थ कारी इन दोनोंमें क्या फरक है ॥ सो कहना चाहिये तब गुरु महाराज फरमाते हैं दाक्षिण्यता वाला तो प्रार्थना करने से पर उपगार करता है और यहां पर परहितार्थ कारी यह दिखलाया सो केवल स्वभाव कर के परहितार्थ करने में प्रवर्त्तन रहता है इस माफिक दोनों में भेद बतलाया जो पुरुष प्रकृति करके ही पर के हित करने वास्ते रक्त रहता है वो पुरुष वांछा छोड़ कर के अन्य को भी धर्म में स्थापन करै ॥ २० ॥ तथा लब्धलक्षः ॥ लब्धलक्ष किस को कहते हैं शिक्षा ग्रहण करने के योग्य जो अनुष्ठान है उन को गोया पूर्व भव के अभ्यास की तरह से सर्व वंदना प्रति लेखनादिक धर्म कृत्य जल्दी सीख जाता है ॥ २१ ॥ इस माफिक इकवीस गुण कर के सहित होता है उन को श्रावक कहना चाहिये यह श्रावक के इकवीस गुण बतलाया यह इकवीस गुण धारक होता है ऐसा भव्य देश विरती के योग्य कहना चाहिये अब देश विरती के योग्य होगा सो गाथा कर के दिखलाते हैं ॥

गाथा—जेनखमंति परीसह । भयसयण सिणेह विसयलोभेहिं ॥
सव्वविरइंधरेउ । तेजुग्गा देसविरईए ॥ १ ॥

व्याख्या—जो भव्य जीव प्रत्याख्यान आवरण कषाय उदय वर्त्ति जीव । परीषह भय १ स्वजन स्नेह २ विषयादिक लोभ करके इन कारण सेती सर्व विरती के योग्य होता है यह यहां पर तात्पर्य है सत्धर्म की सामग्री पाकरके विवेकी पहिली सर्व विरती को अंगीकार करना जो पुरुष क्षुधा तृषा सहन तथा भिक्षा भ्रमण करके लाना मल धारणादिक परीषहों से डर करके तथा इस माफिक प्रीति के पात्र माता पिता पुत्रादिक परिवार को त्याग करके अकेला कैसे रहै तथा यह स्वजन का स्नेह तथा पूर्व कृत पुन्य करके पाया है यहां इन्द्रियों का विषय इनों को भोग वे विगर कैसे छोडूं इस वास्ते विषय के लोभ सेती सर्व विरती अंगीकार नहीं कर सकता वो प्राणी सर्व से भ्रष्ट मत रहो सर्व का नाश होने से तो जो कुछ लाभ मिल जावे वोई श्रेष्ठ है ऐसा विचार करके देश विरती को ही अंगीकार करता है तथा पूर्वोक्त लक्षणों के प्रति बंधकता का अभाव होवे तो सर्व विरती को ही अंगीकार करसकता है यह बात आवश्यक चूर्णि में भी दिखलाई है सो गाथा लिखते हैं ॥

गाथा—विसय सुह पिवा साए । अहवा वंधवजणाणुराएण ॥
अचयंतो वावीसं । परीसहे दुस्सहे सहिउ ॥१॥
जइन करेइ विसुद्धं । सम्मं अइद्र करंत वच्चरणं ॥
तो कुज्जागिहि धम्मं । नयवभो होइ धम्मस्स ॥२॥

व्याख्या—विषयों का गुण के वास्ते और प्यास वगैरे सहन करने का भय अथवा वांधवादिक का राग से तथा वावीस परीसह सहन होता नहीं अगर जो परम शुद्ध सम्यक्त्व गोया भले प्रकार करके अतिदुःख करके करने में आता है तप और चारित्र अगर यह नहीं वन सके तो गृहस्थ धर्म को अंगीकार करना उचित है मगर धर्म के वाहर नहीं होना चाहिये ॥ २ ॥ तथा यह देश विरति को अंगीकार करने वाले श्रावक जघन्य आदि भेद करके तीन प्रकार का होता है सोई दिखलाते हैं ॥ जघन्य २ मध्यम २ और उत्कृष्ट ३ तहां पर जो श्रावक प्रयोजन विगर मोटे जीवोंकी हिंसादिक नहीं करे तथा मदिरा मांसादिक अभक्ष वस्तु का त्याग करे तथा नवकार मंत्र प्रते धारण करे तथा नवकार सहित पच्चक्खाण करे उस कों जघन्य श्रावक कहना चाहिये । १ ॥ तथा जो श्रावक धर्म के योग्य गुणों करके व्याप्त होता है तथा छै आवश्यक को हमेशा अंगीकार करता है तथा वारे प्रतें को धारण करता है उत्तम आचार वान् है ऐसा गृहस्थ को मध्यम श्रावक कहना चाहिये । २ ॥ तथा जो श्रावक सचित्त आहार का त्याग करे तथा एकासण करे तथा ब्रह्मचर्य को पालन करे उनको उत्कृष्ट श्रावक कहना चाहिये, । ३ ॥ तथा ग्रंथों में कहा भी है ॥

श्लोक—आउट्टि थूलहिं साइ । मज्जं मंसाइ चाइओ ॥
जहन्नो साव ओ वुत्तो । जो न मुकार धारओ ॥ १ ॥

व्याख्या—जो श्रावक प्रयोजन विगर मोटे जीव की हिंसा करे नहीं और मदिरा मांसादिक का त्याग करने वाला होवे तथा नवकार मंत्र का धारक होवे उसको जघन्य श्रावक कहा है ॥ २ ॥

श्लोक—धम्मजुग्गा गुणा इन्नो । छक्कम्मोवार सव्वओ ॥
गिहत्थोय सया यारो । सावओ होइम भिमो ॥ २ ॥

व्याख्या—धर्म के योग्य जो गुण है उन करके सहित है तथा षट्ट कर्म कहिये

आवश्यकादिक षट्‌ कर्म है उनको सेवन करता रहे तथा बारे व्रतको धारण करने वाला ऐसा सत् आचार वान गृहस्थ है उन को श्रावक कहते हैं ॥ २ ॥

श्लोक—उक्कोसेणं तुसड्ढोओ । सचित्तहार वज्जओ ॥
एगासण गभोईय । बंभयारीत हे वय ॥ ३ ॥

व्याख्या—उत्कृष्ट करके श्रावक सचित आहार का त्याग करे तथा एकासण हमेशा करे। ३ ॥ अब बारे व्रत लक्षण देश विरती का स्वरूप निरूपण करने की इच्छा है इसवास्ते तिसका नाम लिखतेहैं। पाणिवह १ मुसावाए २ अदत्त ३ मेहुण ४ परिग्गहे ५ चेव ६ दिसिभोग ७ दंड ८ समई ९ देसे १० तहपोसह ११ विभागो १२ ॥

व्याख्या—प्राणवध १ गोया जीव हिंसा। मृषावाद। अदत्तादान। मैथुन। परिग्रह। मोटे जीव की हिंसा नहीं करना पांच मोटा झूठ नहीं बोलना। मोट की चोरी नहीं करना। पर स्त्री का त्याग करना ४ तथा परिग्रह का परिमाण करना ॥ ५ ॥ इन पांचों को पांच अणुव्रत कहते हैं ॥ तथा दिशा परिमाण भोग उपभोग का परिमाण २ तथा अनर्थ दंड से रहित ३ ॥ इन को गुणव्रत कहते हैं ॥ तथा सामायिक १ देशाव काशिक २ और पौषध ३ और अतिथि विभाग ४ इन को चार शिक्षा व्रत कहते हैं ॥ सर्व मिलाने से बारे व्रत होता है ॥ अब यहां पर भावना कहते हैं ॥ सम्यक्त के पाये बाद गृहस्थ जो हैं सो प्राणातिपातादिक आरंभ से दूर होवे किस वास्ते उत्तम गती में ले जाने वाले गुणों को जान करके बारे व्रत ग्रहण करता है। तिन व्रतों में प्राणी जीव की हिंसा का त्याग करे। यह व्रत सर्व में सार रहा है तथा श्री विज्ञानों ने प्रथम निरूपण करा है प्राणी जीवका वध गोया मारना उससे दूरहोना उसका प्राणवध विरमण गोया अहिंसा कहना चाहिये तहां पर जीव द्रव्य तो अमूर्त्ति है गोया दिखतानहीं इस वास्ते जीव हिंसा कैसे होती है कारण जीव तो मरता है नहीं मगर सर्व भूत तथा इन दश प्राणों का विनाशन हैं उसको हिंसा कहते सो दिखलाते हैं ॥

—पंचेन्द्रियाणित्रिविधंवलंच। उच्छ्वासनिःश्वासमथान्यदायुः ॥
प्राणादशैतेभगवद्भिरुक्ता। स्तेषां वियोगी करणं तुहिंसा ॥ १ ॥

व्याख्या—पांचतो इन्द्री तीन बल। तथा स्वास और उत्स्वासऔरआयु। यह दश प्राण भगवानने फरमाया है इनसे वियोगकरना उसको हिंसा कहते हैं तिनसे विपरीत तिस को अहिंसा कहते हैं। तिस माफिक जी व्रत है तिस को अहिंसा व्रत कहते हैं इस व्रत

का सर्व व्रतों में मुख्यता युक्त है। कारण जैन धर्ममें जीव दया मूलहै सोई लिखा है॥

—इकंचिय इत्थवयं। निदिट्ठंजिण वरेहिं सव्वेहिं॥
पाणाइ वाइ विरमणं। अवसे सातस्सरक्खट्ठा॥ १॥

व्याख्या—एक ही सर्वज्ञों ने ऐसा व्रत निरूपण करा है॥ प्राणी जीव को मारणा नहीं उसको प्राणातिपात विरमण कहते हैं बाकी सब व्रत उस की रक्षा करने वाले है इस माफिक सम्पूर्ण वीसविश्वा दया तो गोया अहिंसा साधू के होतीं है श्रावक के तो सवा विश्वोदयामात्र ही बाकी रह गई अब यहां पर वीस विश्या दया का भेद दिख लाते हैं॥

—जीवा सुहमा थूला। संकप्पारंभओ अते दुविहा॥
सवराह निरवराहा। साविक्खा चेव निरवक्खा॥ १॥

व्याख्या—प्राणी का वध दो प्रकार का होता है जिस में एक तो स्थूल १ और सूक्ष्म २ जीव भेद करके तहां पर स्थूल किस को कहना॥

—द्वीन्द्रियादयः गोया बेंद्री तेंद्री चौरेंद्री और पंचेंद्री।

तथा सूक्ष्म और वादर यह दोनों भेद एकेंद्री का है मगर सूक्ष्म कर्म के उदय सेती एकेंद्री जो हैं तिनों को शस्त्रादिक प्रयोग करके मरने का अभाव है तहां पर गृहस्थों के तो मोटे जीव की रक्षा होती है मगर सूक्ष्म की रक्षा नहीं होती कारण पृथ्वी जल वगैरे का त्याग नहीं हो सक्ता पचण पचाणादिक आरंभ करना पड़ता है इस माफिक थावर जीव हिंसा का नियम नहीं वनता इस वजह से वीस विश्या मांय से दश विश्या चला गया वाकी दश विश्वा रहा तथा फेर नीयती करके तो स्थूल प्राणी वध दो प्रकार का है संकल्पज १ गोया संकल्पना करके १ और दूसरा आरंभज २ तहां पर संकल्पज किस को कहते हैं इस को मारूं इत्यादिक मन करके संकल्प का होना उस को संकल्पज कहते हैं। १॥ और दूसरा आरंभज २ खेती तथा घर के आरंभादिक उस में प्रवर्त्तन होने से जो आरंभ होता है उस को आरंभज कहते हैं। तहा पर श्रावक जो है सो संकल्पज स्थूल प्राणी के वध सेती दूर होता है मगर आरंभज सेती दूर नहीं हो सक्ता कारण तिस आरंभ विगर तिस के शरीर और कुटंवादिक का निर्वाह नहीं होसक्ता इस माफिक आरंभज हींसा का नियम नहीं होने से दशमांय सेती पांच विश्वा चला गया वाकी पांच

विश्वा रहा तथा नियम करके जो संकल्पज है बध वो भी दो प्रकारका है। सअपराध १ गोया अपराध सहित१ और दूसरा निर अपराध२ गोया अपराध रहित २ तहां पर अपराध सहित वाला चोर। और जारादिक। यह संकल्पज है सो इनके बधका त्याग नहीं होता। और निर अपराधी संकल्प का बध नहीं करे इस माफिक अपराध सहित हिंसाका नियम नहीं होने से पांच विश्वा के मांय से अढ़ाई विश्वा बाकी रह गया तब नियम करके जो निर अपराध बध है सो दो प्रकार का है। सापेक्ष १ और निरपेक्ष २ तहां पर अपेक्षा किस को कहते हैं आशंका का तिस करके सहित सापेक्षा गोया संका का ठिकाना तिस से विपरीत उसको निरपेक्ष कहते हैं। २ ॥ तहां पर श्रावक अपेक्षा रहित को तो हिंसा करताई नहीं ॥

अब यहीं पर तात्पर्य कहते हैं जो कोई राजादिक का अधिकारी पुरुष बारे व्रत धारी श्रावक होके अपने मर्म का जानने वाला शंका का ठिकाना रहा है ऐसा कोई पुरुष अगर अपराध रहित भी है मगर उसका बध भी निषेध नहीं करता तथा राजा वा कोई एक रिपू का पुत्र है मगर अपराध रहित भी है तो भी उसका बध निषेध नहीं कर सक्ता इस तरह से सापेक्ष हिंसा का त्याग नहीं होने से अढ़ाई विश्वा मांयसे सवा विश्वा चली गई बाकी सवा विश्वा रही इस वास्ते श्रावकों को सवा विश्वा दया होती है सो कहा भी है॥

—साहू वीसंसड्ढे। तस संकप्पा वराह साविक्के।
अद्धद्धओसवाओ। विसोअओपाए अइवाए॥ १ ॥

व्याख्या—साधू महाराज के सम्पूर्ण वीस विश्वा दया होती है तथा त्रश जीव हलने चलने वाले गोया वेन्द्री तेन्द्री चोरेन्द्री पचेन्द्री इन को त्रश कहते हैं यह त्रस का एक भेद श्रावक पालते हैं गोया त्रश की रक्षा करते हैं तथा संकल्पज १ और आरंभज २ तथास्व अपराधी १ और निरअपराधी २ तथा अपेक्षा १ तथा निरपेक्षा २ इनों के अद्धे २ हिसाव घटाने से श्रावक के सवा विश्वा दया रहती है॥ १ ॥ अब यहां पर शिष्य प्रश्न करता है कि जिस का नियम कर लिया जिस श्रावक ने गोया यो श्रावक जिस का पच्चक्खाण नहीं किया है ऐसा यथेच्छा प्रमाणे जीव का बध करे या नहीं॥ अब गुरू महाराज उत्तर देते हैं कह गये हैं पूर्वोक्त त्रशादिक जीवों से व्यतिरिक्त कहिये जुदे थावरादिक तिस की यतना करे मगर निर्दयीपना नहीं करे अगर निर्वाह होता जावे तो थावरादिकों को कभी विनाश नहीं करे अगर निर्वाह नहीं होसके तो इस माफिक भावना भावै॥ धन्य है खलु निश्चय कर के अमी नाम यह सर्व आरंभ रहित साधु मुनिराज॥ मैं तो महारंभ में मग्न होगया मेरे कूं मोक्ष कहां है तथा दया सहित

हृदय करके तथा शंका सहित तहां प्रवर्त्तन होवे सोई बात पुष्ट करते हैं ॥

—वज्जईतिव्वारंभं । कुणइ अकामो अनिव्वहंतोय ।
थुणइ निरारंभ जणं । दयालुओ सव्व जीवे सुत्ति ॥ १ ॥

व्याख्या—श्रावक तीव्र आरंभ का त्याग करते हैं अगर जिस के करे विगर निर्वाह नहीं हो वो फेर लाचारी के साथ पेश आवे तथा निरारंभ गोया आरंभ रहित साधु मुनिराज हैं उनों की स्तवना करे तथा सर्व जीवों के ऊपर दयालुता रक्खै ॥ १ ॥ इस वास्ते श्रावक ने जिस का त्याग कर दिया है उस की तो दया करा करते हैं मगर जिस का त्याग नहीं है तौ भी उस पर करुणा रक्खे । जैसे श्रावक मोटे जीव की रक्षा करते हैं मगर छै काया के कूटे कर रहे हैं और उस विगर श्रावक के चलता नहीं मगर तो भी उन छव कायों पर करुणा भाव रक्खै ॥ सूत्र कृतांग सूत्र द्वितीय श्रुत स्कंध के सप्तम अध्ययन में । श्रावक । छव कायों को छव पुत्र समान समझे ॥ जिस-माफिक पुत्र के ऊपर भाव रक्खै उसी माफिक छव कायों पर भाव रक्खै तथा फेर यतना विगर प्राणातिपात विरमण का फल अभाव है कारण व्रत पुन्य और निर्ज्जरा के वास्ते अङ्गीकार करते हैं केवल अपने उच्चारण करे हैं व्रत उनों का निर्वाह तो करते ही हैं लेकिन नहीं उच्चारण करे हैं व्रत उन की रक्षा करने में भी उद्यम करना चाहिये तथा सर्व जीव की सत्ता सदृश है मगर करुणा रङ्ग का त्याग नहीं करना तथा त्याग का फल भी मन परिमाणों से होता है इस वास्ते कहने का मतलब यह है कि श्रावक को यतना सर्वत्र रखना चाहिये अब इसी बात को पुष्ट करके गाथा दिखाते हैं ॥

गाथा—जंजंघरवा वारं । कुणई गिही तत्थ २ आरंभो ।
आरंभे विहुजयणा । तरतम जोएण चिंत्तेइ ॥ १ ॥

व्याख्या—श्रावक जैसे २ गृहस्थाश्रम सेवन करता है तथा घर सम्बन्धी आरम्भ करता है मगर उस आरम्भ में भी यतना करें कारण तरतम जोग में उद्यम करे अल्प आरंभ करे मगर महा आरम्भ नहीं करे बहुत सा वध का काम छोड़ के ॥ अल्प पाप का काम करने में उद्यम करे उस को तरतम जोग कहते हैं ॥ अब यहां पर अन्वय व्यतिरेक कर के अहिंसा का शुभ उत्तर काल गोया सर्व काल में भी श्रेष्ठ समझै यहां पर जीव को समझने के ऊपर एक दृष्टांत कहते हैं श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—रक्षतियो पर जीवान् । रक्षति परमार्थतः सआत्मानं ।

योऽहंत्पन्यान्जीवान् । सहंति नर आत्मनात्मानं ॥ १ ॥

व्याख्या – जो पुरुष परजीवों की रक्षा करते हैं वो पुरुष परमार्थ कर के अपनी आत्मा की रक्षा करता है तथा जो पुरुष अन्य जीवों को मारने में उद्यम करता है वो पुरुष अपनी आत्मा का हनन करने का उद्यम कर रहा है ॥ ९ ॥ अब यहां पर अहिंसा का फल दिखलाते हैं ॥

श्लोक—सुख सौभाग्य बलायु । धीरिम कांत्पादि फलम हिंसाया ।
बहुरुक् शोक वियोगा अबलत्वभीत्पादि हिंसायाः ॥ १० ॥

व्याख्या —सुख, और सौभाग्य, बल और आयु तथा धैर्यपणा तथा क्रांती, तेज वगैरे यह फल अहिंसा का है तथा बहुत रोग और शोग तथा वियोग तथा बलहीन पणो तथा डरनों इत्यादिक फल हिंसा का है तथा ओलखाण करके तिस अहिंसा कर के धन संपदा मिले और इह लोकादिक का सुख तथा और भी उत्तम सुख गोया मोक्ष है उस का सुख भी मिले ॥ और नरक में पड़ना वगैरे खोटे काम है वो सब हिंसा का फल जानना चाहिये अब इसी व्रत को दृष्टांत करके वर्णाव करते हैं गाथा द्वारा ॥

गाथा—जेयसंसार जंदुक्खं । मोत्तुं मिच्छंतिजंतुणो ॥
अनुकंपा परानिचं । सुलसव्वहवंतिते ॥ ११ ॥

व्याख्या—जिसको संसार के दुःखों को छोड़ने का इरादा होवे तो अनुकंपा करने में हमेसा उत्कृष्ट रहना सुलस की तरह से । यहां पर अनुकंपा याने दया पालने के ऊपर सुलस का दृष्टान्त कहते हैं ॥ राज गृही नगरी में कालिक शूकरिक नामें कसाई वसताथा वो कैसा था कि अपनी जाती के पांचसै घर थे उनमें मुख्य था तिसके सुलस नामें एक पुत्र था वो अभय कुमार मंत्री के संसर्ग याने संगत करके दयावान् श्रावक हो गया तिसका पिता कालिक शूकरिक जो है सो तो हमेसा पांच सै भैंसों की हत्या करे तिसको श्रेणिक राजाने मनाभी किया मगर अभव्यपना होने से उनके मारने से मन हटाता नहीं तब केवल पापसे पिंड भर करके खोटी लेश्या पूर्वक मर करके सातमी नरक में गया तब अपने ज्ञाती वाले एकठे होके ॥ सुलस से कहा ॥ अब तुम पिता का पद याने पिता का कृत्य करो जो पिता करता था वो काम करो और कुटुंब का पोषण करो तब सुलस बोला कैसे करूं तब बिरादरी वाले बोले तुमारे कुल क्रम से चला आता है पांच सै भैंसों के मारने की क्रिया अंगीकार कर तब सुलस बोला इस माफिक जीवमार

करके तिस से धन पैदाकरके उस धनको सर्व लोक भक्षण करोगेतिस से पैदा हुवापाप मैंअकेला भोगवें तवबिरादरी वाले वोले पापको वेंच करके ले लेंगे तव तिन लोगों को प्रतिवोध देने के लिये सुलस जोहै सो कुलाडे के प्रहार करके अपने पैरों में घाव लगाया किंचितमात्र और आक्रंदन करके। याने रोता भया कहने लगा मेरे वेदना वहुत होती है तिसको. जल्दी वेंट के ग्रहण करो तव ज्ञाती वाले वोले कि वेदना वेंट के लेने की शक्ति हमारी नहीं है तव सुलस वोला अगर इतनी शक्ति भी तुम लोगों की नहीं है तव नरक का कारण अनेक भैंसा मारने का पाप वेंचके कैसे लोगे तव वे सर्व लोग मौन धारण करके रह गये तव सुलस भी सर्व अपने कुटुम्व को प्राणी जीव को मारने से मनाई करके॥ उत्तम व्यवहार करकै तिनों की पालना करके जावज्जीव शुद्ध श्रावक धर्म आराधन करके देव लोक का भाजन हो गया याने देवलोक पहुंचा इस माफिक प्रथम व्रत आरा धन करने ऊपर सुलस का दृष्टान्त कहा॥ १ ॥ इस माफिक और भव्य जीव भी सत् धर्म का मूल सर्व अर्थ सिद्धि का अनुकूल इस व्रत को सेवन करना अव यहां पर इस व्रत की भावना पूर्वक गाथा कहते हैं॥

गाथा—धन्नाते नमणिज्जा। जेहिंमण वयण कायसुद्धीए॥
सव्व जियाणं हिंसा। चत्ताएवं विचिंतिज्ज्रा ॥ १ ॥

व्याख्या—धन्य है वे पुरुष नमस्कार करने के योग्य जिनों ने मन, वचन,काया, शुद्धि करके सर्व जीवों की हिंसा का त्याग करा है वे धन्य हैं श्रावक कों ऐसा विचार करना चाहिये॥ १ ॥ इस माफिक प्रथम व्रत भावित करा॥ १ ॥ अव दूसरा स्थूल मृषा वाद गोया मोटे झूठ का त्याग करना॥ इस माफिक व्रत निरूपण करते हैं स्थूल याने मोटा झूठ वोलना नहीं विरमण नाम त्याग करने का है तिस को स्थूल मृषावाद विरमण व्रत कहते हैं॥ कन्या संवंधी झूठ का त्याग करना अव पांच प्रकार का मोटा झूठ दिखलाते हैं॥

—कन्नागो भूअलियं। नासवहा रंचकूडस खिज्जं॥
थूल मलीयंपंचह। चइए सुहुमं पिजहसत्ति॥१॥

व्याख्या—श्रावक जो है स्थूल से स्थूल गोया मोटे से मोटा अति दुष्ट अध्यवसाय का कारण इस माफिक पांच तरह का मोट के झूठो का त्याग करे अव पांच झूठ कौन कौन से हैं सो दिखलाते हैं कन्या लीक १ गवा लीक २ भुंमा लीक ३ न्यासापहार ४ कूट साक्षी ५ ॥ तहां पर निर्दोष कन्या है उसको विषक न्याया है ऐसा कह देने से

गोया लोगों के सामने कहे तो कन्या संबंधी झूठ हो गया ॥ ३ ॥ तथा न्यासा पहार किसको कहते हैं ॥ न्यास नाम थापण गोया अपने पास रुपया रखगया हो उसको थापण कहते हैं गोया उसका अपहार कहना हर लेना याने मालक मागे तब नटजाना इसके अंतर्गत चोरी का भी भाग रहा है उसको न्यासा पहार कहते हैं ॥ ४ ॥ तथा लांच के लोभ करके वा द्वेष के कारण से मंजूर करेभये कामको नट जाना वा झूठी गवाई भरना ॥ ५ ॥ यह पांच तरह का मोटा झूठ श्रावक त्याग करे यहां पर श्रावक को मोटा झूठ बोलने का त्याग कहा मगर सूक्ष्म झूठ कहिये छोटा झूठ उसकी जयना करनी दिखलाते हैं तथा शक्ति पूर्वक सूक्ष्म झूठ का भी त्याग करे तथा निर्वाह नहीं होवे तो तरतम योग करके जतन करें अब सत्य व्रत का प्रभाव दिखलाते हैं ॥

जेसच्चव वहारा । तेसिंदुट्ठाविने वपहवंति ना इंकं मंति
आणं ॥ताणं दिव्वाइं सव्वांइं ॥ १२ ॥

व्याख्या—जो पुरष सत्य व्यवहार याने सत्य बोलते हैं तिन पुरषों को दुष्ट क्रूर कर्मी राजादिक भी कष्ट नहीं दे सक्ते जैसे कालिका चार्य और दत्त पुरोहित की तरह से सत्य बोलना वो कालिका चार्य का दृष्टान्त तीसरे प्रकाश में कहेंगे ॥ तथा जल है तथा अग्नि है, कोश है, विषहै, उडदतथा चावल तथा फाल तथा धर्म तथा पुत्रके सिर पर हांथ देके सोगन खाना इस माफिक दश दिव्य हैं गोया धीज करते हैं यह सर्व दिव्य याने धीज सत्य वादी की आज्ञा उल्लंघन नहीं कर सक्ते वा आज्ञा कौनसी है हे जल मुझको मत डुवाव । हे अग्नि मुझको मत जलावे ऐसा कहने से आज्ञा अंगीकार कर लेते हैं अब यहां पर सत्य के प्रति पक्षी याने झूठ उसकी बहुत निंदा दिखलाते हैं ॥

—वयणम्मिजस्स वयणं । निच्चअसच्चंव हेइवच्चरसो ॥
सुद्धी एजल गहणं । कुणमाणं तंहसंति वुहा ॥१॥

व्याख्या—जिसके मुखमें झूठ वचन है वो सर्व जगत में अनिष्ट है और अपवित्र है तथा विष्टा रसको हमेसा वहन करता है वो पुरष शुद्धि के वास्ते जलमें स्नान करे तो पंडित विवेकी हांसी करते हैं ॥ अहो इस का मूर्ख पना सो यह झूठ बचन से मलीन आत्मा करी है तो भी सरीर का मैल धोने के लिये जल मात्र करके पवित्रताई की वांछा करता है तिस वास्ते स्नान करने का उद्यम करता है तथा और ग्रन्था तर में भी ऐसा लिक्खा है ॥

—चित्तंशगादिभिः क्लिष्टं। मलीक वचनै र्मुखं॥
जीवघातादिभिः कायो। गंगातस्यपराङ्मुखी॥१॥

व्याख्या—जिस पुरष का चित्त राग द्वेषादि करके भरा है और झूठ वचन करके मुख रहा है तथा जीव घातादि करके काया रही है तो ऐसे पुरुष के स्नान करने से गंगा ने मूं फेर लिया॥ १॥

—सत्यंशौचंतपः शौचं। शौचमिंद्रिय निग्रहः॥
सर्वभूत दयाशौचं। जल शौचंचपंचमं॥२॥

व्याख्या—यहां पर शुची बतलाते हैं सत्य बोलना १ तप करना २ इन्द्रियों का निरोध करना ३ सर्व भूत प्राणी की दया करनी ४ तथा जल की शुद्धि पांचमी हे॥ ५॥॥ २॥ तथा फेर भी इसी व्रत को दृढ़ कहते हैं॥

मूयत्तणं पिमन्ने। सारंभवयणसत्तीओ॥
निम्भंडणंचिय वरं। जलंतअंगारसिंगार॥१५॥

व्याख्या—मैं ऐसा मानता हूं आरंभ सहित झूठ का बोलना और मर्म का उघाड़ना तथा पाप सहित वचनका बोलना तिस संबंधी जो शक्ति है तिस सेती मूंक याने गूंगापणा अच्छा है उसी में सार है अब यहां पर दृष्टान्त कहते हैं तथा सरीर सोभा के वास्ते धग धगाय मान अंगारों करके श्रृंगार करना उलटा दाह होता है तथा अपनी निपुणता दिखलाने के वास्ते प्रारंभ करा पाप का वचन कहता है उससे उलटा नरक में पड़ना दिक दुःखका कारण होता है तिस सेती गूंगा पणा अच्छा है अब इस व्रत को पालने तथा नहीं पालने का फल दिखलाते हैं॥

—सच्चेण जिओ जायई। अप्पडिहयमहुर गुहिर वर वयणो।
अलिएणं मुह रोगी हीण सरोमम्मणोमूओ॥ १६॥

व्याख्या—सत्य वचन कर के पुरुष इस लोक में यश तथा विश्वास आदि का पात्र होता है तथा पर लोक में अप्रतिहत याने हणी जैन हीं ऐसा मधुर वचन वाला होता है अप्रतिहत कहां पर भी चूके नही वज्र की तरह से तथा परिपक्क

से लड़ी के रस समान मधुर वचन होवे तथा गम्भीर-वचन जल सहित मेघ गर्जारव करे तिस माफिक तथा मनोज्ञ वचन बोले इत्यादिक सत्य वचन का फल जानना ॥ अब झूठ वचन का फल बतलाते हैं झूठ वचन कर के इस लोक में अविश्वास और और अपकीर्ति आदि का भाजन होवे और परभव में मुख रोगी और हीनस्वर तथा मनमन तथा मूंक याने गूंगा होवे और मनमन उसे कहते हैं जिस के बोलने सेती वचन चूकै उस को मनमन कहते हैं ॥ यह व्रत वचन विषय का है याने सत्य और झूठ वचनों से बोला जाता है इस वास्ते मुख को फल मिलता है ॥ अगर जो इस व्रत को नहीं विराधते हैं उन को देव लौकादिक का सुख मिलता है अगर इस व्रत को विराधते हैं उन को नरकादिक का फल जानना चाहिये अब इस व्रत ऊपर व्यतिरेक करके दृष्टांत कहते हैं ॥

—दप्पेण अलिअव यणस्स । जंफलंतंनसक्किमोवोत्तुं ।
दक्खिणणा लीएणवि । गओवसुसत्तमं नरयं ॥ १ ॥

व्याख्या—दर्प्प याने अभिमान कर के अपना पक्ष स्थापन करने के आग्रह सेती जो झूठ वचन बोलता है उस का जिन मत विरुद्ध भाषण फल है अनंता अनंत संसार परि भ्रमण रूप फल है हमारे जैसा छद्मस्थ प्रमाणो पेत ऊमर वाले कह सक्के नहीं इस माफिक विपरीत भाषण करने का फल है तथा दाक्षिण्य वचन किस को कहते हैं गुरू तथा स्त्री उनों के हठ कर के जो झूठ बोलता है उन को दाक्षिण्य अलीक कहते हैं तिस कर के वसु राजा सातमी नरक में गया गोया कहने का मतलब यह है कि दाक्षिण्यता करके झूठ वचन बोलने से इस माफिक दुर्गती होती है तो अहंकार करके झूठ वचन बोलते हैं उन के दोष का पार नहीं मिलता है अब यहां पर दाक्षिण्यता से झूठ वचन वसु राजा बोला था सो सातमी नरक में गया उस वसु राजा का दृष्टांत कहते हैं डाहल देश के बीच में शुक्ति मती नाम नगरी तहां पर अभिचन्द्र नामें राजा राज्य करता था तिस के वसु नामें पुत्र था तिसही पुरी में जिन धर्म में वासित मन था एसा क्षीर कदंबक नामे उपाध्याय रहता था तिसके पास उत्तम आचारवान बालक अवस्था से सत्य व्रत में रक्त वो वसु कुमार विद्या का अभ्यास कर रहा था तब पर्वत तक उपाध्यायका पुत्र १ नारदनामे विद्यार्थी २ यह दोनों वसु कुमारके साथ शास्त्र अभ्यास करते थे अब एक दिनके वक्त में तीनों जनें श्रम सेती अंगन भूमि में सो रहे थे तिस वक्त में आकाश में गमन करने वाले चारण रिषि के मुख सेती इस माफिक वचन सुना यह तीनों लड़के अंगन भूमि पर सोते हैं तिनों के भीतर एक ऊंची गती को जावेगा और दो नरक

जावेगा ऐसा बचन सुन करके उपाध्याय उदास होके विचारनें लगा रिषियों का वचन सर्वथा मिथ्या नहीं होता मगर इनोंमें नरक जाने वालेकी परीक्षा करे कारण हमको मालूम नहींहै कि कौनसे दो जने नरक जावेंगे वा अथवा जो दयावान नहींहोगा वो नरक जावेगा तिस वास्ते प्रथम से में इनों का दया लुपना देखूं ऐसा विचार करके उपाध्याय तीन आटेके कूकड़ा बनवाये तव शिष्यों को एक २ कूकड़ा दे करके ऐसा कहके अहो जहां पर कोई भी नहीं देखे तहां पर इनों को मारना ऐसा हुक्म दिया तब पर्वत तक जुदे २ होके एकान्त बन में जाके निर्दयपना करके अपने २ कूकड़े प्रतें मारा तव नारद जी एकान्तमें जाके कूकड़े को अगाड़ी रख के विचारनें लगा गुरू महाराज ने हम से ऐसा भयानक कर्म किस वास्ते कर वाया जिस वास्ते निर अपराधी जीव प्रतें इस माफिक कौन सचेतन पुरुष मारेगा वा अथवा जहां पर कोई भी नहीं देखे तहां पर मारना ऐसा वोलने सेती गुरू का अभिप्राय हमने जान लिया याने नहीं मारना चाहिये कारण यह देखता है और मैं देखता हूं तथा ज्ञानी देख रहे हैं मगर कोई भी नहीं देखे ऐसा स्थान तो कोई भी नहीं है तिस वास्ते मैं ऐसा मानता हूं कृपालु हमारा गुरू है सो शिष्यों की परीक्षा करणें के वास्ते हुक्म दिया है ऐसा विचार कर के कूकड़ा नहीं मारा तव यह वहां से पीछा लौट करके गुरू महराज के पास जा करके कूकड़ा नहीं मारने का कारण बतलाया तव गुरू ने नारद की ऊंची गती जान करके निश्चय करके तिस की प्रशंसा करी तितनें तो वसु और पर्वत आके कूकड़ा मारनें की हकीकत कही तव गुरू बोले अरे तुम दोनों पठित मूर्ख हो धिक्कार हुवो इत्यादिक दुर्वचनों करके तर्जना करी और आप उदास होके मन में विचार करा मेरे जैसा गुरू पा करके यह दोनों अधोगति याने नरक जावेगा तो मेरा क्या महात्म है वा अथवा आयू जिस का क्षीण हो गया तो पीछे राज वैद्य क्या कर सक्ते हैं तथा फेर ऊंची जमीन ऊपर पानी की वरसात की तरह से वृथा हुवा इतना दिन वहुत परिश्रम के साथ इन दोनों को हमने पढ़ाया अब नरक की पीड़ाके कारण करके अब गृहस्थाश्रममें रहना उचित नहीं ऐसा विचार करके वैराग्य सहित उपाध्याय ने चारित्र अंगीकार करा तिनका पद याने उपाध्यायपने का कृत्य पर्वत पालने लगा तव नारद भी शास्त्र पढ़ करके यथा रुचि और जगे गये तव अभि चन्द्र राजा ने भी वक्त पर दीक्षा ग्रहण करी तव वसु कुमर भी पिता की तरह से पृथ्वी का भार अंगीकार करा अव यह वसु राजा सर्व पृथ्वी तल के विषै सत्यवादी ऐसी प्रसिद्धि पा करके तथा तिस के आग्रह से कोई भी झूठ वोल सके नहीं तथा इधर से कोई एक भील विंध्याचल अटवी में हिरणको मारने केलिये बाण चलाया मगर वो वाण चूक करके वीच में पड़ गया तव वो भील बाण चूकने का कारण देखने लगा तो आगूं आकाश ऊपर देखे है तो एक स्फटिक रत्न की शिल्ला प्रतें हाथ के फर्श

से जान करके दिलमें विचार करा कि मैंने इस शिल्ला के पास चरता हुवा मृग देखा था तिस वास्ते मेरा बाण चूका था अत्यंत निर्मल शिल्ला है सो बसु राजा के योग्य है ऐसा विचार करके वह गुप्त आ करके बसु राजा को तिस शिल्ला की हकीकत कही तब बसु राजा भी तिस को धन देके तिस शिल्ला प्रतें ग्रहण करी तब राजा भी कारीगरों के पास में तिस की बेदी घडवाई बाद उन कारीगरों को प्रसन्न करके सीख दीवी तब बेदी के ऊपर अपना सिंहासन रखवाया तब लोक सर्व ऐसा कहने लगे अहो इति आश्चर्य राजा के सिंहासन सत्य प्रभाव सेती आकाश में अधर रहा है इस राजा प्रतें सत्य करके देवता भी सेवा करते हैं अब एक दिन के वक्त नारद जी प्रीति करके पर्वत के मकान पर आये तब वो ब्राह्मण अपनी सभा में रिगवेद काव्याख्यान करता था तहां पर अजैर्यष्टव्यमिति सूत्रे याने अज करके होम करना वहां पर पर्वत नेमेष का अर्थ कहा तब नारद जी बोले कान में अंगुली डाल करके आः अशांत पापं ऐसा कह करके फेर पर्वत को कहा हे भाई तेंने भ्रांत की तरह से गोया किसी को एक तरह की भ्रांति आ जाती है उस भ्रांति में जैसे बोले तिस तरह से तुम ने यह क्या कहा अपने गुरु ने तिस वक्त अज शब्द करके तीन बरस की व्रीहि धान्य का कहा था अब पर्वत भी गुरू का कहा हुवा तिस अर्थ को स्मरण कर रहा था तो भी अहंकार करके मेरे शिष्यों को अविश्वास मत हुवो ऐसा दर्प्प लाके नारद प्रतें कहने लगा हे नारद तुमही भ्रांती में पड़ गये इस वास्ते मुझे भ्रांती सहित बतलाते हो जिस कारण सेती बकरे का अर्थ भाषण करणे वाले गुरू समान निघंटू कोश साक्षी है तब नारद बोले शब्द दो प्रकारका होता है एक तो मुख्यार्थ वाची और दूसरा गौणार्थ वाची तहां पर कहते हैं कि न जायंते इति अजा इस वास्ते यहां पर गोणार्थ वाची अज शब्द रहा है तथा गुरूने भी कहा था मगर मुख्यार्थ वाची नहीं कहा अगर जो फेर बुद्धिवानों के निघंटु का कहा भया ही शब्दार्थ प्रमाण होवे तो तब गुरू प्रतें और धार्मिकी श्रुति का लोप करने से दोनों लोक का लोप करता है तब पर्वत क्रोध सहित कहने लगा भो इस शुष्कविवाद करके क्या फायदा है अपने दोनों जना अपने २ पक्ष में मिथ्या होवे तो अपनी जीभ काट देवे ऐसा प्रण होना चाहिये और इस बात में प्रमाण करने वाला अपने साथ पढ़ने वाला बसु राजा हुवो ऐसा सुन करके नारद जी तो सत्य प्रतिज्ञा सहित प्रमाण करके कोई कार्य करने के वास्ते शहर के अन्दर गये तब पुत्र के स्नेह में बिकल होके माता एकान्त में पर्वत से कहा हे पुत्र तैंने आत्मा के नाश होने का का पण करा जिस वास्ते मैंने भी तेरे पिता के पास सेती अजा शब्द करके व्रीहि का ही अर्थ सुना है और नहीं तिस वास्ते इस वक्त में नारद को बुला करके तिस असत्य वचन की क्षामणा कर तथा मद जो है रोग को बढ़ाने में अजीर्ण की तरह से

सर्व आपदा को मूल है इस वास्ते तिस प्रतें त्याग कर तब यह पर्वत बोला हे माता जी इस में क्या भय है जो प्राणी जन्मा है तिस प्राणी की अवश्य मृत्यु होगी इस वास्ते जो कुछ कहा है सो कहा ही है जो कुछ भावी है सो होजायगी तब माता पुत्र की तकलीफ दूर करने के वास्ते वसु राजा के पास गई तब वसु राजा भी तिस प्रतें प्रणाम नमस्कार करके प्रीति पूर्वक प्रश्न सहित कहने लगा हे माता जी यहां आने कर के आज तुम ने मेरे ऊपर बड़ी कृपा करी अब आने का कारण क्या है क्या तुम को देऊं तब वा भी चिरंजीव ऐसा आशीर्वाद देके कहने लगी हे राजन् जैसे पुत्र को जीता देखूं तैसा कर तब वसु राजा बोला तुमारा पुत्र मेरे सतीर्थि भाई है गोया एक गुरू के पास पढ़े और गुरू के पुत्र होने से मेरे भी गुरू समान रहा है तिस को आज कौन मारता है ऐसा सुन करके कहने लगी एक तेरे मुख विगर तेरे भाई को कौन मार सक्ता है ऐसा कहती थी उस वक्त में सर्व पुत्र के विवाद संवंधी हकीकत कही और सवेरे के वक्त तें दोनों के भीतर मेरे पुत्र का वचन सत्य करना ऐसी प्रार्थना है तब वसु राजा बोला मैं कभी मिथ्या वचन नहीं बोलूंगा तिस वास्ते अभी झूठ गवाई और गुरू का बचन विरुद्ध तिस को कैसे बोलूं तब पर्वत की माता बोली हे पुत्र इस वक्त ऐसा विचार नहीं करना जीव रक्षा का पुन्य तो तुझ को हुओ और मृषा वचन का पाप हम को हुओ इस माफिक वहुत आग्रह कर के वसु राजा ने तिस का वचन मान्य करा अब सवेरे के वक्त में वसु राजा सभा में आने सेती नारद और पर्वत दोनों विवाद करते हुए तहां जाके ऊंचे स्वर कर के अपना २ पक्ष कहने लगे तब मध्यस्थपने में लोगों ने वसु राजा से विनती करी हे वसुराजा इस पृथ्वी को तुम ने आज सत्यार्थ करी जहां पर बाल भाव से ले के आज तक तुम ने सत्य व्रत को छोड़ा नहीं तथा सत्य के प्रभाव सेती देवता भी सेवक होके तुमारा सिंहासन को आकाश में धारण करा है तिस वास्ते हे सत्य का समुद्र अभी सत्य कह कर के इन दोनों का विवाद दूर करो अब उत्पन्न भई है खोटी बुद्धि जिसकी ऐसा वसु राजा उनों का वचन अनसुनें की माफिक तिस अपनी प्रसिद्धि को नहीं गिन करके कहने लगा कि गुरू ने तो अज शब्द करके वकरा वतलाया ऐसी साक्षी दीवी तब यह मलीन आत्मा करके नीचे जाने वाला ऐसे द्वेष करके तिस की स्फटिक मयी वेदी जल्दी फूट गई तथा को पायपान भया राज्य देवता वसुराजा प्रतें सिंहासन से नीचे गिराया तब नारदभी कहने लगा हे सर्व धर्म परिभ्रष्ठ तेरे को देखना उचित नहीं तिसकी निंदा करके जल्दी चले गये तथा पर्वत को लोग कहने लगे रेमूर्ख तैने गूढ मंत्र करके यह क्या करा इस माफिक निंदा करने लगे पर्वत भी सर्वथा मान भ्रष्ट हो करके तिस नगर का त्याग करा वसु राजा को राज्य देवी ने

चपेट के प्रहार करके मारा पाप ने करा साहाय उस सेती सातमी नरक में गया अब तिस अपराधी के पाट ऊपर जो पुत्र बैठे तिसको देवता मार डाले इस तरह से आठ पुत्रों को मारा सोई रामायण में भी श्री हेमचन्द्र सूरि ने कहा है

—योयः सूनूरुपाविक्षत् । पट्टे तस्यापराधिनः ॥
ससदेवतया जघ्ने । यावदष्ट वनुक्रमात् ॥

व्याख्या—जो जो पुत्र वसुराजा के पाट ऊपर बैठे तब तिसको अपराधी समझ करके गोया एक वसु अपराधी होने से तिन के पाट ऊपर बैठने वाले पुत्र भी अपराधी हो गये तिन पुत्रों को शासन देवता ने मारा क्रम करके आठ पाट तक यही दशा करी ॥ १ ॥

—भुक्तमा जन्म कदापि भुक्त । मंतेविषंहंतिय था मनुष्यं ॥
कदाप्यनुक्ताविवतथातथांगी । रुक्तावसानेवसुमाजघान ॥ २ ॥

व्याख्या—जन्म से लेके कभी भी नहीं खाया मगर आखिर में अल्प मात्र भी जहर खा लिया जैसे अन्त में जैर मनुष्य को मारता है तथा जिस ने कभी भी झूठ बोला नहीं और अंत में किंचित्मात्र भी बोल दिया तो जैसे वसुराजा मरण पाके सातमी नरक में गया, ॥ २ ॥ यह दूसरे व्रत ऊपर वसुराजा का दृष्टान्त कहा इस तरह से मृषा का फल सुन करके सर्व भव्य जीव इस को त्यागन करने में तत्पर रहो जिस करके सर्व वांछित पदार्थ की सिद्धि होवे ॥ अब यहां पर भावना कहते हैं ॥

—थोवंपि अलियवयणं । जेनहुभासंतिजीवियंतेवि ॥
सच्चे चेवर याणं । तेसिंणमो सव्वसाहूणं ॥१॥

व्याख्या—स्तोक मात्र भी झूठ वचन बोलते नहीं जीवित चला जावे तो भी सत्य व्रत में रहते हैं ऐसे सर्व साधू महाराज को नमस्कार हुवो ॥ १ ॥ यह दूसरा व्रत निरूपण करा ॥ २ ॥ अब तीसरा स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत निरूपण करते है ॥ मोटी चोरी करने सेती दूर होना तिसको स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत कहते हैं तथा सचित्तादिक मोटी वस्तु का त्याग करना सोई दिखलाते हैं ॥

—तइयवयंमिचइज्जा । सचित्ताचित्तथूलचोरिज्जं ॥
मेसोपुणमोत्तुमसमत्थो । तिणमाइतणु अतेणिअ ॥ १८ ॥

व्याख्या—गृहस्थ जो है सो तीसरे व्रतमें अदत्तादान कहिये चोरी से दूर होना तहां पर शचित्ततो क्या है द्विपद चोपदादिक और अचित्त क्या है सुवर्ण रूपादिक तथा ओलखाण सेती मिश्र पदार्थ भी जानना आभूषण सहित स्त्री को आदि लेके तिस संबंधी मोटी चोरी तिस प्रतें त्यागन करे तथा स्थूल ऐसा क्यूं कहा कि गोया स्थूल बुद्धि वाले भी निंदा करते हैं और चोर ऐसा प्रसिद्ध होना इत्यादिक कारण समझना इस वास्ते श्रावक के मोटी चोरी करने का त्याग है मगर सूक्ष्म चोरी का त्याग होना मुसकिल है अब सूक्ष्म चोरी दिखाते हैं घास का तणखा अगर उसको विगर दिये ग्रहण करे तो अदत्तादान लगता है तथा शला का नाम शिलाई होती है आंखों में सुरमा वा काजल आंजने की शिलाई कहते हैं आदि शब्द सेती नदी का जल वन की लकड़ी फूल फैरकी लकड़ी इंधनादिक तिस संबंधी तनक सूक्ष्म चोरी इसको गृहस्थ छोड़ सक्ता नहीं कारण तिस विगर मार्गादिक तथा चोपदवगरे का निर्वाह नहीं हो सक्ता तथा सूक्ष्म क्यों कहा कि सूक्ष्म वस्तु विषयिक है इस वास्ते सूक्ष्म दृष्टि वालों के त्याग करने योग्य हैं अब यह चोरी जिस प्रकार करके त्याग करनी होती है सो दिख लाते हैं ॥ गाथा कहते हैं ॥

गाथा—नासीकयं निहीगयं । पडियं विसारियं ठियंनट्ठं
पर अत्थं हीरंतो । निअ अत्थंकोविणासेइ ॥ १९ ॥

व्याख्या—याने थापण में रख गया हो तथा निधान गोया गाड करके रक्खा हो याने स्वभाव से भ्रष्ट हो गया उसको पड़ा भया कहते हैं तथा कोई व्यग्रचित्त करके भूल गया हो और न्यास करा हो तथा रह गया हो धन का मालिक मरने से किसी ने लिया नहीं याने उसको नष्ट गया कहते हैं इत्यादिक प्रकार करके दूसरे के द्रव्य प्रतें हरण करके क्या होता है सो कहते हैं अपनी समस्त संपदा उनको देने वाला याने पुन्य है इस वास्ते उस पुन्य का नास कोन सचेतन प्राणी करै याने नहीं कर सक्ता तथा फेर भी विशेषता दिखलाते है कि दूसरे का द्रव्यहरण करने में केवल तृतीय व्रत का नहीं भंग है याने एक तीसरे व्रत काई भंग नहीं और भी गोया प्रथम व्रत का भी भंग होता है ऐसा ग्रन्थों में लिखा है सो दिकलाते हैं गाथा द्वारा ॥

गाथा—जंपत्तइमम जंयइ । तंतंजीवस्सवाहिरा पाणा ॥
तिणमित्तं मिअदिन्नं । दयालु ओतोनगिएहे ॥ २० ॥

व्याख्या—जो सचित्त अचित्त वस्तु प्रतें सर्व प्राणी कहा करते हैं यह मेरा यह मेरा ऐसा कहना गोया मोह दशा है सो बाहिर के प्राण जानना चाहिये गोया जितनी मोहनी दशा की चीज है वो सब वाहिर के प्राण समझना तथा प्राण दो प्रकार का लिक्खा है जिसमें एकतो भीतर के प्राण और दूसरे वाहिर के प्राण तहां पर भी तरके प्राण कौन से हैं स्वास उत्सावस इत्यादिक दश प्राण जानना तथा वाहिर के प्राण ममत्व के कारण मोह जन्य सोना रूपा इत्यादिक तिसका नास होने से प्राण का नास की तरह से गोया दुक्ख पैदा होता है याने जिस के पास एक सौ रुपय की पूंजी है उससे अपना गुजरान करता है और उसी पूंजी को कोई हरण करके ले जावे तो फेर वो शक्स छाती वगैरे कूट कूटा के अपनी इच्छा से प्राण रहित हो जाता है कारण द्रव्य के नाश होने से उनको मरण पड़ा इस वास्ते दयालू श्रावक ने पच्चक्खाण कर लिया है जीव हिंसा का तथा अदत्तादान चोरी का वो वीगर दिये तृण मात्र भी ग्रहण नहीं करैगा यह मतलव है पेस्तर गृहस्थ ने चोरी का नियम करके गोया विगर दिये तृण भी ग्रहण नहीं करे सो रस्ते में पड़ा भया हो और मालिक नहीं है उसकी अपेक्षा करके जानना यहां पर तिस का भी निषेध कर दिया कि सूक्ष्म चोरी की अपेक्षा करके उसको भी ग्रहण करे नहीं वाकी श्रावक को मोटी चोरी का त्याग होता है मगर सूक्ष्म बुद्धि की अपेक्षा करके इस को सूक्ष्म कहते हैं तथा दूसरों के संचित करा भया घासादिक उनको दिये विगर ग्रहण करे तो चोर की तरह से वध वंधनादिक दशा को प्राप्त होवे इस वास्ते दूसरों ने ग्रहण करी है उसको दिये विगर गृहस्थ ग्रहण करे नहीं अव क्या कहते हैं जो पुरुष विचार करके हीन है चित्त जिनों का ऐसे मूर्ख लोक चोरी करके लक्ष्मी की वांछा करते हैं तिनों को अंगीकार करके दिखलाते हैं ॥

कुलकित्ति कलंक करं । चोरिज्जं माकरेहकइआवि ॥
इहवसणं पच्चरकं । संदेहो अत्थ लाभस्स ॥ २१ ॥

व्याख्या—चोरी करने से कुल की कीर्ति में कलंक लगता है नाना प्रकार की तकलीफ होती है सो प्रत्यक्ष कर के देख लो तथा द्रव्य का लाभ होवे नहीं इससे चोरी करने वाला भूखों मरता है ॥ २१ ॥ तथा व्यसन कहिये तकलीफ कैदखाना मारना

बंधन में रखना शरीर में तकलीफ देना इत्यादिक दुक्ख इस भव में मिलता है तथा फेर भी विषेशता दिखलाते हैं ॥

—काउण चोर विर्त्ति । जे अवुहा अहिल संति संपर्त्तिं ।
विस भक्खणेण जीवि अ । मिछताते विणस्संति ॥ २२ ॥

व्याख्या—जो अज्ञानी लोक हैं सो चोर वृत्ति करके संपदाकी वांछा करतें हैं वे पुरुष कैसे हैं कि जैसे कोई जहर खा कर के जीने का इरादा करता है मगर अपनी आत्मा का विनाश कर रहा है ॥ अव उक्त लक्षणों करके जुदे हैं उनों की तारीफ़ दिखलाते हैं ॥

—तेधन्ना सप्पुरिसा । जेसिमणो पासिऊणपरभूई ।
एसापर भुइच्चिय । एवंसंकप्पणं कुणई ॥ २३ ॥

व्याख्या—जिनों के दिल में ऐसी वात रही भई है कि दूसरों की संपदा देख कर के ऐसा विचार करे कि इस सम्पदा को ग्रहण करने से मार । तथा वंधनादिक तकलीफ हो जायगी ऐसा हमेशा चिंतवन करना वे सत्पुरुष हैं और धन्य है वे पुरुष क्या समझते हैं कि पराई विभूती किस माफिक हैं गोया पराभूति याने तकलीफ का कारण रहा है इस वास्ते दूर रहना श्रेष्ट है अव चोरी का फल दिखलाते हैं ॥

—वह वंधरीह मच्चू । चोरिज्जा ओहवंतिइहलोए ।
नरयनिवाय धणरकय । दारिद्दाइंचपर लोए ॥ २४ ॥

व्याख्या—चोरी करने से वध कहिये मार वंध रसी वगैरे वांधना तथा कैदखाने में डालना तथा मोत सिर कटाने को आदि यह तो इस लोक में फल है और परभव में नरक में पड़ना तथा धन का क्षय और दारिद्रादिक दुक्ख परलोक में प्राप्त होगा अव यहां पर कहते हैं कि जो अदत्तादान कहिये चोरी का त्याग करते हैं उनों का दृष्टांत सहित फल दिखलाते हैं ॥

—जंइत्थ जणपसंसाई । परभवे सुगइ माइ होइ फलं ।
मुक्के अदत्तदाणे । तंजायं नागदत्तस्स ॥ २५ ॥

व्याख्या—जिस पुरुष की इस भवमें इस लोक में तारीफ करते हैं तो परभव में भी उत्तम गती को प्राप्त होता है याने श्रेष्ठ गती में जाता है जो चोरी को त्याग करते हैं उन को फल मिलता है किस की तरह से नाग दत्त की तरह से सो नाग दत्त का दृष्टांत दिखलाते हैं ॥ वाराणसी नामें नगरी में जितशत्रु नाम राजा था तहां पर एक धनदत्त नामें सेठ रहता था तिस के धनश्री नामें स्त्री थी तिनों के नागदत्त नामें पुत्र था वो बालक अवस्था से सद्गुरु के संयोग सेती जिन धर्म की श्रद्धा पाके संसार से विरक्त हो के अदत्तादान गोया चोरी नहीं करने का नियम लिया तथा ओर नियम व्रतादिक अंगी कार करा एक दिन की बात है कि तिस नगर सेठ की कन्या नाग वसुनामा जिन पूजा के वास्ते भगवान के मन्दिर जा रही थी तिस नागदत्त प्रतें देख करके तिसके रूप और सौभाग्यादिक गुण में मोहित हो गई कि मुझ को इस भव में यह भर्त्तार मिलेगा तो मंजूर है ऐसा मन में निश्चय करा अपने बाप के आगूं दिल का विचार कहा तब पिता भी तिसका निश्चय जान करके नागदत्त के पिता के घर में जाके तिसके अगाड़ी जाके अपनी कन्या का अभिग्रहको निरूपण करा तब संसार संबंधी भोगों की इच्छा नहीं करता है तो भी पिता ने नागदत्त के साथ विवाह की मंजूरी करता भया अब एक दिनके वक्त में तिस नगर का कोटवाल तिस कन्या को देख करके तिस के रूपमें मोहित होके सेठ के पास अपने पुरुषों को भेज करके तिस कन्या को मांगता भया तब सेठ बोला इन कन्या को तो मैंने नागदत्त को दे दिवी इस वास्ते दूसरे को अब नहीं दे सक्के कारण नीति में लिक्खा है कि कन्या एकही दफे दी जाती है तब वो कोटवाल अपने पुरुषों के मुख सेती तिस हकीकत प्रतें सुन करके कोपायमान होके रात दिन नागदत्त का छल देखने लगा अब एक दिन के वक्त में चंचल घोड़े ऊपर चढ़ करके राजवाड़ी में राजा हवा खाने को जा रहा था तहां पर राजा के कान सेती कुंडल गिर गया तब तिस नगर में बहुत तालासी करवाई मगर कुंडल मिले नहीं तब तिस अवसर में जिन मंदिर जाके जिन पूजा करके श्री जिनराज के आगूं काउसग्ग में रहा तिस अवसर में कोई कर्म योग से तिस नागदत्त के पिछाड़ी कोटवाल आ रहा था तिस कोटवाल ने तिस कुंडल प्रतें लेकरके जल्दी से ग्रहण करके दुष्टबुद्धि करके नागदत्त के सिर पै कलंक देने के वास्ते जल्दी से भगवान के मंदिर में आके काउसग्ग में रहा था नागदत्त तिस के कानों में कुंडल पहिना के सघन बंधन सेती बांध करके राजा के दरवार में लाया तब राजा ने तिस के कान में अपना कुंडल देख करके चोर जान करके कोपायमान होके कोटवाल प्रतें तिस को मारने का हुक्म दिया तब कोटवाल भी अपना वांछित अर्थ सफल भया मान करके खुशी होके नागदत्त को चोर की तरह से विटंबना करके लेजा रहे थे नागवसु सेठ की पुत्री के गोख

के नीचे होके निकले तब तो नागवसु कन्या भी शुद्ध श्रद्धावान् अपने भर्त्तार की ऐसी अवस्था देख करके अपने मन में अत्यंत दुख करने लगी श्री जिनमत की निंदा मिटाने के वास्ते अपने घर देराशरमें आकरके शासन देवी प्रतें स्मरण करके जब मेरा यह काम शिद्ध होगा तब मैं काउसग्ग पारूंगी ऐसा मन में निश्चय करके धर्म ध्यान करती श्री जिन प्रतिमा के आगूं काउसग्ग में रही अब वो कोटवाल भी तिस नागदत्त प्रतें मशान भूमि में लेजा करके शूलि ऊपर चढ़ाने लगा तितनेमें तो शूली टूट गई इस माफिक तीन दफै हुवा तिस पीछे श्री जिन धर्म के महात्म सेती शासन देवी के सहाय करके शूली के ठिकाने सिंहासन होगया तथा तिस कोटवाल ने तरवार का प्रहार भी बहुत दिया मगर वे सर्व माला की तरह से आभूषण होगया तब आश्चर्य पाके सर्व लोक या हकीकत राजा के आगूं निवेदन करी राजा भी या हकीकत सुन करके अत्यंत आश्चर्य सहित जल्दी तहां आ करके नागदत्त प्रतें सोने के सिंहासन पर बैठाके नाना प्रकार के माला और अलंकार से सोभित करके अपना करा भया अपराध को वारम्वार खमा करके नागदत्त प्रतें हाथी के ऊपर चढ़ा के महोत्सव करके शहर में प्रवेश करवाया तिस वक्त में तिस माफिक धर्म का प्रभाव देखने से लोक सर्व श्री जिन धर्म की प्रशंसा करने लगे तब नागवसु कन्या भी नागदत्त को तिस माफिक आडम्बर करके अपने गोख के नीचे होके जाते हुये देख करके जल्दी से काउसग्ग पारा तब राजाने भी तिस कोटवाल को अछता दूषण देनेवाला मान करके कोपाय होके तिसका सर्व लूट लिया बाद सेवकों को आज्ञा दिवी तिस को मारने के वास्ते तब जीव दया में उत्कृष्ट होके तिस नागदत्त ने जीता छोड़ाया तब नागदत्त भी नागवसु कन्या का अपने ऊपर तिस माफिक तात्विक अनुराग जान करके माता पिता महोत्सव करके शुभ लग्न में तिस कन्या के साथ लग्न करा तब बहुत काल तक तिस के साथ में संसार संबंधी सुख भोग करके आखिर में सदगुरु के पास में दीक्षा ग्रहण करके भले प्रकार सेती संयम आराध करके समाधी से काल करके देव पद में प्राप्त भया यह तीसरे व्रत ऊपर नागदत्त का दृष्टान्त कहा। इस माफिक और भी भव्य जीव परम आत्मा की संपदा की वांछा करने वाले को चोरी का त्याग करना चाहिये। अब यहां पर तीसरे व्रत की भावना कहते हैं ॥

—इणमविचिंते अव्वं। अदिन्नादाणाउनिच्चविरयाणं॥
समतिणमणि मुत्ताणं। नमोस यासव्वसाहूणं॥ १ ॥

व्याख्या—पुरष याने श्रावक को ऐसा विचारना चाहिये जो अदत्तादान सें हमेसा दूर होते हैं फेर तृण और मणि तथा मोती वगैरे जिनों के बराबर है ऐसे सर्व साधू

महाराज को नस्कार हुवो ॥ १ ॥ यह तीसरा व्रत भावित करा ॥ ३ ॥ अब चौथा स्थूल मैथुन विरमण व्रत निरूपण करते हैं स्थूल जो मैथुन याने काम क्रीड़ा तिस सेती दूर होना तिसको स्थूल मैथुन विरमण व्रत कहते हैं याने गृहस्थ के पर स्त्री का त्याग होता है सो कहते हैं ॥

—ओरालिय वेउव्विय । परदारा सेवणं पमुत्तूणं ॥
गेही वओच उत्थे । सदारतुट्ठिं पविज्जिज्जा ॥ २६ ॥

व्याख्या—ऊदारिक संबंधी तथा वैक्रिय संबंधी तथा पर स्त्री तथा मनुष्य और देवतों की देवांगना तथा परणी भई और संग्रह करी भई भेद करके अपनी स्त्री तथा तीर्यंचणी और अन्य स्त्री तिनों का सेवन छोड़ करके गृहस्थ जो है सो चौथे व्रत में अपनी स्त्री ऊपर संतोष रक्खे जैसे पर स्त्री तथा वेश्या उनका भी त्याग करना और केवल सादी करी भई स्त्री ऊपर स्त्री पणें का भाव रक्खै यह मतलब जानना चाहिये अब यहां पर शिष्य प्रश्न करता है श्रावकों को वैर विरोधादि दोष के कारण सेती पर स्त्री की संगत अच्छी नहीं सो तो ठीक है मगर जिका स्त्री नदी के पानी की तरह से साधारण उसको कहते हैं जैसे नदी का पानी हरेक लेके पी लेता है इसी तरह से वेश्या भी द्रव्य की है जो द्रव्य देता है वोई गमन कर लेता है इस माफिक साधारण स्त्री जो वेश्या है तिसको गमन करे तो क्या दोष है ऐसा मत कहो तिस सें उपभोग करने में सर्व दुरा चार की शिक्षा का मूल कारण है तथा इस लोक में पर लोक में महा दुक्ख का कारण है इस वास्ते वेश्या का भी त्याग करना चाहिये तथा फेर इसी बातको पुष्ट करते हैं ॥

—जंपंति महुर वयणं । वयणंदंसंति चंदमिवसोमं ॥
तहविन वीससिअव्वं । नेहविमुक्काणवेसाणं ॥ २७ ॥

व्याख्या—जो पिण वा वेश्या मिश्री मिली भई दूध की तरह से मीठे वचन बोलती है तथा चन्द्रमा की तरह से सौम्य मुखार विंद दिखलाती है तो भी स्नेह रहित वेश्या का विश्वास नहीं करना चाहिये तथा फेर भी इसी बात को पुष्ट करते हैं ॥

—माजाणह जहमउअं । वेसाहिअ अंसमम्मणुल्लावं ॥
सेवाल बद्ध पत्थर । सरिसंपडणेण, जाणिहसि ॥ १ ॥

व्याख्या—अरे मेरे प्यारे भाइयो उस वेश्या का कोमल वचन सुन के उसके फंदे में मत फसो और उन वचनों को कोमल मत समझो तथा उस वेश्या का मन्मन उल्लाप याने वार्त्ता लाप याने वेश्या दोस्त को प्रसन्न करने के और द्रव्य लेने के वास्ते कई तरह का मन मन उल्लाप करा करती है वेश्या का गमन किस माफिक है जैसे सेवाल से बांधा भया पत्थर पानी में जल्दी डुबोवै इसी तरह से वेश्या भी संसार रूपी समुद्र में डुबाने वाली है ऐसा जान करके मेरे मित्र प्यारे वेश्या का त्याग करो ॥ १ ॥ तथा अब यहां पर दृष्टान्त सहित वेश्या को नहीं सेवन करना दिखलाते हैं ॥

—तहअम्मापिउमरणं । सोऊणं दुग्हराय पुत्ताणं ॥
मणसाविनजाणिज्जा । दुरहिणि वेसाउ वेसाओ ॥ २८ ॥

व्याख्या—दोनों राजपुत्र आगूं बतलाते हैं सो तिस प्रकार करके तथा माता पिता का मरण सुन करके तथा उलखाण सेती तथा दोनों ने अपनी आत्मा की निंदा सुन करके ऐसा वेश्या का दुक्ख जान करके विवेकी पुरषों को दुष्ट अध्यवशाय की धरने वाली वेश्या को मन करके नहिं मानना चाहिये वचन काया करके तो त्याग है ई मगर मन करके भी विश्वास नहीं करणा तथा सुनने में आता है श्री शांतिनाथ चरित्र में सो यहां पर दृष्टान्त दिखलाते हैं रत्नपुर नगर में तहां पर सोलमें तीर्थंकर का जीव अति सौभाग्य करके युक्त श्री षेण नामें राजा तिस के अभिनंदिता और शिखिनंदिता दो रानियें थीं तिस राजा के दोय कुमर भये तिनों को उपाध्याय ने पढ़ाया मगर चित्त का निरोध होना मुशकिल तथा काम देव रूप वीर का दुर्ज्जयपणा तथा गुरु की शिष्या का त्याग करके अपनी प्रसिद्धि कों नहीं गणना करके लज्जा मर्ते त्याग करके तिस नगर में रहने वाली तथा रूप करके देवांगना को जीतने वाली अनंग सेना नामें वेश्या के साथ आसक्त हो गये तब पिता ने एकान्त में शिक्षा दिई कि हे पुत्र यह यौबन उमर में तुम लोगों ने क्या अनुष्ठान अंगीकार करा है इस सिवाय मान भंग होने का कारण और कोई भी नही है जो भोले हृदय के धरणे वाले तुम लोग कुल वान वहू का त्याग करके परमार्थ सेती स्नेह रहित वेश्या तिसके विषै अनुराग बांधते हो इस माफिक पिता ने शिक्षा दिई लेकिन उस शिक्षा कों नहीं [illegible] घात घोड़े की तरह से तथा आलान खंभ उखाड़ [illegible] हाथी [illegible] उस हाथी की तरह से अपनी इच्छा पूर्वक वेश्या का विहार कर रहे [illegible] वक्त द्रव्य की अभिलाषा करके आपस में सिपाइयों [illegible] तलवार ग्रहण करके लड़ने लगे निर्लज्ज होके [illegible]

लगे तथा असाध्य रोग में ग्रस्त हो गये हो तथा प्रधान पिशाच छलने की तरह से खूब युद्ध करा इस माफिक उन दोनों लड़कों का अशक्य इलाज देख करके तिनों के दुक्ख सेती तिस श्री खेण राजा ने काल कूट जहर भक्षण करा तिससे काल कर गया अब वो दोनों लड़के लोगो में निंदा पाके आपस में लड़ाई करके महा दुःख के भजने वाले भये इस माफिक वेश्या के व्यसन का दुःख करके अंत आता है. इस वास्ते सुबुद्धियों को अंगीकार करणा न चाहिये तिस वजे से पर स्त्री तथा साधारण स्त्री वेश्या उनसे काम की संगत त्याग करना चाहिये श्रु श्रावक को अपने स्त्री के ऊपर संतोष रखना चाहिये मगर काम में अंधा होना श्रावक को उचित नहीं तथा शास्त्र में भी इतने प्रकार के अंधे दिखलाये हैं सो कहते हैं गाथा द्वारा॥

—कामं कामं धेणं। पसावराणं कयाविहोयव्वं॥
देहधणधम्मरकयकरिणीहि। कामंमिअइगिद्धी॥ २६॥

व्याख्या—श्रावक को कबी भी काम में अंधापण गोया अत्यंत मैथुन अभिलाषा तिस करके अंधे की तरह से अंधा होना विवेक आच्छादन याने ढक जाने से काम में अंधा होना श्रावक को उचित नहीं तथा काममें अंधा हो जाते हैं उनका दोष बतलाते हैं जिस काम में अत्यंत गृद्धतापणा गोया अत्यंत लंपट पणा तथा लो लुपीपना करने से क्या होता है कि देह याने शरीर और धन तथा धर्म इन तीनों के क्षय होने का कारण रहा है इस माफिक काम में अंधा होना उस में पूर्वोक्त दोष जान करके अपनी स्त्री पर भी अत्यंत मूर्छा श्रावक को नहीं करना चाहिये यहां पर पुरुषों को अंगीकार करके शील का स्वरूप दिखलाते हैं गाथा द्वारा॥

—जह नारी उन राणं। तह ताणनराविपासभूयाओ॥
तम्हानारीओ विहु। परपुरिससंगमुभंति॥ ३०॥

व्याख्या—इस संसार रूप वागमें चरने वाले हिरणों की तरह से पाश भूत इसी तरह से मनुष्यों के स्त्री तिसी तरह से स्त्रियों को भी अपने भर्त्तार से, जुदा पर पुरुष का त्याग करना चाहिये विघ्न करने वाली गोया उसमें बाधा करने वाली जानना चाहिये जैसे मृगों को फास देना दुखदाई है इसी तरह से मनुष्यों के स्त्री है सो एक पाश सरीखी जाना चाहिये काम देव की आशा सर्व सरीखी जानना चाहिये जिस वास्ते शील के अभिलाषी पुरुषों को पर स्त्री का संग त्याग करना चाहिये तथा पर पुरुष

के साथ वैंठना तथा मुख दिखाना तथा मन मन उल्लाय कहिये भाषण गोया बोलचाल इत्यादिक कामदेव को जागृत करने का कारण है इत्यादिक कार्य का त्याग करना चाहिये कहने का मतलब यह है कि गोया ब्रम्ह व्रत धारणों वाली स्त्री को भी पति सिवाय पर पुरष के साथ वैंठना वौलना इत्यादिक त्याग करना चाहिये गोया जिस स्त्री के भत्तीर नहिं रहा हो उनको सर्व पुरप मात्र का त्याग करना उचित है अब कहते हैं कि श्रुशीलवान् और दुःशीलवान् उनो का अंतर गाथा करके कहते हैं॥

गाथा—ते सुर गिरि णोवि गुरु। जेसिंसी लेण निम्मला बुद्धि॥ गयसील गुणे पुण मुण। मणुएतणुए तिणा ओवि॥ ३१॥

गाथा—वग्घाइया भयद्वा। दुट्ठाविजियाणअशीलवं ताणं॥ नियछायं पिनिर रिकय। सासंकाहुं तिगय शीला॥ ३२॥

व्याख्या—वे पुरुष याने शीलवान् पुरुष होते हैं वे मोटे हैं कौण याने जिणों की बुद्धि शील करके निर्मल है वे पुरुप मे रूपर्वत इतने मोटे हैं याने मेरू पर्व्वत तो एक लाख जोजन काई है मगर शीलवान् पुरुप मेरू पर्वत सेती मोटा है उन्हों का यश तीन भुवन के विपय व्यापी हो जाता है अब क्या कहते है गत शील याने शील रहित ऐसे जो मनुष्य तृण से भी हल्के हैं याने घास का तिण हलका है सो हवा से उड़ करके कहां भी पर्वत या पापाण के ऊपर जाके ठैर जाता है मगर कुशी लीया तो वहुत संचय करा भया खोटे कर्म उनकी प्रेरणा करके तीनलोकमें भ्रमता फिरेतो भी स्थान मिलना मुसकिल है इस वास्ते कुशीली या तृण से भी हलका कहा जाता है तथा जो शीलवान् पुरुष हैं उनको वाघ और अग्नि और पिशाचादिक जीव भय देने वाले नहीं हो सक्ते हैं तथा गतशील पुरुप याने शील रहित पुरुप अपनी छाया को देख करके समझता है कि यह हमारे खोटे कर्म को देखने वाला यह कोई पुरुप है क्या है ऐसी अपनी बुद्धि की कल्पना करके भयवंत हो जाता है सोई नीति में कहा है कि॥

—सर्वत्र श्रुचयो धीराः। स्वकर्मवलग विंताः॥ कुकर्म निर तात्मानः। पापाः सर्वत्र शंकिताः॥ १॥

व्याख्या—सर्व जगे धीर पुरुप है सो हमेशा श्रुची है अपने कर्म रूप वल के गर्व

में जहां जावे वहां पर धीरवान रहते हैं गोया किसी से डरते नहीं और कुकर्म में रक्त हैं ऐसे पापी लोक सर्व जगें शंका सहित रहा करते हैं तथा यहां पर कहा गया कि शीलवान् को भय किसी काई होता नहीं सोई विशेपता दिखलाते हैं सो गाथा करके ॥

गाथा—जलण विजलं जलहिवि । गोपयं विसहरा विर ज्जुओ ॥ सील जुआणंमत्ता । करिणो हरिणो वमाहुंति ॥ ३३ ॥

व्याख्या—शीलवान पुरुष के अग्नि तो जल हो जाता है तथा समुद्र जो है सो गो के पांव समान हो जाता है तथा सर्प जो है सो रस्सी समान हो जाता है तथा शीलवान पुरुष के मस्त हाथी जो है सो मृग समान हो जाता है इस माफिक शील कैसा है कि समस्त कष्ट आपदा को मिटाने वाला है ऐसा दिखला के अब वांछित अर्थ का लाभ होना निरूपण करते हैं ॥

—वित्थरइ जसं वड्ढइ । वलंच विलसंतिविविह रिद्धीओ ॥ सेवंतिसुरासि भंति । मंत विज्ञाय सीलेण ॥ ३४ ॥

व्याख्या—तथा शीलवान पुरष की कीर्ति फैलती है तथा जिसकी वृद्धि होती है तथा वलवान होता है तथा नाना प्रकार की रिद्धि प्राप्त होती है तथा देवता सेवा करते हैं ॥ और मंत्र और विद्या सिद्ध हो जाती है अवशील वान के सर्व अलंकार सहित सार पणा दिखलाते हैं ॥

—कि मंडणेहिं कज्जं । जइ सीलेणंअलंकिओदेहो ॥ कि मंडणेहिं कज्जं । जइ सीले हुज्ज संदेहो ॥ ३५ ॥

व्याख्या—मंडण करके क्या प्रयोजन है अगर शील गुण करके शोभायमान शरीर है ती अगर मुख्य करके शील रूप श्रंगार धारण करा है तो फेर और श्रंगार करने की जरूरत नहीं हैं ॥ ३५ ॥ तथा शील रूप आभूपण धारण करने सेती और आभूपण धारण करने की जरूरत नहीं है कारण शील रहित भार समान है अब शिष्य प्रश्न करता है कि पुरष का तो दृढ़ मन रह जाता है इससे सील पाल भी शक्ते हैं मगर

स्त्रीयों का मन तुच्छ और चपल स्वभाव होता है तथा फेर पुरषों के आधीन रहती है इस वास्ते तिन स्त्रियों में शीलपणा कैसे हो सकता है अव गुरू उत्तर देते हैं ऐसा मत कहो सर्व स्त्री भी एक स्वभाव वाली नहीं होती हैं उन स्त्रियों में भी वहुत सी शील करके सहित और धर्म अनुष्ठान करने वाली शास्त्र में सुनते है सोई दिखलाते हैं ॥

—नारी ओवि अणेगा। शील गुणेणं जयम्मि विरकाया॥ जासिंचरित्त सवणे। मुणिणोवि मणे चमक्कंति ॥ ३६ ॥

व्याख्या—स्त्री भी अनेक हो गई हैं शील गुण करके जगत में प्रसिद्ध फेर जिन स्त्रियों का चरित्र सुनने से मुनि राज भी मनमें चमत्कार मानते हैं चमत्कार का क्या चिन्ह है गोया मुनीराज भी ऐसी सतीयों को प्रणामादिक करा है सो दिखलाते हैं ॥

—अज्जा ओ बंभि सुंदरि। राई मई चंदणा पमुरकाओ॥ कालत्तएविजाओ। ताओविन मामिभावेणत्ति ॥ १ ॥

व्याख्या—आर्या व्राम्ही ओर सुंदरी तथा राजी मति तथा चंदना प्रमुख तीनों काल के वीचमें उत्पन्न भई उनको भाव करके नमस्कार करा है यहां पर कहते हैं कि धर्म तो पुरषों से उत्पन्न भया है और ग्रन्थ को पुरप करने वाले इस वजह से पुरपों के स्त्री है सो पाश समान है यह व्यवहार नय के आलंवन कर के प्राये परम रिषीयों ने स्त्री की निंदा करी है सो कहते हैं ॥

—सो असिरी दुरिय दरी। कवड कुडी महिलिया किलेस करी॥ वइर विरोअण अरणी। दुरक खाणी सुरक पडिवरका ॥ २ ॥

व्याख्या—वास्त्री कैसी है शोक की लक्ष्मी कष्टकी दरी कपट की कुटी इस माफिक स्त्री क्लेस की करने वाली तथा वैर विरोध की अरणी याने अरणी एक काष्ट होता है सो चमक पत्थर के संजोग से आग पड़जाती है सो स्त्री भी पर घरमें आग लगाने

वाली जानना चाहिये ॥ तथा फेर स्त्री कैसी है कि दुक्ख की खाणि और सुक्ख की प्रति पक्षी याने केवल दुःख की देने वाली है तथा निश्चय नय करके विचार करोगे तो पुरष वा स्त्री दोनो निंदा के योग्य नहीं कारण अुशीलता गुण और दुःशीलता गुण यही कर्म बंध और निंदा का कारण है तथा शील गुण तारीफी का कारण और कुशीलनिंदा का कारण है और कोई भी नहीं है अब शील और कुशील दोनों दिखलाते हैं ॥

—इत्थिंवा पुरिसंवा । निस्शंकं नमसुशील गुण
पुट्टं ॥ इत्थिंवा पुरिसंवा । चयसुलहुंशील पभट्ठं ॥ ३७ ॥

व्याख्या—स्त्री हो चाहे पुरष हो मगर शंका रहित शील गुण के पीछे नमस्कार करने लायक है तथा स्त्री हो चाहे पुरष हो अगर शील करके भ्रष्ट है तो त्याग करने लायक तथा निंदा करने लायक समझना चाहिये अब प्रथम सील का फल दिखलाते हैं ॥

—आरोगं सोहगं । संघयणं रूवमा उवलमउलं ॥
अन्नंपिकिं अदिज्जं । सीलव्वय कप्परुक्कस्स ॥ ३८ ॥

व्याख्या—शील गुण करके शरीर की आरोग्यता तथा सौभाग्य पणा तथा अच्छा संघयण तथा रूपतथा दीर्घ आयू तथा बल पणा और भी सर्व पदार्थ मिलते हैं गोया नहीं देने लायक कोई भी पदार्थ बाकी रहा नहीं शील रूप व्रत साक्षात कल्प वृक्ष समान जानना चाहिये ॥ ३८ ॥ अब प्रथम कुशीलता का फल दिखलाते हैं ॥

—पाडुत्तं पंडत्तं । दोह गाम रूवयाय अवलत्तं ॥
दुस्सीलयालयाए । इणमो कुसुमंफलं । नरयं ॥

व्याख्या—कुशीलवान के कोड रोग हो जाता है, तथा पांडुरोग तथा पंडत्वं । क्लीवत्वं याने नपुंशक पणा, तथा दौर्भाग्यपणा, कुरूपपणा, बलहीन पणा. तथा कुशील रूप वेलका यह तो फूल है और आगूं फल नरक मिलेगा अबयहां पर चौथे व्रत को दृष्टान्त सहित दिखलाते हैं ॥

—चालणिजलेणचंपा । जीणउग्घाड़ियंकवाड़तिथं ॥

कस्सन हरेइचित्तं। तीए चरियं सुभ द्दाए॥

व्याख्या—जिस सुभद्राने सूत की चालनी करके कुये से जल निकाल करके तिस जल करके चंपा नगरींका तीन किंवाड़ उघाड़े तिस सुभद्रा केचरित्र किसपुरुष के चित्त को हरण नहीं करता अव निश्चय करके सर्व के चित्त को हरण करता है यह सर्व शील का महात्म जानना चाहिये अव यहां पर चतुर्थ व्रत के ऊपर सुभद्राका दृष्टान्त कहते हैं बसंतपुर नगर में जिन दास नामें श्रावक रहता था तिस के अत्यंत शील वल्लभ जिन मती नामें स्त्री थी तिनोंके सुभद्रा नामें पुत्री थी वा वालक अवस्था से शुद्ध सम्यक्त धारने वाली महा श्रावकणी होती भइ तिस के रूपमें मोहित होके वहुत मिथ्या त्वि वणियों के लड़कों ने सादी के वास्ते प्रार्थना करी मगर कागको दूध से धोणें के वतौर मिथ्यात्वि होने के सवव से तिनों को जिन दास ने नहीं दीवी अव एक दिन के वक्त में बौद्ध धर्म को जानने वाला बुद्ध दास नामें वणियें का लड़का व्यापार के वास्ते चंपा नगरी में आया वो एक दिन के वक्त व्यापार के वास्ते सेठ के घरमें आया वहां पर तिस सुभद्रा को देख करके पाणि ग्रहण करने के वास्ते मांगी मगर सेठ ने तिस को मिथ्या दृष्टि जान करके तिसको नहीं दी तव वो कन्या के वास्ते कपट करके जैन के मुनी की सेवा करने से श्रावक का आचार सीख करके कपट से श्रावक हो गया श्रद्धा विगर भी हमेशा देव पूजा साधू की सेवा तथा आवश्यकादिक धर्म कृत्य करता भया तव तिस की जिन दास सेठ के साथ मित्राई होगई तव सेठ भी मित्र और साधर्मी समझ करके तिस को सुभद्रा परणा दीवी तव बुद्ध दास तिस सुभद्रा के साथ विषय सुख भोगने पूर्वक सुख से काल व्यतीत कर रहाथा तहां पर वहुत द्रव्य पैदा करके अपने देश जाने के वास्ते एक रोज विनय सहित सुसरे से पूछा तव सेठ वोला कि हे पुत्र तुमने श्रेष्ठ कहा मगर तुमारे माता पिता वैधर्मी गोया विरुद्ध धर्म वाले हैं इस वास्ते कहते है वे दोनो भैंषा और घोड़ा उन दोनों की तरह से वैर विरोध कैसेसहा जायगा तव बुद्ध दास बोला कि जुदे घरमें रखूंगा इसके वारे में आप चिंता मत करो और मुझे जाने की आज्ञा दीजिये तव सुसरें ने कहा कि तुमारे रस्ते में कुशल हुवो तव वो सुसरे के आदेस सेती सुभद्रा के साथ सवारी पर चढ़करके और चलते २ चंपा नगरी में जाके तिस सुभद्रा भर्ते जुदे मकान में रख करके आप अपने घरमें जाके माता पिता सेती मिला और तिनों के सामने सर्व हकीकत प्रथम का वृत्तान्त कह करके अपने काम में तत्पर होके अपने घरमें रहने लगा अव वा सुभद्रा तहां पर रह के कपट रहित अर्हंत का धर्म सेवन करती भई काल गमा रही है मगर तिस सुभद्रा की सासू और ननद यह दोनों सुभद्रा का छिद्र देखती रहती हैं

इस माफिक काल जाने सेती एक दिन के वक्त भात पाणी के वास्ते साधू महाराज तिस सुभद्रा के घर में आये तब सासू ननद ने बुद्ध दाससे कहा कि अहो भाई तुम्हारी औरत जैन मुनी के साथ रमण कर रही है तब बुद्ध दास बोला कि अहो तुम ऐसा मत कहो जिस वास्ते या महासती और उत्तम कुल वाली है तथा जैन धर्म में रक्त है इस वास्ते या कुशीला नहीं है तुम धर्म के द्वेष करके ऐसा कहती हो मगर तुम को ऐसा बोलना लाजिम नहीं ऐसा बुद्ध दास का वचन सुन करके अत्यंत द्वेष करके विशेष सेती सुभद्रा के छिद्र देखना शुरू करा अब एक दिन के वक्त में तिस सुभद्रा के घर में भिक्षा के वास्ते साधू आया मगर तिस के आंखमें पवन से उड़ करके तणखा गिर गया, मगर जिन कल्पी साधू होने से शरीर का संस्कार करते नहीं इस वास्ते तणका निकाला नहीं तब भिक्षा देती दफै सुभद्रा तिस साधू के आंख में तकलीफ देख करके अपनी जीभ के अग्र भाग करके चतुराई पूर्वक उस तृण को निकाला तिस वक्त में तिस सुभद्रा के कुंकुम का तिलक ललाट में लगा हुवा था सो उस मांय से कुछ कुंकुम तिसके ललाटमें लगगया तब घर सेती बाहर साधू निकल कर जा रहे थे तब मुनीके ललाट में लगा हुवा तिलक देख करके बुद्ध दास की माता ने पुत्र प्रतें बतलाया और कहने लगी हे पुत्र अपनी वहू का शील देख तब बुद्ध दास भी तिस पहिचान के बल से तिस माताका वचन अंगीकार करा उसी दिनसे तिस सुभद्रा से विरक्त हो गया अब वा सुभद्रा सती है सो अपने पति को स्नेह रहित जान करके दिल में बहुत उदास हो गई अहो इति आश्चर्ये मेरे निमित्त से श्री जिन शासन के विषय अकस्मात् याने अचानक यह अपवाद याने अफवाय गोया एक प्रकार की निंदा उत्पन्न भई अब अगर अपना जीवित पण त्याग करके भी यह अफवाय दूर हो जाय तो श्रेष्ट है ऐसा विचार करके इस माफिक अभिग्रह याने नियम करा जब तक यह मैल तथा निंदा दूर नहीं होगी तब तक काउसग्ग पारूंगी नहीं तब श्री जिन पूजा करके शासन देवी को मन में याद करके तथा ध्यान करके स्याम की वक्त अपने घर के एकान्त जगह काउसग्ग ध्यान में रही तब उत्तम ध्यान के प्रताप से याने एक खेंच करके लाई इस माफिक शासन देवी प्रगट होके प्रीति पूर्वक तिस सुभद्रा प्रतें कहने लगी हे पुत्री तेरे बुलाने से मैं यहां आई जल्दी कहो क्या तेरा मन वंछित पदार्थ की इच्छा है करने को मैं हाजिरहूं या बात सुन करके सुभद्रा भी काउसग्ग छोड़ करके प्रसन्न होके तिस देवी प्रतें नमस्कार करके कहने लगी हे देवी शासन सम्बंधी यह कलंक भया है सोइसको दूरकरो तब देवी बोली हे पुत्री तूं खेद मत कर तेरा कलंक दूर करना और श्री जिन शासन की प्रभावना के वास्ते सवेरे सर्व कार्य शुभ करूंगी याने सवेरे सर्व तेरे मन के माफिक सर्व काम श्रेष्ठ करूंगी। तूं चिंता रहित शयन कर ऐसा कह करके

देवी अपने ठिकाने चली गई अब सुभद्रा भी निद्रा लेके सवेरे जागी देव गुरु का स्मरण पूजादिक नित्य कृत्य करे अब सवेरेके वक्त में द्वारपाल याने दरवाजे के सिपाई लोग उन दरवाजों को खेंच के खोलने लगे मगर शहर के दरवाजे का किंवाड़ गोया फाटक कोई प्रकार करके उघड़ी नहीं याने खुल्ली नहीं तब समस्त पुरुष और जानवर पशु वगैरा तथा सब शहर के लोक भूख और प्यास से आकुल व्याकुल हो गये तब राजा भी बहुत व्याकुल हो गया, तब राजा ने भी गोया देवता का करा हुवा कृत्य जान करके आप शुची होके धूप खेवणे पूर्वक दश अंगुली बांध करके नमस्कार करके कहने लगा श्रवण करो भो देव दानव गणों जो कोई मेरे पर कोप किया होतो धूप दीप पुष्पादिक बलिदान लेके प्रसन्न हो जावो ऐसा राजा का वचन सुन करके आकाश मेंसे इस माफिक वचन प्रगट भया सो लिखते हैं ॥

—जल मुद्धृत्यचालिन्या । कूपतस्तंतुबद्धया ॥ का चित्शी
लयुता नारी । कपा टांश्चलु कैस्त्रिभिः ॥ १ ॥

व्याख्या—कच्चे तार सूत के गुण की चालनी बना करके उस चालनी में कुए से जल लेके कोई एक शीलवान् सती अगर तीन चलू पानी लेके कपाट ऊपर फेंके तो ॥ १ ॥

—आछोट यति चेत् शीघ्र । मुद घटंते खिला अपि ॥
कपाटा द्वार देशश्था । नोचेवावि कदा चनेः ॥ २ ॥

व्याख्या—इस पानीके फेंकने से समस्त दरवाजे खुल जांयगे कब अगर कोई महा सती दरवाजेके पर बैठकरके तीन चलू पानी छींटेगी तो दरवाजे खुल जांयगे इस माफिक वचन सुन करके ब्राह्मणी, क्षत्रियाणी, वणियाणी, शूद्रणी, प्रमुख बहुत नगर की स्त्रियां कुए के किनारे आकर के सूत्र की चालनी लेके पानी निकालने लगी मगर कच्चे सूत के तार टूटने से चालनी गिर जावे जब जल नहीं निकले तब उदास हो करके अपने २ ठिकाने पर चली गई तिस वक्त में विनयवान आत्माके धारने वाली सुभद्रा अपनी सासू प्रतें मधुर स्वर करके कहने लगी हे माता तुम्हारी आज्ञा होतो मैं चालनीसे जल निकाल करके तिस प्रकार दरवाजा छींटूं ऐसी इच्छा है तब सासू बोली हे जैन मुनी की सेवा करने वाली तेरा सतीपना तो हमने पेस्तर ही देख लिया था अब इस वक्त में सर्व लोगों को जानने से क्या प्रयोजन है और यह सर्व नगर की स्त्रीं शहर के दरवाजे उघाड़ने को

समर्थ नहीं भई तो तूं कैसे सामर्थवान होगी तब सुभद्रा बोली हे माता तुमने बात तो युक्त कही तो भी मैं पांच आचार करके परीक्षा तो करूंगी इस बारे में तुम मना मत करना ऐसा कह करके महा सती तथा उस वक्त में ननद वगैरे हांसी कर रही हैं मगर सुभद्रा ने स्नान किया फेर देव पूजन तथा गुरु पूजन करके कुए के किनारे जाकर के नवकार मंत्र उच्चारण करके शासन देवी को स्मरण करके सूर्य के साम्हने होके इस माफिक कहने लगी अगर मैं जैन धर्मिणी हूं और शील रूप अलंकार की धरने वाली हूं तब तो इस चालनी करके कुए से जल निकल आवेगा ऐसा कह करके सूत के तंतुवों से चालनी बांध करके कुए में डार करके उसी वक्त जल खेंचा तब यह शील का प्रभाव देख करके सपरिवार सेती राजा दोकों हाथ जोड़ करके आगूं बैठ करके इस माफिक वचन कहा हे पतिव्रता व्रत की धारने वाली शहर के दरवाजे उघाड़ और सर्व का संकट दूर कर तब सुभद्रा भी ऐसा राजा का वचन सुन करके शहर के लोग सहित खिल रहा है मुख और नेत्र जिस के तथा वंदिजन लोग जय२ शब्द कर रहे हैं प्रथम से दक्षिण दिशा का शहर दरवाजा हैं तहां जाके परमेष्ठि नमस्कार मंत्र उच्चारण कर रही है वहां पर तीनचलू पानी दरवाजे पर छींटा तब जांगली लोग याने सांप पकड़ने वाले उनके मंत्र सेती जहर दूर हो जावे इसी तरह से सती के प्रभावसेती सहर के दरवाजों का किंवाड़ जल्दी उघड़ गये और आकाश में देव दुंदुभी बाजा बजने लगे सहर के लोग प्रसन्न भये देवतों ने जिन धर्म अंगीकार करके जय २ शब्द करते भये इसी तरह से पश्चिमऔर उत्तर दिशा की पोल का दरवाजा उघाड़े बाद सुभद्रा बोली मैंने तीन दरवाजे उघाड़े अब और स्त्री सती पणें का अभिमान रखती हो तो वा यह चौथा दरवाजा उघाड़ो मगर किसी ने उघाड़ा नहीं वो दरवाजा अभी तक बंध है ऐसा सुनते हैं तथा अब सासु और ननद को आदिले के जितने दुर्जन थे उन का श्याम मुख याने काला मुख हो गया तब अपनी स्त्री का शील देख करके भर्त्तार का मुख शरद के चन्द्रमा की तरह से विकस्वर मुख हो गया तब सहर के लोग स्तवना करने लगे तब फेर उस सुभद्रा सती को नगर का राजा अच्छा वस्त्र और दागीना वगेरे दान पूर्वक वड़े महोच्छव करके अपने मकान में पहुंचाई तब तिस महा सती ने सर्व राजा को आदि लेके लोगों को जैन धर्म अंगीकार कर वाया तिस सती प्रतें नमस्कार और स्तुति करके अपने ठिकाने गया तब पश्चात्ताप करके कुटुंब ने भी जैन धर्म अंगीकार किया तब बुद्ध दास नामें तिस सुभद्रा के पती ने भी तिस दिन से लेके प्रति बोध पूर्वक सत्य श्रावक हो करके प्रीत सहित तिस सुभद्रा के साथ सुखें करके काल व्यतीत कर रहा था इस तरह से दोनो स्त्री भर्त्तार बहुत काल तक गृहस्थ धर्मपाल करके आखिर में संयम आराधन करके उत्तम गती भजने

वाले भये यह चौथे व्रत के ऊपर सुभद्रा का दृष्टान्त कहा ॥ इस माफिक शील महिमा सुन करके और भी भव्य जीव तिस शील पालन करणें के विषै आदर वंत होना ॥ अब यहां पर चोथे व्रत की भावना दिखलाते हैं एक गाथा करके सो गाथा लिखते हैं ॥

गाथा—चिंतेअव्वंचनमो तेसिंति विहेण जेहिअव्वंभं॥
चत्तअहम्ममूलं । मूलंभव गम्भ वासाणं ॥ १ ॥

व्याख्या—श्रावक को ऐसा विचार करना चाहिये जिनोंने मन वचन काया करके कुशील का त्याग कीया कैसा है कुशील गोया अधर्म का मूल तथा फेर गर्भा वास का मूल ऐसा दुक्ख कारक कुशील जान करके भव्य जीव त्याग करने का उद्यम करें इस माफिक चौथै व्रत की भावना दिखलाई ॥ ४ ॥

अब पांचमा स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत निरूपण करते हैं ॥ स्थूल याने मोटा ऐसा जो परिग्रह तिस सें दूर होने रूप जो व्रत है तिसको स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत कहते हैं सो क्षेत्र कों आदि लेके नव प्रकार का परिग्रह का परिमाण होता है सो दिखलाते हैं ॥

—गेही गिहिमणंतं। परिहरियपरिगहिनवविहंमि ॥
पंचमव एपमाणं। करेज्जइच्छाणु माणेणं ॥ ४१ ॥

व्याख्या—पांचवें परिग्रह विरती रूप व्रत में गृहस्थ जो है सो अनंत गृद्धि तथा वांछा को त्याग करके नवप्रकार के परि ग्रह का परिमाण करना कि इतने मेरे को मोंकला है अबपरिग्रह का नव भेद पणा दिखलाते हैं ॥ क्षेत्र, वस्तु, हिरण्य याने सोना, धन, धान्य, द्विपद याने दाश दासी तथा चोपद ढोर गाय, भैंस वगैरे तथा कूपवरतणादिक भेद करके तहां पर कहते हैं कि क्षेत्र किसे कहते हैं ॥ सेतू १ केतू २ और उभय गोया दोनों मिलने से उभय कहते हैं तहां पर सेतू नाम खेत का है जिसको अरट आदि जलसे सींचते हैं १ केतू खेत गोया आकाश का पाणी पड़ने से धान्य पैदा होता है २ उभय खेत किसको कहते हैं दोनों तरह से जलसींच करने सेती जो धान पैदा होता है ॥ ३ ॥ तथा वास्तु किसे कहते हैं घर है, दुकान है तथा ग्राम और नगरादिक तहां पर घर तीन तरह का होता है ॥ खात १, उच्छित २ और उभय ३ भेद करके तहां पर

खात याने भूं घर को आदि लेके १ तथा उच्छित। याने प्राशाद गोया देवल आदि २ उभय किस को कहते हैं भूमि घर के ऊपर रहा भया देवलादिक ३ तथा हिरण्य रूपे का नाम है और सोना प्रसिद्ध है ॥ तथा धन गणि मादिक करके चार भेद रहा है तहां पर गणिम किस को कहते हैं सो पारी १ जाय फलादिक तथा धरिम किस को कहते हैं कुंकूं आदि लेके तथा मेय किस को कहते हैं घृत और लवण आदि लेके तथा परिच्छं किसको कहते हैं रत्न वस्त्रादिक ॥ ४ ॥ तथा धान वीहि को आदि लेके सतरे प्रकार को ॥ ग्रन्थन्तर में चोवीस प्रकार का भी धान लिक्खा है सो दिखलाते हैं ॥

—व्रीहियवोमसूरो । गोधूमो मुद गमाश्चतिल
चणकाः ॥ अणवः प्रियंगु कोद्रवः । मकुष्ट

व्याख्या—व्रीहि १ जव २ मसूर ३ गेहूं ४ मूंग ५ उड़द ६ तिल ७ चणा ८ अणूवा ९ प्रिफंगू १० कोदू ११ मकुष्टक १२ शालि १३ तथा सुंअर १४ ॥

काशालिराढक्यः ॥ १ ॥
—किंचकलाय कुलत्थो । सणसप्त दशा न्सिर्वधा
न्यानि ॥

तथा फेर कलायरो १५ तथा कुलथे १६ और शाण १७ ॥ यह सतरे प्रकार का धान्य बतलाया ॥ तथा द्विपद याने स्त्री और दास दासी तथा सूवा सारिस को आदि लेके तथा चोपद गाय भैंस घोड़ा ऊंट को आदि ले के तथा कुप्य किसको कहते हैं गोया सोने का पलंग आसन रथ और गाड़ा हल मट्टी के बरतन थाली कटोरे इत्यादिक घर के उप गरण ॥

अब यहां पर शिष्य प्रश्न करता है परिग्रह का कैसे प्रमाण करना ऐसी शंका वाले को कहते हैं इच्छा के अनुमान करके अगर इच्छा की निवृति याने तृप्ति हो जावे तो तब नियम लैने की टैम में जितना परिग्रह रक्खा गया है सत्ता के विषै तिस से भी कमती करना और वाकी वचै तो धर्म स्थान में लगाना वा अथवा सत्ता के अनुमान करके नियम ग्रहण करते हैं आनंद को आदि लेके अगर जो इच्छा का रोधगोया रुकना नहीं होवेतो अपनी पूंजी से भी अधिक दूणा चौ गुणा मोकला करके रक्खें

बाकी नियम कर लेवे अब यहां पर कहते हैं कि जिस के घर में धन नहीं है उस परिग्रह का नियम लेने में क्या फायदा गोया वो नियम कैसा है मरुस्थल देस याने मारवाड़ थल भूमी वहांपर मट्टी ऐसी दिखाई देतीहै याने पानी पड़ाहुवा दिखाता है मगर नजदीक जाने से कुछ भी नहीं गोया इस माफिक वो नियम जानना चाहिये याने उस पानी में स्नान करनें वालेकी ऐक हांसी का घर है। अब कहते हैं कि हे भाई ऐसा मत कहो याने भाग्य के योग्य करके कोई कालांतर सें इच्छा के वरोवर क्षेत्रादिक संपदा भी हो जाने से अधिकाधिक आरंभ का कारण जानना चाहिये। अगर संपदा नहीं मिले तोभी नियम लेने से इच्छा का रोध हो जाता है इस वास्ते घरमें संपदा रहो चाहे मत रहो मगर नियम लेने से फल होता है सोई कहा भी है॥

—परिमिय मुव सेवंतो। अपरमिय मणं तयं परिहरंतो॥
पावइ परंमि लोए। अपरिमिय मणं तयं सुक्खं॥ १॥

व्याख्या—परिमाण करके सेवन करने वाला और अप्रमाण याने अनंत है तो भी त्याग करना चाहिये उस से क्या होता है याने इच्छा रोकने सेती परलोक में भी अपरिमित सुक्ख पावे यहां पर फेर भी शिष्य प्रश्न करता है इस परिग्रह के परिमाण करने से क्या होता है अगर इच्छा से अधिक वस्तु का लाभ होने से खुद ही इच्छा मिट जावी है ऐसा मत कहो अगर परिपूर्ण रिद्धीका लाभ होगया तोभी इच्छा तृश्नाकी तृप्ति नहीं होती है सोई दिखलाते हैं॥

गाथा—जह २ लहेइ रिध्धिं। तह २ लोहो विवड्ढएबहु
ओ॥ लहिउण दारुभारं। किंअग्गीकहविविभ्भाइ॥ १॥

व्याख्या—जैसे २ रिद्धि का लाभ होता जाता है तैसे २ लोभ भी बढ़ता जाता है जैसे आगमें लकड़ी डालते जाओ मगर अग्नि तो नहीं कहती कि अब लकड़ी मत डालो जब तक लकड़ी डालते जाओगे तब तक आग बुझेगी नहीं। १॥ अब परिग्रहको सकल क्लेश का मूल दिखलाते हैं॥

गाथा—सेवंति पहुंलंघंति सायरं। सायरंभमंति भुवं॥ विव
रंविसंतिनिविसंति। पिउवणेपरिग्गहे निरया॥ ४२॥

व्याख्या—परिग्रह याने द्रव्यादिक संचय करने में रक्त हो रहा है एकाग्र चित्त

करके प्राणी बहुत धनवान् मालिक की सेवा करते हैं तथा समुद्र लंघन करते हैं और जहां पर आदर भाव होवे वहां पर अपनी इच्छा पूर्वक पृथ्वी पर घूमा करता है तथा सिद्ध पुरष रशायण करने वाले तथा रसादिकके वास्ते पर्वत और गुफावों में प्रवेश करे तथा फेर मंत्रादिक की सिद्धी के वास्ते समशाण वगैरे में बसने लगते हैं जिस कारण परिग्रह समझ करके संतोष करना मुनासिब है संतोषवान् होते हैं अगर निर्धन भी हैं तो भी इन्द्र से अधिक सुख मानते हैं सोई दिखलाते हैं ॥

गाथा—संतोष गुणेण अकिंचणोवि । इंदाहियं सुहंलहइ ॥
इंदस्स विरिद्धि पाविऊण । ऊणोच्चियअतुट्ठो ॥ ४३ ॥

व्याख्या—पास में कंचन वगैरे नहीं है मगर संतोष गुण होने से इन्द्रसे भी अधिक सुक्ख मानता है तथा जिस के संतोष नहीं है अगर उन को इन्द्र समान भी रिद्धि मिल जावे तो भी दुक्खी जानना चाहिये । ४३ ॥ अब कहे हुये लक्षण परिग्रह परिमाण का स्वरूप और संतोषवान को दृष्टांत सहित विवेक मूल दिखलाते हैं ॥

श्लोक—विवेकः सद् गुण श्रेणी । हेतुर्निगदि तो जिनैः ॥
संतोषादि गुणः कोपि । प्राप्यते नहितं बिना ॥ ४४ ॥

व्याख्या—विवेक जो हैं सो उत्तम गुण के श्रेणी का कारण सर्वज्ञों ने फरमाया है और संतोषादिक गुण आये बिगर विवेक रूप गुण की श्रेणी का पाना मुसकिल है ॥ ४४ ॥

श्लोक—प्रादुर्भावे विवेकस्य । गुणाः सर्वेपिशोभनाः ॥
स्वयमे वाश्रयंतेहि । भव्यात्मानं यथा धनं ॥ ४५ ॥

व्याख्या—विवेक गुण के प्रगट होने से जितने गुण हैं वे सर्व शोभा के देने वाले होते हैं एक विवेक आने से सर्व गुण आश्रय याने प्राप्त हो जाता है धन सेठ की तरह से ॥

अब उस धन सेठ का दृष्टान्त कहते हैं । एक नगर के विषय श्री पति नामें महा धनवान सेठ रहता था तिस के धन नामें पुत्र था तिसकी शादी पिताने धानवान् के यहां करी एक दिन के वक्त में सर्व धर आचार्य महाराज तहांपर पधारे तब बहुत भव्य लोक

तिनोंको वंदना करनेके वास्ते गये तथा श्री पति सेठभी तहां पर गया, आचार्य ने देशना दीवी तहां परिग्रह परिमाण व्रत का स्वरूप विशेष करके वर्णन किया तब देशना के बाद उत्पन्न भया है विवेक ऐसा श्री पति सेठ ने आचार्य के पास परिग्रह परिमाण व्रत अंगीकार किया तथा और भी श्रावकोंने नाना प्रकारका नियम अंगीकार किया बाद वे सर्व लोक गुरू महाराज को नमस्कार करके अपने २ घर गये तिस बाद श्री पति सेठ अपने नियम लिया हुवा द्रव्य तिस से जुदा द्रव्य बचा उसको उत्तम धर्म स्थान के विषै लगाते भये तथा फेर उस सेठ ने वीतराग अर्हत का मंदिर बनवाने का बड़ा लाभ और बड़ा फल जान करके एक बड़ा भारी जिन मंदिर बनवाया, फेर तहां पर शुभ मुहूर्त में उत्तम परिकर याने परिवार करके शोभित श्री जिनेन्द्र देव की मूर्ति स्थापन करी तब निरन्तर श्री जिनराज की पूजा करे और सुपात्र को भक्ति करके दान देवे अनुक्रम करके आयू पूर्ण करके शुभ ध्यान पूर्वक काल करके उत्तम गती में गये तब स्वजन लोक इकट्ठे हो करके तिस सेठ का पुत्र धन नामें तिसको अपने पिताके पाट पर बेठाया मगर लोभ दशा से अति कृपण हो गया और निर्वेकी हो करके ऐसा विचारने लगा अहो इति आश्चर्ये मेरा पिता पगला हो करकै मंदिर बनवाया इत्यादिक कार्यों में वृथा ही द्रव्य खर्च कर करना बंध करके फेर नवीन द्रव्य पैदा करने के वास्ते उद्यम करना चाहिये ऐसा विचार करके अपने रहने के मकान को छोड़ करके सर्व घर दुकान वगैरे को बेच दिया तथा दास दासी प्रमुख आजीवका करने वाले उन सर्व को सीख दीवी तथा मंदिर पूजा प्रभावनादिक उत्तम धर्म कार्य को भी मना कर दिया खुद सेठ एक पुराणा वस्त्र पहिन करके खांधै ऊपरको थला रख करके इकेला होके तैल तथा गुड़ उनका खरीदना बेचना करने लगा और रोजगार के वास्ते गाम २ में घूमता फिरे तथा भोजन के वक्त में तेल करके सहित पुराणा कुलथी या वगैरे कानीरश आहार करनें लगा अब इस माफिक करते हुये को देख करके कुलवान और सुशीलवान् धन सेठ की स्त्री बहुत शीक्षा देवे मगर सेठ लोभ में पीड़ित होके तिस स्त्री का कहना प्रमाण नहीं करा तब कितने काल बाद पूर्वोक्त आचार्य महाराज पधारे तथा भव्य जीव वंदना करने के लिये गये तब गुरू महाराज देशना देके श्रावकों से श्री पति सेठकी हकीकत पूछी तब श्रावक बोले हे स्वामी श्री पति सेठ तो काल प्राप्त हो गया अभी तो तिस का पुत्र धन नामें मौजूद है मगर वो लोभ में पीड़ित होके अत्यंत निर्वेक पणा करके जिन पूजादिक समस्त धर्म कार्य त्याग कर दिया है केवल पशू की तरह से काल गमा रहा है इस माफिक हकीकत श्रावक गुरू के सामने कह रहे हैं तितनेमें तो एक कोथला खांधे ऊपर ग्रहण करके कह आये हैं उसी स्वरूप से वो धन नामें सेठ कोई गाम को जल्दी जा रहा था उस को जाता हुवा देख

करके तब श्रावक बोले हे स्वामी यह श्रीपति का पुत्र जा रहा है तव गुरू महाराज भी तिस माफिक अवस्था देख करके उपगार करने के वास्ते एक श्रावक को भेज करके बुलवाया मगर वो तहां खड़ा हुवा ही कहने लगा में तो द्रव्य का अर्थी हूं मेरे गुरू के साथ क्या प्रयोजन है ऐसा सुन करके लाभ जान करके गुरू महाराज आप तिस के पास जा करके बोले हे आर्य तूं श्री पति सेठ का पुत्र है इस वास्ते तुझको धर्म कर्मसे विरुद्ध होना लाजिम नहीं है अब जो तुझ से और धर्म कार्य नहीं हो सके तो अपने पिता का बनाया हुवा मंदिर उस में श्री जिनराज का विंब विराजमान है उनों का मुख कमल देख करके भोजन करना ऐसा नियम अंगीकार कर तब वो धन बोला मैं अपने कार्य से भ्रष्ट होता हूं तिस वास्ते अभी मुझ को छोड़ो और आज पीछे आपका कहा भया नियम प्रमाण है मुझको ऐसा कह करके अपने कार्य में लगा आचार्य महाराज भी विहार करके और ठिकाने पधार गये अब धन सेठ भी कुछ शुभ उदय सेती हमेशा भगवान का मुख कमल देख करके भोजन करे तब तिस की स्त्री ने विचार किया तिस माफिक निर्वेकी सेठ के हृदय में यह भाव कैसे उत्पन्न भया तिस वास्ते जानने में आता है कि इस के कुछ शुभ का उदय होने वाला है अब एक दिन के वक्त में कोई गाम से दो पहर के वक्त में आया तब धन सेठ जल्दी के सबक से देव दर्शन भूल करके भोजन करने वैठ गया तितने तो फेर देव दर्शन याद आया तब जल्दी उठ करके देव घर याने मंदिर में जा करके जितने देव दर्शन कर रहा है तितने में तो तिस मंदिर के विषै भोमांग भोमांग ऐसी ध्वनि याने आवाज निकली तब ध्वनि करने वाले को देखा नहीं तब यह विस्मय हो करके धन सेठ बोला कौन यह बोलता है तब देवता बोला इस मंदिर का अधिष्ठायिक श्रीमान् अर्हंत देव की सेवा करने वाला देवता हूं तुम्हारा नियम में दृढ़पना देख करके प्रसन्न भया हूं तिस वास्ते तूं मन वंछित वरदान मांग तब धन सेठ बोला कि मैं मेरी स्त्री से पूछ करके मांगूंगा ऐसा कह करके जल्दी से घर आके अपनी स्त्री प्रतें सब हकीकत कही तब शेठानी ने विचार किया कि हमारे घर में द्रव्य की तो कमती नहीं मगर इसके हृदय में विवेक की अत्यंत न्यूनता दिखती है अगर वो आ जावे तो श्रेष्ठ है और सर्व कार्य की सिद्धी हो जावे ऐसा विचार करके अपने पति से कहा हे स्वामी आप जल्दी जाके देवता के पास विवेक मांगो तब सेठ भी अपनी औरत का वचन मंजूर करके मंदिर में जाके कोथला फैलाके कहने लगा भो देव जो तुम प्रसन्न भये हो तो मुझको विवेक देवो तब देवता भी सेठ के दुष्कर्म का क्षय उपशम भया जान करके कहा भो सेठ सर्व जड़ पना याने मूर्ख पना उखाड़ने वाला तुझको विवेक रत्न दिया अब सेठ अपने घर गया तब धन सेठ उत्तम विवेक रत्न लेकरके अपने

घरमें भोजन करने के वास्ते बैठा तब स्त्री भी तेल करके सहित कुलथी या अन्न सामने रख दिया तिसकों देख करके विवेक धारण करके सेठ बोला हमारे घरमें ऐसा दुष्ट भोजन कैसे होता है तब स्त्री बोली हे स्वामी जैसा अन्न तुम लाके देते हो जैसा ही में अग्नि में पकाकर के देती हूं तब सेठ घरके सामने देखा तो ठिकाने २ पड़ा भया नाना प्रकार का जालों करके भरा हुवा दरिद्र की तरह से अपना घर देखा तब इस माफिक भोजन और घरका स्वरूप देख करके विचारने लगा धिक्कार हुवो मुझको अज्ञानी को इस माफिक आचरण करके मैंने अपने कुलको लज्जित कर दिया और धर्म करणी भी नहीं करी इतना दिन वृथा ही गमाया अभी भी उत्तम व्यवहार में उद्यम करूं तो उमदा है ऐसा विचार करके पैली का घर हाट याने दुकान सर्व लेलिया उप जीवक वर्ग कोन याने दास दासी वर्ग सर्व को बुलवाया पेस्तर की माफिकन्सर्व मर्यादा बांध लई याने स्थापन करी तथा पिता का बनाया भया मंदिर तथा और भी जिन मंदिरों की विशेष करके पूजा प्रभावनादिक उत्सव करने लगा तथा और भी दानादिक कृत्य बढ़े भये परिणामों करके उद्यम करने लगा गुरु संयोग करके परि ग्रह का परिमाण करके बचा सो द्रव्य धर्म स्थान में लगावे अनु क्रम करके और भी व्रत नियमों के विषै उद्यत वान् भया गोया तैयार भया तब सर्व महाजन को आदि लेके लोक मान्य कररहे हैं बहुत यश लक्ष्मी उन को धारण करके वो धनसेठ बहुत काल तक श्रावक धर्म पाल करके उत्तम गती गींया देव गती में गया यह पांचमें व्रत ऊपर धनसेठ का दृष्टान्त कहा इस तरह से और भी भव्य जीव विवेक जिगर में धारण करके परि ग्रह का परि माण करने के विषै उद्यम करो और लोभ का त्याग करो जिस करके दोनों लोक में वांछित पदार्थ की सिद्धी होती है ॥ अब यहां पर पांचवें व्रत की भावना दिखलाते हैं ॥

—जह जह अन्नाण वसा । धण धन्न परिगाहं बहुं कुणई ॥ तह तह लहुं निमज्जसि भवे भवेभारियत रिव्व ॥ १ ॥

व्याख्या—जैसे २ अज्ञान के वश सेती धन और धान्य वगैरे परिग्रह का संचय बहुत करेगा तैसे २ जल्दी से भव २ के विषै भार बधा के गोया पाप करके नीची गती में जाने का कारण जानना चाहिये ॥ १ ॥

—जह २ अप्पो लोहो । जह २ अप्पो परिग्ग हारंभो ॥ तह २ सुहंपवद्दइ । धम्मस्सय होई

सं सिद्धिं ॥ २ ॥

व्याख्या—जैसे २ लोभ कमती होता जायगा तैसे २ परिग्रह आरंभ भी कमती होती जायगा और तैसें २ सुक्ख बढ़ता जायगा और धर्म में सिद्धी होती है ॥ २ ॥

—तम्हापरिग्गहं उभिऊण । मूलमिहसव्व पावाण ॥
धन्ना चरण पवन्ना । मणेणएवं विचिंतिज्जा ॥ ३ ॥

व्याख्या—तिस वास्ते परिग्रह का त्याग करना चाहिये और सर्व पाप का मूल कारण परि ग्रह रहा है धन्य है साधू मुनिराज सर्व विरती चारित्र अंगीकार करने वाले मन से श्रावक को ऐसा विचार करना चाहिये ॥ ३ ॥ इस माफिक पांचवें व्रत की भावना दिखलाई ॥ ५ ॥ यह पांचों पांच महा व्रत की अपेक्षा करके छोटा है इस वास्ते इन पांचों को अणुव्रत कहते हैं ॥

अब तीन गुण व्रत दिखलाते हैं तिन अणुव्रतों के गुण के वास्ते तथा उपगार के वास्ते वर्त्ते हैं इस वास्ते गुण व्रत कहना चाहिये अणु व्रतों को गुण व्रत करके उपगार यानें दिशादिक का प्रमाण करने से हिंसा वगैरे का निषेध होता है अब तिस गुण व्रतों में जो प्रथम दिशा परिमाण व्रत निरूपण करते हैं ऊर्ध्व दिशा याने ऊंची दिशा और तिरछी दिशा का जाने आने को अंगीकार करके जो दिशा का परिमाण करने में आता है याने सर्व दिशा वों के विषै सर्व जन्म में गोया सम्पूर्ण उमर तक में जुदी २ इतनी जमीन उल्लं घन करके जाऊंगा ज्यादा नहीं तिसको दिशा परिमाण व्रत कहते हैं मगर ऐसा नहीं कहना चाहिये कि दिशा परिमाण करने से क्या गुण और क्या फायदा होता है गोया इस दिशा के परिमाण करने से लोभ का हटाना तिस रूप गुण ऐसे महा गुण होने का कारण है याने दिशाओं का परिमाण करने से लोभ दूर होता है सोई दिखलाते हैं ॥

—भुवण कमण समत्थे । लोभ समुद्दे विसप्प
माणंसि कुणइदिशा परिमाणं ॥ सुसावओ से
उवंधेव ॥ ४६ ॥

व्याख्या—पृथ्वी को उल्लं घन करने में समर्थ याने तीन भुव न को व्वाय करके

ले जावे किस वास्ते लोभ रूप समुद्र के फैल जाने से याने उस लोभ रूप समुद्र को हटा ने के वास्ते श्रुश्रावक दिशा परिमाण करते हैं तिस लोभ रूप समुद्र के पूर को हटाने के वास्ते गोया दिशा का परिमाण करना सेतू समान याने आड़ी पाज बांध ने के समान जानना चाहिये जो प्रमाण कर लिया है जितनी जमीन का उस जमीन से आगूं नहीं जावे अगर बड़ा भारी लाभ भी हो जावे तो भी जा सक्ता नहीं इस व्रत करके गोया लोभ का निग्रह याने रोकना होता है अब यहां पर व्यतिरेक करके दृष्टान्त दिखलाते है ॥

—करुणा वल्ली वीयं । जइ कुव्वं तोदि साखु
परिमाणं ॥ राया असोग चंदो । तमर एनेव
निवडंतो ॥ ४७ ॥

व्याख्या—करुणा रूप वेल का वीज जानना जो दिशा का परिमाण करते हैं उस ने गोया दया रूप वेल को वढ़ाई मगर अशोक चंद्र राजा दिशा का परिमाण नहीं किया इस वास्ते समुद्र में डूबके मरके सातमी नरक गया इसमें इतनी फेर भी विशेपता दिख लाते हैं तपे भये लोह के गोले जैसा ग्रहस्थ है सो अप्रमाण याने परिमाण रहित जमीन में जाने का निषेध करना गोया इस व्रत करके दया रूप वेल का एक वीजपना भावन करना इस विध सूचित अशोक चंद्र का दृष्टान्त कहते हैं ॥

चंपा नाम नगरी में श्री श्रेणिक राजा का पुत्र अशोक चंद्र नामें राजा भया यह खोटे स्वप्न सहित भया था तव जन्म समय में माताने वाहिर छोड़ के एक अंगुली में पहिचान करदी इस वास्ते इसका दूसरा नाम कूणिक भी कहते हैं अव एक दिन के वक्त में तहां पर श्री महा वीर स्वामी समव सरे तव अशोक चंद्र भी जंगम कल्प वृक्ष की तरह से जान करके इस माफिक तीन लोक के नाथ का आना सुन करके महोत्सव सहित वंदना करने के वास्ते गया तव स्वामी ने देशना दी तव देशना के वाद भगवान से प्रश्न पूछा हे स्वामी जिनों ने भोगादिक का त्याग नहीं करा ऐसे चक्र वर्ती मर करके कौनसी गती में जाते हैं तवभगवान ने फरमाया की तिन चक्र वर्तियों की प्रायें सातमी नरक गती है तव राजा वोला में भी तहां पर जाऊंगा तव भगवान ने फ़रमाया कि तूं चक्रवर्ती नहीं इस वास्ते सातमी नरक में नहीं जायगा तूं तो छट्ठी

नरक में जायगा तब वो अपनी आत्मा को चक्रवर्ती मान करके कहने लगा हे स्वामी मैं चक्रवर्ती क्यों नहीं जिस वास्ते मेर भी फौज अनेक हाथी, घोड़ा, रथ लाखों रहा है और क्रोड़ों सिपाई हैं सो किस माफिक पैदल फौज रही हैं गोया समस्त जगत्र का उद्धारने की वा संहार करने की सामर्थ रही भई है तथा वहुत से संबाद और द्रोण तथा खेड़ कर्वट पत्तनपुर खदान इत्यादिक मुझ को कर देते हैं गोया हासिल देते हैं तथा मेरे निरन्तर व्यापार में भी क्षय नहीं होवे ऐसे बहुत से निधान रहा हुवा है तथा अत्यंत भयानक मेरा प्रताप याने तेज सर्व शत्रु वर्ग प्रतें उल्लंघन करके रहा हुवा है गोया अपने तेज से सर्व का तेज दूर कर दिया है अब कहिये मेरे कौन बात की कमती रही जिस करके मैं चक्रवर्ती नहीं होवूं सो फरमाइये ऐसा सुन करके यथा व स्थित याने जिस माफिक होना उसको यथा व स्थित कहते हैं सो श्री महावीर स्वामी फरमाया कि हे राजा इस रिद्धी से क्या होता है चक्र को आदि लेके चौदे रत्न विगर तूं चक्रवर्ती कभी नहीं हो सक्ता तब इस माफिक प्रभू का वचन सुनं करके अपने ठिकाने जा करके लोह मई सात एकेंद्री रत्न बनवाया तथा और पद्मावती रानीको स्त्री रत्न पनेंकी कल्पना करी तथा अपने पाट हाथी को आदि लेके बाकी पंचेंद्री मई सात रत्न रचन किया इस माफिक राजा रत्न पने में स्थापना करके राजा पूर्व दिशा को आदि लेके सर्व देशों में आज्ञा मंजूर करवा के बहुत सैन्य सहित वैताढ्य पर्वत के नीचे तिमिश्रा गुफा में गया तहां पर प्रचंड दंड रत्न करके गुफा के दरवाजों के किंवाड़ प्रतें ताड़ना करी मगर दरवाजा उघड़ा नहीं तब फेर दंड का प्रहार किया तब दरवाजों का अधिष्टायक कृतमाल नामें देवता क्रोध करके राजा को कहने लगा अरे नहीं मांगने लायक पदार्थ का मांगने वाला तूं कौन है यहां से चला जा इन दंड के खटका सुनने से कानों में तकलीफ होती है ऐसा सुन करके राजा बोला इस भरत क्षेत्र के बीच में मैं अशोक चंद्र नामें नवीन चक्रवर्ती उत्पन्न हुआ इस वास्ते जल्दी से गुफा का दरबाजा उघाड़ तब देवता बोला कि इस क्षेत्र में तो वारे चक्रवर्ती होते हैं सो तो हो गये तिस वास्ते तूं चक्रवर्ती नहीं मगर तूं चकवा है तब राजा बोला कि मेरे पुन्यों ने मुझको तेरमा चक्रवर्ती बना दिया है सो तेरे को मालुम नहीं है क्या इस वजह से दरवाजा उघाड़ और देर करने से मुझ को तकलीफ मत दे तब इस माफिक भूत लगे की तरहसे बकवाय करने वाला तिसके वचन सुन करके तिस अशोक चंद्र ऊपर अत्यंत कोपायमान होकर के देवता दे दीप्यमान जलती भई आग से जला करके जलदी से छट्ठी नरक का पाहुणा कर दिया इस माफिक अति लोभ तथा दिशा परिमाण रहित उन के ऊपर अशोक चंद्र का दृष्टान्त कहा ॥

उक्त अशोक चंद्र की तरह से और भी कोई पुरश दिशा का परिमाण नहीं करेगा

वो इस लोक में तकलीफ पाके परलोक में नरक की पीड़ाका पात्र होगा इस वास्ते भव्य जीवों ने इस व्रत को ग्रहण करने में आलस नहीं करना चाहिये अब यहां पर भावना दिखलाते हैं ॥

—चिंते अव्वंचनमो। साहूणं जे सयानि रारंभा ॥ विह रंति विप्पमुक्का। गामा गरम हियं वसुहं ॥ १ ॥

व्याख्या—श्रावकने ऐसा विचारना चाहिये नमस्कार हुवो सर्व साधू कों वे स्वतः गोया अपनी इच्छासे आरंभ रहित होके विहार करते हैं सर्व से रहित गाम आकर शहर वगैरे में घूमते हैं तथा वायूकी तरहसे पृथ्वी मंडलमें विहार कर रहे हैं इस माफिक विहार करना यह प्रथम गुण व्रत है सो भावित किया ॥ ६ ॥

अब गुण व्रत भी दूसरा व्रत निरूपण करते हैं भोगोपभोग व्रत सातमा दिखलाते में और दूसरा गुण व्रत भी समझना तहां पर एक दफे भोगने में आवे उसको भोग कहते हैं याने अन्न १ और फूलादिक २ तथा बारम्बार भोगने में आवे उस को उपभोग कहते हैं गोया औरत १ और वस्त्र २ तथा आभूषणादिक ३ उन दोनों करके उत्पन्न भया सो वृत उनको भोगोपभोग वृत कहते हैं। भोजन करके १ और कर्म करके २ दोय प्रकार का होता हैं सोई दिखलाते हैं ॥ ४८ ॥

—भो अण कम्मेहिं दुहा। वीयं भोगो व भोग माणंायं ॥ भो अण ओ सावज्जं। उस्स गेणं परि हरेई ॥ ४८ ॥

व्याख्या—भोजन सेती एक और कर्म सेती २ दोय प्रकार का होता है दूसरा भोगोपभोग मान वृत तथा उत्सर्ग मार्ग करके सावद्य याने पाप कारक वस्तू का त्याग करना उचित है ॥

—तह अंतरं तो वज्जइ। बहु सावज्जाइ एस भुंज्जाइं ॥ वावीसं अन्नाइवि। जहारिहं नाय जिणधम्मो ॥ ४६ ॥

व्याख्या—अगर जो सर्व सावद्य का त्याग नहीं हो सके तो भीतर में रहे भये बहुत पाप कारी वस्तूका त्याग तथा वावीस अभक्ष्य वस्तु और बत्तीस अनंतकाय जिन धर्म के जानने वाले को योग्य है सो गोया त्याग करना उचित है ॥ ४९ ॥

दूसरा भोगोप्र भोग मान व्रत दोय प्रकार का होता है भोजन करके १ और कर्म करके २ तहां पर भोजन करके तो श्रावक उत्सर्ग गोया रूप करके पापकारी सचित्त वस्तु ग्रहण करने के लायक नहीं उस का पहिहार गोया त्याग करे तथा इन वस्तु में गोया सर्व सावद्य का त्याग करना ऐसा कहा अगर सर्व सावद्य का त्याग नहीं हो सके तो जिन धर्म जानने वाला श्रावक बहुत सावद्य याने बहुत पाप कारक बावीस अभक्ष्य वस्तूका तो त्याग जरूरही करे सो बावीस अभक्ष्य इस माफिक जानलेना ॥ पांच विगय ५ महा विगय ४ तथा हिम याने हिमालय १० विष सर्व तरह का ११ गडा १२ सर्व प्रकार की मट्टी १३ रात्रि भोजन १४ बहु बीजा १५ अणंत काय १६ अथाणा १७ घोल वड़ा १८ वेंगण १९ जिस फूल फल का नाम याद नहीं उनको अनजाने कहते हैं २० तुच्छ फल २१ चलित रस २२ इन बावीस अभक्ष्यों का त्याग करे अब यहां पर बावीस अभक्ष्य विशेषता पूर्वक दिखलाते हैं तहां पर पांच तरह का ऊंबर वृक्ष एक तो ऊंबर का वृक्ष १ तथा वड़ वृक्ष २ लाख का वृक्ष ३ पीपल वृक्ष ४ तथा और भी अज्ञात नाम ऐसा जो कोई वृक्ष है उसका फल उसमें मच्छर का आकार सूक्ष्म जीव बहुत भरा हुवा होता है तिसके सदृश इस वास्ते श्रावक को त्याग करना उचित है तथा मदिरा १ मांस २ सहित ३ माखन ४ इन चारों को महा पाप की अपेक्षा करके महा विगय कहते हैं और महा विकार का कारण भी जानना इन का त्याग करना महा क्रूर गोया महा दुष्ट अध्य वसाय का कारण जल्दी ही तिस में तिस वर्णा अनेक सम्मुर्छिम जीव पैदा होता है ॥ सोई बात पुष्ट करके हैं ॥

—मज्जे महुंमिमंसे । नवणीयं मिच उत्थए ॥ उपज्जंति असंखा । तव्वन्ना तत्थ जंतुणो ॥ १ ॥

व्याख्या—मदिरा १ मधु २ मांश ३ माखण ४ इन चारों में अंत मुहूर्त्तबाद तिन वर्णा असंख्याता जीव उत्पन्न हो जाता है । १ ॥ तथा हिम १ विष २ गड़ा ३ मट्टी ४ रात्रि भोजन प्रगट ही है तहां पर हिमाला १ गड़ा २ मट्टी ३ बहुत जीव मई है तथा विष है सो घात करने वाला है तथा मारने के वक्त में महा मोह को पैदा करने वाला जानना चाहिये तथा रात्रि भोजन में भी बहुत जीव का नाश होता है इस भव में पर भव में दुर्गती का कारण रात्रि भोजन है इस वास्ते महा भारत में भी चार नरक का दरवाजा दिखलाया है सो कहते हैं ॥

—चत्वा रो नरक द्वारा । प्रथमं रात्रि भोजनं ॥ पर स्त्री गमनं चैव । संधानं नंतकायिकं ॥ १ ॥

व्याख्या—चार नरक का दरवाजा रहा है जिस में प्रथम दरवाजा रात्रि भोजन का है १ और दूसरा दरवाजा पर स्त्रीगमन करनेका है २ और तीसरा दरवाजा अथाणों का है ३ और चौथा दरवाजा अनंत काय है। ४॥ इत्यादिक दूषण जान करके त्याग करना चाहिये। तथा वहु वीजे का फल जिस फल में वीज अनंगिनती का होवे सो वहु बीजा जानना पंपोटे को आदि लेके तथा वेंगण वगेरे महा निद्राका और कामको वढ़ाने वाला है तिसके वीज २ में जीव मर्दन होने का संभव रहा है तथा अनंत काय म्लेच्छ कंद को आदि लेके वत्तीस अनंत काय हैं सो उन में अनंत जीव रहा है गोया अनंते जीव का पिंड जानना चाहिये तथा संधान याने अथानो प्रकट है तिस में भी वहुत जीव पैदा होता है तथा घोल वड़ा कच्चे गोरस सहित होनेसे विदल भी कहते हैं तिनों के विषे केवली गम्य सूक्ष्म त्रस जीव भरा हुवा है सोई वात फेर भी पुष्ट करते हैं सो इस माफि है॥

—जइमुग्ग मास पमुहं। विदलं कच्चं मिगोरसेपडइ॥
तातस जीवुप्पत्तिं। भणंति दहिएति दिण उवरिं॥ १॥

व्याख्या—जो मूंग और उड़द प्रमुख कच्चा गोरस के मिलने से और थूंकके संयोग से तिस वर्णा जीव की उत्पत्ति अंत मुहुर्तवाद और दही में तीन दिन के ऊपर जीव पड़ जाते हैं तिस वर्णा। १॥ तथा वृंताक याने वाइंगण जाहर हैं इन को वहु वीजों में जुदा दिखलाया सो अत्यंत लोक विरुध जानने के वास्ते दिखलाया तिनों में भी वहुत जीव हैं और निद्रा अधिक तथा काम को उद्दीपन करने वाला इत्यादिक दोष का कारण जान करके त्याग करना चाहिये, तथा और दूसरा जिस का नाम नहीं जानते हैं तिन को अजाने फल कहते हैं वे भी प्राणियों की घात करने वाला है तथा जिस के खाने सेती तृप्ति थोड़ी हुवे और आरंभ वहुत तिसको तुच्छ फल कहते हैं गंगेडेका फल तथा कोमल फल आदि अनर्थ दंड का कारण जानना तथा चलित रस सड़ा हुवा अन्न इत्यादिक अनंत काय हो जाता है इस वास्ते त्याग करना योग्य है इतने मात्र ही अभक्ष्य नहीं है याने और भी यथा योग्य दोय दिन हुये वाद का दही और फूले हुये चांवल सहित पत्र फूलादिक वहुत सावद्य याने पापकारी है इस वास्ते त्याग करने योग है तथा फेर क्या कहते हैं। कि थोड़ा भी पापकारी चांवलादिक इन को मैं इतना भोजन करूंगा ऐसा प्रमाण निश्चय करके करना चाहियें तथा अत्यंत चित्त में लोलुपी पण प्रमादिक पैदा करने वाले ऐसा वस्त्र तथा आभूषण याने गहना और सवारी वगैरे इत्यादिक पूर्वोक्त वस्तू का त्याग करना उचित है और वाकी वस्तु का भी त्याग करना लाजिम है कारण

त्याग करे विगर विरती याने फल नहीं होता इस वास्ते नियम लेना उचित है अब यहां पर कितनेक अज्ञानी ऐसा कहते हैं इस संसार के विषै शरीर ही सार है तिस को जैसे तैसे पोषण करना भक्ष्य अभक्ष्य की कल्पना करने से क्या फायदा है ऐसा बोलने वाले को कहते हैं कि बहुत पोषण करा हुवा शरीर का आसारतापना है इस वास्ते विवेकियों को अभक्ष्य भक्षण नहीं करना चाहिये सोई बात पुष्ट करते हैं ॥

—अइपोसिं अंपिविहडइ । अंतेए अंकुमित्तमे वदेहं ॥
सावज्ज भुज्जपावं । कोतस्सकएस माय रइ ॥ १ ॥

व्याख्या—अत्यंतपोषा भया शरीर भी नाश वान है आखिर में कुमित्र की तरहसे त्याग करके चला जायगा इस वास्ते पापकारी वस्तू का भक्षण किस वास्ते आचरण करना । १ ॥ अब दृष्टान्त सहित इस व्रत का फल लेश मात्र दिखलाते हैं ॥

—मंसाइणं नियमं । धीमं पाणच्चए विपालंतो ॥ पावइ परंमिलोए । सुर भोएवं कचूलोव्व ॥ ५० ॥

व्याख्या—मांस को आदि लेके नियम का पालन करे उससे क्या होता है परलोक के विषै देव लोक का सुक्ख भोगवे वंक चूल की तरह ॥ ५० ॥

अब मंसादिक त्याग करने ऊपर वंक चूल का दृष्टान्त कहते हैं इसी भरत क्षेत्र के विषै विमल नामें राजा भया तिस के सुमंगगला नामें स्त्री तिस के संतान दो भया, एक तो पुत्र १ और दूसरी पुत्री २ जिस में पुत्र का नाम पुष्प चूल १ और दूसरी पुष्पचूला नामें कन्या २ यौवन उमर में पिता ने एक राज कन्या पर णाई तथा पुत्री को कोई राज पुत्र को दी मगर खोटे कर्म के उदय से बालक उमर में भर्त्तार मरने से बिधवा हो गई वा पुष्प चूला भाई के स्नेह सेती पिता के घर में रहने लगी अब जो पुष्प चूल जो हैं सो चोरी वगैरे व्यसन में आसक्त हो करके नगर के लोगों को अत्यंत पीड़ा देने से उस का नाम बंक चूल पड़ गया तिस की वहिन भी समान बुद्धि होने से वंक चूला करके प्रसिद्ध भई तब राजा लोकोंका ओलंभा वंक चूल निज सुतका बहुत सुन करके कोपाय मान होके शहर के बाहर कर दिया तब तिस की स्त्री और वहिन दोनों ही तिसके स्नेह करके साथ में निकल गई तब वंक चूल भी अपनी स्त्री तथा वहिन के साथ भय रहित कोई जंगलमें घूमते २ धनुषके धारण करने वाले भीलों ने देखा तहां पर तिनोंने आकृति करके राजपुत्र जान करके आदर पूर्वक नमस्कार करके प्रश्न सहित हकीकत सुन करके

बहु मान सेती अपनी पल्ली में ला करके मूल पल्ली पती मरने से तिस के ठिकाने स्थापित किया तब बंक चूल भी लोकों के साथ पृथ्वी तलमें चोरी करते थके तहां पर सुखें करके रहने लगा अब एक दिन के वक्त में वरपात के प्रगट होने की समय में कितनेक मुनियों के परिवार सहित श्री चंद्र यश सूरि साथ से भ्रष्ट होके तहां पर पधारे तव नवीन पैदा हो गया अंकूरा उनके मर्दन होनेसे तथा सचित्त जलके संघट्ट से डर करके आचार्य महा राज विहार के अयोग्य जमीन जान करके तिस पल्ली में प्रवेश किया तब वंक चूलभी मुनी प्रतें देख करके कुल वान पणा करके नमस्कार करके पास में वैठा तब गुरूमहाराज धर्म लाभ आशीष दे करके तिस वंक चूल से वसती याने रहने के वास्ते मकान मांगते भये तब तिसने भी कहा हे स्वामी तुम को रहने के वास्ते मकान दूंगा मगर मेरी सीमा में कवी भी धर्म नहीं कहना जिस वास्ते जिनों के हिंसा और झूठ तथा चोरी वगैरा का त्याग करने से धर्म पैदा होता है और तिनों करके हमारे आ जीव का वर्त्तै है इस माफिक वंक चूल का वचनं सुन करके गुरू महाराज भी तिसका वचन अंगीकार करके तिसने वतलाया निरवद्य ठिकाने में स्वध्याय ध्यान वगैरे धर्म कृत्य करते हुये चार महिना रहे तहां पर वंक चूल ने आहारादिक की निमंत्रणा करी तब गुरू महाराज बोले कि तुमारे घर की भिक्षा हमारे कल्पै नहीं हम तप वगैरे करके यहां पर रहके सुखें करके काल व्यतीत करेंगे तथा तुमने तो गोया रहने वास्ते स्थान दिया तिस करके वड़ा पुन्य का कारण किया सोई बात शास्त्र में कहा भी है॥

—जौदेइ उवस्सय मुनि वराण। तव नियम जोग जुत्ताणं॥ तेणंदिन्ना वच्छन्न पाणस्स। सयणा सण विगप्पा॥ १॥ पावइ सुर नर रिद्धी। सुकुल प्पत्तीय भोग सामग्गी॥ नित्थरइ भवमंगारी। सिज्जा दाणेण साहूणं॥ २॥ युग्मं॥

व्याख्या—जो श्रावक गोया जो भव्य जीव साधु मुनिराज प्रतें उपाश्रय याने धर्म शाला उतरने के वास्ते देवे कैसे मुनी है कि तप नियम और योग उन करके युक्त होना चाहिये जिस श्रावक ने गोया अवि च्छिन्न आहार दे दिया याने जिस पुन्य का क्षय नहीं होवे एक उपाश्रय देने से और सज्या याने पाटा तथा आसन वगैरे का विचार फेर वाकी नहीं रहा याने सर्व दे दिये गोया एक धर्म शाला वा उपा सरा देने में वड़ा पुन्य का कारण जानना चाहिये॥ १॥ फेर क्या फल होता है

देवता तथा मनुष्य की रिद्धी पावे तथा उत्तम कुल में उत्पन्न होवे फेर उत्तम भोग सामग्री प्राप्त होवे तथा फेर भवका अंत करे अगर साधू मुनिराज को सिज्या देवे गोया संथारे का उपगरण पाटा वगैरे देवे तो पूर्वोक्त फल मिलता है ॥ २ ॥ ऐसा उपदेश दिया तब वंक चूल चला गया अब वरसा काल व्यतीत होने से गुरू महाराज तिस वंक चूल प्रतें पूछ करके विहार करने लगे याने वहां से पधारने लगे तब वो वंक चूल भी गुरू महाराज की क्रिया और सत्य प्रतिज्ञादिक गुणों करके प्रसन्न हो करके भक्ती पूर्वक तिन गुरू प्रतें नमस्कार करके जहां पर अपनी सीमा थी वहां तक पहुंचाय करके फेर बहुत काल तक मुनी महाराज वंक चूल के मकान में विराजे थे इस वास्ते प्रेम में भरगया इससे वियोग सहन नहीं भया बहुत दिलगीर होके गुरू महाराज प्रतें नमस्कार करके विनती करने लगा हे स्वामी यहां से आगूं दूसरों की सीमा है इस वास्ते मैं यहां से लौटूंगा याने पीछा जाऊंगा फेर भी आप का दर्शन वदा होगा तो होवेगा ऐसा वंक चूल का वचन सुन करके गुरू महाराज भी मधुर वाणी से वंक चूल से ऐसा फरमाया हे सौम्य प्रकृति वाला तेरे सहाय सेती हम वर्षाकाल अच्छी तरह से निकाला अब तुझको रुचे सो कुछ पीछा उपगार करने चाहते हैं सो कुछ कहो तब वंक चूल बोला हे भगवान् जिस माफिक मेरे से पलसके इस माफिक मेरे ऊपर कृपा करनी चाहिये तब गुरू महाराज नें फरमाया जिस का नाम नहीं मालूम होवे तिस फल को खाना नहीं ॥ १ ॥ तथा किसी को मारनें के वास्ते जावै तब सात तथा आठ कदम पीछा हट जाना ॥ २ ॥ तथा राजा की पटरानी को माता वतौर समझना ॥ ३ ॥ तथा कवौआ का याने काग का मांस कभी खाना नहीं ॥ ४ ॥ यह चार नियम तुम एक चित्त करके पालन करना इसके पालने से आगूं से आगूं याने जितना भव होगा वहां तक महा लाभ का कारण है तब वंक चूल भी गुरू महाराज के वचन सेती नरम होके याने नम्र होके याने नमस्कार सहित होके महा प्रसाद ऐसा कहा और आत्मा के उपगारी उन चारों नियमों को जान करके उन नियमों को ग्रहण करके अपने ठिकाने आया गुरू महाराज भी वहां से पधार करके पृथ्वी मंडल में पधारे अथ एक दिन के वक्त ग्रीष्म रितु में याने गरमी के मौसम में वो पल्ली पती वंकचूल अपनी भीलों की सेना ले करके कोई भी गांव कों मारने लूटने को गया मगर उन गांव वालों नें किसी के पास हकीकत पेस्तर सुन ली थी इस से गांव वाले लोक पहिले ही भाग के चले गये तब वंक चूल भी परिवार सहित वृथा हो गया परि श्रमजिस का भूख और प्यास में पीडित होके दो पहर की वक्त में पीछा लौट करके जंगल में कोई झाड़ के नीचे बैठे तहां पर भूख और प्यास में पीडित हो रहे थे कितनेक भील लोक

इधर उधर घूम करके कहीं भी झाड़ी में खसबू दार अच्छे रंगदार पके हुये तथा झुके हुये कि पाक झाड़ को देख करके जल्दी से तिस का फल लेके बंक चूल के आगूं रख दिया तिस बंक चूल ने अपना नियम स्मरण करके तिस का नाम पूछा तब वे भील लोक बोले हे स्वामी इनो का नाम तो कोई भी नहीं जाणता मगर स्वाद तो अत्यंत है इस वास्ते खाना चाहिये जब बंक चूल बोला अजाने फल में नहीं खाऊंगा मुझको नियम है तब फेर उन भीलों ने हठ सहित कहा कि हे स्वामी शरीर दुरस्त रहने से नियम पलता है इस वक्त में नियम का आग्रह मत करो इस वक्त में प्राण बचने में संदेह पड़ रहा है तो अभी नियम का आग्रह मत करो तिस वास्ते इन फलों को खाईये ऐसा वचन सुन करके भूख करके पीडित था मगर बंक चूल धीरज धार कर के बोला भो ऐसा वचन नहीं बोलना अगर प्राण जावें तो अभी चले जाओ मगर मैंने अपना वचन गुरू के सामने अंगीकार कर लिया गुरू महाराज का वचन उन को मैं तोडूंगा नहीं इस वास्ते मेरा नियम थिर रहो तब वे सर्व भील तिन फलों को अपनी इच्छा करके खाके तृप्त होके झाड़ की छाया में सुख से सो गये मगर एक नौकर बंक चूलके आग्रह से फल नहीं खाया अब बंक चूल सो करके उठा और अपना नौकर था उसको उठाया बाद ऐसा कहा भो सब को जगाओ सो अपने ठिकाने चलें तब तिस नौकर ने भी आवाज दी तथा हाथ का फर्श भी लगाया और उठाने लगा मगर कोई भी उठा नहीं तब तिन सर्वों को प्राण रहित हुवा जान करके बंक चूल को हकीकत कहीतब बंक चूल भी सुन करके आश्चर्य पाके अपना नियम सफल हुवा मानने लगा तब बोला कि अहो इति आश्चर्ये गुरू वाणी का मात्म देखो जो थोड़े से नियमों ने मुझ को जीता रक्खा तथा मैं निर्भाग्य हूं जिस करके पेस्तर ही सर्व इष्ट सिद्धि के करने वाले कल्प वृक्ष की तरह से अकस्मात मिले मगर गुरू महाराज की वाणी मेरी तकदीर में नहीं इत्यादि चित्त में विचार करके वो बंक चूल जो है सो हर्ष और सोग दोनों करके सहित रात्री में अपनी पल्ली में आया तहां पर अपने घरका चरित्र देखने के वास्ते गुप्त वृत्ती करके घरके अंदर जा करके दीप के उजयारे से पुरष वेष की धरने वाली अपनी वहिन के साथ सूती भई अपनी स्त्री को देखी फेर विचारने लगा या मेरी स्त्री दुराचारिणी है और यह कोई दुराचारी पुरष दीखता है यह दोनो दुष्ट हैं इनों को जल्दी मारूं ऐसा विचार करके एक प्रहार करके उन दोनों को मारने के लिये जब तल वार उठाई तब इस को दूसरा नियम याद आया तब तहां से सात आठ कदम हट गया तिस बंक चूल की क्रोध प्रकृति से खडग की दरवाजे में लगी उस आवाज से जल्दी जागी बंक चूला सो कहने लगी हे

भाई चिरंजीव रह याने बहुत काल तक जीवो ऐसी आवाज से अपनी बहिन जान करके अत्यंत लज्जित होके उस खड्ग के साथ गुस्से को समेट लिया बाद अपनी बहिन से पुरुष वेष बनाने का कारण पूछा तब बहिन बोली हे भाई आज संध्या की वक्त में तुम को देखने के वास्ते नट का वेष बना के तेरे शत्रुवों का दूत गोया सुभट आया था तब मैंने विचार किया भाई तो परिवार सेती कहां ई गया है अगर जो यह जान लेंगे वंकचूल यहां नहीं है तो इस अनाथ पल्लीको लूट ले जांयगे तिस वास्ते कुछभी उपाय करना चाहिये तब मैंने ऐसा विचार करके कपट करके तेरा वेष धारण करके सभामें बैठ करके नाटिक करवाके क्षण मात्र बाद यथा योग्य दान दे करके सीख दी पीछे आलस्य करके पुरष का वेष दूर नहीं करा और भौजाई के साथ सो गई ऐसा वृत्तान्त सुन करके वंकचूल गुरू महारा की कृपा से अपना तथा बहिन और औरत को मारने की हत्या रूप पापसे बचा विशेष करके गुरू महाराज की वाणी की प्रसंशा करने लगा अब दिन व्यतीत हो रहे हैं उन में तो एक दिन चोरी करनेकों उज्जयिनी नगरी में गया तहां पर आधी रात में कोई धनवान व्यवहारी के घर में प्रवेश किया मगर कौड़ी के वास्ते गोया कितनी कवड़िये लड़के ने खरच करी थीं इस वास्ते पुत्र के साथ लड़ाई कर रहा था इस माफिक घर के मालिक कों देख करके धिक्कार हुवो इस माफिक धन को ऐसा विचार करके तहां से निकल गया फेर तहांसे एक ब्राह्मणके घर गया तो वो ब्राह्मण थोड़ा२ मांग करके किंचित मात्र धन मिलाता है इस वास्ते इन के धनको भी धिक्कार हुवो ऐसा विचार करके तिस के घरसे भी निकला तहां से वेश्या के यहां पहुंचा वा वेश्या कैसी है किंचित धन की वांछा करने वाली वेश्या अपने शरीर को नहीं देख करके थोड़े से द्रव्य के वास्ते कोढ़ी पुरष को भी सेवन कर लेवे ऐसी वेश्या के धन को धिक्कार हुवो मुझ को प्रयोजन नहीं ऐसा विचार करके तिस के घर को छोड़ करके राजा के घर में जा करके ऐसा विचार किया॥

—चौर्यं माचर्यतेचित्त । लुंटपते खलु भूपतिः॥ फलिते धन मक्षीण । मन्पथापि चिरंयशः॥ १॥

व्याख्या—अरे चित्त तेरा अगर चोरी करने का इरादा हो तो राजा के यहां लूट करनी अगर जो लूठ फलदाई हो जावे तो अक्षय धन गोया धन क्षय नहीं होवे अगर फल दाई नहीं हो तो बहुत दिन तक यश तो रहेगा॥ १॥

ऐसा विचार करके जंगल सेती गोह जानवर लाके तिस के पूंछ पर लग कर के राजा के महल के अग्र भाग में चढ़ करके जहां पर खास महल था याने सोने का महल तिस में

गया तहाँ पर अत्यंत अद्भुत रूप की धारने वाली राजा की पटरानी के नजर में आया तब तिस रानीने पूछा कितूं कौन है किस वास्ते यहां आया है तब वंक चूल बोला कि मैं चोर हूं बहुत मणि रत्नादिक द्रव्य की वांछा करके आया हूं तब तिस के रूप में मोहित होके रानी कोमल वाणी से कहा हे सौम्य द्रव्य की क्या बात है यह सर्व तेरा ही है अब कंपायमान क्यों होता है निर्भय होजा तेरे ऊपर कुल देवी प्रसन्न भई जो मैं राजा की रानी तेरे वश में हो गई मैंने आज सौभाग्य के गर्व करके राजा को भी नाराज कर दिया है इस माफिक मैं हूं तूं मेरे साथ अपनी आत्मा को सफल कर और मेरे प्रसन्न होने से प्राणियों को अर्थ काम सहज है अगर मैं कोप करूं तो मारना बांधना जल्दी से हो जावे, इस माफिक काम रूप ग्रह से पगली के वतौर हो के बहुत चलाया मगर बंक चूल ने तीसरा नियम याद किया तब तिस रानी प्रतें नमस्कार करके बोला कि हे माता तूं मेरे पूज्य है और मैं जंगली चोर हूं मेरे को राजा की रानी की वांछा किस माफिक होवे तब रानी बोली अरे वाचाल याने बहुत बोलने वाला मैंतो काम पीडित हो रही हूं मेरे साथ माता का संबंध जोड़ता है तेरे को सरम नहीं आती अब अगर मेरा वचन नहीं मानेगा तो आज तेरे ऊपर जमराज कोप किया है इस माफिक नाना प्रकार की युक्ति करके डराया तो भी डरा नहीं तब रानी कोप सहित अपनें नखों करके अपने शरीर को नोंच करके ऊंचे स्वर से पुकार करी यह हकीकत राजा घर के दरवाजे किंवाड़ के छेद करके सर्व आप सुन रहाथा तितने में तो कल कलार व शब्द रानी ने किया तिस से दरवाजे का सिपाही जागा और शस्त्र ग्रहण करके भगा तब राजा धीरे सैंक स्वर से कहा कि अरे इस पर अपराध नहीं है मगर इस वक्त में किं चित्मात्रबांध करके यत्न सेती रक्खो सबेरे के वक्त में सभा में मेरे अगाड़ी लाना तिन सिपाहियों ने प्रमाण करके तब राजा भी मन में क्रोध करके तयार भया तिस माफिक अपनी पटरानी का वृत्तान्त दिल में विचार रहा था मगर मुसकिल से रात्रि पूर्ण करी अब सबेरे के वक्तमें कोटवाल जो है सो तिस बंक चूल को बांध करके राजा के पास लाया तब राजा ने किंचित आक्षेप याने कुछ क्रोध सहित पूछा तब बंक चूल ने सर्व जाहर करके जैसा भया था उसी माफिक जो रानी ने मधुर बानी से काम विकार के वचन कहे थे इत्यादिक सर्व हकीकत कहके सुनाई बाद मौन अंगीकार कर लिया तब राजा ने तो परमार्थ सर्व जान लिया इस हकीकत को रात को देखी वो सब कानों से सुन चुका था राजा मगर वो बात फेर विशेष पुष्ट हो गई तब राजा प्रसन्न होके वंक चूलका सत्कार करके आलिंगन किया याने शरीर से लगाया फेर ऐसा बोला हे सत्पुरुष तेरी दृढ़ताई करके में प्रसन्न भया हूं इस-वास्ते इस पटरानी प्रतें तुझ को देता हूं और तूं इस को अंगीकार कर तब वंक चूल बोला हे महाराज

आपकी पटरानी हैं सो तो हमारी निश्चय करके माता है तिस वास्ते ऐसा वचन फेर कहना नहीं तब राजा शूली पर चढ़ाने वगैरे उपदेश करके बहुत चलाया मगर वंकचूल तो बिलकुल चलाय मान नहीं भया तब वंकचूल का धैर्य पणा देख करके राजा बहुत प्रसन्न भया और अपने पुत्रपणे में बैठा लिया याने गोद ले लिया तब राजा उस पटरानी को मारने का हुक्म दिया मगर वंकचूल के वचन करके जीवती छोड़ी तब वंकचूल भी अपनी बहिन और स्त्री को बुलवा करके तिनों के साथ आनन्द सहित रहने लगा यथा धर्म के विषें निश्चय करके प्रतीति जम गई फेर उस से हटे नहीं और फेर विशेष करके तिस धर्म के ऊपर चित वृत्ति लगाई तथा नियम के देने वाले गुरू महाराज को याद करता है एक दिन के वक्त में वंकचूल के भाग्य उदय से वेही आचार्य महाराज पधारे तब वंकचूल बड़ी तैयारी करके गुरु महाराज को वंदना करने के वास्ते गया तब गुरू के पास शुद्ध धर्म का स्वरूप अंगीकार किया तब तो उज्जयिनी नगरी के पास शालिग्राम में रहने वाला जिन दासना में श्रावक के साथ परम मित्राई हो गई अब एक दिन के वक्त में राजा कामरू देश का मालिक प्रते दुर्ज्जय जान करके तिस को जीतने के वास्ते वंकचूल से कहा और आदेश दिया तब वो वंकचूल भी राजा के हुक्म करके तहां जाके और युद्ध करके कामरू देश के मालिक को जीत करके तथा खुद वंकचूल के शरीर में वैरियों के शास्त्र लगने से घाव लग गया जिस करके शरीर कम जोर हो गया इस माफिक उज्जयिनी नगरी में आया तहां पर राजा ने वंकचूल की तकलीफ मिटाने के लिये बहुत वैद्यों को बुलवा के चिकित्सा कर वाई मगर किसी प्रकार करके भी घाव दुरुस्त नहीं हुआ तब राजा के अगाड़ी कितने वैद्यों ने कहा कि काग का मांस मंगाओ तो उस में दवाई देंगे ऐसा सुन करके राजा वंकचूल को शरीर से लिपटा के आंसू सहित बोला हे पुत्र तेरी आपदा मिटाने के वास्ते जो २ इलाज किये हैं मगर वे सर्व मेरे अभाग्य के जोर सेती वृथा हो गया अब एक इलाज है काग के मांस में दवाई देनी बतलाई है वैद्य लोगों ने तिस मांस को ग्रहण करे तो तेरा शरीर अच्छा हो जावे तब वंकचूल बोला हे नाथ में सर्वथा मांस खाने सेती दूर हो गया हूं याने बिरकुल त्याग कर दिया है तिस वास्ते काग के मांस की हमारे जरूरी नहीं तब राजा बोला हे पुत्र जीते रहोगे तो नियम बहुत हो जायंगे मगर मरने बाद कुछ भी नहीं तिस वास्ते काग के मांसप्रतें सेवन कर तब ऐसा राजा का वचन सुन करके वंकचूल बोला हे नाथ मेरे को जीने की कुछ भी इच्छा नहीं है एक रोज अवश्य मृत्यु होने वाली है तिस वास्ते यह जीव चला जावे तो अभी चला जावे मगर यह अकृत्य तो मैं नहीं करूंगा तब राजा ने वंकचूल के मित्र शालि ग्राम में रहने वाला जिन दास नामें श्रावक

भर्तें बुलवाने के लिये अपना आदमी भर्तें भेजा तब वो भी मित्र के स्नेह सेती जल्दी तहां से चला और रस्ते में रोना करने वाली याने रोती भई देवी सरीखी दोय स्त्री भर्तें देखी तब उन से जिन दास ने पूछा कि तुम कौन हो और किस वास्ते रोती हो ऐसा पूछा तब तिन स्त्रियों ने जवाब दिया कि हम सौ धर्म देव लोक में रहने वाली और भर्त्तार के चवण होनेका विरह तिससे दुखिनी होके बंकचूलनामें क्षत्रिय भर्तें भर्त्तार पने में प्रार्थना कर रही हैं मगर वो तो आज तुमारे वचन सेती अपने नियम को तोड़ डालेगा याने खंडित कर देगा तो जल्दी से दुर्गती में जावेगा तिस वास्ते रोती है तब तब जिन दास बोला कि तुम मत रोवो जो तुमारे वल्लभ का काम होगा सोई करूंगा ऐसा कह करके तिनों को विश्वास देके वो जिन दास श्रावक उज्जयिनी गया तहां पर राजा के आदेस सेती मित्र के महिल में आकर के कुशल मंगल पूछा करके दवाई वगैरे करने लगा मगर वंकचूल के नियम में मनथिर जान करके और शरीर घावों करके अत्यन्त पीड़ित हो गया देख करके राजा दिक सर्व लोगों के सामने ऐसा कहा कि अब तो इस को धर्म रूप दवाई दिलाओ मगर और कोई भी दवाई मत करो तब वंकचूल ने भी कहा कि हे मित्र तेरा मुझ पर स्नेह है तो अब आलस्य छोड़ करके मुझ को अंत कालका शंवल देवो गोया अंतकाल की खरची साथ वंधावो धर्म रूप तब तिस मित्र ने भी उत्तम प्रकार से आराधना करवाई तब वंकचूल भी चारों आहार का पच्चरकाण करके चार शरण अंगीकार करके पंच परमेष्टि नमोकार मंत्र उसका स्मरण करतावा तथा प्रथम सर्व जीवों से वैर विरोध कीयातथा उनसे क्षामण करके आत्मा की निंदा करी और सुकृत की अनुमोदन करी समाधि सहित काल करके वार में देव लोक में देवता पने उत्पन्न हुआ तब जिनदास भी वंकचूल का अग्नि संस्कार करके अपने घर को जा रहाथा तब रस्ते में उन दोनों देवियां को पहिले की तरह से रोती हुई देखी तब पूछा हे भद्रे अभी तक तुम विलाप क्यों कर रही हो वो मेरा मित्र अखंड व्रती हो करके यहां से मर करके तुमारा भर्त्तार नहीं भया क्या जिस से रो रही हो तब वो दोनों देवी निश्वास डाल करके कहने लगा हे निर्मल मन का धारक क्या पूछता है वो तेरा मित्र आखिर में प्रणामों की शुद्धि करके हम को भी उल्लंघ करके वारमें देवलोक में गया ऐसा सुन करके परम आनंद पाके जिन दास मित्र का ध्यान करता था तथा श्री जिन धर्म की अनुमोदना करके अपने घर गया ॥ यह नियम ऊपर वंक चूल का दृष्टान्त कहा ॥ इस दृष्टान्त माफिक थोड़े से अभक्ष्य खाने के नियम का महा फल जान करके भव्य जीव तिसको पालने में तत्पर होना ॥ इस मुताबिक भोजन करके भोगोप भोग

व्रत कहा ॥ अब कर्म करके कहते हैं सो गाथा दिखलाते हैं ॥

—कम्मा ओजई कम्मं । विणा नतीरे इनिव्वहे
उंतो ॥ पन रस कम्मा दाणे । चएइ अन्नं खर
कुम्मं ॥ ५१ ॥

व्याख्या—कर्म को अंगीकार करके श्रावक को उत्सर्ग नय करके किंचित्मात्र भी पाप कर्म नहीं करना आरंभ रहितनिर्वाह करना अगर जो कर्म विगर निर्वाह नहीं होवे तोभी पनरे कर्मादान का त्याग जरूर ही करना चाहिये वे कौन से हैं सो दिखलाते हैं अंगार १ वन २ शकट ३ भाटक ४ स्फोटक ५ दंत ६ लाक्षा ७ रस ८ केश ९ विष वाणिज्य १० यंत्र पीड़ा ११ निर्लंछिन १२ दवदान १३ सरोद्र हादिशोषः १४ असती पोष श्चेति १५ ॥

अब इस की व्याख्या करते हैं तहां पर आजीविका के वास्ते कोयला करके आजीविका करे तथा भाड़ भूंजना कुंभार तथा लोहार तथा सोनार और ईंटों को पकाने के अग्नि का आरंभ करना इत्यादिक पूर्वोक्त रोजगार करे उसको अंगार कर्म कहते हैं ॥१॥ तथा वन कर्म दूसरा निरूपण करते हैं तथा वृक्षादिक और पत्र पुष्पादिक छेदन कर याने कटवा के बेच करके इत्यादिक आरंभ करके अजीव का करते हैं उस को वन कर्म कहते हैं ॥ २ ॥ शकट याने गाड़ा गाड़ी तथा तिस के अंग पईयां चक्र धुर जुवाड़ा इत्यादिक तैयार करवाना उन से आजीविक करना उनको शकट कर्म कहते हैं ॥ ३ ॥ तथा अपने गाड़ी चलाने के बैल दूसरों को भाड़े देना वा अथवा दूसरों को मोल करके अपनी गाड़ी बैच करके आजीविका करना उस को भाटक कर्म कहते हैं ॥ ४ ॥ तथा कुदाला हलादिक करके जमीन को फोड़ना वा पाषाणादिक को घड़ा के बेंच करके आजीवका करना उसको स्फोटक कर्म कहते हैं ॥ तथा जव वगैरे धान्य का संचय करना और बेंचना उसको भी स्फोटक कर्म कहते हैं ॥ ५ ॥ सोई शास्त्र में कहा भी है ॥

—जवचण यागो हुम मुग्ग । मास कर डिप्पभि
इय धन्नाणं ॥ सत्तुयदालिक णिका । तंदुलकर
णाइं फोडयणं ॥ १ ॥

व्याख्या—जव, चना' गेहूं, मसूर, मूंग, उड़द, करडि को आदि लेके धान को चकी में दलावै दाल बनवावे और कणी निकलवा के सत्तू बना के रक्खै तथा चांवल

निकल वाना इनको भी स्फोटक कर्म कहते हैं ॥ १ ॥

—अहवा फोड़ी कम्मं । सीरेणं भूमि फोड़णं जंतु ॥ ओम्म त्तणयं चतहा । तहाय सिल कुदयत्त चेति ॥ २ ॥

व्याख्या—अथवा स्फोटक तीसरी रीति से फेर भी दिखलाते हैं सीर लगाके जमीन को फोड़ना और जीवोंका नास करना तैसेंई शिला वगैरे घड़वा के वेंचना उसको भीं स्फोटक कर्म कहते हैं तथा प्रथम से म्लेच्छ लोगों को मोल दे करके हाथी का दांत मंगा के वेचना तथा खदान में जाके आप ला करके वैचे उसको दांत वा णिज्य कहते हैं तह क्यों कहा शंख है चर्भ के चामरा दिक पहिचान सेती खदान विगर दांत वगैरे ग्रहण करके वेंचना उसको भी दांत वाणिज्य कहते हैं ॥ ६ ॥

तथा लाख का व्यापार प्रसिद्ध है पहिचान करके नीलमें नशिल वगैरे तथा सुले भये धान वगैरे ऊसको लाख वाणिज्य कहते हैं ॥ ७ ॥ तथा घी तेल दारु मद वगैरे रस को बेंचना उसको रस वाणिज्य कहते हैं ॥ ८ ॥ तथा सींगी मोरा काल कूट वगैरे विष वाणिज्य कहते हैं यह जीव मारने का शस्त्र है तथा लोहे भी और हरताल को आदि लैके यह सर्व विष वाणिज्य जानना ॥ ९ ॥ तथा दास दासी गाय घोड़ा भैंसा ऊंट वगैरे वेंचना उसको केश वाणिज्य कहते हैं ॥ १० ॥ तथा तिल है सेलड़ी वगैरे को घाणी में पिलवा के वेचे तो उसको यंत्र पील्लण कर्म कहते हैं ॥ ११ ॥ तथा बैल और घोड़ा वगैरे को सांड़ करे और उनको नपुंसक करे तथा दांभ लगावे और नाक को वींधवाना कान तथा कंवल को छेद वाना उस को निर्लंछिन कर्म कहते हैं ॥ १२ ॥ तथा तृण याने घास वृद्धि होने के वास्ते खेत कों शुद्ध करवाना वा आग जलवाना तथा तव देना उसको दवदान कहते हैं ॥ १३ ॥ तथा गेहूं वगैरे को वोने के वास्ते तालाव और द्रह सूकाना प्रशिद्ध है ॥ १४ ॥ तथा असती याने शील रहित दास दासी वगैरे तिनों को पोषणा उसको असती पोष कहते हैं यह सूवा है सारस है श्वान है विल्ली है तथा मोर है इत्यादिक अधर्मी प्राणियों का पोषण करना उसको भी असती पोष कहते हैं ॥ १५ ॥ यह पनरे कर्मादान वड़े कर्म वंध होने का कारण है समय भाषा करके इन को कर्मादान कहते हैं केवल इतना काही त्यागन नहीं करें गोया और भी कठोर क्रूर अध्य वसाय कर्म कोट वाल वगैरे का काम उस का भी श्रावक त्याग करे जिस रोजगार में पाप कमती होवे उस से निर्वाह करना चाहिये तथा औरभी शास्त्र में कहा है ॥

—इयरं पिहुसावज्जं । पढ मकम्म नतंसमार भइ ॥
जंदट्ठूण पवट्टइ । आरंभेअविरओ लोओ ॥५२॥

व्याख्या—श्रावक जो है सो और भी पाप व्यापार का त्याग करे याने जिसका त्याग नहीं भी किया है मगर तो भी पाप का व्यापार करने में प्रवृति कम ही रखना चाहिये तथा घर का आरंभ है तथा दूसरे ग्राम जाना आना गाड़ा गाड़ी चलाना तथा दूसरे से उपदेश देके पाप व्यापार कर वाना तथा शस्त्रादिक का रखना अग्नी मांगी देना ऊखल मूंशला दिक मांगा हुवा देना तथा घट्टी वगैरे इत्यादिक पापका कारण तथा अनर्थ दंड का कारण श्रावक करै नहीं इस माफिक अनर्थ दंड़का काम देख करके और भी लोक उस काम को देख कर करने लग जावे कारण देखा देख काम करने वाले गोया सदृश काम करने में वहुत लोक तत्पर होते हैं इस कारण से भी श्रावक को नहीं करना कारण अविरत पने का काम तथा अजयणा का काम दुनियां को अच्छा लगता है इस वास्ते एक अनर्थ दंड के कारण से अनेक अनर्थ कार्य हो जाते हैं इस वास्ते कारण का नाश हो जाने से कार्य का भी नाश हो जाता है ॥ ५२ ॥

इस माफिक कर्म करके भोगोप भोग व्रत दिख लाया अव यहां पर शिष्य प्रश्न करता है पेस्तर भोग और उप भोग के शब्द वतलाया था उस में तो केवल एकतो अन्न याने रसोई और फूल वस्त्र आभूषण स्त्री को आदि लेके मायना वतलाया था उन को ई इस व्रत में ग्रहण करना चाहिये मगर कर्म करके यह व्रत नहीं हो सक्ता तथा कर्म शब्द क्रिया वाचक है और क्रिया करके भोग और उपभोगका होना असम्भव है अव गुरू महाराज उत्तर कहते हैं कि यह तुमरी संका दुरस्त है मगर कर्म कहिये व्यापार वगैरे भोगोप भोग का कारण है इस वास्ते कारण से कार्य हो जाता है इस वास्ते भोगोप पने में दिखलाया अव चर्चा से जरूरी नहीं अव इस व्रत की भावना वतलाते है ॥

सघेसिंसाहूणं । नमामि जेहिं अहि यंति नाऊणं ।
तिविहेण काम भोगा । चत्ता एवं विचिंविज्जा ॥ १ ॥

व्याख्या—सर्व साधु मुनि राज त्रातें नमस्कार करता हूं कैसे हैं वे मुनि राज जिनों ने सर्व पदार्थ अनित्य जान करके और मन वचन काया करके काम भोगों का त्याग कर दिया श्रावक को इस माफिक विचार ने रूप भावना भावनी चाहिये ॥ इतने करके दूसरा गुण व्रत और सातमा भोगोप भोग व्रय निरूपण किया ॥ ७ ॥

अब आठमा अनर्थ दंड व्रत और तीसरा गुण व्रत निरूपण करते हैं ॥ तहां पर जो स्वजन हैं ओर शरीर और धर्म के वास्ते आरंभ करते हैं वो तो अर्थ दंड में हैं प्रयोजन बिगर करने में आवे सो अनर्थ दण्ड है तिस अनर्थ दण्ड सेती दूर होना ऐसा जो व्रत उसको अनर्थ दण्ड विरमण व्रत कहते हैं अपध्यान याने खराब ध्यान इत्यादिक चार प्रकार के अनर्थ दण्ड का त्याग करे तथा फेर भी अनर्थ दण्ड को पुष्ट करते हैं ॥

गाथा—दंडिज्ज इजेणजीओ । वज्जिय नियदेह समण
धम्मट्ठं ॥ सो आरंभो केवल । पावफलेणत्थ
दंडंत्ति ॥ ५३ ॥

अव झाणपाव उवएस । हिंसदाणप्प माय
चरिएहिं ॥ जंचउहासो मुच्चइ । गुणव्वयंतं भवे
तइ अं ॥ ५४ ॥

व्याख्या—दंड पावे जिस करके जीव याने चेतन उसको दंड कहते हैं उस दंड के दो भेद हैं एकतो अर्थ दंड १ और दूसरा अनर्थ दंड २ अब अर्थ दंड किसको कहते हैं अपना शरीर और स्वजन संबंधी २ और धर्म के वास्ते ३ इन तीनों के कारण पाप करने में आता है उस को अर्थ दंड कहते हैं याने उसको तो करना ई पड़ता है उस बिगर निर्वाह नहीं हो सकता इस वास्ते यह अर्थ दंड के फल का कारण है ॥ ५३ ॥ अबचार प्रकार का अनर्थ दंड दिखलाते हैं ॥ खराब ध्यान १ पाप का उपदेश २ हिंसा का दान ३ और प्रमाद करके ॥ ४ ॥ जिस चार प्रकार के प्रमाद का त्याग करे उनको तीसरा गुण व्रत कहते हैं ॥ ५४ ॥ अनयोः याने इन दोनों गाथा का अक्षरार्थ निरूपण करके अब बिस्तार करके बतलाते हैं उपभोग याने वारम्वार भोगना उसको उपभोग कहते हैं तथा शय्या आसन और सवारी तथा स्त्री गंध माला मणि रत्न और आभूषण इत्यादिक पदार्थों के विषै इच्छा अभिलाषा तथा वांछा अत्यंत करे और मोह सेती खराब ध्यान याने उस को आर्त्तध्यान कहते हैं पंडित पुरुष ॥१॥ तथा छेदन कर्म याने काटना इत्यादिक जलाना तथा भांगना तथा मारना तथा बांधना तथा प्रहार देना याने घाव करणा तथा बैल घोड़ा वगैरे कोदमन करना जीव रहितकरना दयारहित अथवा क्रोध और मान सहित इत्यादिक पूर्वोक्त रौद्र स्वभाव का लक्षण जानना

ऐसा पंडित पुरषों ने बतलाया है॥ २॥ सोई श्लोक द्वारा दिखलाते हैं॥

श्लोक—राज्योप भोग शयना सन वाह नेषु। स्त्री गंधमा ल्य मणि रत्न विभूषणे षु॥ इच्छा भिलाष मति मात्र मुपैति मोहा। ध्यानंत दार्त्त मितिसं प्रवदंति तज्या॥ १॥ संच्छेद नैर्द हन भंजन मारणै श्च। वंध प्रहार दहनै विनिकृंत नैश्च॥ यो यातिरागमु पया तिचनानु कंपा॥ ध्यानं तुरौद्र मिति संप्रवदंति तज्ञा॥ २॥

व्याख्या—राजा पदकी इच्छा रखना इन दोनों श्लोकों के अर्थ ऊपर लिख आये है इस वास्ते यहां पर लिखने की जरूरी नहीं॥ तथा इस संसार के विषै प्राये करके धर्मी लोगों के भी वीच २ में खराब ध्यान हो जाता है मगर तिन पुरषों ने ज्ञान वल सेती खराव रस्ते जाने वाले मन को अच्छे मार्ग में ले आता जो पुरष हमेशा पाप व्यापार में प्रवर्त्त नहा रहे हैं तिनों के अनर्थ लगाही रहता है तथा अप कृष्ट याने खराव ध्यान उस को अपध्यान याने रौद्र ध्यान कहते हैं दूसरा ध्यान तथा पाप का कारण खेती कर्म को आदि लेके और तिस पाप व्यापार का दाक्षिणता गोया मुलायजा करके विपरीत कहना तथा दूसरे के कहने से झूठ कहदेना इत्यादिक मायना दाक्षिण्नता के हैं इन विगर जो उपदेश देना उसको पापोपदेश कहते हैं॥ २॥ तथा पाप का ही एक आचार है जहां पर ऐसा आग है विष है हल है शस्त्र आदिक तिनका दान करना दाक्षिन्नता के स्थान विगर जो उपदेश देना गोया असंयती को उसकों हिंस्रदान कहते है॥ ३॥ तथा प्रमाद मद्रा कों आदि लेके तिस करके आचरण गोया अंगीकार करना उसको प्रमाद आचरित कहते हैं जैसे सात व्यसन और जल का खेल तथा झाड़ की शाखा अंगीकार करके हिंडणों का खेल तथा कूकड़ा वगैरे जीवों की लड़ाई तथा खोटा शास्त्र याने सामुद्रक और कोक वगैरे उन को सीखना तथा राज कथा वगैरे खोटी कथा वा अथवा प्रमाद आचरण में आलस्य भी लेना चाहिये तथा विगर सोधा छाणा लकड़ी तथा धान तथा जल वगैरे तथा चूले कों आदि लैके चंद्रवा नहीं वांधना ढंकने विगर दीपक तथा चूला तथा घी और दही को आदि लैके उघाड़ा रखना इत्यादिक में अपना और दूसरे जीव घात होता है इस वास्ते बहुत अनर्थ का कारण समझना

॥ ४ ॥ इस वास्ते परम गुरू महाराज ने श्रावक के घर में सात गलना और नव चन्द्रवा बांधना फरमाया है सोई दिखलाते हैं ॥

—सुद्धे सायव गेहे। हवई गलणाइंसत्तसविसेसं॥
जल मिट्ठ १ खार २ आछण ३ तक्कं ४
घी ५ तिल्ल ६ चून्नयं ७ ॥ १ ॥

व्याख्या—जलके ठिकाने १ खार की चीज के ठिकाने २ तथा आछण के ठिकाने ३ तथा छाछ के ठिकाने ४ तथा घी के ठिकाने ५ तथा तेल के ठिकाने ६ तथा आटे के ठिकाने ७ तथा पिठ्ठ याने आटे का है उसका गलना चालनी कों आदि लेके तथा दूध और दही का गलना अवश्यधारण करना तथा चन्द्रवा नव ठिकाने बांधना सो बतलाते हैं॥ जलके ठिकाने १ तथा ऊखल के ठिकाने २ तथा घट्टी के ठिकाने ३ तथा चूले के ठिकाने ४ तथा सोने के ठिकाने ८ और देवके ठिकाने ९ नवीन चिकना कपड़ा नवम मार्गे श्रावक ने अवश्य धारण करना चाहिये अगर धारण नहीं करें तो अनर्थ दंड होता है इन लक्षणों सहित चार प्रकार का अनर्थ दंड कहा गया है तथा उस अनर्थ दंड से दूर होना तिसको तीसरा गुण व्रत कहते हैं अब इस अनर्थ दंड को विशेष त्याग करना दिखलाते हैं॥ तथा प्राये गृहस्थ त्याग करते हैं शक्ति माफिक याने अर्थ दंड को भी उपयोग सहित पर मार्थ के जानने वाले अर्थ दंड का कारण करे मगर अनर्थ दंड का काम नहीं करे यहां पर सर्व अनर्थ दंड के भेद बतलाया उन सब का दृष्टान्त कह सक्ते नहीं, मगर चूले ऊपर चंद्रवा बांधा नहीं इस वास्ते प्रमाद से अंगीकार भया उसको प्रमादा चरित कहते हैं उस प्रमादा चरित पर दृष्टान्त दिखलाते हैं॥

—चंदोदय दाणाओ॥जाया॥ मिग सुंदरी सयासु
हिया॥ तज्ज्ञालणा ओ कुट्ठी। तन्ना हो पर
भवे जाओ॥ ५६॥

व्याख्या—चूले पर चंद्रवो बांधने सेती मृग सुंदरी सेठ की कन्या सदा सुखिनी भई तथा तिन चंद्रवों के जलाने से मृग सुन्दरी का नाथ याने भर्त्तार पर भव में कोढी भया तथा पहिचान करके और भी मृग सुंदरी के स्वजन संबंधी लोग चूलै ऊपर चंद्रवा नहीं बांधने सेती अकस्मात् मरण रूप कष्टमें प्राप्त हुवा इति गाथा अर्थः तथा

भावार्थ तो कथानक से जानना अब मृगसुंदरी का वृत्तान्त कहते हैं श्री पुर नगर के विषै श्रीषेण राजा तिस के देव राज लड़का वो यौवन उमर में पूर्व भव के खोटे कर्म के वस सेती कोढ़ी हो गया तब सात वर्ष तक नाना प्रकार के इलाज किये मगर रोग हटा नहीं तब वैद्यों ने भी छोड़ दिया तब तिस के दुक्ख में दुखी होके राजा विचार ने लगा जो कोई मेरे पुत्र को रोग रहित कर देवे तो तिस कों आधा राज्य दे देऊं ऐसा विचार के डूंडी पिट वाई तब तहां पर एक यशोदत्त नामें सेठ धन वान रहता था तिस के शील वगैरे गुणों करके सहित लक्ष्मीवती नाम कन्या तिसने उस डूंडी को मनाई करके बोली मैं राज पुत्र कों रोग रहित करूंगी तब राजा अत्यंत आदर करके बुलवाई तब वा भी पिता सहित जल्दी राजा के महल में जा करके शील के प्रभाव सेती अपने हाथ का फर्श करने से तिस राज कुमर का कोढ दूर कर दिया तब प्रसन्न हुवा राजा अपनी प्रत्तिज्ञा पालने के वास्ते तिस कन्या प्रतें वड़े उत्सव करके अपने पुत्र प्रतें परणाई याने सादी करी राजा खुद पुत्र प्रतें राज्य ऊपर वैठा करके गुरू महाराज के पास में दीक्षा ग्रहण करी तब दोनों स्त्री भर्त्तार सुखें करके राज्य पालने लगे अब एक दिन के वक्त तहां पर ज्ञानी आचार्य पधारे तब राजा रानी परिवार सहित वंदना करने के वास्ते गये तब गुरू महाराज ने देशना दी तब देशना के वाद तिन दोनों ने रोग पैदा होने का कारण पूछा तब गुरू महाराज बोले भो राजा पूर्व भव में खोटे कर्म करे थे उस के उदय सेती तेरे शरीर में मोटा रोग उत्पन्न भया अब पूर्व भव कहते हैं वसंतपुर नगर में मिथ्यात्व में मोहित बुद्धि वाला देव दत्त नामें व्यवहारी रहता था तिस के धन देव ॥ १ ॥ धन दत्त ॥ २ ॥ धनमित्र ॥ ३ ॥ धनेश्वर ॥ ४ ॥ ऐसे चार पुत्र भये तिन के विषय धनेश्वर लड़का एक दिन के समय में व्यापार करने के वास्ते मृगपुर नगर गया तिस नगर में एक जिन धर्म पालने में उत्कृष्ट जिन दत्त नामें सेठ वसता था तिस के मृग सुंदरी नामें कन्या थी तिस ने वालक उमर में गुरू महाराज के पास में तीन अभिग्रह याने नियम ग्रहण करा प्रथम तो जिन राज की पूजा करनी ॥ १ ॥ तथा साधू को दान देना ॥ २ ॥ वाद भोजन करूंगी । मगर रात को भोजन करूंगी नहीं ॥ ३ ॥

अब एक दिन के वक्त में अति अद्भुत रूप की धरने वाली तिस मृग सुंदरी प्रतें देख करके वो धनेश्वर वनियें का लड़का तिस कन्या के ऊपर दृढ राग वान हो गया मगर मिथ्या दृष्टि है इस वास्ते तिस को सेठ ने कन्या नहीं दी तब वो कपट से श्रावक हो करके तिस कन्या को परण करके अनुक्रम से अपने नगर गया तहां पर धर्म की ईर्षा करके और मिथ्या मती थाई इस वास्ते यिस मृग सुंदरी के जिन पूजादिक धर्म

कार्य को मना करता भया तब तिस के अपने नियम में स्थिर चित्त था इस वास्ते तीन उपवास हो गया चोथे दिन घर के दरवाजे पर आया गुरू महाराज तिनों से अपने नियम रखने का उपाय पूछा तब गुरू महाराज गुण विचार करके बोले हे भद्रे तूं चूलै के ऊपर चंद्रवा बांधा कर तिस करके पांच साधू को आहार देने का फल तथा पांच तीर्थ को नमस्कार करने का जितना फल उतना फल होगा तब तिसने भी गुरू महाराज की आज्ञा करके तिसी माफिक किया तब शुशरे को आदि लेके लोग विचार ने लगे कुछ याका मण कर रही है ऐसा विचार करके धनेश्वर के आगू हकीकत कही तब तिसने क्रोध करके तिस चंद्रवे को जला दिया तब तिसने दूसरा बांधा तिस को भी इस माफिक सात चंद्रवा जलाया तब तिस का स्वरूप देख करके खेदातुर होके शुशरा बोला हे भोली किस वास्ते तकलीफ कर रही है तब वा बोली जीवदया के वास्ते तब फेर शुशरा रोष करके बोला अगर जो तेरे को जीव दया पालनी है तो पिता के घर चली जा तब वा बोली मैं कुल वान की पुत्री हूं कुलटा की तरह से इकेली जाऊं नहीं कुटुंब सहित तुम पिता सहित तुम पिता के घर छोड़ आवो तब कुटुंब सहित शुशरा तिस को लैके मृगपुर नगर मर्ते चला रस्ते में एक गांव में शुशरे के पक्ष वालों ने पाहूनों की भक्ती के वास्ते रात में भोजन वनाया तब भोजन के वास्ते सर्व तैयार भया मगर मृग सुंदरी अपने नियम को याद करती भोजन में तैयार नहीं भई तब शुशर को आदि लेके उनको अच्छी बुद्धि पैदा भई तब मृग सुंदरी से आग्रह से उन लोगों ने भी भोजन नहीं किया तिस वक्त में जिस के घर में रसोई भई थी उन के कुटुंब वालों ने भोजन कर लिया अब सवेरे के वक्त में तिन संवन्धी लोगों को मरा भया देख करके शुशरा वगैरे इधर उधर देखने लगे तित ने तो अन्न की थाली में सांप की सांकल पड़ी भई देखी तब सर्व लोगों ने विचार किया रात्रि की वक्त में अन्न के वर्तन में धूमें जैसा काला सांप पड़ गया इससे मर गया पीछे सर्वों ने मृग सुंदरी से क्षामणा करी तब मृग सुंदरी बोली भोआर्य लोगों इस वास्ते मैं चूलै ऊपर चंद्रवा देती हूं और रात को भोजन नहीं करती तब मृग सुंदरी के वचन से भति वोध पाके और जीवित दान सेती साक्षात कुल देवी की तरह से मृग सुंदरी को मान करके सर्व पीछे आया ओर मृग सुंदरी के उपदेश करके शुश्रावक याने उत्तम सोभनीक श्रावक हो गया तब मृग सुंदरी और धनेश्वर दोनों बहुत काल तक धर्म आराधन करके आखिर में समाधि सहित काल करके देव लोक के सुख भोग करके तुम दोनों भया तैंने पूर्व भव में सात चन्द्रवा जलाए थे इस सबब से तेरे शरीर में कौढ रोग पैदा हो गया तथा तिस खोटे कर्मों की निन्दा

करने से बहुत क्षय कर दिया मगर अंशमात्र रह गया तिस वास्ते यहां पर सात वरस व्याधि भई तब राजा रानी इस माफिक़ गुरू महाराज के मुख सेती पूर्व भव सुनने से जाती स्मरण ज्ञान पैदा हो गया फेर संसार से विरक्त होके पुत्र प्रतें राज्य बैठा के दीक्षा ग्रहण करके, आखिर में देवलोक में गया यह अनर्थ दंड के ऊपर याने विरमण दूर होने का अनर्थ दंड विरमण पर मृग सुंदरी का वृत्तांत कहा इस माफिक और भी भव्य जीव चूलै ऊपर चंद्रवा देने से अनर्थ दंड से दूर होना अब इस व्रत की भावना दिखाते हैं ॥

—चिंते अव्वंच नमो । सअट्ठ गाइंच जेहिं
पावाइं ॥ साहूहिं वज्जियाइं । निरट्ठ गाइंच
सव्वाइं ॥ १ ॥

व्याख्या—श्रावक ने ऐसा विचार करना चाहिये कि नमस्कार हुवो सर्व साधु महाराज को जिनों ने सार्थक और निरर्थक या अर्थ दंड और अनर्थ दंड उनदोनों का जिनों ने त्याग किया है ऐसे मुनि धन्य हैं ॥ १ ॥ तथा और जगे भी कहा है सो दिखलाते हैं

तुल्ले विउ अर भरणे । मूढ अमूढाण अन्तर
इत्थ ॥ एगाण नरय दुक्खं । अन्ने सिंसासयं
सुक्खं ॥ २ ॥

व्याख्या—पेट भरने में दोनों बरोबर हैं कोन गोया मूर्ख औन चतुर यह दोनों ही मगर एक को नरक का दुक्ख और एक को देव लोक का सुक्ख मिलता है ॥ २ ॥ इतने करके तीसरा गुण व्रत भावित किया ॥ ८ ॥

अब चार शिक्षा व्रतों का अवसर आया तहां पर शिक्षा वारंवार होना और मन को समझाने शिक्षा याने शीख याने यादी कर वाना तिस मई है प्रधान व्रत तिन को शिक्षा व्रत कहते हैं जैसे शिष्य है सो विद्या अभ्यास वारंवार करता रहे तिसी तरह से श्रावक भी इन व्रतों को वारंवार अभ्यास करे अब इन व्रतों के विषै जो प्रथम व्रत सामायक व्रत निरूपण करते हैं तहां पर राग द्वेष रहित होके जीव को ज्ञानादिक का लाभ होना वोही है प्रयोजन जिस में इस माफिक क्रिया अनुष्टान जिस के इस को

सामायक तिसे रूप जो व्रत तिस कूं सामायक व्रत कहते हैं सो इस माफिक दिखलाते हैं ॥

—सामाय इमिह पढमं । सावज्जं जत्थवज्जिउं जो
गे ॥ समणाणं होइ समो । देसेणं देस विर
ओवि ॥ ५० ॥

व्याख्या—यहां सामायक नाम प्रथम शिक्षा व्रत का है जिस माफिक के करने सेती देश विरती भी पापके व्यापार को मन वचन काया करके त्याग किया और सर्व विरती जैसा हो जाता है सो किसमाफिक होता है सो दृष्टान्त देके बतलाते हैं ॥ देशें करके उपमा दी जाती है याने एक देश करके जैसे चंद्र मुखीया स्त्री है मगर सब शरीर तो चन्द्र जैसा नहीं मगर मुखमें शीतल ता गुण चन्द्र समान लिवा है मगर सर्व शरीर को उपमा नहीं तथा फेर भी वतलाते हैं कि समुद्र तरह से यह तालाव भरा हुवा है इस माफिक देश करके उपमा दी गई है नहीं तो साधू और श्रावक के बड़ा अन्तर है सो दिखलाते हैं तथा साधू उत्कृष्ट वारे अंग की विद्या पढ़ते हैं तथा श्रावक जो है सिर्फ दस वै कालिकका छज्जीवणी अध्ययन पढ़ता है तथा साधू उत्कृष्ट करके सर्वार्थ सिद्धि विमान में उत्पन्न होता है और श्रावक वारमें देव लोक में उत्पन्न होता है तथा साधू मरे वाद देव गती या सिद्धी गती में जाते हैं तथा श्रावक के तो सिर्फ देव लोक ही है तथा फेर साधू के चार संज्वलन कषाय की चौकड़ी रहती है तथा वर्जित भी होता है तथा श्रावक के आठ प्रत्याख्याना वरण संज्वलना भी होता है तथा फेर साधू के पांच महा व्रत समग्र होता है और श्रावक के तो इच्छा प्रमाणें होता है तथा साधू के एक वक्त ग्रहण करी भई सामायिक जावज्जीव रहती है तथा श्रावक के वारंवार अंगीकार करी जाती है तथा साधू के एक व्रत खंडन होने से सर्व व्रत खंडन हो जाता है आपस में सापेक्ष धर्म रहा है इस वास्ते तथा श्रावक के इस माफिक नहीं है अब कहते हैं सामायिक कहां पर करना चाहिये ऐसी शंका लाके कहते हैं ॥

—मुनिः समीपे जिन मंदिरे वा । गृहे थवायत्र निरा
कुलस्यात् ॥ सामायिकंतत्रक रोति गेही ।
सुगुप्ति युक्तः समित श्चसम्यक् ॥ ५८ ॥

व्याख्या—गृहस्थ याने श्रावक प्रथम मुनिराज के पास सामायक करे जिस के

अभाव से जिन मंदिर में एकान्त स्थान आसातना रहित अगर दोनों के अभाव होने से अपने घरमें करे अथवा बहुत क्या कहें जिस जिस क्षेत्र के विषै वा शून्य घर में वा मार्गादिक में आकुलता रहित तिस ठिकाने में गुप्ति करके युक्त और समिति सहित सामायिक करे तथा जिन मंदिर में सामायिक करै उससे साधू के पास धर्म वार्ता सुनने करके विशेष लाभ का कारण है इस वास्ते जिन मंदिर सेवी मुनि पास करना श्रेष्ठ है तथा फेर भी विशेषता दिखलाते हैं जो श्रावक घर वगैरे में सामायिक करै तो भी वो श्रावक सामायिक लेके बैठा है और अंगीकार कर के तो भी समिति गुप्ति करके सहित गुरू महाराज के पास में आके तिन के साक्षी से सामायिक उच्चारण करता है इस माफिक अल्प रिद्धि वाला उसकी विधि रही है तथा बड़ी रिद्धि वाले राजा वगैरह सामायिक करणें के वास्ते साधू के पास आकरके सामायिक अंगीकार करे अगर सामायिक करके तो उनके पिछाड़ी जाने से हाथी घोड़ा सिपाईयें करके अधिकरण की क्रिया लगती है वा क्रिया किसको कहते हैं विशेष करके इस चर्चा के बारे में आवश्यकचूर्णि देखना अब सामायिक में रहने वाले का कृत्य दिखलाते हैं ॥

श्लोक—सामायकस्थः प्रवराग मार्थं । पृच्छेन्महात्मा चरितंस्मरेच्च ॥ आलस्य निद्रावि कथादि दोषान् । विवर्ज्जयेत् शुद्ध मनादमालुः ॥ ५६ ॥

व्याख्या—श्रावक सामायिक में रहा हुवा उत्तम आगम अर्थ प्रते पूछै तथा महात्मा के चरित्र प्रतें स्मरण करे और आलस्य नींद तथा राज कथादि कवि कथा त्याग करें दयावान शुद्ध मन वाला त्याग करे तथा आलस्य को आदि लेके दोष दिखलाते हैं ॥ आलस १ निद्रा २ पालखी ३ तथा थिर आसन नहीं ४ नजर हिलाना ५ एक काम से दूसरे काम में मत लागना ६ तथा दीवाल के साहरे बैठै नहीं ७ तथा अंग उपांग को छिपावै नहीं ८ तथा शरीरमें मैल उतारै तथा बिछावना करैं नहीं ९ तथा अंगुली वगैरे को मरोड़े नहीं तथा खाजखिणें नहीं ॥ यह बारे काया का दूषण कहा अब दस प्रकारे वचन का दूषण लिखते हैं ॥ तथा खराब वचन १ विगर विचार से बोलना २ घात वचन ३ जैसे दिल में आवे वैसाई वचन निकाल देना ४ प्रशंसा वचन ५ कलह ६ तथा विकथा ७ तथा हास्य वचन ८ तथा जल्दी करके बोल देना ९ तथा जाना आना बतलाना १० यह दस वचन के दोष ॥

अब दस मन के दोष कहते हैं ॥ तथा अविवेकपणा १ तथा यश कीर्ति के अभि

लाषी २ तथा लाभ के अर्थी ३ तथा अहंकार ४ तथा भय ५ तथा नीयाणें की वांछा ६ तथा संशय ७ तथा रोष ८ तथा अविनय ९ और अभक्ति १० यह दस मनके दोष ॥ यह सर्व बत्तीस दोष सामायिक में त्याग करना तथा गृहस्थ त्रस और थावर जीव राशि के ऊपर हमेसा तपै भये लोह के गोले समान रहा है मगर अंतर्मुहुर्त्त मात्र सामायिक में रहा हुवा तव तक निश्चय करके मित्रता रही है सो इसी को श्लोक द्वारा दिखलाते हैं ॥

श्लोक—किंचगृही त्रसथावर जंतुराशिषु । सदैवतप्ता यसगोल कोपमः ॥ सामायिकावस्थितएष निश्चितं । मुहूर्त्तमात्रं भवती हतत्सखः ॥ ६० ॥

व्याख्या—इस संसार के विषै गृहस्थ त्रसथावर जीव समुदाय के विषै जीवों को तपाने वाला जानना याने तपा भया लोह के गोले जैसा वर्त्ते है तथा सामायिक में रह के यह गृस्थ दो घड़ी तक निश्चय करके उन जीवों का मित्र होता है आरंभ छोड़ने से यहां पर पाप कारी योगों का पच्चण किया है इसमाफिक सामायिक का काल अंतर्मुहुर्त्त प्रमाणें सिद्धान्त में नहीं कहा तो भी जान लेना चाहिये तथा पच्चक्खण का काल तो जघन्य करके अंतर्मुहुर्त्त का दिखलाया नवकार सीके पच्चखांण की तरह से अब यहां पर दृष्टान्त दिखलाते हैं ॥

—सदैव सामायिक शुद्ध वृत्ति । मानोपमाने पिसमान भावः ॥ मुनिःस्वर श्री दम दंत संज्ञो वभूवभृत समृद्धि भोगी ॥ ६१ ॥

व्याख्या—हमेसा सामायिक में शुद्ध वृत्ति रखना इस वास्ते मान अपमान में वरो वर व्यापार रहा है जिस का मन इस माफिक श्री दम दंत नामें मुनीश्वर सम्यक समायिक स्वरूप करके उत्तम रिद्धी के भोगने वाले भये इस वास्ते सामायिक में रहा हुवा भव्य जीव ऐसे स्वरूप वाला होता है सो दिखलाते हैं ॥

—निंदप संसासु समो । समोय माणा व माण कारीसु ॥ समसयण परियण मणो । सामाइय संग ओजीवो ॥ १ ॥

व्याख्या—कोई निंदा करे कोई प्रशंसा करे तथा कोई स्वजन है और कोई पर जन है कोई मान करे अपमान करे मगर सामायिक में बरोबर जानना चाहिये अब यहां पर दमदंत का वृत्तान्त कहते हैं हस्त शीर्ष नगर में दमदंत नामें राजा बहुत बलरूप रिद्धि करके सहित सुख सेती राज्य पालता था तिस अवसर में हस्ति नागपुर के विषै पांडव और कौरव राज्य पालते थे तिनों के और दमतंत के साथ में सीमा के निमित्त एक महा विवाद भया तब एक दिन के वक्त में दमदंत राजा जरासंध की सेवा करने को गया तब पिछाड़ी से पांडव और कौरव तिस के देश का भंग कर दिया तब या हकीकत सुन करके कोपायमान दमदंत होके जल्दी से बहुत बल लैके हस्तिनाग पुर के ऊपर चढ़ के आया तहां पर दोनों के आपस में बड़ा भारी जुद्ध भया मगर कर्म बस से पांड्व और कौरव हार गया दमदंत जितया करके विजय ढकायाजित्र बजा के अपने ठिकाने आया तथा कितने काल गये बाद वो दमदंत राजा एक दिन शाम के वक्त में पांच बर्णा बाद लोका स्वरूप देख करके वैराग्य सें संसार के स्वरूप को तिक माफिक असार समझ करके प्रत्येक बुद्धपने से दीक्षा अंगीकार करी तब ग्रामा नुग्राम विहार कपके एक दिन हस्तिनाग पुर में पोल के बाहिर काउसग्गमें रहा तब राजवाड़ी में जाते पांड्वों ने मार्ग में तिस मुनी प्रतें देख करके पूछा कि यह कौन सा मुनी है तब सेवक बोला कि हे महाराज दमदंत राजा रिषि है यह तब पांडव जल्दी से घोड़े से उतर करके हर्ष सहित तीन प्रदक्षिणा देके दोनों वल्कि तारीफ करके आगूं चले तिन के बाद कौरव आया तिन में बड़ा दुर्योधन था तिसने उसी माफिक प्रश्न पूछा तब सेवक लोगों से दमदंत को जान करके अहो इति आश्चर्य यह तो हमारा वैरी है इस का तो मूं भी न देखना चाहिये इत्यादिक खोटे वचनों से तिरस्कार करके क्रोध सहित साधू के सामने बीजोरे का फल फेंक करके आगूं चला तब जैसे राजा करे तैसे ही प्रजा करे इस न्याय करके पीछाड़ी फौज वाले लोगों ने काष्ट धूल पत्थर फेंक करके मुनी के चौतरफ से चौकी के बतौर कर दिया अब पांडव भी अपनी इच्छा से वन क्रीड़ा करकै पीछा लौट करके रस्ते में मुनी के ठिकाने तिस बड़े करके लोगोंसे प्रसश्न पूर्वक सर्व कौरवों का चौंतरे को देख खोटा चरित्र जान करके जल्दी तहां आ करके पत्थर बगेरे दूर करवाया तिस दमदंत राज रिषि प्रतें विधि पूर्वक वंदना नमस्कार करके अपने ठिकाने गया तब पांडवों ने तो इस माफिक मान किया और कौर वों ने अपमान किया तो भी मुनि राजतो दोनों के ऊपर मन करके समभाव रक्खा मन करके भी राग द्वेष नहीं किया, तब मुनिराज बहुत काल तक चारित्र आराधन करके आखिर में उत्तम गती के भजने

वाले भये इस माफिक दम दंत राज रिषि का वृत्तान्त कहा इस तरह और भी भव्य जीव अपनी गुणों की अभिलाषा रखने वाला सामायिक में थिर मन परिणाम होना चाहिये अब इस व्रत की भावना दिखलाते हैं ॥

—धन्ना ते जिय लोए। जावज्जी वंकरंति जेसमणा ॥
सामाइयं विसुद्धं। निच्चंएवं विचिंतिज्जा ॥ १ ॥
कईआणु अहंदिक्खं। जावज्जीवं जहट्ठि ओ
समणो॥ निस्सं गोविह रिस्सं। एवंच मणेण
चिंतिज्जा ॥ २ ॥

व्याख्या—धन्य है मुनि महाराज इस लोक में जावज्जीव तक सामायक करते हैं अत्यंत शुद्ध का यादि जोगों कर इस माफिक श्रावक को चिंतवन करना चाहिये ॥ १ ॥ तथा में दिक्षा कब लूंगा जावज्जीव तक मुनी जैसे रहते हैं तिस माफिक संग रहित कब विचरूंगा ऐसा विचार ना चाहिये ॥ २ ॥ इतने करके भावित किया प्रथम शिक्षा व्रत ॥ ९ ॥

अब दूसरा देशाव काशिक व्रत निरूपण करते हैं ॥ जो मोकले रक्खे भये नियम उनों का देश करके संक्षिप्त विभाग करके अवकाश गोया स्थान तिस करके दूर होना देशाव काशिक तिस रूप जो व्रत तिस को देशाव काशिक व्रत कहते हैं अब इस को विवरे वार वतलाते हैं ॥ व्रत को अंगीकार करती वक्त में ग्रहण करा है जीवित अवधि तक दिशा व्रत का वाथवा प्राणातिपात से दूर होना सर्व व्रतों को जो निरन्तर संक्षेप करना तिस को देशाव काशिक व्रत कहते हैं सोई दिखलाते हैं ॥

—पुव्वंग हियस्स दिसा वयस्स। सव्वव्वयाण
वाणुदिणं। जो संखे वो देसा ॥ वगासियंतं वयं
विइयं ॥ ६२ ॥

व्याख्य—प्रथम ग्रहण करा है देशाव काशिक व्रत उनको हमेसा संक्षेप करना तिसको देशाव काशिक व्रत दूसरा कहते हैं ॥ ६२ ॥ अब यहां पर वृद्ध ऐसा कहते हैं दिग् व्रत संक्षेप करना तथा शेष व्रत भी संक्षेप करना ओल खांण करके देख लेना ते

षामपि संक्षेपस्य अवश्यंक संभ्यत्वात् प्रति व्रतं चादि वस पक्षादि अवधि करके संक्षेप करना भिन्न व्रतत्वे द्वादस व्रतानीति संख्या विरोधः स्यादिति यह कहने से देशाव काशिक व्रत दिग व्रत का ही विषय जानना तथा फेर भी इसी बात को पुष्ट करते हैं ॥

—पुव्वंदिसि वयग हियस्स। दिसा परि माणस्स पइ दिणं परिमाण करणं ॥ देशावगासि अंति

असा मूलं सूत्र है सूचन मात्र का रित्वात् सूत्रं। तथाच चूर्णि कार भी दिख लाते हैं ॥

—एवंसव्व वएसु जे पमाणा ठविया। तेपुणो२ दिवस ओ ओ सारेइ। दिवसिया ओरत्तिओसारेइ इति १

सुगमं अर्थ ॥ अब यहां पर इस व्रत ऊपर दृष्टान्त दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

—आसन्न नरक वांस श्चंडम ति श्चंड कौशिकः सर्पः। देशाव काशिक के नाच अष्टम कल्पं सत्वरंप्रास :॥ १ ॥

सुगमार्थ ॥ इसका भावार्थ कथा से जानना। कोई एक क्षपक मुनि एक मास उपवास के पारणें के दिन शिष्य सहित आहार के वास्ते गया रस्ते में तिन के पांव के नीचे मेंडकी की विराधना हो गई तब शिष्य बोला हे स्वामी तुमने इस मेंडकी कूं मर्दन कर डाली इस वास्ते मिथ्या दुष्कृत देना चाहिये तब तिस के वचन सेती उत्पन्न भया कषाय वो क्षपक साधु लोकों से मर्दन होके मर गई अब मेंडकी उस को दिखलाके बोला अरे दुष्टात्मा या मरी भई थी इस को मैंने नहीं मारी तब शिष्य गुरू को क्रोध सहित जान करके मौन अंगीकार किया तथा संध्या की वक्त आलोचना समय में तिस मुनि मतें उस मेंडकी की याद फेर दिलवाई तब विशेष करके क्रोध उत्पन्न भया वो क्षपक साधु रजो हरण उठा करके शिष्य को मारने के लिये दौड़ा बीच में खंभे की लगने से सिर फूट करके अकस्मात् मर करके ज्योतिषियों में देवता भया तहां से चव करके कनक खल नामा वनमें चंड कौशिक नामें तापस भया तहां

भी प्राक्तन संस्कार सेती कषाय बहुत था एक दिन आश्रम सेती फल ग्रहण करने वाला राज कुमार प्रतें मारने के वास्ते हाथ में फरश्रु लेके भगा बीच में पांव चूकने से कोई एक गर्त्ता में पड़ गया तब मर करके तिसी आश्रम में दृष्टि विष सर्प भया तिसी वन में प्राग् भव के अभ्यास सेती अत्यंत मूर्च्छित होके मनुष्यादिक का संचार मिटा दिया एक दिन के वक्त छद्मस्थ अवस्था में श्री वीर स्वामी विहार करके गोपों ने मना करे मगर लाभ जान करके तिस बिल के पास में प्रतिमा में रहे तब वो सर्प जल्दी बिल से निकल करके भगवंत को देख करके जाति उत्कट कषाय करके डशा तब वज्र खंभ की परें अचल तथा भगवान के सरीर सेती निकला सुपेद दूध जैसा रूधिर देख करके आश्चर्य पाके प्रभु का स्वरूप दिल में विचार करके ईहा पो करने से जाती स्मरण ज्ञान से अपना पूर्व भव देखा तब निर्विष होके वो नाग भक्ति करके प्रभु कों प्रदक्षिणा देके नमस्कार करा प्रभू के सामने सर्व अपने जीव हिंसादिक अकृत्य को आलोच करके अन शण ग्रहण करा तथा मेरी दृष्टि से प्राणियों को भय नहीं होना ऐसा विचार करके देशा व काशिक व्रत ग्रहण करके बिलमें मुख डाल करके रहा तब या हकीकत सुन करके गोप भी नवनीत से अर्चा करते भये तिस की गंध से आई चीटियां का समुदाय शरीर में लग करके छिद्र कर दिया तो भी चंड़ कौशिक सर्प काया मन करके निश्चल रहा अन शन उत्तम पाल करके सहस्रार देव लोक में महर्द्धिक देवता भया इये दशमें व्रत के ऊपर चंड़ कौशिक का दृष्टान्त कहा ॥ इस तरह से और भी भव्य जीव संसार से डरने वाले इस व्रत को आदर करके पालना ॥ अब इस व्रत की भावना दिखलाते हैं ॥

—सव्वेयसव्वसंगेहिं। वज्जिए साहुणो नमं सिज्ञा॥
सव्वेहिं जेहिं सव्वं। सा वज्जं सव्वहा चत्तं॥

इस माफिक भावित करा दूसरा शिक्षा व्रत ॥ १० ॥ अब तीसरा शिक्षा व्रत पोषध व्रत निरूपण करते हैं ॥ धर्म को पुष्ट करने वाला उस को पौषध व्रत कहते हैं पर्व दिनों के विषै अनुष्ठान करने योग्य व्यापार तिस रूप जो व्रत तिसको पौषध व्रत कहते है सो चार प्रकार का है सो इस माफिक गाथा द्वारा दिखलाते हैं ॥

गाथा—आहार देह सक्कार। गेह वावार विरइ बंभेहिं॥

पव्वदिणाणु ट्ठाणं ।.तइय पोस हव यंच उहा ॥ ६६ ॥

व्याख्या—आहार १ सरीर सत्कार २ गृह व्यापार निवृति ३ तथा ब्रह्मचर्य ४ भेद से चार प्रकार का होता है जो पर्व दिन में अनुष्ठान करना उसको तीसरा पौषध व्रत कहते हैं ॥ तहां पर निवृत्ति याने दूर होने का हैं प्रत्येक शब्द में लगाना तथा आहार निवृति अशना दिक का त्याग ॥ १ ॥ तथा देह सत्कार निवृत्ति । याने स्नान है उद्वर्त्तन है विले पनादि परि त्याग करना ॥ २ ॥ गृह व्यापार से निवृत्ति करना गोया घर कार्य निवृत्ति ॥ ३ ॥ तथा ब्रह्मचर्य स्त्री सेवा प्रतिषेधः ॥ ४ ॥ अब यहां पर फेर आहार निवृत्ति रूपपोषा दो प्रकार का है ॥ एक तो देशे ॥ १ ॥ और दूसरा सर्वे तथा देश करके तीन प्रकार के आहार के प्रत्याख्यान करना ॥ १ ॥ और सर्व करके चार प्रकार के आहार का प्रत्याख्यान करना ॥ २ ॥ और बाकी भेद सर्वे हैं सो फेर भी दिखलाते हैं ॥

—करे मिभंतेपो,सहं । आहार ।पोसहं । देस ओसव्व ओवा । सरीर ,सक्कार,पोसहं । सव्वओ । अव्वा वार पोसहं सव्वओ । चउव्विहे पोसहं । सावज्जं जोगं पच्चखामि । जावदि वसं अहोरत्तिं वा पज्जुवा सामि । दुविहं । तिविहेणं । इत्यादिक

इत्यादिक अर्थसु गम है । यहां पर फेर भी इतर अर्थ कहा है यह चार प्रकार के भी दो भेद हैं देस करके । सर्व करके तहां पर आहार पोषा देश सेती विकृत्यादि त्याग करना । ओरस कृत् । तथा द्विर्वा भोजन करना । तथा सर्व करके चतुर्विध आहार का त्याग करना ॥ १ ॥ तथा देह सत्कार । गृह व्यापार । और पौषध ३ देश करके कस्य चिद्देह सत्कार विशेषस्य गेह व्यापारस्य त्याग करणं ॥ १ ॥ तथा सर्व तस्तु सर्व स्यतस्या करणं । तथा ब्रह्म पौषध देश करके मैथुन का प्रमाण करणा तथा सर्व से ब्रह्मचर्य को पालन करना ॥ ४ ॥ अत्रेयं सामाचारी ॥ ४ ॥

—जो देस पोसहं कुणई सो सामाइ यंकरेई वानवा । जो सव्वपोसहं करेइ सो नियमासा माइयं करेइ जइ न करेइ तो वंचिज्जइ ।

पोषा कहां करे सो दिखलाते हैं ॥

—चेइहरे। साहु मूले हरेवा। पोषह साला एवा उम्मुक मणि सुवन्नो। पढंतो पुत्थ गंवा। वायंतो सुणंतो। धम्मझाणं झिया इत्ति। सुगमार्थः

यहां पर प्राक् दिखलाया पोषध पर्व दिन में अनुष्ठान करने योग्य व्यापार तहां पर्व दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

—चतुर्दश्यष्टमी दर्श। पौर्ण मासी षुपर्वसु। पाप व्यापार निर्मुक्तः। कुरुते पौषधं कृती ॥ ६५ ॥

सुगमार्थः ॥ यहां पर शिष्य प्रश्न करता है श्रावक जो है सो पर्व तिथी में ही पोषा करे और-दिन में नहीं करे अब उत्तर देते हैं गुरू महाराज कितनेक श्रावक को पोषा सर्व तिथीयों में करना यहां पर तत्वतो सर्व विद्व वेद्य है तथा सर्व परित्याग करने में मोटे लाभ का कारण है इस वास्ते अवश्य सर्व था आहार का त्याग करना चाहिये तथा श्रावक के कर्त्तव्य योग्य क्रिया निरूपण करते हैं ॥ आर्या ॥

—नृपति गृह रोगादिषु। नहि अशनाद्यं नधर्म मपि। लभसे। तत्किंप्रमाद्य सित्वं। ध्रुव धर्मे पोषधे भव्य ॥ ६ ॥

व्याख्या—राजा का रोध तथा रोग तथा प्रमाद आदि शब्द से दुर्भिक्षादिक इन ठिकानों के विषै राजा के और वैद्यका आधीनता है इस वास्ते तुझ को अन्नादिक नहीं मिलेगा तथा विरति परिणाम के अभाव सेती धर्म भी नहीं मिलेगा तिस वास्ते हे चेतन इस माफिक पर आधीनता से दोनों भव में भ्रष्ट हो जायगा ऐसा विलोकन करके ध्रुव धर्म के विषै अवश्य धर्म कारण में किस वास्ते प्रमाद करता है इस में प्रमाद करना लाजिम नहीं तथा सर्व तिथियों में पोषध करने की शक्ति न होवे तो पर्व तिथी में तो नियमा करना चाहिये इस वास्ते पर्व ग्रहण करा गया तथा आवश्यक वृत्यादिक में स्पष्टतरी के दिखलाया है कि पोषध प्रतिदिन नहीं करना सिर्फ षट तिथी मास में आती हैं उन चारित्र तिथीयों में करना इस वास्ते सूत्र कृतांग सूत्र वृत्ति में भी

श्रावक के बहत्तर पोषा बतलाया है अब पोषध व्रत के ऊपर दृष्टान्त बतलाते हैं ॥ श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—यःपौषं धारच्यः सुतरां सुरेण। पिशाचना
गोर गदुष्ट रूपैः। विक्षोभि तोपि क्षुभितो न
किंचित्। सकाम देवो नहि कस्य वर्ण्य ॥ ६७ ॥

व्याख्या—जो पोषध में रहा हुवा था तिसकों देवता पिशाच गज सर्पादिक दुष्ट रूपों करके अत्यंत क्षोभायमान किया मगर कुछ भी क्षोभायमान नहीं भया वो कामदेव नामें श्री चरम प्रभू का श्रावक किस उत्तम पुरुष के वर्णाव करने के योग्य नहीं अपितु सत्रों के वर्णाव करने योग्य है इस का दृष्टान्त आगू कहेंगे। अब इस व्रत की भावना दिखलाते हैं ॥

—उग्गं तप्पंतितवं। जेएएसिं नमोखु साहूणं। निस्सं
गायसरी रेवि। सावगो चिंतएइमं ॥ १ ॥ सुगमार्थः।
इस माफिकभावित किया तीसरा शिक्षाव्रत ॥ ११ ॥

अब चौथा अतिथि संविभाग शिक्षा व्रत दिखलाते हैं तहां पर तिथि पर्वादिकलोक व्यवहार रहित होवे उनको अतिथि कहते हैं ऐसे कौन गोया साधू महाराज तिनों का संवि भाग याने शुद्ध आहारादिक का देना उत्तम प्रकार के भोजन याने आहार तिस रूप व्रत को अतिथिसंविभाग व्रत कहते हैं तथा कितनेक ऐसा भी कहते हैं संविभाग भी कहा करते हैं तहां पर यथा प्रवृत्तस्य याने स्वभाव निष्पन्न आहार वगैरे साधूका विभाग करना यथा प्रवृत्तस्य स्वभाव निष्पन्न स्याहारादिः सम्यक साधु भ्योवि भजन मितिव्युत्तिः। तथा गृहस्थ जो है सो पोषध के पारणे में परम विनय करके साधुमुनी कों जो शुद्ध आहार देना तिस को को चौथा शिक्षा व्रत कहते हैं। सोई दिखलाते हैं ॥

—जंचग्गेही सुविसुद्धं। मुणिणो असणाइदेइपारणएपरमविण
एण एयं। तुरिय मतिहि संविभाग वयं ॥ १ ॥

उक्त अर्थः—अब यहां पर उपयोगी पणा करके कुछ चूर्णि लिखते हैं ॥

—पोसहं पारंतेण साहूणं अदाउं नवट्टइपारेउं । पुव्वं साहूणं दाउं । पच्छापारि अव्वँ । काहे विहीए दायव्वं। जाहे देस का लोताहें अप्पणो सव्वशरीर स्सविभूसणं काउणं । साहू पडिस्सयंग ओनिमंतेइ। भिक्खं गिराहवत्ति साहूणं का पडि वत्ति । ताहे अन्नो पडलगं । अन्नोभायणंपडि लेहेइ । माअंत राइय दोसाय वियगाइ दोसाय भविस्संति । सोजइ पढमाइ पोर सीए निमंतेइ । अत्थिय नमो काइत्ता। ताहे घिप्पइ। जइनत्थि ताहेन घिप्पई। तंधरि यव्वयं होहि। इसो घणं लग्गिज्जा ताहे घिप्पइ । संचिक्खा विज्जइ । जोवा उग्घाड़ पोर सीए पारे इपारण गइत्तो । अन्नो वातस्स विसजिज्जइ। तेण सावएण सह गम्मइ संघाड़ ओ वच्चइ । एगोन वचइ साहू पुर ओ । सावगोपत्थ ओघरं ने ऊण आस णेण निमंतिज्जा। जइ विन निविट्ठो विण ओ पउत्तो। ताहे भत्तपाणं सयं देइ। अहवा भायणं घरेइभज्जा देइ । अह वाठि ओ अत्थइ । जावदिणं सावसे संगिएहइ अव्वं। पच्छा कम्माइ परि हरणट्ठा। दाऊणं वंदित्ता विसज्जेइ अणु गच्छइय । पच्चासयं भुज्जइ। जंच किरसाहूणं नदिन्नं । तंसा वएण नभुत्तव्वं। जहिंपुण साहूणत्थि। तत्थ देस काल वेला एदि सालो ओकायव्वो । विसुद्धे णं भावेणं। जंइ साहू

णो हुंती तोनिच्छरि ओहोंतोत्ति ॥ सुगमार्थः ॥

कहने का मतलब यह है कि उत्तम श्रावक को चाहिये कि साधू महाराज को दान देना मगर अतिथि संविभाग व्रत का उच्चार तो पर्व के पारणें में होता है सोई आवस्यक वृत्ति में लिक्खा है सो दिखलाते हैं पोषध अतिथि संविभाग व्रत तो प्रति नियत दिन में अनुष्टान करना लाजिम है मगर प्रति दिवस में नहीं होता तथा फेर भी दिखलाते हैं श्रावक जो है सो साधू को एषणीय आहार देवे मगर अनेषणीय आहार कभी नहीं देवे कारण एषणीय आहार देने में बड़ा लाभ का कारण है तथा अनेषणीय देने में अल्प आयु बंध का कारण है अब यहां पर शिष्य प्रश्न करता है कि कुपात्र को एषणीय आहार देनेमें तिस माफिक गुण का कारण है या नहीं अब गुरू कहते हैं कि हे सदानंद शिष्य कुपात्र को एषणीय आहार दिया भया आहार भी केवल पाप का कारण है मगर निर्ज्जरा का कारण नहीं सोई श्री भद्दिवाह अंगे ॥

—समाणो वा सगस्सणंभंते तहारूवं असंजय । अविरय अप्पडिहय पच्चक्खाय पावकम्मंफासुएणवा अफासु एणवाए सणिज्जेणवा । अणेसणिज्जेणवा । असण पाण खाइम साइ मेणं पडि लामेमाणस्स । किं कज्जइ । गोयमा । एगंत सो से पावकम्मे कज्जइ । नत्थियसे काविनिज्जरा ॥ पंचमशतके ॥ सुगमार्थः ॥

अगर इस माफिक दोष का कारण हेतो श्रावक को साधु महाराज को वा और किसी को दान देना न चाहिये ॥ अब गुरू महाराज कहते हैं कि हे सदानंद शिष्य सुन आगम में अनुकंपादान की मनाई नहीं है सोई पूर्व सूरि कहते हैं ॥

—जंमुक्ख ट्ठादाणं । तंप इएसो विही समक्खाओ ।
अनुकंपा दाणं पुण । जिणेहिं नकया विपडि सिद्धं ॥ १ ॥

व्याख्या—मोक्ष के वास्ते जो दान देते हैं तिस को अंगीकार करके यह कुपात्र दान देने की विधि निषेध कही है मगर कर्म निर्ज्जरा अचिंत्य करके केवल कृपा करके ही जिस को देवे तिस को अनुकंपा दान कहते हैं फेर तीर्थ कर परम कृपालुवों ने कभी मनाई नहीं करी सोई बात राज प्रश्नीयो पांगे लिक्खी है ॥

—अतएव माणं तुमं पएसी। पुव्वं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासित्ती ॥

यहां पर श्री केशीगणधर के उपदेश से प्रदेशी राजाने अपने राज्यका चार विभाग कर लिया जिस में एक विभाग तो दीन अनाथ के वास्ते निरन्तर दान शाला में प्रवर्त्तन करावे दान त्याग करने से जिन मत की निंदा हो जावे इस वास्ते दान त्याग नहीं किया अगर जो जगत्र के गुरु श्रावकों को सर्वत्र दान आज्ञा न देते तो तुंगी या नगरी निवासी श्रावक वर्णन अधिकार में ऐसा लिखा है ॥

—विच्छडियपउर भत्तपाणा।

ऐसा विशेषण उपादान नहीं करना केवल साधू के देने वास्ते प्रचुर अन्नच्छर्दन अभावात् तिस वास्ते कर्म निर्ज्जरा के वास्ते जो दान देते है वो तो साधू को ही देना चाहिये इस वास्ते अनुकंपा दान तो सर्व को देना चाहिये अब फेर भी पात्र दान की विशेषता दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—भये नलो भेन परीक्षयावा। कारुण्यतो अमर्ष वशेन लोके। स्वकीर्त्ति प्रश्नार्थित याचदानं। नार्हति शुद्धा मुनयः कदापि ॥ ६८ ॥

व्याख्या—अगर इनों का सत्कार नहीं करा तो शापादिक देवेगा और लोकीक में मेरी विरूपता करेंगे ऐसा भय लाके ॥ १ ॥ तथा दान करके तिसी जन्म में वा पर जन्म में रिद्धिआदिक प्रार्थना उसको लोभ करके कहते है ॥ २ ॥ सुनने में आता है कि यह लोभ रहित होते हैं इस वास्ते अगर हम देंगे तो लेवेंगे या नहीं ऐसी परीक्षा करके ॥ ३ ॥ तथा मेरे दिये विगर इस कंगाल का निर्वाह कैसे होगा इस को कारुण्य ता कहते हैं ॥ ४ ॥ तथा अमुकने भी दिया क्या में इस से हीन हूं सो नहीं देऊं। इस को अमर्ष कहते है ॥ ५ ॥ अगर यहां ग्रहण करेगा तो लोगों में तारीफ होगी इस वास्ते अपनी कीर्त्ति के वास्ते ॥ ६ ॥ अगर जो दान करके इन का सत्कार करूंगा तो मेरे पूछने से ज्योतिष वगैरे कहेगे इस को प्रश्न अर्थि कहते है ॥ इन सात कारण करके मुनिराज महाराज कभी दान लेंगे नहीं और देने वाले को भी देना योग्य नहीं। तथा अपने निस्तार बुद्धि करके भक्ति सहित दान देना चाहिये तथा सुपात्र को दान

देती दफै गृहस्थ ने पांच दूषण सर्वथा त्याग करना और पांच भूषण धारण करना। अव प्रथम पांच दूषण बतलाते हैं॥ अनादरो १ विलंवश्च २ वैमुख्यं ३ विप्रियं वचः ४ पश्चा त्तापश्च पंचामी १ सद्दानं दूष यंत्य हो। ७०। अव भूषण पांच दिखलाते हैं॥ आनंदा श्रूणि। १। रोमांचो। २। बहुमानः। ३। प्रियंवचः। ४। पात्रे नुमोदना। ५।

चैवदान भूषण पंचकं। २। श्लोक द्वयं स्पष्ट अर्थः॥

तथा फेर पात्र दान प्रस्ताव में भव्य जीवों को प्रवर्द्धमान परिणाम रखना चाहिये मगर वंचक सेठ की तरह से हीय मान परिणाम कभी रखना नहीं अव यहां पर वंचक सेठ का वृत्तांत कहते हैं॥ कोल्लर गाम में वंचक नामें व्यवहारी के घर में एक कोई ज्ञानवान मुनी आहार के वास्ते आया तव उल्लास भाव करके तिस सेठ ने अखंड धारा करके घृत देने लगा तब कुछ कमती पात्र भरा तव मुनी महाराज भी तिस के मन का परिणाम शुद्धि करके महा लाभ जान करके इसका परिणाम भंग मत हुवो ऐसी बुद्धि करके तिस सेठ को मना नहीं करा। तितने में तो मनके चंचलता से परिणाम गिरने से सेठ विचारने लगा अहो लोभी यह मुनी है जिससे अकेले हैं तो इतने घृत करके क्या करेंगे तथा इस चिंता करके सम का लेहि तिस के हाथ से ती घृत की धारा मंद २ पड़ने लगी तव ज्ञानी महाराज तिसके मन का परिणाम जान करके वोले मत गिर मत गिर ऐसा सेठ ने सुना स्वामी मैं तो चित्त स्थिर करके रहा हूं मन करके भी गिरता नहीं आप झूठ क्यूं फरमाते हो तव मुनि महाराज बोले तें द्रव्य से गिरता नहीं मगर भाव करके तो गिर गया बहुत क्या कहैं घार में देवलोक जाने के योग्य परणामों करके गिर के प्रथम देवलोक जाने योग्य अध्यवसायों में रह गया ऐसा मुनि का वचन सुन करके सेठ अत्यंत पश्चात्ताप करने लगा ऐसा मुनी महाराज स्वस्थानं गया। यह परिणाम ऊपर वंचक सेठ का दृष्टान्त कहा अव फेर भी दान कर्म के ऊपर दृष्टान्त सहित भाव का प्रधानता दिखलाते हैं मगर द्रव्य करके नहीं॥

—नोद्रव्यतः केवल भाव शुध्या। दानंद दानो जिन
दत्त संज्ञः। श्रेष्टी महालाभ मवाप भावं। विनान
चैवं किल पूरणाख्यः॥ ७२॥

व्याख्या—किल इति आगम में सुनने में आता है जिन दत्त नामें सेठ प्रभु का

संयोग पाके द्रव्य करके दान नही दिया केवल भाव शुद्धि करके दान देने से महा लाभ पाकरके तथा पूरन नामें सेठ द्रव्य करके दान दिया मगर भाव रहित इनवास्ते जिनदत्त सेठ की तरह से महा लाभ नहीं मिला अर्थात् द्रव्य प्राप्ति रूप अल्प ही लाभ का भागी भया—इति श्लोकार्थः ॥ इस का विशेष भावार्थ कथा से दिखलाते है एक दिन के वक्त में छद्मस्थ अवस्था में श्री वीर स्वामी विशाला नगरी में बलदेव के मंदिर में चार मास तक चार प्रकार के आहार का प्रत्या ख्यान करके कायोत्सर्ग में रहे तिस नगर में परम जिन धर्म का रागी जिन दत्तनामें जीर्ण सेठ रहता था वो सेठ तिस देव घर में श्री वीर स्वामी को विराज मान देख करके वंदना पूर्वक वहुत काल तक सेवा करके अपने दिल में विचार करा आज स्वामी ने उपवास करा है मगर सवेरे अवश्य ही स्वामी पारणा करेंगे तव में अपने हाथ करके स्वामी प्रते प्रतिलाभन करूंगा ऐसा हमेसा विचार करे पक्षमास की गणना करे वो सेठ विशुद्ध अध्य वसायों करके चार मास व्यतीतकरा तव चौमासे वाद पारणे के दिन शुद्धाहार सामग्री इकट्ठी करके मध्यान्ह समय में घर के दरवाजे पर वैठ करके प्रभो के आने का रस्ता देखता भया विचार कर रहा है आज श्री वीर स्वामी अगर यहां पधारे गे तो में मस्तक में अंजलि वांध करके स्वामी के सामने जा करके तीन प्रदक्षिणा दे करके वंदना करके घर लाउंगा तहां पर प्रधान भक्ति करके प्रासुक एषयणी अन्न पाना दिक करके स्वामी प्रतें पारणा कर वाऊंगा तिस वाद फेर नमस्कार करके सात आठ कदम तक पहुंचाके तिस वाद अप नी आत्मा को धन्य मान करके वाकी अव शेष रहेगा उस को मैं भोजन करूंगा अव जिन दत्त भी इस माफिक मनोर्थ की श्रेणि कर रहा है तितने में तो श्री वीर स्वामी भिक्षा के वास्ते जा रहे थे तव पूरन सेठ के घर में प्रवेश करा वो मिथ्यात्वी था उसने दासी के हाथ सेती उडद का वाकला दिरवाया तव सुपात्र दान के प्रभाव सेती देवता ने पांच दिव्य प्रगट करा राजादिक लोक सर्व तिसके घर में मिले सेठ की अत्यंत प्रशंसा करी श्री वीर स्वामी भी उडदों के वाकुला करके पारण करके और ठिकाने विहार किया अव तिस वक्त में जिनदत्त सेठ भी देव दुंदुभी सुन करके विचारने लगा धिक्कार हुओ मुझ निर्भागी कूं अधन्य हूं अभी स्वामी मेरे घर पधारे नहीं और कहां पर पारणा कर लिया मैंने जो२ मनोर्थ करा वे सर्व वृथा गया अव तिसी दिन में तिस नगरी में पार्श्वनाथ स्वामी के संतानी कोई केवल ज्ञानी मुनीश्वर समवसरे तव राजा भी नगर के लोगों के साथ जा करके वंदना करके ज्ञानी से पूछा हे स्वामी इस नगर में कौन पुन्यवान जी वहै तव केवलि वोले यहां पर जिनदत्त सेठ के वरावर कोई भी नहीं पुन्यवान है तव राजा वोला हे स्वामी इसने तो वीर स्वामी को पारणा नहीं कराया

पूरन सेठ ने करवाया इस वास्ते वो पुन्यवान कैसे तब केवली भगवान मूल सेती सर्व इसके भावना का स्वरूप जान करके कहने लगे भो राजा द्रव्य करके दान दिया तिसने मगर भाव करके इस सेठ ने परमेश्वर को पडिलाभे तिस से भाव समाधि धारण करके इस ने वार में देवलोक जाने के योग्य कर्म पैदा करा तब तिस वक्त में अगर यह सेठ देव दुंदुभि नहीं सुनता तो तिसी वक्त में केवल ज्ञान हो जाता तथा पूरन सेठ भाव शून्यपणा सेती सुपात्रदान के प्रभाव करके स्वर्ण की बरसात रूप फल मिला अधिक कुछ भी नहीं तब इस माफिक ज्ञानी का वचन सुन करके वे सर्व लोग जिनदत्त की तारीफ करके अपने ठिकाने गया और जिनदत्त सेठ भी बहुत काल तक शुद्ध श्रावक धर्म आराधन करके अच्युत देवलोक में गया यह दान विषयके ऊपर भाव शुद्धि पूर्वक जीर्ण सेठ का वृत्तान्त कहा ॥ इस तरह से और भी भव्य जीव दान क्रिया के विषै शुद्ध भाव धारण करना जिस करके सर्व समृद्धि की वृद्धि प्रसिद्धयः स्वयमेवसमुल्ल सेयुः । अब यहां पर अतिथि संविभाग चौथा शिक्षाव्रत की भावना दिखलाते हैं ॥

गाथा—धन्ना ते सप्पुरिसा । जेमण सुद्धीइ सुद्ध पत्ते सु ।
सुद्धासणा इदाणं । दिंति सया सिद्धि गइ हे उं ॥ १ ॥

सुगमार्थः ॥ अब सर्व धर्म के विषै दान की गौणता कहने वालों के मत को निराकरण करने के वास्ते आगमानुसार करके दान की प्राधान्यता दिखलाते हैं ॥

—सर्व तीर्थ करैः पूर्वं । दानंदत्वाआदृतं वृतं । तेनेदं
सर्व धर्माणा । माद्यंमुख्यत योच्यते ॥ ७२ ॥

स्पष्ट अर्थः । अब तीर्थ करके दान की विधि बतलाते हैं प्रथम इन्द्र की आज्ञा करके धनद लोक पाल आठ क्षण में बणावै प्रत्येकें सोलै मासै का प्रमाण सें तीर्थ करके पिता का नाम सहित संवत्सरी दान के योग्य सौ नैया करके जिनेन्द्रों के भंडार भर्ते पूर्ण करे तब तीर्थंकर लोक में दान की प्रवृत्ति के वास्ते सूर्योदय से लेके दो पैर तक निरन्तर एक कोडि आठ लाख ऊपर इतने सौ नैया दान में देते हैं सोई आवश्यक में कहा है ॥

गाथा—एगाहिरन्न कोडी । अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा ।

सूरोदय माईयं । दिज्जइ पाय रासी ओ ॥ १ ॥
तिन्नि वय कोडि सया। अठ्ठासी यंच हुंति कोडी ओ।
असीयंचसयसहस्सा । एवंसंवच्छरि दिन्नं ॥ २ ॥
सुगमार्थ; ॥

अब दान देने के वक्त उत्पन्न होता है वो छैः अतिशय दिखलाते हैं जब सौ नैयों की मुट्ठी भर करके प्रभू दान देवे तव सौधर्मेंद्र भगवान के दहिणें हाथ में महा शक्ति प्रतें स्थापन करे तिस में विलकुल खेद उत्पत्ति होवे नहीं ॥ अब यहां सदा नंदाभिधान याने सत् आनंद नामें शिष्य प्रश्न करता है हे महाराज भगवान तो अनंतवीर्य सहित है. उनके हाथ में इन्द्र की शक्ति स्थापन करनी अयुक्त अब गुरु महाराज उत्तर देते हैं हे सदानंद शिष्य हे सत् आनंद शिष्य तेरी संका का उत्तर देते हैं भगवान अनन्त बलवान है तो भी इन्द्र अगर नहीं करे तो चिरंतन भक्ती के भंग होने का प्रसंग सेती तिस वास्ते अनादि स्थिति पालन करने के वास्ते तथा अपनी भक्ती दिखलाने के वास्ते इन्द्र को शक्ति स्थापन करना लाजिम है। अलं प्रवंचेन ॥१॥ तथाई सानेन्द्र सोने मई लकड़ी ग्रहण करके बीच में ग्रहण करने वाले सामान्य देवतों को मनाई करे जिसको दान मिले नहीं तिस को भगवान के हाथ सेती दिलावे हे प्रभू मुझ को देवो एसा लोगों से शब्द कर वावे ॥ २ ॥ तथा चमरेन्द्र और बलेन्द्र मनुष्यों के लाभ के अनुसार सेती प्रभू की दान मुट्ठिकों पूरण करे वा डरावे ॥ ३ ॥ तथा भवनपति देवता दान प्रतें ग्रहण करने के वास्ते भरत क्षेत्र के मनुष्यों प्रतें तहां पर लावे ॥ ४ ॥ तथा व्यंतर देवता तिन मनुष्य को अपने ठिकाने भेजे ॥ ५ ॥ तथा ज्योतिषी देवता विद्या धरों प्रतें दान ग्रहण करवावे ॥ ६ ॥ फिर ज्यादा क्या कहें इन्द्र भी दान को ग्रहण करे जिस वास्ते तिस दान के प्रभाव सेती तिनों के देवलोक के विषै वारा वरस तक उपद्रव नहीं होवे तथा चक्रवर्त्ती आदि राजा भी अपने भंडार के अक्षय के लिये तिस दान प्रतें ग्रहण करते हैं ॥ तथा सेठ लोक भी अपनी यश कीर्त्ति के वास्ते गोया यश वृद्धि होने के वास्ते तिस दान को ग्रहण करते हैं तथा रोगी पुरुष भी मूल रोग हानि के वास्ते फिर वारा वर्ष तक नवीन रोग उत्पत्ति दूर करने के वास्ते तिस दान प्रतें ग्रहण करे वहुत क्या कहें सर्व भव्य जीव अपनी २ योगवाई पूर्वक तथा वांछित सिद्धी के वास्ते श्री जिनेंद्र के हाथ सेती तिस दान प्रतें ग्रहण करे तथा अभव्य को तो वो दान मिलता नहीं शास्त्र में तिनों

के तीर्थ करके दान को आदि लेके कितनेक भाव की प्राप्ति का अभाव है ऐसा लिखते हैं ॥

—जह अभ विय जीवे हिं। नफासिया एव माइ
या भावा। इंदत्त मनुत्तर सुर। सिलायनरनार
यत्तं ॥ १ ॥ केवलिगण हर हत्थे। पव्वज्जा
तित्थ वच्छरं दाणं। पवयण सुरी सुरत्तं।
लोगं तिय देव सामित्तं। २। तायत्तीसखु
रत्तं। परमा हम्मिय जुयलमणु अत्तं ॥ संभिन्न
सो यतह पुव्व धरा हारय पुलाय वत्तं। ३।
मइ नाणा इसु लद्धी। सुपत्त दाणं समा हिम
रणत्तं। चारणदुग महु सिप्पया खीरा सव खीण
ठा णत्तं। ४। तित्थयर तित्थ पडिमा। तणुपरि
भोगाइ कारणे विपुणो। पुढवाइय भावं मिवि।
अभव्व जीवे हिं नो पत्तं। ५। चउद सर यणत्तं
विय पत्तं न पुणो विमाण सामित्तं। सम्मत्तं नाण
संजम। तवाई भावान भावदुगे। ६। भव अणु
जुत्ता भत्ती। जिणाण साहम्मि याण वच्छल्लं।
नसावेइ अभव्वो। संविगात्तं नखुपक्खं। ७।
जिण जणय जणणि जाया। जिण पक्खोहो
वगा। युगप्प हाणा। आयरिय पयाइ दसगं।
परमत्थ गुणट्ठ मप्पत्तं। ८। अणु वंध हेउसुखा
तथा। अहिंसा तिविहा जि णु दिट्ठा। दव्वेण
यभा वेणय। दुहा वितेहिं न संपत्ता ॥ ९ ॥

व्याख्या—अभव्य जीव के इतना भाव उदय में नहीं आता है॥ इंद्र पणा १

अनुत्तर देवता २ त्रेसठ शला का ३ पुरष और नारद पणा ४ केवली तथा गणधर के हाथ से दीक्षा ५ तथा वरसी दान ६ शासन देव देवी ७ लोकांतिक देवता तथा स्वामी ८ त्राय त्रिंशक देवता। ६। परमा धामी देवता। १०। तथा संभिन्न श्रोत लब्धि। तथा पूर्व धारी। ११। और आहारक लब्धि। १२। पुलाक लब्धि। १३। तथा मति ज्ञानादिक लब्धि। सुपात्र दान औरसमाधि मरण। जंघा चारण विद्या चारण। मधुशि मलब्धि। तथा क्षीरा श्रवलब्धि। ४। तीर्थ कर और प्रतिमा। शरीर के परि भोगादिक कारण फेर पृथ्वी आदि भाव भी अभव्य जीव को प्राप्त होता नहीं। ५। तथा चउदा रत्न। फेर विमान का का मालिक। तथा सम्यक्त। ज्ञान उर संयम तथा अनु भव युक्त भक्ति तथा तीर्थकर का साधर्मी वात्सल्प तथा संवेग पणा और शुक्लपक्ष पणा जिनों के कुछ कमती अर्द्ध पुदगल परा वर्त्त संसार है उनको शुक्ल पक्षी जीव कहते हैं और उससे अधिक तर संसार बाकी है उनको कृष्ण पक्षी जीव कहते है। इत्यभ व्यकुल कं। तथा प्रभू के दान देने के वक्त में अपना माता पिता भाई तीन दान शाला कर वाके तहां पर अन्न पानी। १। तथा वस्त्र। २। तथा अलंकार। ३। देवै दान में इतने करके भावित करा प्रसंग सहित चौथा शिक्षा व्रत ॥ १२ ॥ अत्र निगमनं ॥

इत्थं व्रत द्वादश कंद धाति। गृही प्रमोदेन प्रति व्रतं
हि। पंचा ति चारान्यरि वर्ज्य यंश्च। ध्रुवं यथा
श क्त्य पिभंग षट्के ॥ ७४ ॥

व्याख्या—गृहस्थ जो है सो पूर्वोक्त वारे व्रत को हर्ष करके छव भंगों करके यथा शक्ति धारण करे अपना निर्वाह विचार करके एक वा दोयवा तीन वा सर्व व्रत अंगी कार करे क्या करता हुवा व्रत २ के निश्चय करके पांच २ अती चार को त्यागन करके तथा अतीचार तो ग्रन्थ विस्तार के भय सेती यहां पर दिखलाया नहीं ग्रन्थान्तर से जानना यहां पर अतीचार पांच की संख्या वाहु ल्यता अंगीकार करके कही तिस कारण करके भोगोपभोग व्रत में तो वीस अतीचार जानना अव पूर्वोक्त छव भांगा इस माफिक हैं एक विध एक विध जैसे हिंसादिक नहीं करे नहीं कर वावे मन एक वचन दो काया करके। १ अव एक विध १ और दो विध। दो जैसे नहीं करे और नहीं करवावे मन वचन। मन काया करके वचन काया करके। दो। अव एक विध और त्रिविध जैसे नहीं करे एक नहीं करवावे दो मन वचन काया करके तीन दोविध

और एक त्रिध जैसे नहीं करे एक नहीं कर वावे दो मन एक वचन दो मन एक काया दो तथा वचन एक काया दो करके पांच तथा दोय भेद और तीन भेद जैसे नहीं करे एक नहीं करवावें दो मन वचन काया करके छै इस माफिक इक वीस भंग सहित षड़ भंगी जानना तथा श्रावकों के प्रायें आज्ञा की मानाई नहीं है तिस सें भांगा भी दिखलाया नहीं अव वारे व्रतों को अंगीकार करके भंगक भेद की विवक्षा में अंगीकार करने वाला कर्म क्षयोपशम विचित्रता करके वहुत भेद उत्पन्न होता है सो दिखलाते हैं ॥

—तेरस कोड़ी सयाइं । चुलसीइ जुयायवार सय लक्खा । सत्तासी इसहस्सा । दोयस यात हय दुरगाय ॥ १ ॥

व्याख्या—तेरे सै कोडि सो चोरासी कोड और वारे लाख सत्यासी हजार दोयसै ऊपर इतने श्रावकों के अभिग्रह नियम भेद की संख्या सर्वज्ञों ने दिखलाई है यह भांगे पर दिखलाये हैं ॥ प्रवचन सारोद्धार के दो सें छत्तीस में द्वार के भीतर दिखलाया है वहां से जानना तथा वारे व्रत के वीच में आदि के आठ व्रत एक दफे अंगीकार करा भया जावज्जीव रहता है इस वास्ते इनको यावत् कथिक कहते हैं तथा शिक्षा व्रत चार मुहुर्त्तादिक अवधी वाले वारम्वार अंगीकार करना होता है अल्प काल तक रहने वाला इस वास्ते इनों को ईत्वर कहते हैं तथा इन व्रतों में आदि का व्रत पांच धर्म रूप वृक्ष के मूल भूत हैं इस वास्ते इनों को मूल गुण कहते हैं वाकी सात व्रत धर्म रूप वृक्ष की साखा के वतौर अणु याने छोटे हैं इस वास्ते इन को अणु व्रत कहते हैं मूल गुणों के गुण कारी इसवास्ते इनोको उत्तर गुण कहते हैं अव पहिली एके कव्रत को अंगीकार करके दृष्टान्त दिखलाया ॥ अव समुच्चय करके वारे व्रत को अंगीकार करके श्री वीर शासन के विषे सर्व श्रावकों से वड़े श्रावक गुणों करके वृद्ध उपाशक दशा अंग में दस श्रावकों का दृष्टान्त वतलाया है सो क्रम करके दिखलाते हैं तथा दस श्रावकों के दस नाम दिखलाते हैं ॥ आनंद एक कामदेव दो चुलनी पिता तीन सुरादेव चार चुल्लशतक पांच कुंड कोलिक छै सद्दाल पुत्र सात महाशतक आठ नंदनी पिता नौ तेतली पिता दस तहां पर आनंद श्रावक का दृष्टान्त कहते है वाणिज्य ग्रामनगर में वारे कोड सोनइया का मालिक आनंद नामा गाथा पती वस ताथा तिस के चार कोड सोनइया निधान में गडे भये थे तथा इतने

प्रमाणें सौनैया वृद्धि के रक्खे भये थे तथा इतने प्रमाणें घर के उप गरण वगैरे का विस्तार पणें में नियुक्त करा भया था तथा दस हजार गायां जिस में रही ऐसे चार गोकुल थे फेर तिस आनंद के परम शील सौभाग्यादिक गुण के धारने वाली शिवा नंदा नामें स्त्री थी तथा वाणिज्य ग्राम के वाहिर ईशान कोंण में कोल्लागसन्नि वेश में तिस आनंद के वहुत मित्रज्ञा ती सगा स्वजन परिजन वसते थे अब एक दिन के वक्त में वाणिज्य ग्राम के नजदीक वर्त्ति दूति पलास नामें चैत्यवन खंड था तहां पर श्री वीर स्वामी समवसरे पर्षदामिली तव स्वामीके आने की वार्त्ता सुनकरकेआनंदगाथा पति स्नान पूर्वक शुद्ध वस्त्र पहिन कर के वहुत जन सहित तहां पर जाके वंदना करके योग्य स्थान में वैठा तव स्वामी ने देशना दीवी तव आनंद भी धर्म सुन करके शुद्ध श्रद्धा पा करके स्वामी प्रतें वोला हे भगवान आप का फरमाया भया धर्म मुझ को रुचा तिस वास्ते में आप के पास वारे व्रत ग्रहण करने चाहता हूं तव स्वामी वोले तैसे सुख होवे हे देवानु प्रिय इसमें प्रतिवन्ध मत कर तव आनन्द ने स्वामी के पास वारे व्रत ग्रहण करा तिस का विशेष विचार तो उपाशक दशा अंग सें जानना तथा व्रत ग्रहण करे वाद आनन्द श्रावक भगवान प्रतें नमस्कार करके ऐसा कहा हे स्वामी आज पीछे अन्य यूथिक प्रतें १ तथा अन्य यूथिक देव प्रतें २ तथा अन्य यूथिकों ने स्वदेवपणें में ग्रहण करी अर्हत्प्रतिमा लक्षण स्वदेवप्रतें ॥ ३ ॥ में नहीं वन्दना करूंगा नहीं नमस्कार करूंगा फिर उनके साथ पेस्तर भी संभाषण नहीं था मगर अव तो विलकुल संभाषण करूंगा नहीं फिर तिनों को धर्म वुद्धि करके आहारादिक दूंगा नहीं मगर राजा भियोगादिक छव आगारों करके सहित और मुझे नियम है फिर आज पीछे श्रमण निग्रन्थों प्रतें प्रासुक एषणीय आहारादिक करके प्रतिलाभना कर तो विचरूंगा ऐसा अभिग्रह ग्रहण करके स्वामी प्रतें तीन प्रदक्षिणा देके वन्दना करके वो आनन्द श्रावक अपने ठिकाने गया तव तिस की स्त्री भी शिवा नन्दा पति के मुख सेती ऐसी प्रवृत्ति सुन करके आप भगवान के पास जा करके तिसी तरह से द्वादस व्रत ग्रहण करा तव आनंद श्रावक प्रवर्द्धमान भाव के पोषध उपवासादि धर्म कृत्य करके अपनी आत्मा प्रतें भावित करके चौदे वर्ष व्यतीत किये तथा पनरमा वर्ष वर्तमान था एक दिन आनंद करके आनंद श्रावक इग्यारे प्रतिमा धारण करने के वास्ते

अपना मित्र ज्ञाती स्वजनादिक प्रतें इकट्ठा करके आहारादि करके सत्कार पूर्वक तिनके सामने अपने बड़े पुत्र को कुटुंब में स्थापन करके तिन सर्वों को तथा अपनें पुत्र प्रतें पूछ करके कोल्लागसन्निवेस के विषै अपनी पोषध शाला में आ करके तिस की प्रमार्ज्जना करके उच्चार प्रस्त्रवण भूमी की प्रति लेखना करके दर्भ संस्तारक पर बैठ करके तहां पर प्रथमा उपाशिक प्रतिमा अंगीकार सूत्रोक्त विधी पूर्वक करी सम्यक् आराधन करके क्रम से इग्यारमी प्रतिमा आराधन करी तब तिस तप करके शरीर शोषन हो गया आनंद श्रावक के विशुद्ध अध्य वसायों करके कर्म क्षय उपशम सेती अवधि ज्ञान उत्पन्न हो गया तिसके बाद एक दिनके वक्त वाणिज्य ग्राम के बाहिर श्री वीर स्वामी सम व सरे तब स्वामी प्रतें पूछ करके इन्द्र भूति अनगार तीसरी पोरषी में वाणिज्य ग्राम में यथा रुचि आहार ग्रहण करके ग्राम के बाहर निकल करके कोल्लाकसन्निवेश के नहीं दूर नहीं नजदीक जा रहे थे तहां लोगों के मुख सेती आनंद के तप तथा अवधि ज्ञानादिक प्रवृत्ति सुन करके आप आनंद प्रतें देखने के लिये कोल्लाकसन्निवेस में पोषध शाला में आये तब आनंद भगवान गौतम प्रतें आते भये देख करके खुश होके बंदना करके ऐसा कहा हे स्वामी तप करके नाड़ी अस्थि मात्र शरीर रह गया मेरा इस वास्ते में आप के पास आ सक्ता नहीं इस वास्ते आप कृपा करके यहां पर पधारो तब गौतम स्वामी जहां आनंद था तहां आये तब आनंद गौतम स्वामी कों तीन प्रदक्षिणा देके मस्तक करके बंदना सहित ऐसा पूछा स्वमी गृहस्थ कों घर में रहते हुए अवधि ज्ञान होता है तब गौतम बोला हां होता है तब आनंद बोला कि मुझ को भी अवधि ज्ञान उत्पन्न हुआ है तिस करके पूर्व दिशा में दक्षिण दिशा में पश्चिम दिशा में प्रत्येकें लवण समुद्र के विषै पांच सै जोजन प्रमाणें क्षेत्र प्रतें जानता हूं देखता हूं तथा उत्तर दिशा में हिमवंत वर्ष धर पर्वत पर्यंत तक जानता हूं और देखता हूं तथा ऊंचा सौ धर्म देवलोक तक और नीचे रत्न प्रभा पृथ्वी का लोलुच्चुय नामें नरका वास तक जानता हूं देखता हूं तब आनंद प्रतें गौतम स्वामी बोला भो आनंद गृहस्थ कों अवधि ज्ञान तो होता है मगर इतना बड़ा नहीं होता तिस वास्ते तिस स्थान की आलोचना निंदादि करो तब आनंद गोतम प्रतें ऐसा कहा हे स्वामी जिन प्रवचन में सत्यार्थि कों आलोचनादिक होती है क्या तब भगवान गौतम बोले कि नहीं होती तब आनंद बोला जो इस माफिक है तो आप को

ही आलोचनादि करना चाहिये तब गौतम भगवान आनंद का वचन सुन करके शंका तुर होके जल्दी से आनंद के पास सेती निकल करके दूति वलास चैत्य श्री वीर स्वामी के पास आके गमना गमन पूर्वक आलोचना करके स्वामी प्रतें नमस्कार करके सर्व वृत्तान्त कहा और भी पूछा हे स्वामी तिस स्थान की आलोचना आनंद लेवें वामें लेऊं तब भगवान बोले हे गौतम तूं ही इस ठिकाने की आलोचनादिक ले और आनंद प्रतें इस बारे में खमाव गौतम भी भगवान का वचन विनय पूर्वक प्रमाण करके आप तिस ठिकाने की आलोचनादिक ग्रहण करके आनंद श्रावक प्रतें खामणा करी तब आनन्द श्रावक भी बहुत शील व्रतादिक धर्म कर्त्तव्यों करके आत्मा को भावन करके बीस बरस तक श्रावक पर्याय पाल करके आखिर में एक मास की संलेखना करके समाधि पूर्वक काल करके सौधर्म देव लोक में अरुणाभ विमान में चार पल्योपम की स्थिति पणें में देवतापणें उत्पन्न भया तहांसे चव करके महा विदेह क्षेत्रमें मोक्ष जावेगा॥ इति आनंद श्रावक वृत्तान्त कहा॥ १॥

अब कामदेव का वृत्तान्त कहते हैं चंपा नगरी में कामदेव नामें गाथा पती रहता था तिस के भद्रा नामें स्त्री थी तथा अट्ठारे क्रोड सौनैयों का द्रव्य था तहां पर छ क्रोड सौनैया निधान में रक्खे हुये थे इतने प्रमाणें व्याज वृद्धि के वास्ते रहे थे तथा इतने प्रमाणें ही विस्तार में डाले भये थे तथा प्रत्येक गोकुल दस हज्जार गाईयों का होता है ऐसे छब गोकुल थे तथा एक दिन के वक्त नगर के पास पूरण भद्र नामें चैत्य याने वन खंड के विषै श्री वीर स्वामी सम व सरे तब आनंद श्रावक की परें कामदेव ने भी बारे व्रत ग्रहण किया तब अनुक्रम करके कामदेव भी आनंद की तरह से अपने बड़े पुत्र प्रतें कुटंब के विषै स्थाप करके आप पोषध शाला में आकर के पोषा करके रहा तब आधी रात की वक्त हैं तिस कामदेव के पास में एक मायी और मिथ्यात्वी देवता प्रगट होके नाना तरह का भयानक अवाच्य विकराल पिशाच का स्वरूप रचन करके हाथ में तीक्ष्ण खडग उठा करके कामदेव प्रतें ऐसा कहता भया हं हो कामदेव श्रमण उपाशक अप्राथ्यं प्रार्थक हे और धी ह्री श्री वर्जित है धर्म पुन्य से स्वर्ग मोक्ष की बांछा करता है तथा यह शील व्रतादिक तथा पोषध उपवासादिक धर्म कृत्य जल्दी त्याग कर नहि तब इस तीक्ष्ण खडग करके तेरा टुकड़ा २ कर डालूंगा जिस करके तूं दुःखार्त्ति

होके अकाल में मृत्यु पावेगा तब वो कामदेव तिस पिशाच रूप ने ऐसा कहा तो भी अभीक अक्षुभित अचल मौन धारण करके धर्म ध्यान उपयोग सहित रहा तब वो देवता तिस श्रावक को तैसा निश्चल जान करके दूसरी और तीसरी दफै फेर भी ऐसा कहा मगर कामदेव मन करके भी क्षोभित नहीं भया तब उत्पन्न भया है कोप उस देव को ललाट में भृकुटि चड़ा करके खडग करके कामदेव का टुकड़ा २ करने लगा तो भी कामदेव तिस महा वेदना प्रतें अच्छी तरह से सहन करके धर्म ध्यान में निश्चल चित्त होके रहा तब पिशाच रूप करके देवता तथा तिस कामदेव प्रतें चलाने को असमर्थ हुवा खेद करके धीरे २ पीछे लौट करके पोषध शाला से बाहिर निकल करके तिस पिशाच के रूप का त्याग करके एक बड़ा भारी प्रचंड शुंडा दंड यित करके इधर उधर उल्लालन करता हुवा मत्त मेघ इव गुल गुलायमान भीम आकार हाथी का रूप रचन करके पोषध शाला में आ करके कामदेव प्रतें फेर भी कहने लगा हं हो कामदेव अगर मेरा कहा हुवा नहिं करेगा तो मैं आज इस शुंड रूप दंड करके ग्रहण करके आकाश में फेंकूंगा तब ऐसा कहने से भी काम देव जब क्षोभाय मान नहीं भया तथा फेर भी कहा कि हे काम देव तुझ को तीक्ष्ण दांत रूप मूसलों करके भेदन करूंगा और नीचे पटक करके पावों करके मर्दन करूंगा ऐसा कहा तो भी काम देव चलाय मान नहीं भया तब तिस देवता ने जैसा कहा था उसी माफि किया मगर वो श्रावक तिस वेदना प्रतें अच्छी तरह से सहन करतो भयो और धर्म ध्यान में रहा तब वो देवता हाथी के रूप कर के तिस काम देव को क्षोभित करने कूं असमर्थ हुवा धीरे २ पीछा लौट करके पोषध शाला के बाहिर निकल करके तिस हाथी के रूप प्रतें त्याग करके एक बड़ा भारी नेत्र वाला विषरोष करके पूर्ण अंजन पुञ्ज वर्ण अति चंचल जिन्हा युगल परिस्फोरय तू उत्कटस्फुट कुटिल जटिल कर्कश फणारोप करण दक्षंभीमं सर्प का रूप रचन करके पोषध शाला में आके काम देव प्रतें बोला अरे काम देव यदि मेरा वचन नहीं मानेगा तो आज ही तुझ को सर सर शब्द करके तेरे शरीर ऊपर चढ़ करके पश्चिम भाग करके त्री कुत्वा ग्री वा वेष्टन करके तीक्ष्ण विष व्यास दाढ़ों करके स्तवोरः स्थल प्रतें भेदन करूंगा तब इस माफिक कहा तो भी चलाय मान नहीं भया तब अत्यंत कोपायमान होके तिस देवता

ने तिसी माफिक उपसर्ग करा मगर वो काम देव तिस वक्त में क्षोभायमान नहीं भया तब अत्यंत कोपायमान होके तिस देवता ने उसी माफिक उपसर्ग करा मगर वो काम देव तिस वक्त में क्षोभायमान नहीं भया तिस तीव्र वेदन प्रतें सम्यक् धैर्यसहित सहन की श्री जिन धर्म प्रतें क्षण मात्र भी चित्त से दूर नहीं करा तब वो देवता तिस काम देव प्रतें सर्प के रूप करके भी जिन प्रवचन सेती चलाने को समर्थ नहीं भया क्रम से धीरे २ पीछा लौट करके पौषध शाला के बाहिर निकल करके तिस सांप के रूप का त्याग करके एक महा दिव्य सौम्य आकार दीप्तिमत् देवता का रूप रचन करके पोषध शाला में अप्रवेश करके आकाश में रह करके तिस कामदेव प्रतें ऐसा कहा अहो काम देव तूं धन्य है कृत पुन्य है तैंने श्री जिन धर्म कों अंगीकार करके अपना जन्म सफल करा आज सौ धर्म इन्द्र अपनी सभा के विषैं तुमारा अत्यंत वर्णात्र करा देव दानव भी क्षोभित करने कों असमर्थ जाननातब मैं इन्द्र का वचन श्रद्धा में नहीं लाके जल्दी यहां पर आया मगर तुमारी परीक्षा करने लगा जिस माफिक इन्द्र ने कहा उसी माफिक तुमारी शक्ति देखी अब मैं आप से क्षमत क्षामण करता हूं मगर फेर एसा कार्य नहीं करूंगा ऐसा कह करके वो देवता काम देव के चरणों में नमस्कार करके दोनों हाथ जोड़ करके वारम्वार अपराध खमाणें लगा वाद अपने टिकाने गया तब वो काम देव निरुप सर्ग जान करके कायोत्सर्ग पारा तिस वक्त में श्री वीर स्वामी समव सर ऐसी वात सुन करके विचार ने लगा कि मैं श्री महावीर स्वामी प्रतें वंदना करके पीछे पोषा पारूंतो अच्छा है ऐसा विचार करके बहुत मनुष्यों सहित स्वामी के पास जाके वंदना करके योग्य स्थान पर बैठा तब स्वामी खुद काम देव का आमंत्रण करके रात्रि में उत्पन्न भया था सर्व उपसर्गादिक व्यति कर जान करके बोले भो काम देव यह अर्थ सत्य है तब काम देव बोला कि हे स्वामी फरमाते हैं सो इसी मुताबिक है इस में फरक नहीं तब स्वामी बहुत निग्रंथ और बहुत निग्रंथिनीयों को बुलवा करके ऐसा फरमाया भो आर्यो वह गृहस्थ है श्रमण उपासक घरमें रह के जो इस माफिक मानुष्य देवता दिक के उपसर्गा अच्छी तरह से कहन करे हैं तब तुम तो द्वादशांगी के जानने वाले और बुद्धि वान तुम को तो विशेष करके उपसर्गों को सहन करना चाहिये तब साधु साधुवी स्वामी के वचनों कों विनय करके प्रमाण करके श्रवण करा तब कामदेव

भी प्रसन्न होके स्वामी प्रतें वंदना करके अपने ठिकाने आया तथा पीछे आनंद की तरह से अनुक्रम करके इग्यारे उपाशक प्रतिमा उत्तम विधी सहित आराधन कर के वीस वर्ष श्रावक पर्याय पाल करके एक मास की संलेखना सहित काल करके सौ धर्म देव लोक में अरुणाभ विमान में देवता पणों उत्पन्न भया और महा विदेह में मोक्ष जावेगा ॥ इति काम देव वृत्तान्तः ॥ २ ॥ अत्र चुल्लनी पिता का वृत्तान्त दिखलाते हैं ॥ जैसे वाराणसी नगरी में चुल्लनीपिता नामें गाथा पति वसता था तिस की स्यामा स्त्री तथा चौवीस कोटि सौनेया को द्रव्य था आठ आठ कोटि द्रव्य प्रागुक्तनीत्या तस्यापि निधा नादि प्रयुक्त मासीत् । तथा प्रत्येकें दस हज्जार गाय का आठ गो कुल याने आठ गोकल में असी हजार गाय तव तिसने भी आनंद की तरह से वीर स्वामी के पास वारे व्रत अंगीकार करके अवसर में वड़े पुत्र प्रतें कुटंव में स्थापन करके आप पोषध शाला में पोषो करके रहा तव आधी रात के वक्त में एक देवता प्रगट हो करके हाथ में खड्ग ग्रहण करके तिस प्रतें ऐसा कहा अरे चुल्लवी पिता तूं इस धर्म को छोड़ नहीं तव तेरे जेष्ट आदि पुत्रों प्रते इस खड्ग करके मारूंगा ऐसा कहने से भी वो जव क्षोभायमान नहीं भया तव अति कोपायमान होके वो देवता अनुक्रम करके जेष्ठ मध्यम और कनिष्ट तिन के पुत्रों प्रतें लाके तिस के अगाड़ी मार करके तप्त कटाह में प्रक्षेप करके मांस रुधिर करके तिस श्रावक के शरीर प्रतें शींचा तो भी क्षोभायमान भया नहीं तव वो देवता चौथी दफै तिस श्रावक प्रतें ऐसा कहा हं हो चुल्लनी पिता तूं जो मेरा कहा हुवा नहीं मानेगा तो आज में तेरी माता भद्रा सार्थ वाहिनी प्रतें यहां पर लाके तेरे आगूं मार करके तप्त कडाह में प्रक्षेप करके तिस के मांस रुधिर करके तेरे शरीर प्रतें सींचन करूंगा जिस करके तूं दुःखार्त्त सन् अकाल में मर करके दुक्ख पावैगा ऐसे एक बेर कहा हुवा सुन के क्षोभायमान नहीं भया जान करके दूसरी दफै तीसरी दफे फेर भी ऐसा कहा तव तिस श्रावक के मनमें ऐसा विचार उत्पन्न हुवा अहो यह कोई भी अनार्य पुरुष दिखता है और अनार्य के योग्य पाप कर्म आचीर्ण करने वाला दिखता है जो इसने मेरे तीनों ही पुत्रों को तिस कदर्थना करके मारा अव इस वक्त फेर मेरी माता प्रतें तिसी माफिक मारने चाहता है अव में इस पुरष प्रतें जो जल्दी ग्रहण करूं तो अच्छा है ऐसा विचार करके वो जल्दी से उठ करकै तिस कों ग्रहण करने के वास्ते

जब तक हाथ फैलाने लगा तितने में तो वो देवता आकाश में उड़ गया तिस के हाथ में खंभा आ गया तब तिस श्रावक ने बड़े शब्द सेती कोला हल करा तब भद्रा सार्थ वाहिनी तिस पुत्र के वचन के शब्द सुन करके चुल्लनी पिता के पास आ करके कोला हल का कारण पूछा तब तिसने भी अनुभूत सर्व हकीकत माता से निवेदन करी तब माता बोली हे पुत्र कोई भी पुत्र मरा नहीं यह कोई पुरप तेरे कों उपसर्ग करने वाला जानना तूं इस वक्त भंग व्रत होके और पोपधभी भंग हो गया तिस वास्ते हे पुत्र इस स्थान की आलोचनादिक ग्रहण कर तब वो चुल्लनी पिता श्रावक माता का वचनादिक ग्रहण करके पीछे आनंद की तरह से अनुक्रम करके इग्यारे प्रतिमा का आराधन करके आखिर में समाधि पूर्वक काल कर के अरुणाभ विमान में देवता पणें उत्पन्न भया महा विदेह में मोक्ष जावेगा ॥ इति चुल्लनी पिता वृत्तान्त कहा ॥ ३ ॥

अब सुरादेव का वृत्तान्त कहते हैं ॥ वाराणसी नगरी में सूर देव नामें गाथा पति रहता था तिसके धन्या नामें स्त्री तथा काम देव की तरह से द्रव्य संपदा और गोकुल होते भया आगुं व्रत उपसर्गा दिक स्वरूप तो सर्व तीसरे श्रावक की तरह से जानना इतना विशेष है तीन पुत्र हतन रूप उपसर्गा करे वाद तिस सूर देव प्रतें अक्षुभित जान करके देवता वोला जोतें इस धर्म प्रतें नहीं त्यागेगा तो इस वक्त में में तेरे शरीरमें पोडश मोटे रोग प्रक्षेप करके अकालमें तुझकों प्राण विमुक्त करूंगा इत्यादिक कोला हल करे वाद भद्रा के ठिकाने धन्या स्त्री जानना वाकी अधिकार उसीमाफिक जानना कहां तक सौ धम देव लोक में अरुण कांत विमान में देव पणें उत्पन्न हुवा महा विदेह में मोक्ष जावेगा ॥ यह सूरा देव का वृत्तान्त कहा ॥ ४ ॥

अब चुल्ल शतक का वृत्तान्त दिखलाते हैं ॥ आलंभिका नामें नगरी में चुल्ल शतक नामें गाथापती रहता था तिस के बहुला नामें स्त्री तथा कामदेव की परें द्रव्य संपदा और गोकुल भी तिसी परें होता भया आगुं व्रतादिक का स्वरूप तीसरे श्रावक की परें जानना सिर्फ इतना विशेष है तिस चुल्ल शतक कों पुत्रों की कदर्थना करके नहीं क्षुभित जान करके देवता बोला कि अगर जो तूं यह धर्म नहीं छोड़ेगा तो अभी तेरे अढारे क्रोड सौनैयों को तेरे घर से निकाल करके इस नगरी में तीन चार मार्ग में विखेर दूंगा जिस करके तूं आर्त्तरौद्र ध्यान उपयोग सहित अकाल में

मर करके दुःख पावेगा इत्यादिक कोलाहल करे बाद बहुला स्त्री आई बाकी तिसी तरह से कहां तक सौधर्म देव लौक में अरुण शिष्ट विमान में देवतापणें उत्पन्न भया महा विदेह में मोक्ष जायगा ॥ इति चुल्ल शतक वृत्तान्त कहा ॥ ५ ॥

अब कुंड कोलिक का वृत्तान्त दिखलाते हैं ॥ कांपिल्यपुर नगर में कुंड कोलिक नामें गाथापती रहता था तिस के पुष्प मित्रा नाम स्त्री तथा द्रव्यादिक कामदेव की परें था तथा व्रत ग्रहण की वक्तव्यता भी तिसी तरह से अब कुंड कोलिक एक दिन के वक्त में मध्य रात्रि समय में अपनी अशोक वाड़ी में पृथ्वी शिला पट्ट ऊपर आके अपनी नामां कित मुंदड़ी और उत्तरासण वस्त्र तहां रख करके धर्म ध्यान करके रहा तब तहां पर एक देवता प्रगट होके मुंदड़ी और वस्त्र ग्रहण करके आकाशमें रह के तिस श्रावक प्रतें ऐसा कहा अहो कुंड कोलिक गोशाला मंखली पुत्र का धर्म प्रज्ञप्ति सुन्दर है जहां उद्यमादिक कुछ भी नहीं है तथा जीवों के पुरषा कार होने से भी पुरषार्थ सिद्धि का अनुप लंभ है इस वास्ते सर्व नियत रहा है तथा श्री वीर भगवान की धर्म प्रज्ञप्ति अशोभ नीक है जिस धर्म में उद्यमादिक करना पड़ता है इस वास्ते सर्व भाव अनियत हैं तब कुंड कोलिक इस माफिक देवता का वचन सुन करके तिस प्रतें ऐसा कहने लगा अहो देवता जो ऐसा है तो तुम ने या देव रिद्धि उद्यमादिक करके मिली या विगर उद्यम से मिली तब देवता कहने लगा मैंने या देवता सम्बन्धी रिद्धि उद्यम विगर पाई है तब कुंड कोलिक बोला कि जो अनुउद्यमादिक करके तुम ने देव रिद्धि पाई तब तो जिन जीवों के उद्यमादिक नहीं है वे सर्व देवता क्यूं नहीं भया अब जो तुमने या रिद्धि अगर उद्यमादिक करके पाई है तब गोशाला का धर्म सोभनीय है ऐसा तुमने पहिले कहा था सो मिथ्या है तब तो वो देवता शंका तुर होगया और तिस प्रतें उत्तर देने को असमर्थ हुवा तथा मुद्रिका और वस्त्र पृथ्वी शिला पट्ट के ऊपर रख करके अपने ठिकाने गया तब तिस वक्त में श्री वीर स्वामी सम व सरे तब कुंड कोलिक भी सवेरे के वक्त स्वामी के पास गया तब तो भगवान सर्व के सामने प्रशंसा करी और विशेषण तो काम देवकी तरह से जानना मगर इतना विशेष है अर्थ और हेतु प्रश्नादिक करके अन्य तीर्थिक देव प्रतें निरुत्तर करने सेती इस माफिक स्वामी ने तिस की प्रसंशा करी तब वो कुंड कोलिक चौदे वर्ष बाद तिसी तरह से बड़े पुत्र को कुटुंब में स्थापन करके आप

पौषध शाला में रह के इग्यारे प्रतिमा आराधन करके तिसी तरह से सौ धर्म देव लोक में अरुण ध्वज विमान में देवता भया तहां से महा विदेह क्षेत्र में मोक्ष जावेगा ॥ इति कुंड कोलिक वृत्तान्त ॥ ६ ॥

अब सात में श्रावक का वृत्तान्त कहते हैं ॥ पोलास पुर नगर में सद्दाल पुत्र नामें गौशाला का श्रावक कुंभ कार बसता था तिस के अग्नि मित्रा नामें स्त्री तथा तीन कोटि द्रव्य तहां पर एकेक कोटि निधान आदि में रक्खे भये थे तथा दस हज्जार गाय का एक गोकुल था तथा फेर तिस के पांच सै कुंभ कार पणें की दुकाने थी एक दिन के वक्त वो सद्दाल पुत्र मध्य रात्रि के समय में अशोक वाड़ी में आ करके गोसा लोक्त धर्म ध्याता रहा तब तहां पर एक देवता प्रगट होके तिस सद्दाल पुत्र प्रतें ऐसा कहा भो देवानु प्रिय प्रातरत्र महा माहन समुत्पन्न ज्ञान दर्शन धर त्रि का लज्ञो अर्हंत् समे ष्यति तिस को तूं वंदन नमस्कारादिक प्रति पत्ति करना ऐसा दो तीन दफै कह के वो देवता अपने ठिकाने गया तब वो सद्दाल पुत्र उस देवता का वचन सुन करके विचारने लगा इस माफिक गुण सहित मेरा धर्माचार्य गोशाला है वो निश्चय करके प्रातरत्र समेष्पति तब मैं उनको वंदनादिक प्रति पत्ति करूंगा अब खगोदय होने से श्री वीर स्वामी समवसरे तब वो सद्दाल पुत्र श्री वीर स्वामीं का आगमन सुन करके बहु जन परि वृत तहां जा करके विधि पूर्वक स्वामी प्रतें वंदना करके उचित स्थान में बैठा तब स्वामी ने भी देशना देके सद्दाल पुत्र प्रतें आमंत्रण करके विभावरी जन्य अखिल वृत्तान्त कहके पूछा भो सद्दाल पुत्र यह अर्थ सत्य है तब सद्दाल पुत्र बोला हे स्वामी इसी तरह से है तब फेर स्वामी बोले भोसद्दाल पुत्र तिस देवता ने गोशाले कों अंगीकार करके ऐसा नहीं कहा तब सद्दाल पुत्र ने विचार किया प्रागुक्त गुण शंपन्न तो यह वीर स्वामी है तिस वास्ते में इस प्रभू प्रतें वंदना करके पीठ फलक वगैरे से निमंत्रणा करूं तो श्रेष्ट है एसा विचार करके स्वामी प्रतें वंदना दिक पूर्वक कहा हे भगवान नगर के बाहिर मेरे पांच सै कुंभ कारा पणा मौजूद है तिण मांय से आप पीठ फलक शज्या संस्तारकादि ग्रहण करके विचरें तब स्वामी भी तिस आजीविक उपाशक का यह वचन सुन करके तहां पर यथा योग्य प्रासुक पीठ फलकादिक ग्रहण कर के रहे तब एक दिन के वक्त में वो सद्दाल पुत्रशाला से भांड बाहर ले जाके आतपेद दान तब स्वामी ने पूछा भो सद्दाल

पुत्र यह भांड कैसे पैदा भया तव तिसने भी मृत्ति का सें लेके सर्व भांड निप्यत्ति का स्वरूप स्वामी के आगुं कहा तव स्वमी वोले यह भांडादिक उद्यमादि करके करते हो उता ही अनु उद्यमादि भिः इस का उत्तर दे तव सद्दाल पुत्र वोला हे स्वामी अनुद्यमादि करके करते हैं जहां पर उद्यमादिक कुछ भी नहीं है इस वास्ते सर्व भाव नियत है तव स्वामी वोले अगर जो कोई पुरष तुमारे भांड अपहरे या विनाश करे वा तेरी भार्या के साथ में भोग भोगता विचरे तो तिस पुरप प्रतें क्या दंड देवे तव सद्दाल पुत्र वोला हे स्वामी में तिस कों मारना वगैरह करूं तव इस माफिक सद्दाल पुत्र प्रतें अपने वचन करके पुरष काराभ्यु पगमं कारयित्वा स्वामी वोले जो ऐसा नहीं करें तिस को तूं हण नादिक नहीं करे जो उद्यमादिक नहीं है नियत सर्व भाव रया है अव अपराधी पुरष प्रतें तूं हननादिक करे फेर तैंने कहा कि उद्यमादिकन हीं है सो मिथ्या है इस माफिक स्वामी का वचन सुन करके वो सद्दाल पुत्र प्रति वोध पाके जल्दी स्वामी प्रतें वंदना करके स्वामी के पास धर्म सुन करके प्रसन्न होके आनंद की परें वारे व्रत ग्रहण करा इतना विशेषता है कि द्रव्यादिक की संख्या पैली दिखला दी उसी माफिक जानना तव वो सद्दाल पुत्र अपने घर आके अपनी स्त्री प्रतें तिस हकीकत प्रतें निवेदन करके तिसी तरह से वारे व्रत ग्रहण कर वाया तिस दिन से ले करके शुद्ध श्रावक हो गया अथ एक दिन के वक्त में गोशाले ने तिस वात प्रतें सुनी तव तिस सद्दाल पुत्र प्रतें जिन धर्म सेती चलाने के वास्ते स्वधर्म में लाने के वास्ते आजीविक संघ सहित तिस नगर में आजीविक सभा में आ करके अपना भांडादिक रख करके कितनेक आजीविक साथ सद्दाल पुत्र के पास आया तव सद्दाल पुत्र श्रावक तिस गौशाले को आता देख करके आदर सत्का रादिक नहीं करके मौन रहा तव वो गोशाला सद्दाल पुत्र का अनादर देख करके पीठ फलक वगैरे के वास्ते तिस के अगाड़ी श्री वीर स्वामी का गुण कीर्त्तन करने लगा भो देवानु प्रिय यहां महा माहन १ महा गोप २ महा सार्थ वाह ३ महा धर्म कथिक ४ महा निर्यामक ॥ ५ ॥ आये हैं तव सद्दाल पुत्र वोला भो देवानुप्रिय ऐसा कौन है तव गोशाला वोला श्री मंत श्रमण भगवंत महा वीर स्वामी हैं तब सद्दाल पुत्र बोला कि वे ऐसी उपमा सहित किस तरह से तव गोशाला वोला भो सद्दाल पुत्र श्री वीर स्वामी अनंत ज्ञानादिक के धारने वाले चोंसठ इन्द्रादिक करके पूजित हैं इस वास्ते

महा माहन कहना चाहिये ॥ १ ॥ तथा भव अटवी के विषै त्रास याने वाले बहुत जीवां प्रते धर्म मई दंड करके अच्छी तरह से रक्षा करके निर्वाणरूप वाड़े में पहुंचावे इस वास्ते महा गोप कहते हैं ॥ २ ॥ तथा संसार रूप अटवी के विषे उन्मार्ग में पड़ने वाले जीवों को मुक्ति रूप पत्तन में पहुंचाने से महा सार्थ वाह कहना ॥ ३ ॥ तथा सन्मार्ग से भ्रष्ट भये जीवों को बहुत अर्थ हेतु आदि से सन्मार्ग में लाके संसार से तिराने वाले उन को महा धर्म कथिक कहते हैं ॥ ४ ॥ संसार रूप महा समुद्र डूबने वाले जीवों को धर्म रूप नावपर बैठा के निर्वाणतीरकैसा मनें करने सेतीं महा निर्यामक कहते हैं ॥ ५ ॥ तब बो सद्दाल पुत्र गोशाला प्रतें ऐसा कहा भो देवानु प्रिय ऐसे निपुण और एसे नयवादी ऐसे विज्ञान वान् मेरे धर्माचार्य श्री वीर स्वामी के साथ विवाद करने की तुमारी शक्ति है तब गोशाला बोला मेरी तो शक्ति नहीं है तब श्रावक सद्दाल पुत्र बोला कि तुमारी शक्ति केसें नहीं है तब गोशाला बोला श्री वीर स्वामी मुझ प्रतें अर्थ हेतु युक्ति प्रमुख जहां २ ग्रहण करूंगा तहां २ निरुत्तर करेंगे तिस कारण करके विवाद करने की सामर्थ मेरी नहीं है तब बो श्रावक गोशाले प्रतें ऐसा बचन कहा भो देवानुप्रिय जिस कारण से तुमने मेरे धर्माचार्य के गुणो त्कीर्त्तन करा तिस वजह से मैं तुझ को पीठ फलकादिककरके आमंत्रण पूर्वक निमंत्रण करता हुं मगर धर्म के वास्तेनहिं ऐसा विचार करकें तिस वास्ते तुम जावो मेरी कुंभ कार आपन सेती यथेछापूर्वक पीठ फलका दिक ग्रहण करके विचरो तब तो बो गोशाला तिस के बचन सेतीं पीठादिक ग्रहण कर के रहा मगर सद्दाल पुत्र प्रतें कोई भी प्रकार करके चलायमान करने कों समर्थ नहीं भया तब खुद ही खेदातुर होके पोलास पुर सेती निकल करके और ठिकाने गया तब बो सद्दाल पुत्र श्रावक उत्तम धर्म पाल करके चौदे वर्ष उल्लं घनभया तब आनंद की तरह से पोषध शाला में रहा तब चुल्लनी पिता की तरह से तिस को भी उपसर्गभया इतना विशेष है अग्नि मित्रा स्त्री प्रतें हनन वगैरे अंगीकार करके देवता ने वचन कहा तब तिसने ग्रहण करने का इरादा करा मगर देवता उड़ के चला गया तथा कोला हल करे वाद अग्नि मित्रा स्त्री आई बाकी अधिकार उसी माफिक जानना आखिर में अरुणाद्भुत बिमान में

देवता पणें उत्पन्न भया महा विदेह में मुक्ति जावेगा ॥ यह सद्दाल पुत्र का संबंध कहा ॥ ७ ॥

अब आठमें श्रावक का अधिकार निरूपण करते हैं ॥ राज गृही नगरी के विषै महा शतक नामें गाथा पति वसता था तिस के अपनी निश्रा करके चौवीस कोटि सैनैयों का द्रव्य था तहां पर आठ २ कोटि सैनैया निधान आदिक पहिली भेद बताये हैं उसी माफिक हिस्सा समझ लेना तथा आठ गोकुल था तथा फेर तिस महा शतक के रेवती को आदि लेके तेरे स्त्रिये थीं तथा फेर रेवती अपने पिताके घरसे आठ कोटि सोनैया और आठ गोकुल लाई थी अब एक दिन की वक्त में तिस महा शतक ने भी श्रीवीर स्वामी केपास आनन्दकी तरह से वारे व्रत ग्रहण करा इतनी विशेषता है कि अपनी निश्रा करके चौवीस कोडि सौनैया तथा आठ गोकुल रक्खे तथा रेवती को आदि लेके स्त्री विगर याने तेरे स्त्री सिवाय और स्त्री से मैथुन विधी का त्याग तब वो महा शतक सुख सेती श्रावक धर्म पालता हुवा विचरता था अब एक दिन के वक्त तिस रेवती के मन में ऐसा विचार पैदा भया मैं इन वारे शोकों के व्याघात के मारे भर्त्तार के साथ भोग भोगने बराबर नहीं पाती तिस वास्ते इन शोकों को कोई भी प्रयोग करके मार डालूं तो पीछे भर्त्तार के साथ भोग अच्छी तरह से होगा कारण मैं इकेली अपने पती के साथ भोग भोगूंगी तथा इन सोकों के द्रव्यादिक वगैरे की भी मालिकनी हो जाऊंगी तब वा पापिनी एक दिन छल पाके तिनों के भीतर सेती छै सोकों को तो शस्त्र प्रयोग करके मारी तथा बाकी रही छव शोक उन को विष प्रयोग करके मारी और तिनों के द्रव्य वगैरे की भी मालिकनी हो गई तब से निर्विघ्नपने भर्त्तार के साथ में भोग भोगती विचरती है तब वा रेवती मांस की लोलुपी होके निरन्तर नाना प्रकार के मांस मदिरा का स्वाद लेती भई विचरे अब एक दिन के वक्त में तिस नगरी के विषै अमार ढूंडी पिटवाई तबवारेवती अपने पिता के घर आदमी भेज करके उंहां के आदमी बुलवा के उन को कहा भो देवानु प्रिया तुम मेरे वाप के गोकुल वा मेरे गोकुल सेती हमेशा दो वछड़े मार करके यहां लाया करो तब तिनों ने भी रेवती का वचन प्रमाण करके तिसी माफिक करने लगे तब वारे वती तिन वछड़ों का मांस खाती हुई और सुरा पीती भई विचरने लगी तब वो महा शतक श्रावक चौदे वरस गये बाद तिसी माफिक बड़े पुत्र प्रतें कुटंब के विषै स्थाप करके पोषध शाला में धर्म ध्यान करता हुवा रहा तब वारे वती

भत्ता विकीर्ण कूर्चा उत्तरीय वस्त्र मस्तक से उतार दिया पोषध शाला में आ करके भर्त्तार प्रतें मोहोत्पाद जनकानि श्रृंगार मई वचन हाव भाव दिखलाती ऐसा कहने लगी हं हो महा शतक श्रावक धर्म स्वर्ग मोक्षादिक की वांछा तेरे धर्मसे होगी क्या जिस संती मेरे साथ भोग भोगना छोड़ दिया ऐसा रेवती का वचन सुन करके वो श्रावक उस के वचन का अनादर करके मौन सहित धर्म ध्यान उपगत चित्त करके रहा तब वा रेवती दो दफै तीन दफै ऐसा वचन कहा तो भी महा शतक ने अगणना करके धर्म ध्यान में रहा तब वा रेवती भी अपने ठिकाने गई तब वो श्रावक अनुक्रम करके इग्यारे प्रतिमा आराधन करके बहुत तपस्या करके शरीर कूं सुकाय दिया आनंद की तरह से हाड़ मात्र चमड़ी मात्र शरीर रह गया अब एक दिन के वक्त तिस महा शतक के शुभ अध्य वसायों करके अवधि ज्ञान उत्पन्न भया तिस करके वो महा शतक सर्व दिशा में तथा दक्षिण दिशा में तथा पश्चिम दिशा में लवण समुद्र तक एकेक हज्जार जोजन प्रमाणे क्षेत्र प्रतें जाने और देखे और बाकी दिशावों के विषै आनंद की तरह से विषय जान लेना तब वा रेवती एक दिन के वक्त में महा शतक प्रतें फेर भी उपसर्ग्ग करने लगी तब वो गाथा पती कोपायमान होके अवधि ज्ञान से देखके तिस रेवती प्रतें ऐसा कहा अरे २ रेवती अप्रार्थ्य प्रार्थिके तूं सातमें दिन आलशक व्याधि करके बहुत तकलीफ पाके असमाधि से काल करके प्रथम नरक में लोलुचुय नामें नर का वांश में चौरासी हज्जार वरस की स्थिती में नारकी पणें उत्पन्न होगी तब वा रेवती तिस महा शतक का ऐसा वचन सुन करके डरी फेर विचारने लगी आज मेरे ऊपर कोपवान हो गया महा शतक अबमालम नहीं कौन कदर्थना करके मुझे मारेगाऐसा विचार करके वा रेवती धीरे २ लौट करके अपने घर आके दुखिणी भई रहती है तब वा रेवती सातमें दिन में तिसी माफिक मर करके लोलुचुय नामें नरका वास में उत्पन्न भई तब तिस वक्त में श्री वीर स्वामी तहां पर सम व सरे पर्षदा के लोक देशना सुन करके अपने ठिकाने गया तब स्वामी गौतम प्रतें बुलवा के मदा शतक के क्रोध उत्पत्ति का स्वरूप गौतम प्रतें कहा कि हे गौतम पोषध शाला में चरम शंलेखना करके दुर्बल कर दिया है शरीर जिसने तथा भातपाणी का पच्चक्खान कर दिया जिसने इस माफिक महा शतकको अन्य प्रतें अप्रीति कारी वचन कहना युक्ति नहीं कारण मर्म का वचन जिस से बहुत भवांतर में अप्रीति

पैदा होवे ऐसा वचन नहीं कहना चाहिये तिस वास्ते तूं तहां पर जाके महा शतक प्रतें ऐसा जाके कहो भो महा शतक जो तैंने रेवती प्रतें सत्य वचन भी कहा मगर अनिष्ट और मर्म के हे ऐसा वचन श्रावक को कहना उचित नहीं तिस वास्ते इस ठिकाने की आलोचना करो यावत् यथा योग्य प्रायश्चित अंगीकार करवावो तब गौतम स्वामी विनय करकै भगवान का वचन प्रमाण करके राजगृही नगरी मैं महा शतक के घर आया तहां पर वो श्रावक गौतम स्वामी प्रतें आता हुवा देख कर के प्रसन्न भया बाद वंदना करी गौतम स्वामी सर्व भगवान का वचन कदंबक प्रतें भगवान का नाम ग्रहण करके तिस महा शतक के आगूं कहा तब महा शतक ने भी गौतम का वचन प्रमाण करके तिस ठिकाने की आलोचनादिक ग्रहण करवाई तब गोतम स्वामी तिस के पास सेती निकल करके स्वामी के पास आया तब महा शतक श्रावक उत्तम श्रावक धर्मपाल करके तिसी तरह से आखिर में अरुणा बतंशक विमान में देवता पणें उत्पन्न भया महा विदेह में मोक्ष जावेगा ॥ इति महा शतक सम्बन्ध ॥ ८ ॥

अब नवमें श्रावक का सम्बन्ध लिखते हैं ॥ जैसे सावथी नगरी में नंदिनी पिता गाथा पति बसता था तिस के अश्विनी नामें स्त्री तथा द्रव्य और गोकुल आनंद की तरह से था बारे व्रत भी तिसी परे चौदे वर्ष गये बाद वो बड़े पुत्र को कुटुंब में स्थापन करके पोषध शाला में आकर के विविध धर्म कृत्य करके आत्मा प्रतें भावित करके इग्यारे प्रतिमा आराधन करके आखिर में अरुणाभ विमान में देवतापणें उत्पन्न हुवा और महा विदेह में मुक्ति जावेगा ॥ इति नवमा श्रावक सम्बन्ध ॥ ९ ॥

अब दशमें श्रावक का सम्बन्ध कहते हैं ॥ सावत्थी नगरी में तेतली पिता नामें गाथापती रहता था तिसके फाल्गुनी नामें स्त्री तथा रिद्धि का विस्तार पूर्ववत् तथा व्रत भी तिसी तरह से तब वो भी बड़े पुत्र की आज्ञा करके पोषध शाला में इग्यारे प्रतिमा आराधन करके आखिर में तिसी माफिक सौधर्म देवलोक में अरुण कील विमान में देवता पणें उत्पन्न भया महा विदेहमें मुक्ति जावेगा ॥ इति दशम श्रावक सम्बन्ध ॥१०॥

इन दस श्रावकों के पनर में वर्ष वर्तमान में गृह व्यापार त्याग रूप अध्य वसाय भया तथा सर्व के बीस वरस का श्रावक पर्याय भया तथा सर्व सोधर्म देवलोक में तुल्य

आऊं खैपणें उत्पन्न भया तथा इनों में प्रथम और छट्ठा और नवमा तथा दशमा श्रावक कों उपसर्गा नहीं भया बाकी छव श्रावक को उपसर्गा भया फेर भी इतनी विशेषता है आद्य श्रावकके साथ और गौतम के साथ प्रश्नोत्तर भया बाकी छव श्रावक और देवता के साथ चर्चा भई यह समुच्चय बारे व्रत ऊपर उपाशक दशा अंगके अनुसारे लेश करके दस श्रावक का दृष्टान्त दिखलाया इनों को सुन करके और भी सम्यग् दृष्टि जीव बारे व्रत पालने में तत्पर होना ॥ अब प्रसंग करके इग्यारे श्रावक प्रतिमा का स्वरूप दिखलाते हैं ॥

—दंसणवय सामाइय। पोसह पडिमा अवं भसच्चित्ते।
आरंभ पेस उद्दिट्ठ। वज्जए समण भूएय ॥ ७५ ॥

व्याख्या—दर्शन याने सम्यक्त। १। तथा व्रत कोण से अणु व्रतादिक। २। सामायिक। ३। पौषध प्रसिद्ध है। ४। तथा प्रतिमा कायोत्सर्ग रूप। ५। इन पांचों कों विधान रूप करके प्रतिमा याने अभिग्रह विशेष जानना ॥ ५ ॥ तथा अव्रम्ह याने व्रम्ह व्रत रहित मगर स्त्री का त्यागी होता है ॥ ६ ॥ तथा सच्चित्त का त्यागी ॥ ७ ॥ तथा आरंभ खुद पाप कर्म करे ॥ ८ ॥ तथा प्रेषणं परेषां गोया दूसरे को भी पाप कर्म के वास्ते भेजना वगैरे ॥ ९ ॥ तथा उद्दिष्टं याने उद्देशन करना गोया एक कोई के वास्ते करना उसको उद्देश कहते हैं गोया श्रावक को उद्देसन करके सचित्त हो चाहे अचित्त हो तथा पक्व याने पका भया आहार गोया पूर्वोक्ततीनो आहार का त्यागी होता है कोण आठमी से लेके प्रतिमा धारक उन का व्यवहार है गोया आठमी और नवमी तथा दशमी यह तीनों प्रतिमा धारक का यह व्यवहार जानना चाहिये ॥ १० ॥ तथा श्रमण भूत प्रतिमा याने साधू के समान होना उस को श्रमण भूत कहते हैं ॥ ११ ॥ इति गाथार्थ ॥

अब विशेष करके बतलाते हैं एक मईने तक शंकादि दोप रहित राजायोगादि छै आकार वर्जित केवल शुद्ध सम्यक्त धारक पहिली प्रतिमा ॥ १ ॥ तथा दो मास तक अतीचार रहित निरपवाद व्रत और सम्यक्त सहित धारण करना दूसरी प्रतिमा

॥ २ ॥ तथा तीन मास तक सम्यक्त व्रत सहित हमेसा दोंनो वक्त सामायिक करना तीसरी प्रतिमा ॥ ३ ॥ इस तरह से आगूं भी पिछाड़ी की क्रिया सबसाथ लेके फेर की क्रिया करना जो कुछ विशेष पणा है सो कहते हैं चार मास तक छव पर्वों में चार प्रकार का पोषा करना या चौथी प्रतिमा ॥ ४ ॥ तथा पांच मास तक स्नान का त्याग दिन में प्रकाश की जमीन पर भोजन करना रात को सर्वथा भोजन का त्याग तथा परिधान कच्छ नहीं बांधे दिन में ब्रह्मचारी रात में अपर्व तिथी के विषै स्त्री के भोग का परिमाण रक्खै पर्व तिथियों में रात को चार रस्ता इकट्ठा होवे वहां पर काउसग्ग करना-इस माफिक श्रावक के पांचमी प्रतिमा होती है ॥ ५ ॥ यहां पर रात्रि भोजन त्याग करने से यह साबूत भया कि श्रावक को निश्चै करके केशव की परें कबी भी रात्रि भोजन नहीं करना मगर जो कोई श्रावक तिस का नियम नहीं करना मगर जो कोई श्रावक तिस का नियम नहीं कर सकै तो मगर पांचमी प्रतिमा से लेके अवश्य रात भोजन का त्याग करना तथा केशव का दृष्टान्त आगूं दिखलावेंगे ॥ ५ ॥ तथा छव मास तक दिन और रात को ब्रह्मचर्य धारण करना छट्ठी प्रतिमा ॥ ६ ॥ तथा सात मास तक अचित्त असनादिक भोजन करना सातमी प्रतिमा ॥ ७ ॥ तथा आठ मास तक आरंभ त्याग करे आठमी प्रतिमा ॥ ८ ॥ तथा नवमा सतक दूसरे से आरंभ नहीं कर वावे नवमी प्रतिमा ॥ ९ ॥ तथा दसमास तक क्षुर करके सिर मुंड़ावे मस्तक में शिखा रक्खे और उदिष्ट आहार का त्याग करे दशमी प्रतिमा ॥ १० ॥ तथा एका दश माश तक क्षुर मुंड़वा लोचवा लुप्त केश होके रजो हरण ग्रहण करके पात्रादिक साधू का उपकरण तथा साधू की तरह एषणीय आहारादिक ग्रहण करे अभी तक स्वजन का स्नेह त्याग नहीं भया मगर गोचरी का टैम में प्रतिमा पन्न श्रावक प्रतें भिक्षा देवो ऐसा कहै उस को इग्यारमी प्रतिमा कहते हैं ॥ ११ ॥ यह उत्कृष्ट काल बतलाया तथा जघन्य करके इग्यारे प्रतिमा का काल प्रत्येक अंतर्मुर्त्त का है यहां पर आगूं की सात प्रतिमा प्रकारान्तर करके प्रवचन सारो द्वारादिक में बतलाई है ॥

अब यहां पर प्राक सूचित केशव का वृत्तान्त कहते हैं ॥ कुंडिन पुर नगर में यशो धन नामें मिथ्यात्व मोहित बुद्धिवाला वणियां वसता था तिस के रंभा नामें स्त्री की कूख से पैदा भया हंस १ केशव २ नाम से दो लड़के भये वो दोनो ही यौवन वयमें

क्रीड़ा करने के वास्ते वन में गये तहां पर धर्म घोस नामें मुनि प्रतें देख के विवेक पदा भया दोनों भाई गुरु महाराज को नमस्कार करके अगाड़ी वैठे तव गुरु महाराज धर्म उपदेश दिया तिस में रात भोजन का इस भव और पर भव में वहुत दोष दिखलाया सो वतलाते हैं रात्रि की वक्त में स्वेच्छा से भूतल में घूमने वाले रजनी चर देवता रावको भोजन करने वाले मनुष्यों को जल्दी छल लेवे तथा अन्नादिक में चीटियें आ जावें तो खाने वाले की वुद्धि का नाश हो जावे अगर मक्खियें गिर जावें तो वमन हो जावे अगर यूका आ जाने से जलोदर रोग हो जाता है तथा कौलिक जानवर आ जाने से कोढ रोग पैदा हो जाता है अगर गले में वाल लग जाने से स्वर भंग हो जाता है तथा कांटा और काष्ट का टुकड़ा आ जाने से गले में पीड़ा हो जाती है फेर व्यंजनादिक के भी तर विच्छू आ जावे तो तथा ऊपर सेती सर्प की गरल पड़ जावे तो मरणांत कष्ट हो जाता है तथा वरतन धोना वगैरै में वहुत छोटे जीवों की हिंसा होती है इत्यादिक दोष तो इस भव का और पर भव का दोष तो नरक वगैरे में पड़ना वहुत दोष उत्पन्न होता है इस वास्ते रात्रि भोजन वहुत दोष दुष्ट रात भोजन प्रतें मान करके संसार सेती डरने वाले तिस का त्याग करने में उद्यम करना चाहिये इस माफिक गुरु का वचन सुन करके प्राप्त भया है वोध दोनों भाई गुरू प्रतें साक्षी करके प्रमोद सेती रात्रि भोजन का त्याग करा तव पीछे गुरू महाराज प्रतें नमस्कार करके अपने मकान आके दो पैर में भोजन करके दोनों भाई दुकान वगैरे में व्यापार करने के वास्ते जावे वाद दो घड़ी दिन वाकी रहने से फेर घर आके माता के पास व्यालू मांगे तव माता वोली भो पुत्रो अभी तो भोजन वगेरे कुछ भी नहीं है रात को होगा इस वास्ते चारघड़ी ठहरो ऐसा माता का वचन सुन करके दोनों वोले हे माता जी तुमने कहा सो सत्य है मगर हम लोगों ने रात भोजन का त्याग करा है इस वास्ते अभी भोजन वगैरे हो तो देवो तव भूमि घर में रहा भया था यशोधन पिता ने उन दोनों का वचन सुन करके क्रोध सहित विचार करा कौन धूर्त्त ने इन मेरे पुत्रों को ठगा है ऐसा दिखता है नहीं जव कुल क्रम से चला आया रात्रि भोजन त्याग कैसे करें तिस वास्ते में इन दोनों को दो तीन दिन तक भूख पीडित करके रात भोजन का त्याग रूप कदाग्रह को छोड़ाऊं तो अच्छा है ऐसा विचार करके तिस वक्त में थाल

लेने के वास्ते भूमि घरमें गई रंभास्त्री प्रतें गुप्त कह दिया कि तें मेरी आज्ञा विगर इन दोनों को भोजन नहीं देना तब भर्तार की आज्ञा के वश सेती रंभा पीछी आ कर के उन दोनों प्रतें ऐसा कहा भो पुत्रो अभी पक्कवान वगैरे भी नहीं है इस वास्ते रात्रि को पिता के साथ में भोजन करना कहा भी है जो कुलवान पुत्र होते हैं वो निश्चय करके माता पिता के अनुगामी रहते हैं तब वे दोनों भाई कुछ हस करके कहने लगे हे माता जी सुपात्र पुत्र होते हैं वे पिता के पिछाड़ी चलते हैं मगर पिता कूंवे में गिरे तो पुत्र पिछाड़ी गिरने का नहीं ऐसा पुत्रों का वचन सुन करके माता बोली अभी तुमको भोजन नहीं मिलेगा तब दोनों भाई मौन करके बाहर चले गये तब वो सेठ मिथ्या दृष्टि तोथाई तिन पुत्रों के वचन से अत्यंत कोपायमान होके रंभा प्रतें अत्यर्थ पणें से फेर भी कह दिया कि तें रात को ही भोजन देना मगर दिन को सर्वथा नहीं देना तब दोनों रातको घर आये तब माता ने प्रार्थना करी तो भी धीरज धार करके तिस वक्त भोजन नहीं करा तथा दूसरे दिन वो महा शठ सेठ ने उन दोनों को खरीद बेंचने में नियुक्त कर दिया तब उनके सर्व दिन पूर्ण हो गया मगर व्यापार पूरा भया नहीं तब दूसरे दिन भी रात को घर आये भोजन करे विगर सो गये इस माफिक पिता व्यापार में लगा देवे दोनो भाई भोजन विगर पांच रात और दिन निकाले अब छट्टे दिन रात होने के समय दोनों घर आये तब वो कुटिल मती यशोधन मधुर वचन करके बोला हे पुत्रो जो काम मेरे कूं सुखदाई होवें तथा तुम को अरिष्ट होवे ऐसी प्रीती धारण करके मैं तुम से कुछ कहता हूं सो करो तुमारा रात भोजन का त्याग तो निश्चय ज़ान लिया नहीं जब इस माफिक क्लेश कारक कारणों में मैं कैसे नियोजन करता इतने दिन तक तुमने भोजन करा नहीं तब तुमारी माता ने भी नहीं करा तिसके भी आज छट्ठा उपवास हो गया तथा या छै मास की कन्या होगई तुमारी बैन इनको भी दूध मिला नहीं इस वास्ते अत्यंत ग्लान गात्र हो गया जिसका आज इस कन्या का शरीर ग्लान देख करके मैंने कारण तुमारी माता से पूछा जब तुम दोनों का अभोजन पूर्वक सर्व बृत्तान्त कहा तिस वास्ते हे कृपालु इस कन्या की अनुकंपा विचार करके तुम दोनों भोजन करो. जिस बाद तुमारी माता भी भोजन करै क्या कहा है रात के प्रथम पैर आधा जाने से पंडित लोक उसको प्रदोष कहते हैं और पश्चिम प्रहर अर्द्ध को प्रत्यूष कहते हैं इस वास्ते रात्रि त्रियामा

लोक में प्रसिद्ध हैं तिस अपेक्षा करके अभी निशा मुख के विषै अगर भोजन करने से उसको निशा मुख भोजन नहीं कहता तथा इस माफिक पिता की वाणी में भींजा गया और भूख में पीड़ित हो रहा था हंस है सो केशव के सामने देखा तब केशव भी बड़े भाई प्रतें कातरी भूत जान करके आप निश्चल चित्त होके पिता प्रतें कहने लगा हे पिता जी जो कार्य तुम को सुख करे वो कार्य मैं करूं मगर मुझ को पाप लगेगा सो तुम को कौन सा सुक्ख है तथा जो माता पिता का वात्सल्य करना है गोया धर्म त्याग करवावे और पुत्र माता की वात्सल्यता के वास्ते धर्म त्याग करे वो गोया बड़ा भारी शल्प जानना चाहिये कारण मैं व्रत खंडन करूं तुमारे वास्ते गोया उस पाप का भागी मुझ को होना पड़ेगा कारण सर्व लोक स्वकर्म का फल भोग रहे हैं यः कर्त्ता सएव भोक्ता इस वास्ते हे पिता जी नरक मुझ को जाना पड़ेगा इस वास्ते कौन किसी के वास्ते पाप करे तथा फेर हे पिताजी तुम ने फेर त्रियामा का स्वरूप कहा सो केवल कथन मात्र है तत्व तस्तुदिव सस्य मुखे अंतेचयो मुहुर्त्तः सोपि रात्रि समीप वर्त्तित्वात् गोया रात पड़ने के नजदीक का भी मुहुर्त्त रात्री में गणना करी है विभावरीतुल्येव। तहां पर पंडित नहीं भोजन करे मगर सांप्रतंतु निशै वास्ति। तिस वास्ते हे पिता जी इस कार्य को अंगीकार करके मुझ को बार २ मत कहो तब केशव का ऐसा वचन सुन कर के यशोधन कोपायमान होके केशव प्रतें बोला अरे दुर्विनीत जो मेरा वचन लंघन करेगा तो मेरी दृष्टि पथ से दूर होजा तब तो महा धैर्यवान केशव पिता का वचन सुन करके द्रव्यादिकका ममत्व त्याग करके जल्दी से घर से निकल करके चलने लगा तो तिसके अनुगामी हंस जाने लगा तब हंस प्रतें यशोधन ने बलात्कार करके धारण करके बहुत वचनों से लोभाय करके भोजन के वास्ते बैठा लिया अब केशव वहां से निकल करके देशान्तर में जाने लगा रस्ते में बहुत नगर ग्राम आरामादिक प्रदेशों को उल्लंघन करके सातमें दिन निराहार होके कोई अटवी में घूमने लगा वहां पर अर्द्ध रात के वक्त में बहुत यात्रा के वास्ते आया भया मनुष्यों करके सहित तथा तैयार भया है भोजन तहां पर तथा यक्ष का मंदिर भी देखा तथा तिस भोजन के ठिकाने यात्री लोक भोजन करने को जा रहे थे तब केशव को आया देख करके प्रसन्न होके ऐसा वचन बोले हे पांथ अत्र एहि २ भोजनं गृहाण और हम कूं पुन्य देवो हम लोकभी पारणा करना शुरू करते थे

और कोई भी अतिथि की बाट देख रहे थे इस वास्ते यहां आवो और भोजन करो तब केशव तिनों से कहने लगा भो लोको यह तुमारा कैसा व्रत है कि जिसमें रातको पारणा होता है तब वे लोक कहने लगे भो पांथ यह महा प्रभावीकमाण नाख्य यक्ष है आज इस की जात्रा को दिन है तिस वास्ते यहां लोक आके दिन में उपवास करे और आधी रात में कोई भी अतिथि को आदर सेती भोजन करवाके पीछे हम लोक पारणा करेंगे जिस करके तिनों कूं महा पुन्य की प्राप्ति होवे तिस वास्ते तूं आज हमारे अतिथि हो तब केशव बोला कि रात को पारणा करने में महा पाप का कारण हैं इस पारणों में भोजन नहीं करूंगा फेर भी क्या कहते हैं कि जहां पर इस माफिक रात्रि भोजन करना वो उपवास नही होता है कारण धर्म शास्त्र के विषै भी आठ पहर तक भोजन का त्याग करने से उपवास निरूपण करा है जो शक्स धर्म शास्त्रसे विरुद्ध तप करते हैं वे दुर्बुद्धि और दुर्गती में जाने वाले तथा वे यात्री लोक बोले कि इस देवता के व्रतमें इसी माफिक विधी है इस वास्ते यहां पर शास्त्रोक्ति मनु श्रुत्य युत्त्या युक्त विचारना मत कर और हम लोकों को अतिथि देखते भये बहुत रात चली गई है तिस वास्ते तूं विचार को छोड़ करके जल्दी से इस पारणें में अग्रगामी हो ऐसा कह करके वे जात्री सब उठ करके तिस केशव के पांव में लग गये तों भी केशव ने तिनों का वचन मंजूर नहीं करा तब जल्दी से यक्ष के शरीर सेती एक भयानक आकार वाला पुरष निकल करके हाथ में मुगदर उठा करके विकराल नेत्र करके तीक्ष्ण और रूक्ष वाणी करके ऐसा कहने लगा अरे दुष्टात्मा मेरे धर्म प्रते दूषण देता है फेर मेरे भक्त प्रतें अब गणन करता है अभी जल्दी भोजन कर नहीं जब तेरे मस्तक का सौ टुकड़ा कर डालूंगा तब केशव हस कर के बोला भो यक्ष मुझ प्रतें क्यों क्षोभायमान करता है ॥

भवान्तर में पैदा करा पुन्य और प्रधान धर्म और भाग्य धैर्य करके मुझ को मरने का भय नहीं तब तो यक्ष अपने किंकरों को ऐसा कहा कि अरे लोको इस के धर्म गुरू को पकड़ करके यहां पर लाके इस के अगाड़ी मारो जिस से इस को ऐसा धर्म उपदेश दिया तब तो कशा तथा पास धारण करने वाले तिस यक्ष के नौकर आर्त्त घोष करते भये धर्म घोष मुनि को जल दिला के यक्ष के आगूं रक्खा तब यक्ष बोला भो साधू शिष्य को भोजन करवाओ नहीं जब तुमको मारूंगा तब साधू केशव प्रतें बोला

हे भद्र देव गुरु संघ इनके वास्ते अकृत्य भी कर लेना चाहियें इस वास्ते तूं भोजन कर और यह लोक मारेंगे मुझ प्रतें इस वास्ते मैं गुरु हूं तेरा मेरी रक्षा कर तब तो केशव ऐसा वचन सुन करके केशव विचारने लगा जो महा धैर्यादिक गुण सहित है वे स्वप्न में भी अयोग्य नहीं वोलेंगे वे मेरे गुरु मृत्यु के भय से अन्योपदेश सेती पाप कारी उपदेश कभी नहीं देंगे और आज्ञा भी नहीं देते, तिस वास्ते मैंने निश्चय कर लिया कि मेरे गुरु यह नहीं मगर क्या है इस यक्ष की करी भई माया है ऐसा विचार करके केशव मौन करके रहा। तब यक्ष मुदगर उठा के केशव प्रतें कहने लगा भो भोजन कर नही जब तेरे गुरु प्रतें मारता हूं तब केशव भी शंका रहित होके कहने लगा अरे मा यिन् यह मेरा गुरु नहीं है जिस वास्ते तिस माफिक चारित्रके पात्र मेरे गुरू तेरे जैसे मंद शक्ति वालों के वशमें कभी नहीं आवेंगे तब तोवो साधू बोला कि मैं ही तेरा गुरू हूं मेरी रक्षा कर२ ऐसा आरटन करता हुवा बोला तब वो मुनी यक्ष के मुगदर प्रहार सेती जमीन पर पड़ गया तब वो यक्ष केशव के आगूं आ करके मुगदर घुमाके ऐसा बोला जो तूं अभी भोजन करे तो तेरे गुरु को जीता कर दूं तथा तुम को राज्य रिद्धि देऊं नहीं तब इस मुगदर करके यमघर का अतिथि कर दूंगा तब केशव हस करके बोला भो यक्ष यह मेरा गुरू नहीं इस वास्ते मैं इसके वचन से अपना नियम भंग नहीं करूंगा तथा फेर भी जो तूं मरे भये कूं जीन्दा करता हो तो तेरा भक्त है इनों के पूर्व जोंकों क्यों नहीं जिंदा करता है तथा राज देने की शक्ति होतो तुम इन भक्त जनों कों राज्य क्यों नहीं देते फेर तूं मुझ कूं मृत्यु का भय वेर २ क्या दिखलाता है जिस कारण से आयुबल छता होने से कोई भी मार सक्ता नहीं तब वो यक्ष इस माफिक केशव की वाणी सुन करके प्रसन्न होके केशव प्रतें आलिंगन करके ऐसा बचन कहा ॥

—अहो मित्र धियां पात्र। नस्या देषः गुरु स्तवः।
मृता मयान जीव्यंते। नैवराज्यं चदीयते ॥ १ ॥

सुगमार्थः अब यक्ष का ऐसा वचन सुन करके पेली का मुनि रूप था सो जमीन पर पड़ गया था तब तिस प्रतें यक्ष के किंकरों ने हांसी सहित उठाया बाद मुनि का रूप त्याग करके आकाश में गया तब तो इस विचित्र माया करके आश्चर्य सहित केशव

प्रतें यक्ष बोला भो मित्र तूं सात उपवासों करके खेदातुर हो गया फेर वहुत रस्ते चलने सेती श्रमवान होगया इस वास्ते रात्रि में यहां पर विश्राम ग्रहण करके सवेरे के वक्त में इन लोकों के साथ पारणा करणा ऐसा कह करके तिस के वास्ते अपनी शक्ति करके रचन करी भई शय्या प्रतें दिखलाई तब केशव भी तिस शय्या के ऊपर सो गया तब यक्ष के हुक्म सेती यात्री लोक पांव दावने लग गये तिस से जल्दी नींद आ गई तब चार घड़ी रात बाकी रहे बाद वो यक्ष केशव निद्रा सहित था उसको कहने लगा हे मित्र रात गई सवेरा हो गया अब नींद दूर कर तब केशव नींद दूर करके लोक में दिनोज्वल प्रतें देख के आकाश प्रतें सूर्य मंडित देख करके विचारने लगा मैं रात्रि के पश्चिम पैर में सूता हूं तो भी ब्राम्हीं मुहुर्त्त में तो इच्छा से जागृत हो जाता हूं मगर आजतो अर्द्ध रात्र में तो सूता था और आधा पहर दिन चढ़ने से भी जागा नहीं तिस का क्या कारण है तिस वास्ते आज दिन में भी मेरे आंखों में निद्रा आ रही है फेर मेरे श्वास की वायु में सुगंधी नहीं तव इस माफिक चिंतन कर रहा केशव प्रतें यक्ष बोला हे सत्पुरष धेठाई दूर कर तथा सवेरे का कृत्य कर के पारणा कर तब केशव बोला हे यक्ष तेरी चतुराई करके में ठगाऊं नहीं जिस कारण से अभी तक रात्रि है मगर यह दिवस का प्रकास तो तेरी माया से उत्पन्न भया है अब इस माफिक बोल रहा था केशव तिस के सिर पर आकाश सेती फूल वृष्टि पड़ती भई तब केशव भी अपने मुख के अगाड़ी एक कोई एक क्रांति वंत देवता प्रतें देखा मगर यक्ष और यक्ष का मंदिर तथा यक्ष के अर्च्चक वगैरे कुछ भी नहीं देखा तब वो देवता केशव प्रतें कहने लगा हे महा धैर्यवान् हे पुन्य वंतों के सिर पर रत्न समान तुमारे जैसों के उत्पत्ति होनेसे या पृथ्वी रत्न गर्भा हो गई आज निश्चय करके इन्द्र महाराज ने अपनी सभा में रात्रि भोजन त्याग करने के बारे में तुमारा अतीव धैर्य पणा निरूपण करा तिस तारीफ कूं में नहीं सहन करके वन्हि नामें देवता में तेरी परीक्षा करने वास्ते यहां आया मगर नियम में दृढ़ चित्त है तेरा रोम मात्र भी चलाने समर्थ नहीं भया अब में क्षमाता हूं तुम भी मेरा अपराध क्षमा करो तथा देव दर्शन निष्फल नहीं होता है इस वास्ते तूं मेरे पास सेती कुछ मांग वा अथवा तुमारे जैसे सत्पुरषों के मांग णांई क्या है मगर मुझ को तो अपनी भक्ति दिखलानी लाजिम है इस वास्ते तुम कूं दो बरदान

देता हूं आज दिन से लेके जो कोई रोगी पुरुष तेरे अंग का जल मतें अपने शरीर में सींचेगा तो वो जलदी रोग रहित हो जायगा ॥ १ ॥ तथा तूं कभी आतुर होके जो कुछ विचार करेगा वो काम जल्दी हो जायगा ॥ २ ॥ ऐसा कह करके साकेतपुर के पास केशव मते रख करके वो देवता अदृश्य हो गया तब केशव भी अपने शरीर मतें कोई नगर के पास रहा देखा तब सूर्योदय होने से सवेरे की क्रिया करके तिस नगर मतें देखने गया रस्ते में वगीचे के भीतर राजा दिक लोगो मतें धर्मोपदेश देते भये कोई आचार्य मतें देख करके तिस मतें महा मंगल मान करके जलदी तहां जाके गुरू मतें नमस्कार करके अगाड़ी बैठा तब देशना के वाद तिस नगर का मालिक धनंजय नामें राजा प्रणाम पूर्वक गुरु महाराज मतें विनती करी हे स्वामी में जरा करके व्याप्त होगया इस वास्ते व्रत ग्रहण करना श्रेष्ठ है मगर मेरे पुत्र नहीं इस वास्ते राज्य ऊपर किस कूं वैठाऊं ऐसी चिंता करके रात को सोगया तब रात्रि के अंत में कोई भी देवता जैसा पुरुष मुझे स्वप्न में ऐसा कहा जो प्रातः काल में देशान्तर सेती आके तुमारे गुरू के सामने वैठेगा तिस सत्पुरुष मतें अपने राज्य में वैठाना पीछे तुम अपना मनोर्थ पूर्ण करना तव तो में जल्दी से नींद दूर करके सवेरे का कृत्य करके यहां आया और मैंने इस सत्पुरुष कों देखा तब तो गुरू महाराज ज्ञान वल करके केशव का सर्व रात्रि भोजन का त्याग का वृत्तान्त राजा के आगूं कहा तब राजा पूछा हे स्वामी मुझ मतें स्वप्न में कौन देवता ने श्रूचना करी तब गुरू महाराज वोले इस की परीक्षा करने वाला वन्हि नामें देवता ने तव राजा गुरू मतें नमस्कार करके केशव के साथ शहर में प्रवेश करके अपने राज्य ऊपर केशव कूं वैठा के आप गुरू महाराज के पास व्रत ग्रहण करा तब केशव भी तहां पर निरंतर चैत्य पूजा करे दुखी जन को दान देवे अपने प्रताप करके सीमाल राजा को आक्रमण करके न्याय मार्ग मनु सरन् सुख करके प्रजा का पालन करता था तथा एक दिन के वक्त अपने गोख में वैठा हुवा अपने पिता का दर्शन की इच्छा करता भया तितने तो मार्ग में श्रमातुर जमीन के विषै जाता भया अपने पिता मतें देखा तव केशव तिस कूं पहिचान करके जल्दी से महिल से उतर करके बहुत मनुष्य के साथ जा करके पिता के पांव में पड़ा और वोला कि हे पिता जी तिस माफिक रिद्धि वंत थे अभी रंक की माफिक कैसे आये ऐसा पूछा तव यशोधन भी

पुत्र को राज्य मिला तिस से आनंदित होके दुख रूप आंसू डाल करके घरकी हकीकत कहने लगा हे पुत्र तेरे गये वाद मैंने हंस कूं भोजन करने कूं बैठाया तव तो अकस्मात् उत्पन्न हो गया भ्रम से अर्द्ध भोजन छोड़ करके जमीन ऊपर पड़ गया तव हम लोकों ने विचारा कि यह क्या भया ऐसा विचार करने वाली तिस की माता दूर से दिया लाके दृष्टि फैलाई तव तो भोजन में गरल देखी तिस के ऊपर प्रदेश में तुला पट्ट में लगा भया सर्प देखा तव साक्षात रात्रि भोजन का फल देख करके तुझ कूं धर्मज्ञ मान करके सर्व कुटुंव महा अक्रंद करणे लगे तिस कूं सुन करके वहुत लोक इकट्ठे मिले तिन में एक विष वैद्य भी आया तव तिस प्रतें सर्व कुटंवने पूछा क्या यह विष प्रयोग साध्य है या आसाध्य है जव वो वोला शास्त्र में तिथी वार नक्षत्र कूं अंगीकार करके सांप डसने का साध्यासाध्य विचार कहा है सो दिखलाते हैं ॥

—तिथियः पंचमी षष्टय । ष्टमीनवमि का तथा ॥
चतुर्दश्य प्यमावश्या । हिना दष्ट स्पमृ त्युदा ॥१॥

इन तिथियों में सांप डसे तो मृत्यु होती है और तिथियों में नहीं । अव वार दिखलाते हैं ॥

—दष्टस्य मृतये वारा । भानु भौम शनैश्चराः ॥
प्रातः संध्या स्त संध्याच । संक्रांति समय स्तथा ॥ २ ॥

यह इतने वार में सर्प डसा मरजाता है अव नक्षत्र वतलाते हैं ॥

—भरणी कृत्तिका श्लेषा । विशाखा मूलमश्विनी ॥
रोहिण्याद्रामघा पूर्वा । त्रयं दष्टस्य मृत्युवे ॥ ३ ॥
वारि श्रवंत श्चत्वारो । दंशायदि शशोणिताः ॥
वीक्ष्यंते यस्पदष्ट स्य सप्रयातिभ वांतरं ॥ ४ ॥
के शांते मस्तके भाले । भ्रूमध्ये नयने श्रुतौ ॥
नाशाष्ट ओष्ट चिवुके । कंठे स्कंधेहृदिस्तने ॥ ५ ॥

कक्षायां नाभि पक्षेच। लिंगे संधौ गुदे तथा॥
पाणिपादतलेदष्ट। स्त्यष्ठोसौ यमजि ह्वया॥ ६॥

इत्यादिक सुगमार्थः॥ मगर इस कूं सर्प ने डसा नहीं लेकिन इस के पेट में तिस की गरल का प्रवेश रहा है इस वास्ते यहां पर साध्य असाध्य की विचारणा नई तब तो मैंने फेर पूछा कौन उपाय करके यह जीवेगा तब तो वो वैद्य देवीका अनुष्ठान करके बोला तुम कूं इस बारे में इलाज करना रूप क्लेस से जरूर नहीं जिस वास्ते इसके सर्प का विष व्याप्त हो गया इस वास्ते यह बालक का शरीर शड़गया टूट गया एक मास तक जीवेगा तब में तिस के वचन सेती निराश होके लोगों को विसर्जन किया और तेरे भाई ब्रते शय्या ऊपर सुला के तिस का स्वरूप जाणने के वास्ते पांच दिन तक में फेर घर में रहा मगर तिस हंस की रोमा वली पड़ती भई छिद्र २ पड़ते गये तिस को मरे की तरह से जान करके तुझ कों देखने के वास्ते घर से निकल करके बहुत मार्ग उल्लंघ करके पुन्य योग सेती आज यहां आया तुझ कूं देखा तथा हंस कूं सांप खाने कूं आज पूर्ण मास हो गया है अब वो मरगया होगा वा मरेगा ऐसा पिता का वचन सुन करके केशव अत्यंत दुखी भया फेर आतुर होके विचार ने लगा मेरे पुर सेती वो पुर सौ जोजन रहा है इस वास्ते जीते भये भाई का मुख देखूं और आज ही वहां पर कैसे जासकूं ऐसा विचार कर रहा है तितने में तो केशव अपने शरीर कूं तथा पिता और पर्षदा के लोग सहित हंस के पास में बैठा देखा तहां पर सड़ गया है शरीर अति दुर्गंध प्रगट भई और सर्व परिवार वाला भी छोड़ के चला गया तथा रोती भई आंसू सहित सिर्फ एक माता पास में बैठी रही तथा नरक की पीड़ा की तरह से पीडित हो गया नजदीक है मृत्यु जमीन में डाला हुवा अपने भाई कूं देख के तिस की पीड़ा में पीडित हो गया और किस तरह से यहां पर जल्दी से आना भया ऐसा विचारने से वो वन्हि देव नजर में आया तब देवता बोला भो मित्र में अवधि ज्ञान सेती तेरी व्यथा जान करके और अपना बर सत्य करने के वास्ते जल्दी यहां आके तुमारा मनोर्थ पूर्ण करा ऐसा कहके देवता अदृश्य हो गया तब प्रसन्न होके केशव अपने हाथ का फर्श करा भया जल हंसपर छांटा तो जल्दी से रोग रहित होके उठा तबतो पेस्तर से भी रूपवान् अधिकहुवा देखकरके सर्व बंधूजन महा आनंद प्रतें प्राप्त भया और तिसका स्वरूप देखने सेती अति विस्मय होके केशव के गुणों की अत्यंत प्रशंशा करी फेर इस माफिक केशव कूं महा प्रभावीक जान करके बहुत लोक अपना २ रोग मिटाने के वास्ते केशव के पांव का जल सींचने लगे तथा प्रत्यक्ष धर्म का प्रभाव देख करके स्वजन परजनादिक

बहुत भव्य जीवों ने रात्रि भोजन त्याग करा तथा और भी व्रतादिक ग्रहण करा तब वो केशव राजा पीछा तहां पर जाके बहुत काल तक साकेत पत्तन का राज्य भोग के बहुत लोगों कूं धर्म मार्ग में लाके आप श्रावक धर्म पाल करके आखिर में उत्तम गती गया यह रात्रि भोजन त्याग करने के ऊपर केशव का दृष्टान्त कहा ॥

—एवम न्वय व्यतिरेका भ्याममुं दृष्टांतं निशम्य ।
विवेकि भिर्निशा भोजन परि हारे उद्यतैर्भव्यं ॥

इस माफिक प्रसंग करके श्रावक की प्रतिमा का स्वरूप निरूपण किया ॥ अब श्रावक के रहने योग्य जो स्थान तिस का स्वरूप दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—न चैत्य साधर्मिक साधु योगो । यत्रास्तित द्ग्राम
पुरादि केषु॥ युतेष्वपिप्रा ज्यगुणैः परैश्च । कदापिन
श्राद्ध जनाव संति ॥ ७६ ॥

व्याख्या—परैन्यैः प्राज्यैर्व हुभि गुणैः सौ राज्य प्राज्य जलें धन धनार्ज्जन स्वजन दुर्गादि भिर्युते ष्वपि पूर्वोक्त दिखला आये समग्र सामग्री मिल गई तो भी श्रावक वहां पर रहे नहीं तब सत् आनंदाभिध शिष्य प्रश्न करता है कि हे स्वामी श्रावक कहां पर रहे सो बतलाइये जब हरिन्मणि रक्त मण्याभिध गुरु कहते हैं कि हे सत् आनंद शिष्य श्रवण कर जिस ग्रामादिक के विषै चैत्य होवे और साधर्मी होवे तथा साधुवों का संयोग होवे चैत्य जिन मंदिर साधर्मिक समान धर्माराधक गृहस्थ तथा साधु शुद्ध धर्मोपदेष्टा गुरु इनों का संयोग जहां होवे तहां पर श्रावक रहै सोई ग्रन्थान्तर में कहा भी है ॥

—वहु गुण आइन्नो विहु । नगरे गामेव तत्थन
वसेइ ॥ जत्थन विज्जइचेइय । साहम्मिय साहु
सामग्गी ॥ १ ॥ अस्यार्थ स्त्रुपूर्व वद्ज्ञेयं ।

तथा नगरादिक में वसने वाले श्रावक कों प्राति वैस्मिकता त्यागन करना सो दिखलाते हैं ॥

—पाखंडि पार दारिक नट निर्दय शत्रु धूर्त्त पिशु
ना नाम् । चौरा दीनांच गृहा । भ्यर्णेनवसंति
सुश्रद्धा ॥ ७७ ॥

व्याख्या—नगरादिक के विषै बसने वाले श्रावक पाखंडी वगैरे के घर के पास नहीं वसै तहां पर पाखंडिकोण कु लिंगी । तथा पार दारिक । तथा कुशीला तथा नटवां सवरत्रा दिक ऊपर खेलने वाला तथा निर्दया जीव हिंसा करने वाला व्याध और धीबरादिक तथा शत्रु याने वैरी तथा धूर्त्त और वंचक तथा पिशुन तथा परछिद्रान्वेषी तथा चौरा चौर क्रिया करके पर द्रव्य अपहरण करने वाला आदि शब्द सेती अमर्ष करने वाला तथा धूत कारक तथा विदूषक इत्यादिक जानना पूर्वोक्त वतलाया है अगर इन लोगों के पास श्रावक वसै तो अनुक्रम करके सम्यक्त का नाश और पर स्त्री गमन इच्छा होना तथा तिन लोगों की कला का अभ्यास वा अभिलाषा तथा क्रूर पर णाम प्राण का नाश धन की हानि राज दंडादिक अपाय कलह वृध्यादिक बहुत दोष का का कारण जानना चाहियै इस वास्ते ऊपर वतला आये हैं उन कीं प्राप्ति वेस्मि गोया पाडोस का त्याग करना चाहिये ॥

—किंच माता पित्रोर्भक्तः । कुल शील समैश्चविहित वीवाह । दीना तिथि साधूनां । प्रति पत्ति करो यथा योग्यं ॥ सुगमार्थः

सुगमार्थः ॥ विशेषता दिखलाते हैं ॥ कुल कौनसा उग्रादिक शील धर्म आचार तथा अपने सदृश वालों के साथ विवाह वगैरे करना तथा विवाह वैधर्म करने सें नित्य उद्वेगादिक कलहा दिक होणे से धर्म की हानि इत्यादिक दोष होता है तथा फेर भी इसी कूं पुष्ट करते हैं ॥

—परि हरति जन विरुद्धं दीर्घ रोषंचमर्म वचनंच इष्टः शत्रूणा मपिं । परतसि विवज्जं को भवति ॥ ७६ ॥ इयमपि स्पष्टार्था ॥

मगर विशेषता दिखलाते हैं जन कहिये शिष्ट लोकों के विरुद्ध हो उस काम का त्याग कर देना तथापि इसी कूं पुष्ट करते हैं ॥

—सव्वस्स चेवनिंदा । विसेसओ तहय गुणस मिद्धा णं । उज्ज धम्माणं हसणं । रीढा जणपूयणि

ज्झाणं ॥ १ ॥ बहुजण विरुद्ध संगो । देसादा चार लंघणं चेव । एमाइं आइं इच्छ ओ । लोग विरुद्धाइं नेयाइं ॥ २ ॥

उत्तम संगत में रहना और उत्तम के पड़ोस में रहना और विरुद्ध संगत नहीं करना तथा लोकीक में जो विरुद्ध काम है उस का त्याग करना चाहिये तथा श्रावक ने पास त्थादिकों का अब्रम्ह सेवा दिक दुराचार भी अगर देखा होतो धर्म से विमुखता पणा और अप्रीतिपणा नहीं धारण करना सोई बात दिखलाते हैं ॥

—पास त्थाईण पुण । अहम्म कम्मं निरिक्खए तहवि ॥ सिढिलो होइ नधम्मे । एसोच्चियवंचि ओत्ति मई । १ । एष एव वरा को दैवेन वंचितो यएवं विध मधरी कृत कल्प तरु महात्म्यमशे षसुष श्रेणि प्रदान समर्थं मपार संसार सागरो त्तारण यान पात्र मति पवित्र ॥

इस माफिक गुणों सहित चारित्र धर्म पा करके इस माफिक वर्त्त रहे हैं इस माफिक बुद्धि रखना तथा कोई वक्त में कदाचित् साधू का चूकना हो गया और श्रावकने देख भी लिया तो भी निस्नेहता पणा नहीं करे क्या करे एकान्त में विस साधू प्रतें माता पिता की परें सुशिक्षा देवे मगर निंदा नहीं करे सोई दिखलाते है ॥

—साहुस्स कह विखलियं । दट्ठण नहोइ तत्थ निन्नेहो । पुण एगंते अम्मा । पिउव्व सेवेइ अणिंदइ ॥ १ ॥ सुगमार्थः ॥

इसके कहने का मतलब यह है कि श्रावक जो है सो साधुवों कै माता पिता के सदृश होता है ऐसी सूचना दिखलाई तथा फेर शिव नेत्र प्रमितांग सूत्र के वेद प्रमित स्थान में ॥ चार प्रकार का श्रावक दिखलाया है ॥

—चत्तारिसमणो वास या पन्नता। तंजहा। अम्मापि उसमाणे॥ १॥ भाउसमाणे। २। मित्तसमाणे। ३। सवक्किसमाणे। ४। एतत्स्वरूप ज्ञापिका चएता गाथा।

इनों का स्वरूप दिखाने वाली यह गाथा कहते हैं॥

—चिंतइं मुणि कज्जांइं। नदिट्ठ खलि ओवि होइ निन्ने हो। एगंतवच्छलो मुणि। जंणस्स जणणी समोसढढो॥ १॥

व्याख्या—मुनि के काम की चिंता करे तथा साधू की चूक देख भी लेवे तो भी निस्नेहता नहीं भजे तथा एकान्त वात्सल्य करे इस वास्ते मुनि जन के श्रावक माता समान जानना॥ १॥

—हियए ससिणे होच्चिय। मुणीण मंदायरो। विणय कज्जे। भाउस मोसा हूणं। परा भवे होइ सुसहा ओ॥ २॥

व्याख्या—हृदय के विषै स्नेह पणा हमेसा रक्खे और मुनी पर मंदादर नहीं करै तथा विनय करै भाई के समान श्रावक साधू के होता है॥ २॥

—मित्त समाणो माणी। ईसिंरूसंइ अपुच्छि आ कज्जे। मन्नंतो अप्पाणं। मुणीण सयणाउ अब्भहियं॥ ३॥

व्याख्या—मित्र समान श्रावक जानना चाहिये अगर जो साधू कुछ भी उदास हो जावे तोभी विनय करके पूछै अगर पूछै विगर कुछ भी काम नहीं करे इस वास्ते मुनीं के सुजन समान और मित्र समान श्रावक जानना॥ ३॥

—त्थद्धो छिद्दप्पेही । पमाय खलियाए निच्चमु
च्चरइ । सढो सवंकि कप्पो । साहु जणं तिणसंम
गणई ॥ ४ ॥

व्याख्या—स्तद्ध होवे छिद्र पेक्षी होवे प्रमाद से चूक गया हो तो उस कूं हमेसा याददिरावै ऐसा श्रावक शोक समान साधू को तिन खैसमान गिनैं ॥ ४ ॥ अब श्रावक का अहोरात्रि कृत्य लेश मात्र दिखलाते हैं ॥

—प्रबुध्य दोषाष्टम भाग मात्रे। स्मृतो ज्वलां पंच
नमस्कृतिंच । अव्यावृतो न्यत्र विशुद्ध चेता।
धर्माथि कां जागरि काम कुर्यात् ॥ ८० ॥

व्याख्या—दोषायाः रात्रिके आठ में भाग मात्र में याने चार घड़ी रात्रि रहने से निद्रा का त्याग करके उस वक्त में उज्वल पंच परमेष्ठि नमस्कार मंत्र का स्मरण करके वो श्रावक और कुछ भी कार्य में लगे नहीं गोया सूता उठके घर व्यापार में लगे नहीं इस वास्ते विशुद्ध चित्त वाला नहीं है मैला चित्त जिस का केवल धर्म जागरण करे अब सत् आनंदाभिध शिष्य प्रश्न करता है हे परम गुरु वो श्रावक फेर क्या करे सो बतला इये तब हहिन्मणि रक्त मन्या भिध गुरु कहते हैं कि हे सत् आनंद शिष्य तूं श्रावक की क्रिया श्रवनकर॥

—को हंकामे अवस्था । किंच कुलं के पुन गुणा
नियमाः । किंनस्पृष्टं चेत्रं । श्रुतंनकिं धर्म
शास्त्रंच ॥ ८१ ॥

व्याख्या—वो निश्चय करके निद्रा दूर करके गोया सूता उठ करके प्रथम ऐसा विचार करे क्या मैं मनुष्य हूं वा देवादिक हूं तहां पर मैं मनुष्य हूं तो मेरी अवस्था क्या है बाल यौवन आदि तहां पर युवान अवस्था है इस वास्ते बालक के योग्य चेष्टा मेरी मत रहो अथवा वृद्ध अवस्था है तो तारुण्य उचित चेष्टा मत रहो तथा फेर मेरा कुल श्रावक का है अगर जो श्रावक हूं तो कौन मेरे में गुण है मूल गुण वा

उत्तर गुण तथा कौन से मेरे में नियम हैं गोया अभिग्रह विशेष तथा विभव होने से ॥ जिन भवन ॥ १ ॥ बिम्ब ॥ २ ॥ तथा तिन की प्रतिष्ठा ॥ ३ ॥ तथा पुस्तक ॥ ४ ॥ और चतुर्विध श्री संघ ॥ ८ ॥ तथा शत्रुंजयादिक तीर्थ यात्रा ॥ ९ ॥ इन नव क्षेत्र के विषे मैंने कौन से क्षेत्र कूं नहीं फर्शा तथा फिर मैंने धर्म शास्त्र दश वैकालिकादिक नहीं सुना इस वास्ते तिस क्षेत्र फर्शने में और शास्त्र सुनने के विषै यत्न करूं तथा वो श्रावक सदा उत्पन्न भया है भव वैराग्यवान होके दीक्षा का ध्यान कभी छोड़े नहीं तथापि श्रावक कूं और २ व्यापार से दीक्षा के विषै उल्लसित भाव रखना फिर ऐसा विचार करे धन्य है वे वज्र स्वामी कूं आदि लेके महा मुनीश्वर जिनों ने बाल अवस्था में सकल दुर्निवार संसार कारण कूं त्याग करके शुद्ध मन से संयम मार्ग सेवन करा तथा मैं अभी तक गृह बास पाश में पड़ा भया तिस शुद्ध मार्ग मतें कब अंगीकार करूंगा इत्यादि अनुक्तमपि देख लेना अब इस माफिक रात्रि शेष रहने से विचार करे श्रावक सो दिखलाते हैं ॥

—विभाव्य चेत्थं समये दयालु । रावश्यकं शुद्धमनों गवस्त्र ॥ जिनेंद्रपूजां गुरु वंदनंच । समाचरेन्नित्य मनु क्रमेण ॥ ८२ ॥

व्याख्या—दयालु श्रावक पूर्वोक्त प्रकार करके मन में विचार करे समय गोया अवसर में अर्थात् मुहुर्त्त मात्र बाकी रात रहने से आवश्यक सामायिकादिक पच्चक्खाण तलक लोकोत्तर भाव आवश्यकमतें अंगीकार करे अगर व्याकुलता करके छै आवश्यक नहीं करसके तो मगर वो भी निश्चय करके प्रत्याख्यान आवश्यक का विचार तो करणाइं चाहिये और तथा शक्ति चिंतवन करना जरूर है तथा फिर भी कहा है अगर जघन्य करके श्रावक नमस्कार सहित पच्चक्खाण तो जरूर ही करे और चिंतवन करे तथा अर्द्ध बिम्ब सूर्य निकलने सेती शुद्ध मन और अंग वस्त्र भी शुद्ध इस माफिक करके जिनेंद्र पूजा करे तहां पर जयणा पूर्वक विधी सहित प्रथम घर प्रतिमा की पूजन करके पूजा उपगरण ग्रहण करके महोत्सव करके जिनालय में जा करके मुख कोश बांध करके तीन निस्सही उच्चारण करके शास्त्रोक्त विधी सहित जिन पूजा करै तथा

पूजा का भेद तो प्रथम प्रकाश में ज्ञाता धर्म कथादिक सिद्धान्ता नुसार विस्तार सहित व्याख्यान करा है इस वास्ते तहाँ से जान लेना तथा शुद्ध मन और अंग वस्त्र ऐसा कहा सो इस माफिक है सो दिखलाते हैं प्रथम सर्व सावद्य पाप व्यापार और सावद्य अध्यवसाय दूर करणा उस कूं मन शुद्धि कहते हैं तथा जीव रहित कचरा रहित जमीन पर अल्प जल करके तथा कर व्यापार भी अल्प इस माफिक सर्व अंग स्नान मतें अंग शुद्धि कहते हैं तथा शुचि और सफेद अखंडित वस्त्र धारण करणां उस कूं वस्त्र शुद्धि कहते हैं मगर ऐसा नहीं कहणा कि स्नान याने देह शुद्धि करे विगर देव पूजा करण ऐसा नहीं कहना कारण आशा तना का प्रसंग रहा भया है फिर क्या कहते हैं कि जन्म सेतीं निर्मल शरीर वाले देवता भी विशेष शुद्धि के वास्ते स्नान करके ही पूजा करने के वास्ते प्रवर्त्तन होते हैं तब किस तरह से नव इग्यारे स्रोत स्रव निरन्तर दुर्गंध मैल से भरे हुये मनुष्य स्नान विगर पूजा कैसे करेंगे इस वास्ते देव पूजा करने वालों कूं सिद्धान्त में पद २ में एहाया कय वलिकम्मा। इत्यादिक विशेषण ग्रहण करा अब यहां पर सत् आनन्दा भिध शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज यतना करने में उत्कृष्ट हैं जो श्रावक उसकों बहुत आरंभ का काम स्नान करना अनुचित है अब हरिन्मणि रक्त मन्या भिध परम गुरु महाराज उत्तर देते हैं कि हे सत् आनंद शिष्य ऐसा मत कहो कारण जल, धूप, दीप, पुष्पादिक यह भी आरंभ का काम है उसका भी निषेध चाहिये मगर उनका निषेध नहीं होने से श्रावक स्नान करे कारण छव काया के कूटे में तो बैठाई है इस वास्ते श्रावक के सवा विश्वा दया पूर्वे दिखलाई है और श्रावक का मुख्य व्यवहार है इस वास्ते स्नान करे विगर पूजा करे नहीं सोई बात आवश्यक में बतलाई है सो इस माफिक है॥

—अकसिण पवत्त याणं। विरयाविरयाण एसखलुजु-
त्तो॥ संसार पयण करणे। दव्वत्थएकू वदिट्ठंतो॥१॥

व्याख्या—श्रावक के समग्र पच्चक्खाण होता नहीं कारण सवा विंश्वा दया रही है तथा व्रती भी श्रावक है पंचम गुण स्थान वर्त्ति और अव्रती भी है गोया सम्यक्त धारी तूर्य गुण स्थान वर्त्ति उन श्रावक कूं करणा युक्त है तथा संसार प्रतनु करने के वास्ते द्रव्य स्तवना में कूप का दृष्टान्त घटाया है॥ १॥

आगम प्रमाण सेती स्नान तथा पूजा श्रावक निश्चय करे । पर्याप्त प्रपंचेन । तव इस माफिक देव पूजा करके तिस वाद विनय करके गुरु वन्दना अंगीकार करे तब फिर भी श्रावक जो करता है सो फिर भी दिखलाते हैं श्लोकद्वारा ॥

श्लोक—श्रृंगी यथा क्षार जले पयोनिधौ । वसन्नपि स्वादु जलं पिवेत्सदा ॥ तथै वजैनामृत वाणिमादराद । भजेदगृही संसृति मध्यगोपिसन् ॥ ८३ ॥

व्याख्या—श्रृंगमस्या स्तीति श्रृंगी ईनंत प्रत्ययात्सिद्धि जायते ॥ ईदृशःकः कोपि मत्स्य विशेष होता है सयथा क्षार जल भृते समुद्रे वसन्नपि ॥ वो जो मत्सहै सो क्षार जल से भरा हुवा समुद्र में बसता है मगर तहां पर गंगादिक सरिन्प्रवेश स्थित मिष्ट जलमुप लक्षसदात देव जलं पिवेत् ॥

गंगा नदी का प्रवेश होने का स्थान प्रतें पहिचान करके गोया मधुर पानी आगमन पहिचान लेता है तव हमेशा उसी जल का पान करे इसी दृष्टान्त पूर्वक गृहस्थ याने श्रावक संसार रूप खार समुद्र में रहा हुवा है तो भी गुरू महाराज के पास जा करके आदर सेती जिन प्रणीत अमृत तुल्य वाणि सदा पान करे गोया परमेश्वर की वाणी हमेशा सुने तथा वाल और ग्लान वगेरे साधुवों कूं सवेरे की वक्त औषधादिक देने के विषै वलवान होवे । इत्यनुक्तम पिद्रष्टव्यं । तिसवाद जो करते हैं सो दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—द्रव्यार्ज्जनं सद्व्यहार सुद्ध्या । करोतिसद्भाजन मादरेण ॥ पूजादि कृत्यानि विधाय पूर्वं । निजोचितं मुक्त विशेष लौल्य ॥ ८४ ॥

व्याख्या—वो जो श्रावक है सो व्यवहार शुद्धि करके द्रव्य पैदा करे तिस वाद पूर्वे आदर करके मध्यान्ह की देव पूजा करके तथा फिर मुनियों भणी दान देके तथा फिर वृद्ध है और आतुर है तथा अतिथि है तथा चौ पद गाय भैंस, घोड़ा वगैरे उनों की चिंता करके पीछे विशेष लोलुपता याने गृद्धता त्याग करके अपणे योग्य उत्तम

भोजन करे इस में कहने का मतलब यह समझना चाहिये सूतक वगैरे का आहार तथा लोक विरुद्ध भोजन भी श्रावक नहीं करे ॥ तथा संसक्तादिक भक्ष्य वस्तु ग्रहण करे तथा अनंत कायादिक आगम विरुद्ध मद्यमांसादिक उभय विरुद्ध भोजन नहीं करे ॥ तथा लोलुपी पणा सेती अपना अग्नि का बल नहीं विचार करके अधिक भी नहीं भोजन करै वो भोजन उत्तर काल में वमन विरेचन रोग उत्पत्ति तथा मरणादिक बहुत अनर्थ कारक होता है इस वास्ते मित भोजन करे तथा धर्म शास्त्र पर मार्थ चिंतवन करके योग्य व्यवहार करके अपरान्ह प्रतें गमा के सूर्य अस्त होने के पेश्तर उस वक्त में फिर संध्या की जिन पूजा करे ॥ तथा द्विभुक्त प्रत्याख्यान अगर करा हो तो चार घड़ीदिनवाकी रहने से वैकालिक गोयाव्याल्रूकरेइत्याद्यनुक्तमपिमंतव्यं । तथात्रिकालपूजा विधान तो इस माफिक है ॥

—प्रातःप्रपूजये द्वा सैर्मध्यान्हे कुसुमैर्जिनं । संध्यायां धूप नै दीप ॥ स्त्रिधादेवं प्रपूजयेत् ॥ १ ॥

व्याख्या—यहां पर वासै ऐसा लिक्खा है सो चंद नै याने चंदन करके सवेरे पूजा करना इस माफिक श्रावक के दिन कृत्य वतलाया ॥ अब रात्रि कृत्य कुछ दिख लाते हैं ॥

—कृत्वा षडावश्यक धर्म कृत्यं । करोतिनिद्रा मुचितत्त्व णेन ॥ हृदि स्मरन पंचनम स्कृतिसः । प्रायः किला ब्रम्ह विवर्जयंश्च ॥ ८६ ॥

व्याख्या—तिस वाद वो श्राक षड् आवश्यक रूप धर्म कृत्य करके उचित क्षणे योग्य वेलामें निद्रा करे क्या करे हृदयमें पंच परमेष्टि नमस्कार स्मरण करके वाहुल्यता करके कुशील सेवा परिहरे तथा रितुकाल में संतान के वास्ते वेदना मिटाने के वास्ते अपनी स्त्री के साथ अनियमित करके मार्ये ग्रहण करा इस कहने सेती श्रावक अत्यंत विषय लोलुपी पणा नहीं करे । इत्यावेदितं । इस माफिक लेश मात्र श्रावक के समस्त रात्रि कृत्य दिखलाया ॥ अब शिवाक्षि प्रमितांग सूत्र के वेद प्रमित स्थान में ऐसा

कहा है श्रावक सत्काचार विश्राम भूमी दिखलाते हैं॥

—जहा भारंवह माणस्सचत्तारि आसा सापन्नता जत्थणं अंसा ओ अंसं साहरेइ। १। जत्थ वियणं उच्चार पासवणं परिठ्ठ वेइ। २। जत्थ विअणं नाग कुमार वासं सिवा। सुवन्न कुमारा वासं सिवा वासं उवेइ। ३। जत्थ वियणं आव कहाए चिठ्ठइ। ४। एवा मेव समणो वासगस्सणं चत्तारि आसा सा पन्नत्ता। तंजहा। जत्थणं सीलव्वय गुण वेर पच्च क्खाण पोसहो ववासाइं पडि वज्जइ। १। जत्थ विअणं सामाइयं देसा वगासियं वापडिवज्जइ। २। जत्थ वियणं चाउद्दसठ्ठ मुद्दिठ्ठपुणमा सिणी सुपडि पुन्नं पो सहं सम्मं अणुपालेइ। ३। जत्थ वियणं अपच्छिम मारणंतिय संलेहणा भूसणाभूसि ए भत्त पाणपच्चक्खाय पाओ वगए कालं अण वकं खमाणे विहरइ॥ ४॥

व्याख्या—श्रावक के चार विश्राम भूमी कही हैं सो इस माफिक हैं जहां पर शील व्रत गुण भत विरमण पच्चक्खाण पौषधोपवास अंगीकार करते हैं। १। तथा जहां पर सामायिक देशावगासि अंगीकार करते हैं। २। तथा जहां पर चौदश अष्टमी पूर्णिमा अम्मावस गोया छव तिथियों के विषै भति पूर्ण पोषा सम्यग् पालते हैं। ३। तथा जहां पर अपश्चिम मरणांतिक संलेषणा भूसित भक्त पानादि वर्जन पादोप गमनसंथारा मरणा नहीं विचारे ऐसा विचरे। ४। यह चार विश्राम भूमी बतलाई॥ अब श्रावक के सद्भूत गुण वर्णन करते हैं॥ जिन प्रणीत अर्थ का विद्व होके वाक् युक्ति करके मतांतर को अपास्त करके अपने उज्वल धर्म मार्ग में मग्न होके श्रावक शुद्धि बुद्धि वाला जय वंतार हो॥ आर्यावृत्तं॥

श्लोक—जिन प्रणी तार्थ विदो याथर्थ्य । वाग्युक्ति तो पास्त मतांतर स्थाः । स्वकीयधर्माउज्वल मार्ग मग्नः श्रद्धा लवः शुद्धधियो जयंतु ॥ ८८ ॥

व्याख्या—अनंत तीर्थ करों ने निरूपण करा जो अर्थ यथा वस्थित जीवा जीवादि पदार्थ तिन के जानने वाला अतएव मद्दु कादिवत् । यथार्थ वाग् यूक्तया पास्ता निरुत्तर करने सेती पराजयंनीता मतांतरस्था कुलिगियोंकूं हराया फेर आत्मधर्म रूप उज्वल मार्ग है तिसमें मग्न रहे एकाग्र चित्तता से इस माफिक शुद्ध बुद्धि धारक श्रावक जयवंतार हो। अब यहां पर मद्दुक श्रावक का वृत्तान्त तो विस्तार पूर्वक विवाह प्रज्ञप्ति में दिखलाया है मगर यहां तो लेश मात्र दिखलाते हैं राजगृही नाम नगरी तिसके पास में गुण शिल नामें चैत्य वन खंड था तिसके समीप प्रदेश में बहुत से कालोदायि सेवालोदायि आदि लेके अन्य यूथिक बसते थे वे लोग एक दिन इकट्ठे मिलके आपस में कथा वगैरे का आलाप संलाप कर रहे थे य दुत श्रीं महावीर है सो धर्मास्ति कायादिक पंचास्ति काय प्रतें प्ररूपन करते हैं तहां पर धर्म १ अधर्म २ आकाश ३ पुद्गलास्ति काय ४ इन प्रतें अचेतन कहते हैं और जी वास्तिकाय कूं सचेतन निरूपन करते हैं ॥ तथा पुद्ग गलास्ति काय कूं रूपि प्ररूपते हैं याने कहते हैं इस माफिक सचेतन अचेतन आदि रूप करके अदृश्य मान करके कैसे मान्य करने में आवे तथा तिसी नगर के विषैं मद्दुक नामं श्रमणोपाशक बसता था वो बड़ा रिद्धिवान् सर्व लोकों के मान्य अभिगत जीवा जीवादि पदार्थ हमेशा धर्म कृत्य करके आत्मा प्रतें भावित करता सुख करके काल गमाता था तब एक दिन के वक्त तिस गुण शिलक चैत्य के विषै श्री वीर स्वामी सम व सरे तब स्वामी के आगमन बात सुन करके वो मद्दुक बड़ा प्रसन्न होके स्वामी प्रतें वंदना करने के वास्ते नगर सेती बाहिर निकल करके अन्य यूथिकों के नहीं तो नजदीक नहीं दूर चल रहाथा तब तो वे अन्य यूथिक तिस मद्दुक प्रतें जाता देख करके सर्व इकट्ठे होके तिस के पास जाके ऐसा कहा. भो मद्दक तुमारा धर्माचार्य जो पंचास्ति कायादिक की प्ररूपणा करते हैं सो कैसे जाणनी में आवे तब वो मद्दुक तिनों से कहने लगा कि जो धर्मास्तिकायादिक करके अपना काम करते हैं तब तिस कार्य करके तिन

कूं जानते हों धूमेन वन्हिमिव। जो तिन से काम नहीं करने में आवे तो नहीं जानने में आवे चिन्ह द्वार करके छद्म स्थाना मतीं द्रिय पदार्थ ज्ञान होता है नच धमस्ति कायादी नाम स्मत्म तीतं किंचित्कार्यादिक लिंग दिखता है॥

—तदभावान्न जानी मएव वयमिति। ततो धर्मास्ति कायाद्य परि ज्ञान मंगी कुर्वाणं॥

मद्दुक मतें उपालंभ देने के लिये कहने लगे हे मद्दुक यद्यनम प्पर्थन जाना सित हिंकस्त्वं श्रावकः तब इस माफिक उपालंभ देने से यह मद्दुक तिनों के अदृश्यमान त्वेन धर्मास्तिकायादिक का असंभव निरूपण करा स्तद्वि घट नाय कहने लगा॥

—एत्थं आउसो वाउ आए वाति हंता अत्थि। तुष्भेणं आउ सो वाउ आयस्स वाय माणस्स रूवंपा सहणो तिणट्ठेसमट्ठे। अत्थिणं आउ सो घाणसह गया योग्गला। हंता अत्थि। तुष्भेणं आउसो घाण सह गयाणं योगालाणंरूवं पासह। णोतिणट्ठे समट्ठे। अत्थिणं आउसो अरणि सह गए अगणि काए। हंता अत्थि। तुष्भेणं आउसो अरणि सह गयस्स अगणि कायस्सा रूवंपासह। णोतिणट्ठे समट्ठे। अत्थिणं आउसो समुद्दस्स पार गयाइं रूवाइं। हंता अत्थि। तुष्भेणं आउ सो ताइं रूवाइं पासह। णो तिणट्ठे समट्ठे। एवामेव आउसो अहंवा। तुष्भेवा। अन्नोवा। छउमत्थो यदि जोजंन जाणंति। तं सच्चं न भवति।

इति मद्दक संबंध स्तुविवाह भज्ञप्ति अंगे सप्तम सतके॥

इस प्रकार सेती अन्य यूथिक मतें निरुत्तरी करके तब वो मद्दुक श्रावक गुण शिले

चैत्य के विषै जाय करके श्री वीर के पास बंदनादिक पूर्वक उचित स्थान में बैठा तब तो स्वामी मद्दुक प्रतें ऐसा कहा हे मद्दुक तूं बड़ा शोभनीक है जिस करके तैंने अस्तिकाय के भेद नहीं जानता था मगर अन्ययूथिकों के आगूं तुमने कहा कि में नहीं जानता हूं ऐसा कह देता तब तो अर्हंतादि कूं की आशातना करने वाला हो जाता तूं मगर तैंने युक्तियों करके पराजय कर दिया तब इस माफिक प्रभू का वचन सुन करके वो मद्दुक बड़ा प्रसन्न भया स्वामी प्रतें नमस्कार करके धर्मोपदेश सुन करके अपने ठिकाने गया अनुक्रम से आयु क्षय करके अरुणाभ विमान में देवता पणें उत्पन्न भया महा विदेह क्षेत्र मुक्ति जावेगा। इति मद्दुक श्रावक वृत्तान्त ॥ अब इस माफिक श्रावक पणा पा करके तिस कूं पालने के वास्ते सर्वथा प्रमाद का परि त्याग करना चाहिये सो ऐसा दिखलाते हैं ॥ श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—निशम्य विप्रोपनयं सुधीभिः। प्रमाद संगोपिन कार्य एव। इहोत्तर त्रापि समृद्धि हेतौ। महो ज्वले स्मिन्निजधर्म कार्ये ॥ ८७ ॥

व्याख्या—सुधीभिः सुष्ठु बुद्धिभि र्भव्यै दरिद्री ब्राह्मण का दृष्टान्त सुन करके पश्चाताप का कारण प्रमाद उस का संग नहीं करना चाहिये गोया प्रमाद सेवा तो दूर ही रहो मगर प्रमाद वालों की संगत करने का फल लग जाता है तथा क्या फल मिलता है याने इस भव और परभव में दुःखदाई है इस वास्ते जिन प्रणीत धर्म सेवन करने में प्रमाद नहीं करना वो धर्म कैसा है इस भव पर भवमें उत्तम रिद्धि का कारण इस वास्ते महा निर्मल इस देश विरति लक्षण के विषै आत्म धर्म करना कहने का मतलब यह है कि धर्म कार्य के विषै आलस्य नहीं करना अगर आलस्य करे तो दरिद्री ब्राह्मण की तरह से पश्चाताप होवे उस दरिद्री ब्राह्मण का दृष्टान्त कहते हैं ॥

कोई एक नगर के विषै एक आजन्म दरिद्री महा आलस्य वान ब्राह्मण बसता था वो एक दिन के वक्त स्त्री की प्रेरणा से दान ग्रहण करने के वास्ते राजा के पास गया तब चिरंजीव इत्यादिक आशीष दे रहा था ब्राह्मण प्रतें आकृति करके महा दरिद्रयाभि भूत जान करके अनुकंपा सहित हृदय जिस का ऐसा राजा बोला भो विप्र सूर्यास्त से

पेस्तर आके और इच्छा माफिक मेरे भंडार सेती द्रव्य ग्रहण करके तुम अपने घर में पूर्ण करना ऐसी मेरी आज्ञा है ऐसा कह करके तिस प्रवृति सूचक स्वनामांकित पत्र लेख करके तिस ब्राह्मण प्रतें दिया तब वो भी खुस होके तिस पत्र कूं ग्रहण करके अपने घर आके अपनी औरत प्रतें सर्व वृत्तान्त निवेदन करा तब औरत बोली हे स्वामी तहां जा करके तितने द्रव्य लावो इस बारे में देर मत करो श्रेयांसि बहुविघ्नानि स्यायुक्त त्वात् कल्याण पदार्थ में विघ्न बहुत हो जाता है इत्यादिक कहा है तब ब्राह्मण बोला शतंविहाय भोक्तव्यमिति। याने सौ काम छोड़ करके प्रथम भोजन करना इत्यादिक नीति का वाक्य है इस वास्ते भोजन करके स्थिर चित्त होके पीछे द्रव्य के वास्ते जाउंगा तब वा ब्रह्मणी प्राति वेसिक घर से आटा उधार लाके जल्दी से अन्न पाक बना के तिस कूं भोजन करवा के फेर ब्राह्मणी बोली कि हे स्वामी अब जल्दी से जाके अपना कार्य साधन करो तब वो ब्राह्मण बोला कि। भुक्त्वा शतपदं गच्छेत् इति नीति वाक्यं। गोया भोजन करके शो कदम फिरना चाहिये। यदि शय्या न लभ्यते। जब सय्या सोने कूं नहीं मिले तब इधर उधर घूमना चाहिये ऐसा शास्त्र में लिक्खा है इस वास्ते क्षणभर सोके पीछे जाऊंगा ऐसा कह कर के सो गया मगर द्ररिद्रियों कूं बहुधा करके नींद बहुत आया करती है अब वो ब्राह्मण बहुत निद्रा करके सहित ऐसा सूता हाथ पकड़ करके तथा धूनन वगैरे स्त्री ने बहुत करा बहुत मुशकिल के साथ में तीसरे पैर में जागा तब स्त्री के प्रेरणा करके वो ब्राह्मण घर से निकला बाजार के रस्ते जाने लगा बीच में नाटक हो रहा था उस कूं देख के विचार किया कि अभी तक दिन बहुत है नाटक देख करके पीछे जल्दी द्रव्य लाउंगा ऐसा विचार करके नाटक सम्पूर्ण देखा फेर आगू रस्ते में जा रहा है तो मार्ग में जगे २ कौतुक देख रहा है दिन जाते भये की मालूम पड़ी नहीं सूर्य अस्त होने की वक्त में राजा के भंडार के पास में पंहुंचा तहां पर सूर्य अस्त होने की वक्त भंडारी भंडार के ताला लगा के अपने घर जा रहा था भंडारी प्रतें वो ब्राह्मण राजा की चिट्ठी दिखलाई तिसने चिट्ठी देख करके कहा कि भो ब्राह्मण राजा का कहा भया नियम पूर्ण होने से तूं आया इस वास्ते कुछ नहीं मिलेगा इस वास्ते अपने घर जा तब वो ब्राह्मण प्रमाद वश सेती धन नहीं पाके हाथ घस करके पश्चात्ताप करता हुवा लौट-

करके अपने घर आया पूर्व की तरह दरिद्री रहा ॥

यह तो लौकीक दृष्टान्त है ॥ अब आत्मा के ऊपर इसी कूं दार्ष्टांतिक वतौर घटाते हैं सो ही दिखलाते हैं संसार नगर में दरिद्री ब्राह्मण के वतौर प्राये महा दुखी संसारी जीव तिस जीव के सत्कार्य की प्रेरणा करने वाली सुमति नामें स्त्री समान तथा राजा के समान यहां पर तीर्थंकरादिक सद्गुरु धर्म धन के देने वाले तथा नर भव है सो भंडार के समान तिस विगर धर्म धन की प्राप्ति होवे नहीं तथा फेर सूर्यसमान आयु रहा है जैसे सूर्य अस्त होने से पेस्तर धन ग्रहण करने की राजा की आज्ञा थी तिसी तरह से आयु क्षय से पेस्तर धर्म करना ऐसी गुरु की आज्ञा है तथा फेर भी विशेपता दिख लाते हैं ॥

—जरा जावन पीडेइ । वाही जावन वढ्ढइं ॥
जावन इंदिय हाणी । तावधम्मं समायरे ॥ १ ॥

सुगमार्थः—तथा फेर वो ब्राह्मण दिन बहुत मान कर के निद्रा नाटक देखने कर के प्रमाद में आशक्त होके धन नहीं पाके पश्चात्ताप में उत्कृष्ट भया तिसी तरह से यह जीव भी अपना आयु बहुत मान करके पंचेंद्रिय विषयों में आशक्त होके पश्चात्ताप प्राप्त भया अहो इति आश्चर्ये मैंने पूर्व भव में विषय में मग्न होके छती सामग्री पाके श्री जिन धर्म प्रतें आराधन नहीं करा और आयु पूर्ण होने से धर्म कृत्य विगर किये गत्यंतर में जाके दुखी होके पश्चाताप करे मगर पीछे कुछ भी कार्य सिद्धि नहीं होवे तिस वास्ते भो भव्य जीवो प्रथम सेती ही प्रमाद प्रतें दूर करके सत् धर्म पालने के विषय तत्पर रहो ॥ तिस करके तुम कूं सर्व इष्ट सिद्धि होवे ॥ यह प्रमाद के ऊपर निस्व ब्राम्हण का दृष्टान्त कहा ॥ अब इस माफिक श्रावक पना पाने की इच्छा हो तो निन्ह वादिक कुदृष्टि के वचन में विश्वास नहीं करना सो वात दिखलाते हैं श्लोक द्वारा ॥

श्लोक—जनस्य सत्कांचन कंकणद्वयी । निर्मापकस्यो
पनयं निशम्य । स कुदृष्टि वाक्या श्रयणे
पराङ्मुखो । भवेन्नचेद्धंचन मश्नुतेध्रुवं ॥ १ ॥ ८८ ॥

व्याख्या—सो नार के पास स्वर्ण मयी कड़े की जोड़ी कर वाने वाले पुरष का दृष्टान्त सुन करके श्रावको चित धर्म अभिलाषी भव्य जीव कुदृष्टियों का जो वचन तिनको आश्रयण करने के विषै पराङ्मुख हो जाना। तिनों के वचन के विषै विश्वास नहीं करना अगर जौ तहां पर पराङमुख नहीं होवे तो निश्चय करके वंचन दशा में प्राप्त होवे कहने का मतलव यह है कि तिनों का विश्वास करे वा तिन के वचन करके व्युद्ग्राहित चित्त होके सद्गुरु का उपदेश नहीं अंगीकार करके आत्म धर्म सेती भ्रष्ट हो जावे तथा स्वर्ण के कडा या कंकण वन वाने वाले मनुष्य का दृष्टान्त कहते हैं ॥ एक कोई भी मुग्ध पुरष सोनार के पास सोने मयी कंकण का जोड़ा कर वाया तव तिस धूर्त्त सोनार ने तिस कूं भोला जान कर के तिस कूं ठगने के वास्ते दो कंकण का जोड़ा फेर वना के तिस में एक जोड़ा तो सोने का और दूसरा पीतल का तव तिस कूं सोने के कंकण दो देकर के विप्र तारण बुद्धि करके एकान्त में तिस से कहा कि इस गाम में सर्व लोक मेरे द्वेषी है सो वे लोक मेरा वनाया भया आभरण दिक शुद्ध भी होगा तो भी अशुद्ध कहेंगे तिस वास्ते तुम पेस्तर मेरा नाम मत ग्रहण करना सर्व लोकों कूं यह वतला करके शुद्ध की परीक्षा करवा करके यहां आव सो ऊजला करके तेरे हाथ में पैराउंगा तव वो भोला तिस का कैतव नही जान करके तिस आभूषण कूं तिसी तरह से लोकूंकूं दिखलाके लोको के मुख सेती तिसका शुद्धता सुनके पीछा आ करके सोनार भणी तिस वृत्तान्त प्रतें कहके तिस भूषण प्रतें दे दिया और फेर भी कहा कि अव अगर जो मेरा नाम सुनेंगे तो इस कूं अगर कोई लोक पीतल के वतला देवें तो तुम उनका वचन मानना नहीं और मेरे वचन पर विश्वास रखना तव तिसने भी मुग्ध भाव करके तिसी तरह से मंजूर करा तिस पीछे तिस सोनार ने हस्त लाघव तासे तिस सोने मयी कंकण युगल को प्रच्छन्न रख दिया और तिस के वरोवर वर्ण प्रमाण आकार के और पित्तल मयी कंकण जल्दी ऊजला करके तिस के हाथ में पैरा करके ऐसा कहा कि अव कोई भी अशुद्ध वतलावे तो विश्वास नहीं करना तव वो भद्र पुरष अशुद्ध भूषण कूं शुद्ध मान करके चार मार्ग में जाते हुये कूं लोगों ने पूछा नजुपर प्रश्ने यह कंकण जोड़ा कौन सोनार ने करा है तव वो वोला अमुक सोनार ने तव परीक्षक लोगों ने सम्यग् प्रकार देख करके कहा कि यह

पीतल का है तेरे कूं ठग लिया धूर्त्त ने तव वो पुरुष तिस सोनार नें वैकाय दिया चित्त जिस का ऐसा विचार ने लगा यह सर्व लोक तिस सोनार के द्वेषी है इस वास्ते ऐसा कहते हैं यह भूषण तो शुद्ध सोने मयी है तिस वास्ते यह लोक दिल में आवें सो कहो में तो इस का त्याग करूंगा नहीं तव इस माफिक सत्पुरषों के वचन का अनादर करके तिस धूर्त्त के वचन में विश्वास करा तव वो पुरष अशुद्ध वस्तु पाके ठगी जगया और शुद्ध वस्तु का भागी नहीं भया यह लौकीक दृष्टान्त कहा अव इसी दृष्टान्त प्रतें आत्मा ऊपर लाते हैं ॥ सोई दिखलाते हैं जो स्वर्ण कंकण ग्राही पुरष है सो यहां निन्ह वादिक कुगुरु जो पहिली स्वर्ण मयी कंकण दिखलाया तिसने वो यहां पर पर्वे प्रत्याख्यान दान दया दिक धर्म कृत्य तिसने दिखलाया जो फेर तिसने अपना विश्वास पैदा करके तिस भणी पीतल के कंकण दिया वो यहां पर कुदृष्टियों के नाना प्रकार के वचनों की कल्पना करके तिस के चित्तमतें वैकाय के एकान्त वाद युक्ति श्री मद् अर्हंत के धर्म से विरुद्ध धर्म का स्वरूप तिस भणी ग्रहण करवाया तव वो पुरष उत्तम पुरषों ने पैर वाई बहुत करी तो भी सत्पुरषों का वचन कूं द्वेष मूल जान करके अपनी तासीर से वदला नहीं तथा यह भी मिथ्यात्वियों के वचन से वैका हुवा चित्त करके शुद्ध गुरु का वचन द्वेष मई जान करके माना नहीं तथा वो पुरष जैसे अशुद्ध वस्तु पाके ठगीज गया तिसी तरह से यह भी शुद्ध धर्म नहीं पाके ठगाया फेर दुर्गती का भजने वाला भया पीछे तिस कूं सत् धर्म की प्राप्ति दुर्लभ हो जाती है तिस वास्ते भो भव्य जीवो जो तुमारे शुद्ध धर्म की इच्छा है तव तो प्रथम सेती निन्हवादिक कुदृष्टियों का वचन का विश्वास त्याग करो श्रीमद् अर्हंत्प्रणीत अनेकांत धर्मोपदेशक सद्गुरु के वचन के विश्वास करो जिस करके जल्दी से परमात्मा की संपदा प्रगट हो जावे यह कुदृष्टि वचन विश्वास पर स्वर्ण कंकण निर्मापक का उपनय दिखाया इस माफिक प्रसंग सहित देश विरती का स्वरूप दिखलाया ॥ अव निगमन । गोया प्रकाश पूर्ण होना उसको निगमन कहते हैं और ग्रन्थ सरू होता है उस कों उपोद्घात कहते हैं यह वातें मिथ्या श्रुत में नहीं है ॥

—इत्थं स्वरूपं परमात्मरूपं । निरूपकं चित्र गुणं पवित्रं । सुश्रावकत्वं परि गृहय भव्या । भजंतुदि.

व्यं सुख मक्ष यंच ॥ १ ॥

व्याख्या—इस माफिक स्वरूप परमात्मा के रूप का है फेर जिस में निरूपक याने निरूपण नाना प्रकार के पवित्र गुण का रहा है इस वास्ते श्रु श्रावक होते हैं वो इस कूं ग्रहण करके भव्य जीव देवता के सुक्ख वा अक्षय सुक्ख याने मुक्ति का सुक्ख प्राप्त करे ॥ १ ॥

—आयवृित्त । लेशाद्देशाद्विरतेर्विचार एषोत्र वर्णितो
स्तिमया । अनुसारा दन्यग्रंथस्यो । पदेश चिंता
मणि प्रभृते; ॥ २ ॥

व्याख्या—लेश करके देश विरती का विचार यह यहां पर वर्णाव करा मैंने उप देश चिंता मणि ग्रन्थादिक के अनुसार से बर्णाव करा है ॥ २ ॥ इति श्री मंद वृहत्खर तर गच्छाधिराज श्री जिन भक्ति सूरिंद्र के चरण कमलों में हंस समान श्री जिन लाभ सूरि संग्रह करा आत्म प्रवोध ग्रन्थ में देश विरती का निर्णय नाम द्वितीय प्रकाश सम्पूर्णम् ॥ २ ॥ अब क्रम सेती आया तीसरा सर्व विरती प्रकाश प्रारंभ करते है तहां पर सर्व विरती प्राप्त होना उसके प्रकार की शूचन करने वाली या आर्या है सो दिख लाते हैं ॥

—प्रत्पाख्याना वरण । कषाय चतुष्क क्षयोपशम
भवनात् । लभते मानवणतां । देश विरतिमान्
विर तोवा ॥ १ ॥

व्याख्या—देश विरति मान गौया पंचम गुण स्थान वर्तिवा अथवा अविरति याने प्रथम गुण स्थान वर्त्ति वा चतुर्थ गुण स्थान वर्त्ति मनुष्य प्रत्पाख्याना वरण लक्षण तीसरा कषाय और चौथा कषाय क्षय उपशम होनेसे इस सर्व विरति प्रतें पावै त्रि विध२ भांगे करके सर्व सावद्य योग सेती दूर होना उस कूं सर्व विरती कहते हैं देवता तीर्यंच नार की तथा विधभव स्वभाव करके सर्व विरती नहीं पा सक्ते इस वास्ते मनुष्य का ही ग्रहण पणा है फेर भी क्या कहते हैं इस माफिक देश विरती सर्व विरती प्राप्ति का

समय उस में कर्म स्थिति के भीतर सेती संख्याता सागरोपम क्षय करने से प्राप्त होता है इसकी स्थिति विस्तारपूर्वक पेस्तर दिखलाईहै तथा स्थितिमान तो इसका भी देश विरती के परें जघन्य तो अंतर्मुहुर्त्त और उत्कृष्ट देशें कम पूर्व कोटि वरप जानना इस माफिक सर्व विरती, जिनो के विषै वर्त्ते हैं तिस कूं सर्व सर्व विरति याने साधु मुनीराज कूं कहा करते हैं वे दो प्रकार के कहा एक तो छद्मस्थ और केवली। तहां पर छद्मस्थ तो छट्टे गुण स्थान से लेके वार में गुण स्थान वर्ति मुनी तथा केवली महाराज तो तेरमें चौदमें गुण स्थान दोय वर्त्ति जीव केवली कहना तहां पर इस प्रकास में छद्मस्थों का ही अधिकार रहा है तथा केवली महाराज परमात्मा का रूप है इस वास्ते तिनों का स्वरूप ता चौथे प्रकाश में कहेंगे अब यहां पर आदी में सर्व विरती अंगीकार करने वाले पुरष १ स्त्री २ नपुंसक ३ इन तीनों में योग्य अयोग्य का विचार दिखलाते हैं॥

—अट्ठारस पुरसेसु। वीसं इत्थिसु दसनपुंसेसु। पव्वा
वणा अणरिहा। इय अणला आहि या सुत्ते॥ १॥

व्याख्या—अट्ठारे तरह का पुरष और वीस प्रकार की स्त्री और दश प्रकार का नपुंशक दीक्षा के अयोग्य कहा तब तहां पर दीक्षा के अयोग्य अट्ठारे प्रकार का पुरष दीक्षा के अयोग्य कहते हैं॥ वाले बुड्ढे २ नपुंसेय ३ कीवे ४ जड्डेय ५ वाहिए ६ तेणे ७ रायावगारीय ८ उम्मत्तेय ९ अदंशणे १०॥ । ३ । दासे । ११ । दुट्ठेय । १२ । मूढेय । १३ । अम्मत्ते । १४ । जुंगिएइय । १५ । उव्वद्धएय । १६ । भयए । १७ । सेह निप्फेडियाइय॥ १८॥ ४॥

व्याख्या—जन्म से लेके सात आठ वरस तक बालक कहते हैं वो भी जिस तिस कूं पराभव का कारण है तथा चारित्र के परिणाम नहीं होता इस वास्ते दीक्षा के योग्य नहीं तथा वालक को दीक्षा देने में संयम बिराधनादिक दोप उत्पन्न होता है तथा फेर दुनियां भी इस माफिक कह देवै कि यह साधू वड़े निर्दयी हैं जिससे बालकूं कूं कों भी वल करके दीक्षा रूप कारागार में डालते हैं तिनों की स्वाधीनता मतें उच्छेदन करते हैं ऐसी निंदा हो जावे तथा फेर माताके योग्य तिस की परिचय करणें सेती स्वाध्याय भंग होता है अब यहां पर सत्र। और आनंदाख्य शिष्य प्रश्न करता है कि हे गुरु महाराज

छत्र वर्ष का अइमत्त कुमर कूं दीक्षा की प्रप्ति कैसे सुनने में आती है यह प्रश्न है अब सरोजोदय गुरु प्रत्युत्तर देते हैं कि हे शिष्य तिस अति मुत्तक कुमर प्रतें तीन काल के जानने वाले भगवान खुद दीक्षा दीवी इस वास्ते दोष नहीं कारण ज्ञानी लाभा लाभ के जानने वालों को स्वाधीन है इस वास्ते दोष नहीं अब यहां पर बाल दीक्षा ऊपर अति मुक्तक कुमर का दृष्टान्त दिखलाते हैं अंत कृद्दशां गाथनुसार करके कहते हैं॥

पोलास पुर नगर में विजय नाम राजा तिस के श्री देवी पट्ट रानी तिसके अति मुक्तक नामें लड़का वो बहुत यत्न कर के बढ़ता भया क्रम करके छै वर्ष का भया तिस अवसर में शहर के बाहिर श्री वीर स्वामी समवसरे तब गौतम स्वामी भगवान से पूछ करके भिक्षा के वास्ते सहर में गया तब बालकूं के साथ खेल रहा था अति मुक्तक कुमर गौतम स्वामी प्रतें देख करके ऐसा वचन कहा आप कौन हो और किस वास्ते घूमते हो तब गौतम स्वामी बोले हम साधू और भिक्षा के वास्ते फिरते हैं तब तो पूज्य आईये आप कूं भिक्षा दिलाउं ऐसा कह करके वो कुमर गौतम स्वामी की अंगुली पकड़ करके अपने घर ले गया तब तो श्री देवी भी हृष्ट होके भक्ति पूर्वक गौतम प्रतें नमस्कार करके प्रति लाभन किया यानें आहार वैराया तब अति मुक्तक कुमर फेर बोला कि आप कहां रहते हो जब गौतम स्वामी बोले हे भद्र जिस उद्यान में हमारे धर्मा चार्य श्री वर्द्ध मान स्वामी वसते हैं तहां पर में भी रहता हूं तब तो कुमर बोला हे स्वामी में भी आऊं आप के साथ में वीर स्वामी जी प्रतें वंदना करने के लिये तब गौतम स्वामी बोले यथा सुखंदेवानु प्रिय तब तो कुमर गौतम स्वामी के साथ जाके भगवान प्रतें वंदना करी तब भगवान ने धर्मोपदेश दिया तिस प्रतें सुन करके प्रतिबोध प्रतें प्राप्त हुवा अति मुक्तक कुमर दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा मगर पिता माता की आज्ञा के वास्ते घर आ करके पिता प्रतें ऐसा कहा हे माता पिता जी मैं आज श्री वीर स्वामी के पास धर्म सुना वो धर्म मुझको रुचा तब माता पिता बोले हे पुत्र तूं धन्य है और कृतपुन्य है और कृतार्थ है जो तैंने वीर स्वामी के पास धर्म सुना वो धर्म रुचा तब तो वो कुमर फेर बोला हे पिता माता जी मैं तिस धर्म कूं सुन करके संसार भय सेती डरा तथा जन्म मरण से भी डरा तिस वास्ते आप की आज्ञा हो तो श्री वीर स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा है तब तो

माता अनिष्ट अकांत अप्रिय अश्रुत पूर्व ऐसा वचन सुन करके जल्दी शोक में प्राप्त हो गयी दीन और उदास वदन होके मूर्छा पाके अंगणतल में धसमस करके सर्वांग सहित पड़ गई तब तो दासी जल्दी से सोने के कलस लाके तिस के मुख सेती निकल रही है जलधारा तिस करके रानी के ऊपर जल सींचा तथा हवा करी गोया ठंडे उपचार करने सेती सावधान होके विलाप करती पुत्र प्रतें ऐसा वचन कहा हे जाया तूं एक ही पुत्र है हमारे इष्ट है कांत है प्रिय है आभरण करंडीये समान अमूल्य रत्न समान हृदय कूं आनंद के देने वाला ऊंवर के फूल की तरह से दुर्लभ है इस वास्ते क्षण मात्र भी तेरा विजोग सह सक्ते नहीं तिस वास्ते हे जाया जब तक हम जीते हैं तब तक ठहरो पीछे सुखें करके दीक्षा ग्रहण करणा तब तो कुमर बोला हे माता आपने सत्य कहा मगर यह मनुष्य भव अनेक जन्म जरा मरण स्वरूप है तथा शरीर मन सम्बंधी अत्यंत दुक्ख वेदनादिक उपद्रवादिक करके पीड़ित होके यह संसार अध्रुव है अशाश्वतो है संध्या अराग सरीखा जलके बुद बुदे समान विद्युल्लता की परें चंचल शडन पड़न विध्वंस धर्म पैली और पीछे अवश्य ही त्याग हो जायगा अब कौन जानता है अपने अंदर कौन पहिली परलोक जावेगा कौन पीछे जावेगा तिस वास्ते तुम्हारी इजाजत हो तो अभी दीक्षा ग्रहण करने चाहता हूं तब तो फेर भी माता पिता कहने लगे हे पुत्र यह तेरा शरीर विशिष्ट रूप लक्षण व्यंजन गुण सहित विविध व्याधि रहित ससौभाग्य निरूप तो दात्त कांत पंचेंद्रियों पसोभित अनेक उत्तम गुण सहित तूं रहा है तिस वास्ते पेस्तर अपने शरीर का सौभाग्यादिक गुण प्रते भोग करके पीछे परिणत ऊमर होके पीछे दीक्षा ग्रहण करना तब तो कुमर फेर कहने लगा हे माता पिता जो तुमने शरीर का स्वरूप वत लाया सोतो मनुष्य का शरीर निश्चै करके दुःख का ही घर है विविध व्याधि याने नाना प्रकार की सैकड़ों व्याधि का निकेतन है हाड़ काठ का ऊठा भया सिर नशों वगैरे जाल करके वींटा हुवा है मट्टी के बरतन की परें दुर्बल अशुचिका पुदगल करके संक्लिष्ट शटन पतन विध्वंसन धर्म शरीर का है इस वास्ते पेस्तर और पीछे अवस्य त्याग करना पड़ेगा इस वास्ते कौन इस शरीर के ऊपर राजी रहे तब तो माता पिता फेर भी बोले हे पुत्र यह तेरे पिता मह तथा प्रपिता मह करके आया विपुल धन कनक रत्न मणि मौक्तिक शंख प्रवाल वगैरः आदि लेके अपणों आधीनता का द्रव्य बचे हैं जो सात पुरुष परंपरा गोया सात पीढी

तक अत्यर्थ करके दीनादिक भणी दान देवो तथा आप खावो भोगन करो तो भी क्षय नहीं होवे तिस वास्ते इस माफिक यह द्रव्य अपनी इच्छा करके अच्छी तरह से भोग करके अपने समान रूप लावण्यादिक गुण शालिनी स्वमनो नुगामिनी ऐसी वहुत राज कन्या परणीज करके तिनों के साथ अद्भुत संसारीक काम भोग सुख भोग करके पीछे दीक्षा ग्रहण करणा तव कुमर फेर बोला भो माता पिता तुमने द्रव्यादिक का स्वरूप कहा तहां पर द्रव्य कूं तो अग्नि जल चौर दायेंदार आदि लेके वहुत लोगों का साधारण भाग है अध्रुव है असास्वता है पहिली और पीछे अवश्य त्याग हो जायगा तथा मनुष्य संवंधी काम भोग यह भी अशुची है अशास्वता है वातपित्त कफ शुक्र शोणित आश्रित है अमनोज्ञ है विरूप मूत्र पुरीष करके पूर्ण है तथा दुर्गंध उत्स्वास निश्वास आता है अबुध जनों के सेवन करने लायक अनंत संसार के बढ़ाने वाले कटुक फल विपाक रहा है इस वास्ते कौन अपना जीवित निर्फल करे तव माता पिता इस माफिक विषयों में अनु लोम वहुत वचन करके तिस कुमर प्रतें लोभाणें कूं असमर्थ भये तथा विषय के प्रति लाम वचनों करके इस माफिक कहने लगे हे पुत्र निग्रन्थ प्रवचन सत्य है अनुत्तर है शुद्ध है शल्प कूं कर्त्तन करणें वाला है तथा मुक्ति की मार्ग सर्व दुःख का नाश करने वाला है इस संयम में रह के जीव मुक्ति जाते हैं मगर यह संयम लोहमयी चणक चर्वण इव अति दुष्कर है वालुक कवलइव स्वाद रहित तथा भुजा करके समुद्र कूं तिरणा दुस्तर है फेर यह प्रवचन रूप तीक्ष्ण खडगादिक धारा पर चलना पड़ता है उस माफिक जानना तथा रस्सी से वंधी भई महा शिलादिक कूं हाथ करके धारण करना तथा तरवार की धाराकी तरह से व्रत कूं उठाना पड़ेगा तथा फेर साधुवों को आधा कर्मि और उद्देशिकादिक आहार भोजन करना कल्पै नहीं हे पुत्र तूं तो सर्वदा सुक्ख में पैदा भया कभी दुक्ख देखा नहीं इस वास्ते तूं शीत उश्न क्षुधा पिपासा दांस मच्छर आदिक विविध रोगादिक परीसह उपसर्ग प्रतें सहन करनेकूं समर्थ नहीं होगा तिस वास्ते अभी तो तुझकूं दीक्षाके आज्ञा देनेकी इच्छा नहीं करते तव कुमर बोला हे माता पिता जो तुम ने संयम की दुष्करता दिखलाई वा निश्चय करके क्लीव लोग तथा कातर पुरषों कूं है तथा इस लोक में प्रति वंद्ध और परलोक सेती पराङ्मुख विषय तृष्णा वाले जीवों कूं दुष्कर है मगर धीर पुरषों कों नहीं है तथा संसार सेती नहिं डरने

वालों कूं मुशकिल है तिस वास्ते तुमारी आज्ञा हो तो अभी दिक्षा लेने की इच्छा करता हूं तब तो माता पिता फेर भी बोले हे बालक इतना हठ मत कर तूं क्या जानता है तब तो अति मुक्तक कुमर बोला हे माता पिता जो जानता हूं तिसकूं मैं नहीं जानता हूं तथा फेर जो नहीं जानता तिसकूं ही जानता हूं तब तो माता पिता फेर बोले हे पुत्र यह बात कैसे कही तब तो अति मुक्तक कुमर बोला हे पिताजी यह जानता हूं जो जन्मा है वो अवश्य ही मरेगा मगर यह नहीं जानता हूं कब किस तरह कितने काल से कौन घड़ी, कवन पल तथा नही जानता हूं कौन कर्म करके जीवादिक नरकादिक के विषै जाता है तथा उत्पन्न होता है तथा यह भी जानता हूं अपने कर्म करके जीव नरक में उत्पन्न होता है तब तो माता पिता तिस कुमर का संयम में चित्त स्थिर जान करके बड़े आडंबर करके निष्क्रमण महोत्सव किया तब अति मुक्तक कुमार स्नान विलेपन वस्त्र आभरणादि करके विभूषित शरीर करा है माता पिता कूं आदि लेके बहुत परिवार सहित बड़ी पालखी ऊपर बैठ कर के नाना प्रकार की वाजित्र ध्वनि हो रही है इस माफिक बड़े धूम से जब शहर के भीतर निकला तब बहुत लोक द्रव्यार्थि भट्टादिक जन मनोज्ञ वाणी करके इस माफिक आशीर्वाद देने लगे हे राज कुमार तुम धर्म करके तप करके कर्म रूप शत्रुओं का पराजय करो फेर हे जगत्र में आनंद करने वाला तुझ प्रतें कल्याण हुवो तथा फेर तुम उत्तम ज्ञान दर्शन चारित्र करके पेस्तर नहीं जीतने में आई इस माफिक इन्द्रियों कूं जीतो तथा जय करके साधु धर्म अच्छी तरह से पालन करो फेर तुम निर्विघ्न करके सिद्धि स्थानक प्राप्त हुवो तब अति मुक्तक कुमार की याचक जन स्तवना करते जाते हैं और शहर के नर नारी कूं आदर सहित देख करके अर्थि जनों कूं ईप्सितार्थ दान देता भया शहर के बाहिर निकल करके जहां पर श्री वीर स्वामी का समव शरण रहा है तहां पर आ करके पालखी से उतर करके तब माता पिता कुमार प्रतें अगाड़ी करके श्री वीर स्वामी के पास आके वंदनादिक व्यवहार पूर्वक इस माफिक कहने लगे हे स्वामी यह अति मुक्तक कुमार हमारे इष्ट हैं मनोहर एक पुत्र है मगर जैसे कमल पंक में पैदा होता है और जल के विषै बढ़ता है मगर पंक जल में लिप्त नहीं होता तिसी तरह से यह पुत्र भी शब्द रूपादिक में उत्पन्न भया तथा गंध रश स्पर्श लक्षण भोग के विषै बढ़ा मगर फेर काम भोग है मित्र ज्ञाति स्वजन संबंधियों के विषै लिप्त

नहीं होवे तथा फेर संसार के भय सेती डर करके आप के पास दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा करता है तिस वास्ते हम आप कूं शिष्य रूप भिक्षा देते हैं आप भी कृपा पूर्वक ग्रहण करो तब स्वामी ने फरमाया कि यथा सुखं देवानुप्रिय मा प्रतिबंधं कुरु तब तो अति मुक्तक कुमार भगवान का वचन सुन करके नमस्कार करके उत्तर पूर्व दिशा को आक्रमण करके खुद आप ही आभरण माला अलंकार प्रतें छोड़ते गया तब माता हंस लक्षण पटशाटक करके आभरणादिक ग्रहण करके आंखों में आंसू डालती भई अति मुक्तक कुमार प्रतें ऐसा वचन कहा हे पुत्र प्राप्त हो गया ऐसासंयम योगों के विषै तें बल करना और अप्राप्त संयम योग कों प्राप्त होने के वास्ते घटना करणा तथा फेर दीक्षा पालने के विषय अपना पुरषा कार सफल करना तथा प्रमाद नहीं करणा तब माता पिता भगवान प्रतें नमस्कार करके परिवार सहित अपने ठिकाने गया तब अति मुक्तक कुमार स्वामी के पास जा करके वंदनादिक करके दिक्षा लीवी तब स्वामी भी पंच महा व्रत ग्रहण करवानें पूर्वक क्रिया कलापादिक सीखने के वास्ते गीतार्थ स्थ विरों के पास सुप्रत करा तब प्रकृति भद्रक तथा विनय वान् अति मुक्तक कुमार श्रमण एक दिन के वक्त में महा वर सात पड़ने से काख में ग्रहण करा भया था पात्रा और रजो हरण ले करके बाहिर प्रदेश में गया तहां पर जल का प्रवाह चलता भया देख के बाल अवस्था के वश सेती मट्टी करके पाल बांधी नाव चलाने के बतौर हो गया तब यह भी पातरे कूं नाव की तरह से कल्पना करके तिस जल में तिरा करके खेलने लगा तब स्थ विर लोक इस कुमार की अत्यंत अनुचित चेष्टा देख करके तिस की हांसी की तरह से करके भगवान के पास जा करकें भगवंत प्रतें ऐसा पूछा हे स्वामी आप का अंते वासी शिष्य अति मुक्तक नामें कुमार श्रमण कितना भव ग्रहण करके मुक्ति जावेगा तब भगवान ने फरमाया कि हे आर्यें तुम लोक अति मुक्तक कुमार श्रमण प्रतें मत हीलना करो मत निंदा करो गर्हा मतकरो अपमान मत करो अहो देवानु प्रिय तुम लोक विगर खेद करके ग्रहण करो तथा उस की भात पाणी विनय करके इसकी वेयां वच्च करो बलके यह मुनी तो भव अंत करनें वाला है और चरम शरीरी है तब तो वे स्थविर भगवान वीर स्वामी का ऐसा वचन सुन करके प्रभू कूं वंदना करके भगवान का वचन विनय पूर्वक अंगीकार करके अति

मुक्तक कुमार प्रते अखेद करके ग्रहण करा यावत् वे या वच करने लगे तब अति मुक्तक मुनी भी तिस पापके ठिकाने की आलोचना लेके विविध तप करके संयम आराधन कर के अखीर में अंतक्रकेवली होके मुक्ति गया यह संबंध अंत कृद्दशा विवाह प्रज्ञप्त्याद्य नुसारें निरूपण करा। यह वाल दीक्षा के ऊपर अतिमुक्तक मुनी का वृत्तान्त कहा ॥१॥ तथा साठ और सित्तर वरष से आगूं तक वृद्ध कहते है तिसका भी समाधान करना मुसकिल है इस वास्ते वृद्ध कूं भी दीक्षा देनी नहीं सोई दिखलाते हैं॥

—उच्चासणं समीहइ। विणयंनं करेइ गव्व मुवंहइ॥
वुड्ढो नदिक्खि अव्वो। जइ जाओ वास देवेण॥ १॥

सुगमार्थः॥ यह ऊमर सौ वरस के आयु वल की अपेक्षा जानना नहीं तब तो जिस काल में जितना उत्कृष्ट आयु तिसका दस हिस्सा करके आठमें नवमें भाग मोजूद में वृद्ध पणा समझणा॥ २॥ तथा स्त्री पुरष दोनों की इच्छा करने वाला पुरषाकृति नपुंशक उन कूं पुरष नपुंसक कहना॥ ३॥ तथा जो स्त्री करके निमंतृत असंवृत स्त्री प्रते देख करके काम की अभिलाषा होके वे दो दय सहन नहीं हो सक्ता वो पुरष क्लीव है यह दोनों उत्कृष्ट वेद करकै अकस्मात् उड्डाह पातादिक कारण हो जावे इस वास्ते दीक्षाके योग्य नहीं॥ ४॥ तथा जन्मनपुंशक तीन प्रकारका भाषा करके। शरीर करके क्रिया करके। तहां पर भाषा जड़ तीन प्रकार का॥ जिस में एक तो जल मूंक १ मन्मन्मूंक २ एलमूंक। ३। तत्र नाम तहां पर जलमग्न की परें वुड वुडायमान वोले उस कूं जलमूंक कहते हैं तथा जिसके वोलते भये खच्यमान की तरह से वचन स्खलित होजावे उसकूं मन्मन्मूंक कहते हैं तथा जो फेर एलककी तरहसे मूंक पणा करके अव्यक्त शब्द वोले तिस कूं एलक मूंक कहते हैं। ३। तथा जो अत्यंत स्थूलपणा करके पंथमें भिक्षाटन के विषै तथा वंदनादिक में अशक्त होवे उसकूं शरीर जड़ कहते हैं तथा क्रिया प्रति उपेक्षणादिक वारंवार उपदेश करने सेभी जड़पणा करके जो ग्रहण नहीं कर सक्ता उस कूं क्रिया जड़ कहते हैं तहां पर भाषा जड़ ज्ञान ग्रहण करने में असमर्थ होवे तथा शरीर जड़ मार्ग गमनादिक में अशक्त होवे तथा क्रिया जड़ क्रिया ग्रहण कर सक्ता नहीं इस वास्ते दीक्षा होने के योग्य नहीं। ५। तथा कुष्ट भगंदरादिक अतिसार रोग ग्रस्त

व्याधि सहिने कारण उसकी चिकित्सा करने में छव काय की विराधना होती है इस वास्ते स्वाध्यायादिक में हानी पहुंचे इस वास्ते दीक्षाके योग्य नहीं । ६ । तथा खात खणने वाला मार्ग पटकने वाला चोरी करने वाला वो भी गच्छ के अन्दर बध बंधना दिक बहुत अनर्थ का कारण सेती दीक्षा के योग्य नहीं । ७ । तथा श्री गृहांतपुर नृप शरीरादि का द्रोह कारक राजा के अपकारी वो भी दीक्षा के योग्य नहीं । ८ । तथा यक्षादिक करके महा मोहनीय में बिकल दशा में उन्मत्त होगया वो भी दीक्षा देने के योग्य नहीं । ९ । तथा नहीं है दर्शन नेत्र वा सम्यक्त इन दोनों करके रहित याने अंधा स्त्यानर्द्धि में प्रवेश हुवा भया गृहस्थ और साधुवों कूं मारणादिक उपद्रव करे इस वास्ते दीक्षा के योग्य नहीं । १० । तथा घरका दास याने गोला एक तो गोया घर की दासी से पैदा भया या द्रव्य से खरीद करके लाया भया वा द्रव्यादिक में अड़ाने रक्खा भया हो इन सब कूं दास कहना चाहिये वो भी दीक्षा के योग्य नहीं जिस कारण से तिस कूं दीक्षा देने में तिस का मालिक दीक्षा त्याग करने का उपद्रव करे इस वास्ते योग्य नहीं । ११ । तथा दुष्ट दो प्रकार का कषाय दुष्ट १ और विषय दुष्ट । २ । तिस में उत्कट कषाय वाला भी अयोग्य तथा विषय दुष्ट अतीव पर स्त्रीयों के ऊपर गृद्ध हो जाता वो भी दीक्षा के अयोग्य है कारण अति संक्लिष्ट अध्य वसाय सेतो । १२ । तथा स्नेह अज्ञानादिक वश सेती तत्व ज्ञान शून्य मूर्ख वो कृत्याकृत्य विवेक बिकल तथा अर्हंत की दीक्षा में गोया मूल विवेक ही है अगर तिस करके रहित होने से दीक्षा के योग्य नहीं । १३ । तथा जिस के शिर पर देणा हो वो रिणार्त्त तिस कूं दीक्षा देने में दोष प्रतीत रहा है । १४ । तथा जाति कर्म और शरीरादि करके दूषित तहां मातंग है कोली छीपा धीवर पुलिंदादिक मोची वगैरे अफर्शी तथा जाति जुंगित अगर फर्शी करे तो भी स्त्री मयूर कुर्कट शुकादि पोषक जाति जुंगित तथा बांश बरत के ऊपर चढ़ना नख प्रक्ष्यालन सौकरिक वा गुरिक कों आदि लेके निंदित कर्म कारी कर्म जुंगित तथा कर चरणादिक वर्जित तथा पंगु कुब्ज वामन एकाक्षि आदि लेके शरीर जुंगित इत्यादिक पूर्वोक्त दीक्षा देने के योग्य नहीं लोकोकमें अवर्णवादादिक दोषान्तर होजाता है । १५ । तथा द्रव्य ग्रहण पूर्वक विद्या निमित्त इतना दिन तुम्हारे पास रहूंगा जिसने अपनी पराधीनता कर दिया हो उस कूं अवधि कहते हैं तिस के कलहादिक दोष का कारण

दीक्षा के योग्य नहीं । १६ । तथा भृत्य रुपयों के वास्ते मालिक के आदेश करणें के वास्ते प्रवर्त्त भया उस कूं भृतक कहते हैं वो भी दीक्षा के अजोग्य है कारण तिस कूं दीक्षा देने में जिसके यहां नोकरी करता था वो गृहस्थ वड़ी अप्रीति धारण करे । १७ । तथा शैक्षस्य दीक्षि तुमिष्ट स्पनिस्फेटिका अपहरणशैक्षानि स्फेटिका उपलक्षण सेती माता पिता की आज्ञा विगर दीक्षा देना तिस कूं शैक्षनिष्फेटिका कहते हैं यह भी दीक्षा के अयोग्य है अदत्तादानादिक दोष का प्रसंग होता है । १८ । यह पूर्वोक्त अट्ठारे तरह का पुरष दीक्षा के अयोग्य है तथा फेर वतलाते हैं गाथा द्वारा ॥

गाथा—जे अट्ठारस भेया । पुरिसस्सतहित्थियाइ तेचेव ।
गुव्विणी । १ । सवाल वच्छा । २ । दुन्निइ मे हुंति अन्नेवि ॥ ५ ॥

व्याख्या—जो अट्ठारे भेद पुरषों का वतलाया दीक्षा के अयोग्य वोई अट्ठारे प्रकार स्त्रियों का जान लेना मगर दो भेद दूसरा दिखलाते हैं जिसमें एक तो गुव्विणी । तथा वालवत्सा वालक कूं स्तन पिलाने वाली यह दो भेद मिलाने से वीस प्रकार की स्त्री दीक्षा के योग्य नहीं तथा दोष भी पूर्ववत् जान लेना । ५ । तथा नपुंसक के सोले भेद आगम में दिखलाया है तिन में दस भेद वाले तो सर्वथा दीक्षा के अयोग्य हैं अति संक्लिष्ट अध्य वसाय सेती अव भेद दिखलाते हैं गाथा द्वारा ॥

गाथा—पंडए वाइए कीवे । कुंभीई सालएइअ ॥ सउणी तक्कम्म सेवीय पक्खिया पक्खि एइय ॥ ६ ॥
सोगंधिएय आसत्ते । दसएए नपुंसगा ॥ संकिलिट्ठ त्तिसाहूणं । पव्वावेउं अकप्पिया ॥ ७ ॥

व्याख्या—पंडक । १ । वातिक । २ । क्लीव । ३ । कुंभी । ४ । ईर्ष्यालु । ५ । शकुनि । ६ । स्तत्कर्म सेवी । ७ । पाक्षिक अपाक्षिक । ८ । सौगंधिक । ९ । आशक्तश्च । १० । यह दश प्रकार के नपुंसक संक्लिष्ट चित्त वाले इस वास्ते साधुवों के दीक्षा देने अयोग्य कहा है संक्लिष्ट प्रणाम तो इन सवों का अगर विशेषता नहीं है तो भी महा नगर दाह समान

कामाध्य बसाय युक्त है स्त्री पुरष दोनों की सेवा कूं अंगीकार करके गोया दोनों की इच्छा उत्पन्न होती है मगर अकिंचित्कर है तथा विशेष इनों का स्वरूप निशीथ भाष्य और प्रवचन सारोद्धार से जानना। अब यहां पर सत्। और आनंदभिध शिष्य प्रश्न करता है पुरष के भेद में यहां पर पुरषों के भेद में यहां पर नपुंसक दिखलाया तहां पर विशेषता क्या बतलाई सो कहिये। अब उत्तर है शिष्य तहां पर पुरषाकृति वाले नपुंसक ग्रहण किये यहां पर नपुंसक का कृती वालों का ग्रहण भया गोया नपुंसक दो प्रकार का होता है एक तो पुरष आकृति वाले। और नपुंसक आकृति वाले यह दो तरह का नपुंसक जानना भेद समझ लेना इसी तरह से स्त्री का भेद भी जान लेना॥ अब सोलै भेदों के विषै रहे बाकी छै भेद वाले नपुंसक दीक्षा के योग्य दिखलाया सो कहते हैं गाथा द्वारा॥

गाथा—वद्धिए।१। चिप्पिए।२। चेव मंतओ।३। सहिउ
वंहए।४। इस सत्ते।५। तेवसत्तेय।६। पव्वावे
ज्जनपुंसए।८।

व्याख्या—आर्यत्यं गोया के रणवास में राणियों की रक्षाके लिये बाल्यावस्था में छेद करके जिसके वृषण मर्दन कर दिये उस कूं वर्द्धिक कहते हैं॥ तथा जिस के जन्म होते ही वृषण अंगुष्ट करके मर्द करके दवा देवे उस कूं चिप्पित कहते हैं इस कारण करके यह दोनूं नपुंसक उदय में होगया तथा किसी के रिषि के सराप सेती तथा किसी के देव सराप सेती नपुंसक उदय हो जावे तथा किसी के मंत्र शक्ति सेती तथा तिस माफिक औषधी प्रभाव सेती स्त्री वेद पुरष वेद समुपहतन करने सेती नपुंसक वेद का उदय होवे यह छव प्रकार के नपुंसक दीक्षा के योग्य जानना तथा अठारे भेद और वीस भेद इनों से व्यतिरिक्त भेद भी बतलाते हैं पुरष नपुंसक स्त्री इनोंमें जो सर्व विरती अंगीकार करने वाले हैं सो दिखलाते हैं श्लोक द्वारा॥

श्लोक—अमंद वैराग्य निमग्न बुद्धय। स्तनु कृताशेष कषाय
वैरिणः॥ रिजुंस्व भावा सुविनीत मानसा। भजंति

भव्या मुनि धर्म मुत्तमं ॥ ६ ॥

व्याख्या—अमंद अविनश्वर जो वैराग्य तिसमें निमग्न याने लीन भयी बुद्धि जिनो की इस वास्ते क्रोध कों दुर्बल कर दिया हीन बल कर दिया समस्त कषाय रूप वैरी कूं तथा रिजु स्वभाव होगया तथा सरल प्रकृति वाले इस वास्ते सुविनीत मन जिनों का इस माफिक भव्य जीव उत्तम मुनि धर्म सर्व विरती लक्षण प्रतें भजै प्राप्त करे यहां पर प्रथम के पद में वैराग्य की अमंदता ऐसा विशेषण बतलाया रोगादि जन्य क्षण मात्र स्थायि उस वैराग्य से कुछ भी सिद्धि नहीं है सोई पुष्ट करते हैं गाथा द्वारा ॥

गाथा—रोगेणव सोगेणव । दुक्खेणव जंजडाणउल्लसइ ॥
मग्गंति न वैरग्गं। तं विवुहा अप्प कालंति ॥ १ ॥
सुहि अस्सव दुहि अस्सव । जंवेरग्गं भवेविवेएण ॥
पायं अप्पच वायं तंसियचारित्त तरुवीयं ॥२॥ अनयोः

व्याख्या—जड़ा याने निर्विवेक वान् तथा काश श्वासादि रोग करके पीड़ित तथा पुत्र वियोगादि जन्य शोक करके तथा वध बंधनादि दुःख करके धिक्कार हुवो रोग सोगमयी कष्ट बहुत है इस संसार प्रतें ऐसा विचारना रूप जो वैराग्य उल्लसित होवे तिस वैराग्य प्रतें पंडित जन नहीं चाहते हैं याने इस माफिक वैराग्य वाला सर्व विरती के अजोग्य है तदनर्हत्वं कस्मादित्याह अल्प का . लावस्थायित्वं च । अतएव नैतत्सुधियांस्पृहणीय मि त्यादिक अल्प काल का वैराग्य पंडित जन नहीं चाहते हैं रोगादिक निवृत्ति भये बाद वैराग्यकी भी निवृत्ति होजावे इस वास्ते पंडित जन नहीं चाहते अब यहां पर सत् । और आनंदाभिध याने सत्चित् आनंद नामें शिष्य प्रश्न करता है हे महाराज सर्व विरतीके योग्य कौनसा वैराग्य है यह पूर्व पक्ष तब सरोजोदय परम गुरु महाराज कहते हैं कि हे शिष्य सुहि अस्से त्यादि सुखी ही वा दुखीहो इस माफिक जीवके विवेक करके जो वैराग्य होता है तिस वैराग्य की गरज है वो वैराग्य अप्रत्पवाय है गोया अविनश्वर है विवेक मूल करके अगर दुक्ख की निवृत्ति हो जावे तो भी वैराग्य को छोड़े नहीं इस वास्ते चारित्र रूप तरु कूं उत्पादन करने में बीज की परें विवेक रहा है

यहां पर चारित्रस्य तरूपमातु सम्यक्त मूल विवेक मूल करके तथा प्रथम व्रत स्कंध रूप जानना बाकी व्रत शाखा पणें में तथा सकल क्रिया कलाप जो है सो प्रवालपणें में तथा लब्धि कुसुमपणें में तथा मोक्ष फल पणें में जानना यहां पर प्रायें करके ग्रहण करना नंदिषेणादिक के बारे में दृढ़ करते हैं तथा नंदिषेण का जीव वसुदेव भया सो पूर्व भवमें नंदिषेण कुरूप वाला था और उस का स्त्रियों नें अनादर कर दिया था और मनमें अति दुखित होके अविवेक करके भी अविनश्वर वैराग्य पाया इति गाथार्थः॥ अब अवसर से संबंध आया दश विधयती धर्म का सो निरूपण करते हैं॥

—खंती। १। मद्दव। २। अज्जव। ३। मुत्ती। ४।
तव। ५। संयमेय। ६। बोधव्वे सच्चं। ७। सोयं
। ८। अकिंचणंच। ९। बंभंच।१०। जइधम्मो १०

व्याख्या—क्षांति। याने क्षमा सर्वथा क्रोध का त्याग।१। मार्दव नाम मृदुता सर्वथा मान त्याग।२। आर्जव याने सरलता सर्वथा लोभ माया परित्याग।३। मुक्ति निर्लोभता सर्वथा लोभ का त्याग।४। इस का कहने का प्रयोजन यह है कि मुनियों ने प्रथम चार कषाय का जय करणा ऐसा कहा कारण कषाय जो है सो दोनूं लोक में प्राणियों का स्वार्थध्वंस करने वाला सो फेर भी पुष्ट करते हैं॥

—को हो पी इं पणा सेइ। माणो विणय नासणो॥
माया मित्ताणि ना सेइ। लो हो सव्वविणासओ॥ १॥

व्याख्या—क्रोध प्रीति का नाश करता है मान विनय का नाश करता है माया मित्र का नाश करती है तथा लोभ सर्व गुण का नाश करता हैं॥ १॥

—कोहो नाम मणु स्सस। देहा ओ जायए रिऊ॥
जेणच्च यंति मित्तांइं। धम्मो यपरि भस्सई॥ २॥

व्याख्या—क्रोध एक मनुष्य नाम मात्र के शरीर से उत्पन्न भया याने रिपू है जिस करके मित्र का त्याग हो जाता है और धर्म सेती भ्रष्ट हो जाता है॥ २॥

—नासिय गुरुवएसं। विज्ञा अहलत्त कारण मसेयं॥ कुग्गह गय आलाणं। को सेवइ सुव्व ओ मं ३णा॥३॥

व्याख्या—गुरु उपदेशं नासयति। तथा अविद्या रूप ग्रथिलेव करणा वशेसं। कुग्र इएव गज तस्या लानं बंधन स्थानं। कःसेवते सुव्रती मानं॥ ३॥

—कुडिल गई कूर मई। होइसवा चरण वज्जि ओ मलिणे। माया इनरो भुयगुव्व। दिठ मित्तो विभय जणा ओ॥ ४॥

व्याख्या—कुटिल गती क्रूर मती स्वतः भवति चरण वर्ज्जि तो मलिनः मायादिवान् नर भुजंगइव मित्रं दृष्टे मात्रे पिभय जनकः॥ ४॥

—किच्चा किच्च विवेयं। हणइयसा जो विडंणा हेऊ॥ तंकिरलोह पिसायं। कोधीमंसेवए लोए॥ ५॥

व्याख्या—कृत्या कृत्य विवेकंच। हणति स्वतः विटंवणा हेतू। तस्मात् लोभ पिशाचं कः धर्मानी सेवत्ते लोके॥ ५॥

तथा अन्यत्र भी कहा है सर्व मोक्षांग में कषाय त्यागन करना वही मुख्य मोक्षांग त्वं विद्यतेतं विना इतर क्रियाभिः कदापि मुक्ति की अप्राप्ति मगर प्राप्ती नहीं सोई वात फेर दृढ़ करते हैं॥

—कड किरिया हिदेहं। दमंति किंते जडा निरवराहं॥ मूलं सव्व दुहाणं। जेहिं कसायान निग्ग हिया॥ १॥

व्याख्वा—किड़किड़िभूत शरीर कर लिया तथा दमन कर रहे हैं वे जड़ निर अप राधी भर्ते मगर सर्व दुःखों का मूल कारण येषां पुरषाणां कषायान निर्ज्जिता। जिन पुरषों ने कपाय दूर नहीं करा तव सर्व वृथा है

—सव्वेसंपितवेसु । कषाय निग्गह समंत वोनत्थि ॥
जंतेण नाग दत्तो । सिद्धो सोवि भुंजंतो ॥ २ ॥

व्याख्या—सर्वेषु अपिन पेषु । कषाय निग्रह समंत पोनास्ति । यत् तेन नागद त्तेन सिद्धि गतो वहु सोपि भोजनं विद धतो ॥

नाग दत्त का ना नाम दूसरा कूर गड्डुक साधुवो निश्चय करके प्रति दिवस तीन दफै भोजन करता था मगर भोजन करते भी केवल कषाय निग्रह के वल सेती केवल रूप श्री पाई यह दृष्टान्त प्रसिद्ध है इस वास्ते यहां पर दिखलाया नहीं अब अपवाद मार्गा श्रित्य अत्रैव विशेषोदर्श्यते श्लोक लिख्यते ॥

—यःशासनोड्डाह निवारणादि । सद्धर्म्म कार्याय
समुद्यतः सन् । तनोति मायां निरवद्यचेताः ॥
प्रोक्तः सचा राधक एवसुज्ञैः ॥ ११ ॥

व्याख्या—जो मुनि जिन शासन संबंधि उड्डाह निवारणादिक सम्यग् धर्म कृत्य कार्य करनेमें समुद्यतवान है तथा निरवद्य अति संक्लिष्ट अध्यवसाय वर्जित निर्दोषहै चित्त जिनों का इस माफिक हो के शासन की हीलणा मिटाने के वास्ते अगर माया प्रतें आचरण करे तो वो मुनी सुज्ञ हैं शोभन ग्यान वंत हैं उस मुनी कूं ज्ञानियों ने आरा धक वतलाया मगर आज्ञा का विराधक नही कहा कारण शासन संबंधि अप भ्राजना निवारण सेती तथा खुद ने अंगीकार करी माया तथा लेश मात्र कषाय तिस की आलोचना दिक करके शुद्धी हो जावै इसी वास्ते सिद्धान्त के विषै नव में गुण स्थान तक संज्वलनी माया का उदय कहा है अत्रार्थे दृष्टांतों यथा एक नगर में कोई महा मिथ्या त्वी राजा राज्य करता था तिस राजा के राणी परम जिन धर्मानु रागिणी थी तिनों में परस्पर अत्यंत अनुरक्त पणा था मगर धर्म चिंता के वारे में हमेंसा विवाद रहता था तव राजा ने विचार किया जो कोई प्रकार करके इस रानी के धर्म गुरू का अनाचार प्रगट करके दिखलाऊं तव या मौन करके रहेगी और इलाज से नहीं रहेगी ऐसा विचार करके एक दिन पाया है उपाव तिस राजा ने सहर के पास चंडिका देवी का मंदिर के पूजारे कूं बुला करके एकान्त में कहा कि जव कोई जैन मुनि चंडिका के

मंदिर में रात्रि में निवास करे तवतूं कोई भी गणिका प्रतें भीतर डाल देना पीछे जल्दी कपाट बंध कर केवा हकीकत मुझ प्रतें कहना तब वो भी राजा की आज्ञा प्रमाण करके अपने ठिकाने जाके कितने दिन बाद तिसी माफिक तिस कार्य प्रतें करके राजा से निवेदन किया तब राजा बोला सबेरे की वक्त में जब आऊं तब तें दर वाजा उघाड़ना तब वो भी राजा का वचन प्रमाण करके अपने ठिकाने गया तिस अवसर में साधुने विचार किया किसी मिथ्यात्वी ने द्वेष बुद्धि धारण करके यह मुझ कूं उपसर्ग करा भया दिखता है अब में भी इस उपसर्ग प्रतें सम्यक् सहन करूंगा लेकिन सवेरे के वक्त यहां लोक आके देखेगा तब लोकूं में मेरे निमित्त का जिन मताप भाजना पैदा हो जावेगी अब तिस कूं निवारण करणें के वास्ते कुछ इलाज करणा चाहिये ऐसा विचार करके जल्दी उत्पन्न भई है बुद्धि तिस करके तिस मुनी ने तिस मंदिर के मध्य भागमें रहा था दीपक तिस करके अपना वस्त्र उप करणादिक समूह प्रतें जलाय करके तिस भस्म करके अपना शरीर लिंपन करा तथा रजो हरण की लकड़ी ग्रहण करके वेश्या बैठी भई थी तिस कोने से मंदिर के दूसरे कोने जा करके निश्चंत होके रहा तब वेश्या तिस साधू का तिस माफिक भयानक स्वरूप देख करके मन में बहुत अत्यंत भयातुर होके मौन करके एकान्त में रही अब सबेरे के वक्त राजा है सो रानी प्रतें साधू का अनाचार दिखलाने की इच्छा है अत्यंत आग्रह करके अपने साथ में ग्रहण करके बहुत नगर में मुख्य जनों के साथमें तहां पर जाकर के पुजारी से कहा कि जल्दी कपाट उघाड़ जैसें माता का दर्शन करें तब तिस पुजारीने राजाके हुक्म सेती दरवाजा उघाड़ा तितने में तो मुनी भी हाथ में लकड़ी ले करके नग्न स्वरूप हो करके जल्दी से अलख२ ऐसा शब्द उच्चारण करता भया तहां से निकल करके सर्व मनुष्योंमें होके और ठिकाने गया तथा तिन के पिछाड़ी वेश्या भी निकली तब राजा तो अपने गुरू का ही दुःस्वरूप देख करके अत्यंत लज्जित होके नीचा मुख करके रहा तब रानी बोली क्या इस में चिंता करते हो मिथ्यात्व के उदय सेती प्राणियों कूं क्या २ विटंबना नहीं होती है तब तो राजा जल्दी से उठ करके अपने ठिकाने आके पुजेरी पर क्रोध करके तिस का स्वरूप पूछा तब वो बोला स्वामी मैंने तो आप के कहने के अनुसार ही काम किया था इस वक्त में फेर विपरीत होगया वो मैं नहि जानता तब राजा तिस वेस्या प्रतें बुलवा करके

तिस का स्वरूप पूछा तब वेश्या ने सर्व हकीकत कह के मुनी के मन का धैर्यपणा वर्णव करा तब राजा तिस वृत्तान्त कों सुन करके रानी के वचन सेती प्रति वोध कूं प्राप्त भया और सम्यक्ती श्रावक होगया तथा मुनी महाराज फेर साधू के वेष लेके कपाय स्थान की आलोचना लेके शुद्ध संयम आराधन करके आखिर में उत्तम गती गया यह शासनो ड्डाह निवारण निमित्त माया विधायिमुनि वृत्तान्त कहा अब क्रम से आया तपका स्वरूप कुछ दिखलाते हैं ॥ तपदोप्रकार का बाह्य । अभ्यंतर । तिसका फेर प्रत्येक का छै २ भेद रहा है तहां पर बाह्य भेद दिखाते हैं ॥

—अण सण मूणो यरिया । वित्ती संखे वणं रसच्चा
ओ ॥ काय किले सो संलीणयाय । बज्झोयतवो
होई ॥ १२ ॥

व्याख्या—तहां पर अनशन आहार का त्याग करणा दो प्रकार का होता है ईत्वर । यावत्कथिक । तहां पर ईत्वर कहते हैं वीर तीर्थ के विषै नमस्कार सहित छव मास तक होता है और प्रथम भगवान के तीर्थ में वर्ष पर्यंत होता है बाकी तीर्थ करों के आठ मास पर्यंत होता है यह ईत्वर दिखाया अब यावत्कथिक कहते हैं यावत्कथिक पादोपग मन ॥ १ ॥ इंगिनी ॥ २ ॥ भक्त परिज्ञा ॥ ३ ॥ भेद करके तीन प्रकार का होता है तहां पर भक्त परिज्ञा के विषै त्रिविध चतुर्विध आहारका प्रत्याख्यान शरीर परि कर्म तो स्वप्रतें भी और दूसरे सेती भी कर वावे ॥ १ ॥ तथा इंगिनी मरण में तो निय मा करके चतुर्विध आहार का त्याग और दूसरे से शरीर शु श्रूषा कराने का त्याग आप इंगित देश में उद्वर्त्त नादि गोया मर्द ना दिक शु श्रूषा तो करे ॥ २ ॥ तथा पादप उप गमन के विषै तो अपना शरीर तथा अंगो पांग सम विषम देश में जैसे पड़ा है तिसी तरह से धारण करके निश्चल हो के रहै ॥ तथा ऊनो दरी बत्तीस कवैका आहार होता है उस में कमती करणा सो दिखाते हैं ॥

—बत्तीसं किर कवला । आहारो कुच्छिपूर ओ भणि
ओ ॥ पुरिसस्स महि लियाए । अट्ठा वीसं भवे
कवला ॥ १ ॥

व्याख्या—इस माफिक अपने आहार का प्रमाण है संक्षेप रूप जानना तथा वृत्ति भिक्षा चर्या का शंक्षेप याने कमती करना द्रव्य क्षेत्रादि अभिग्रह विशेष करके संकोचन करना उस कूं वृत्ति संक्षेप कहते हैं तथा रस दही दूध कों आदि लेके तिस का परिहा करणा उस कूं रस त्याग कहते हैं तथा काया करके आसण बांध के बैठना तथा लोचा दिक कष्ट करणा तिस कूं काय क्लेश कहते हैं तथा संलीनता गुप्तता याने गोपन करणा॥ इन्द्री । १ । कषाय । २ । योग । ३ । रोकना । ४ । इस तप कूं करने से लोक भी याने कुछ कुतीर्थि भी करा करते हैं ॥ इति बाह्यतप ॥ १ ॥ अब अभ्यंतर तप कहते हैं ॥

—पायच्छित्तं विणओ । वेयावच्चं तहे वसज्झाओ ॥
झाणं उस्स ग्गो विय । अभ्भिंतरओ तवो होइ ॥ १३ ॥

व्याख्या—तहां पर प्राय श्चित्त दश प्रकार का दिखलाते हैं ॥

—आलोयण । १ । पडि क्कमणे । २ । मीस । ३ ।
विवेगे । ४ । तहा विउसग्गे । ५ । तव । ६ ।
छेय । ७ । मूल । ८ । अण वट्ठ पाय । ९ ।
पारंचियं । १० । चेव । १ ।

व्याख्या—तहां पर आलोचना गुरु के आगूं अपने दुष्कृत कर्मों का प्रकाश करणा तथा प्रति क्रमण याने दोष सेती निवर्त्तन होना फेर करणा नहीं मिथ्या दुष्कृत का देना तथा शुद्धि के वास्ते आलोचना और प्रति क्रमण दौनूं करणा उनकूं मिश्र कहते हैं तथा जो नहीं ग्रहण करने लायक आधा कर्मादिक आहार ग्रहण करने कूं आदि लेके त्याग करणा तथा ग्रहण कर लिया हो तो उस को त्याग करना तब ही शुद्धि होती है और प्रकार करके नहीं तिस शुद्धि के वास्ते जो आहारादिक का परि त्याग करना उस कूं विवेक कहते हैं तथा व्युत्सर्ग याने काउसग्ग खराब स्वप्न से उत्पन्न भया जो दोष तिस की शुद्धि के वास्ते दोनूं बातें हैं याने प्रथम तो काउसग्ग ध्यान है तथा दूसरा काय चेष्टा का निरोध ॥ ५ ॥ तथा तप पेश्तर बतलाया उस उपाय करके अगर शुद्धि न होवे तो दुष्कृत शुद्धि के वास्ते यथा योग्य विवेकस हित छव मास तक तप करे ॥ ६ ॥ तथा

कोई महा दोष उत्पन्न होने सेती निरव शेष पर्याय का च्छेद करके फेर महा व्रत आरोपण करणा उस कूं मूल कहते हैं ॥ ७ ॥ तथा च्छेद शेष चारित्र पर्याय की रक्षा निमित्त संदूषित पूर्व पर्याय च्छेदन करना तिस कूं च्छेद कहते हैं ॥ ८ ॥ तथा क्रोध के उदय सेती प्रति से वित दुष्कृत शुद्धि के वास्ते यथोक्त तप जब तक नहीं करैं तितने व्रतों के विषै लिंग करके स्थापन नहीं करना उसकूं अनव स्थानता कहते हैं ॥ ९ ॥ तथा मुनि की घात तथा राज वधादिक महा अकृत्य सेवन करने सेभी लिंग। क्षेत्र। काल तपस्या करके पार पर्यंत जावै उस कूं पारां चित कहते हैं यह मार्ग अव्यक्त लिंग धारी जिन कल्पिक प्रति रूपक क्षेत्र के बाहिर रह के सुविपुल तप करने वाले आचार्य महाराज की परें जघन्य करके छव मास और उत्कृष्ट करके बारे वरष तक होता है तब अती चार पार गमन भये बाद दीक्षा वड़ी देवे अन्यथा नहीं ॥ १० ॥ इन दश प्रायश्चित्त में अंत के दोय प्रायश्चित्त प्रथम संघयणी और चौदेपूर्व धारी तक होता है तिस बाद दुः प्रभसूरितक आठ प्रकार का प्रायश्चित्त जानना यह प्रायश्चित दिखलाया ॥

अब विनय ज्ञानादिक भेद करके सात प्रकार का है सो दिख लाते हैं तहां परज्ञान दर्शन और चारित्र का विनय ज्ञानादिक भक्ति वगैरे करने रूप ॥ ३ ॥ तथा मन वचन काया करके विनय करना आचार्यादिक वड़े पुरषों का तथा सर्व काल में अकुशल मन वचन काया के योग कूं निरोध करणा तथा कुशल के करने वाले याने उत्तम मन वचन काया का एकाग्रता होना उस की उदीरणा करणा ॥ ६ ॥ तथा औप चारिक विनय जो है गुर्वादिक वड़े है उन के अनुकूल चलना इत्यादि प्रवृत्ति रूप ॥ ७ ॥ यह सात प्रकार का विनय मुनी महाराज ने हमेशा अंगीकार करणा चाहिये ॥ २ ॥ तथा वेयावच्च आचार्यादिक वड़े पुरषों की करणा अन्न पानादिक वगैरे की विधी में कायम रहके भक्ति साचवै ॥ ३ ॥ तथा शोभायमान मर्यादा सहित अकाल वक्त छोड़ करके पोरषी की अपेक्षा करके वा अध्यायका अध्ययन करना उनका नाम स्वाध्यायहै वो पांच प्रकार का है। वाचना। १। पृच्छना। २। परावर्त्तना। ३। अनुप्रेक्षा। ४। धर्म कथा। ५। भेद करके तहां पर नहीं अध्ययन करा ऐसा सूत्र शास्त्रोक्त विधी करके गुरू मुख सेती ग्रहण करणा उसकूं वाचना कहते हैं ॥ १ ॥ तहां पर सन्देह होने सेती पूछना ॥ २ ॥ तथा पूछ कर करके निश्चय करा उसकूं याद करना उसकूं परा वर्त्तना कहते हैं ॥ ३ ॥

तथा सूत्र की तरह से अर्थ का चिंतवन करणा उसकूं अनुप्रेक्षा कहते हैं ॥ ४ ॥ तथा अभ्यास कर चुका सूत्र अर्थ दोनूं का और दूसरे कूं उपदेश देना उस कूं धर्म कथा कहते हैं ॥ ५ ॥

अब यहां पर सूत्र दो प्रकार का दिखलाते हैं एक तो अंग प्रविष्ट । १ । और दूसरा अनंग प्रविष्ट । २ । प्रथम अंग प्रविष्ट बतलाते हैं तहां पर ॥

—पायदुग ॥ २ ॥ जंघो ॥ ४ ॥ रू ॥ ५ ॥ गायदुग
द्धंतु ॥ ८ ॥ दोय वाहू आ ॥ १० ॥ गीवा ॥ ११ ॥
सिरंच ॥ १२ ॥ पुरिसो ॥ वारस अंगो सुअवि
सिट्ठो ॥ १ ॥

व्याख्या—इस माफिक प्रवचन रूप पुरषके अंगमें रहा वो अंग प्रविष्ट वारे प्रकार का रहा है सो दिखलाते है । प्रवचन पुरष के पांव दो आचारांग १ सूत्र कृतांग ॥ २ ॥ तथा जांघ ॥ २ ॥ स्थानांग ॥ ३ ॥ समवायांग ॥ ४ ॥ तथा छाती के दोनूं तरफ वक्ष स्थल दो उस कूं उरु दो कोण से २ विवाह पन्नती ॥ १ ॥ ज्ञाता धर्म कथा ॥ २ ॥ तथा गात्र दो पृष्ट भाग का और उदर रूप यह दो कौन से हैं ॥ उपासक दशा ॥ १ ॥ अंत कृदशा ॥ २ ॥ वाहु दोय वे दोय कोन से हैं । अनुत्तरोप पातिक दशा । और प्रश्न व्याकरण ॥ २ ॥ यह दोय । तथा ग्रीवा के तुल्य विपाक श्रुत ॥ ११ ॥ तथा दृष्टि वाद ॥ १२ ॥ शिर की जगें जानना यह अंग प्रविष्ट सूत्र बतलाया अब अंग वाहिर सूत्र वतलाते हैं ॥ आवश्य को पांग प्रकीर्णादिक भेद करके अनेक भेद जानना अब कहते हैं कि दीक्षा ग्रहण करे बाद जितने वरष में जिस सूत्र की वाचना ग्रहण करणा तिसका स्वरूप व्यवहार भाष्य कर के दिखलाते हैं सो गाथा इस माफिक लिखते हैं ॥

गाथा—काल कमेण पत्तं । शंवच्छर माइणा उजंजंमि ॥
तंतंमि चेव धीरो । वाएज्जा सोय कालोय ॥ १४ ॥

व्याख्या—काल क्रम करके प्राप्त भया संवत्सर कूं आदि लेके तिस २ वरष में धैर्य वान मुनी वाचै वो काल जानना चाहिए ॥ १४ ॥

—तिवरस्सपरियागस्सउ । आयार पकप्प नाम मज्झ यणं ॥ चउ वरिसस्सयसम्मं । सूयगडं नाम अंगंति ॥ १५ ॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद तीन वरस जाने से आचार प्रकल्प नाम अध्ययन करणा तथा चार वरष बाद अच्छी तरह से सूत्र कृतांग अध्ययन करना ॥ १५ ॥ अब यहां पर कहते हैं कि आचार प्रकल्पक नाम निशीथ अध्ययन का है तथा फेर भी लिखते हैं ॥

—दस कप्प।व्ववहारा। संवच्छर पण गदिक्खियस्सेव ॥ ठाणं समवाओ त्तिय। अंगंते अट्ठवासस्स ॥१६॥

व्याख्या—दशा कल्प व्यवहार तीन प्रकार का है सो दीक्षा लिये बाद पांच वरष जाने से अध्ययन करना कहा ॥

—तथा ठाणांग। १। समवायांग। २।

आठ वरष गये बाद अध्ययन करना चाहिये ॥

—दस वासस्स विवाह। इक्क रस वासियस्स इमोओ ॥ खुड्डिय विमाण माई॥ अज्झयणा पंच नायव्वा ॥ १७ ॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद दस बरस गये बाद विवाह प्रज्ञप्ति अध्ययन करना तथा इग्यारे वरषगयेबाद खुड्डियविमाणकूं आदिलेके पांच अध्ययनका अध्ययन करणा ॥१७॥

—बारस वासस्स तहा। अरुणववायाइंपंचअज्झयणा ॥ तेरस वासस्स तहा। उट्ठाण सुयाइया चउरो॥ १८ ॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद बारे वरष जावे तब अरुणोप पातिक पांच अध्ययन का अध्ययन करणा तथा तेरे वरष गये बाद उच्छानश्रुत चारका अध्ययन करणा ॥१८॥

—चउदस वरिसस्स तहा। आसि विस भावणं जिणा
विंति॥ पन्नरस वासिगस्सय। दिट्ठिविसि भावणं
तहय॥ १६॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद चौदे वरष बाद आशीविष भावणाका अध्ययन करणा जिन कहते हैं तथा पनरे बरष गये बाद दृष्टी विष भावना का अध्ययन करना॥ १६॥

—सोलस वासाई सुय। एगोत्तर बुढ्ढिए सुजह संखं॥
चारण भावण महसुविण। भावणा तेयगनिसग्गा॥ २०॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद सोले वरस कूं आदि लेएकेक वरस बढ़ाते जाना याने सोले वरस से चारण भावणा। महा सुमर्णि भावणा तथा तेयं गनिसग्ग भावना का अध्ययन करना॥ २०॥

—एगुण बीसगस्सय। दिट्ठी वाओ दुवालसम मंगं॥
संपुन्न बीस बरसो। मणु वाई सव्वसुत्तस्स॥ २१॥

व्याख्या—दीक्षा लिये बाद उगणीस वरस गये बाद दृष्टि वाद बारमा अंग पढ़ै तथा सम्पूर्ण बीस वरस गये बाद तो समग्र अध्यन करने का हुकम है॥ २१॥ तथा फेर भी विशेषता दिखलाते हैं॥ व्याविद्धत्व विपरीत पणा नहीं। १। व्युत्याम्रेड़ितत्वात् अन्योन्य आलावा मिलाना नहीं। २। तथा हीनाक्षरता नहीं करणा। ३। तथा अति अक्षरता नहीं करे। ४। तथा पद हीनता नहीं करे॥ ५॥ तथा विनय हीनता नहीं करे। ६। तथा उदात्तादि सद्घोष हीन नहीं करे। ७। तथा योग हीनपणा नहीं करे। ८। तथा अकृत योग उपचारता तथा सुष्टुदान अल्प श्रुत के लायक पात्र है मगर गुरु महाराज अधिक देवे तो अतीचार। ६। तथा दुष्टु की वांछा कलुष हृदय करके ग्रहण करके करावे तो अतीचार।१०। तथा अकालमें स्वाध्याय करे तो अतीचार।११। नहीं है स्वाध्याय की टैम उस में स्वाध्याय करे तो अतीचार। १२। तथा काल में नहीं करे तो अतीचार।१३। तथा स्वाध्याय होजाने से नहीं स्वाध्याय करे तो अतीचार।१४।

का प्राणियों कूं मारणा शस्त्रादि करके बंधन करणा रज्वादि करके तथा दहन करणा अग्न्यादि करके तथा अंकन याने दांभ लगाना मारणादि चिंतन करना । १ । तथा पैशुन्यता पणा याने चुगली पणा तथा असभ्य बचन याने विगर विचारा वचन तथा असत्य वचन तथा घातादिक वचन विचारणा । २ । तथा तीव्र कोप लोभाकुल माएयुप घात तत्पर परलोक भय निरपेक्ष पर द्रव्य अपहरण चिंतवन करना । ३ । तथा सर्व से संकाता रहे तथा पर घात में उत्कृष्ट विषय सुखका साधक द्रव्यकी रक्षा करना इत्यादिक विचारना । ४ । यह ध्यान कैसा है प्राणी वधादि लखण लक्ष्य नरकगती में जाने का कारण जानना इस ध्यान का संभव तो पंचम गुण स्थान् वर्त्ति तक जानना कितने आचार्य छट्ठे गुण स्थान तक कहते है तथा धर्म क्षमा कूं आदि लेके दस प्रकार का जानना तिस धर्म के चार भेद हैं । आज्ञा विचय । १ । अपाय विचय । २ । विपाक विचय । ३ । संस्थान विचय । ४ । भेद करके चार प्रकार का जानना तहां पर आदि में श्रीमान् सर्वज्ञ पुरषों की आज्ञा का चिंतवन करना । १ । तथा राग द्वेष कषाय इन्द्रिय वगैरे के वश वर्त्ति जीव रहा है इस माफिक संसारीक अपाय चिंतवन करना । २ । तथा ज्ञाना वरणी आदि लेके शुभाशुभ कर्म का विपाक स्मरण करणा । ३ । तथा भू वलय द्वीप समुद्र आदि लेके वस्तुवों का संस्थानादिक धर्मा लोच नात्मक । ४ । यह ध्यान जिनोक्त तत्व श्रद्धानादि चिन्ह गम्य देव गत्पादिक फल का साधक जानना इस का संभव तो चतुर्थ सें पंचम सें लेके सप्तम अष्टम गुण स्थान तक जानना तथा शोधन करें अष्ट प्रकार कर्म मल प्रतें उस कूं शुक्ल कहते हैं अब उसके चार भेद दिखलाते हैं पृथक् त्ववितर्कसम विचार । १ । एकत्व वितर्कऽप्रवीचार । २ । सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाती । ३ । समुच्छिन्न क्रिया अनिवृत्ति । ४ । भेद करके चार प्रकार का जाणना ॥

व्याख्या—जिस ध्यान में भाव श्रुतानुसार करके अंतरंग ध्वनि रूप विचार अर्थ से दूसरा अर्थ विचार करणा उसकूं अर्थांतर कहते हैं ॥ तथा एक शब्द सेती दूसरा शब्द भया उसकूं शब्दांतर कहते हैं तथा एक योग में दूसरे योग में मन का संक्रमण होना उसकूं योगांतर कहते हैं तथा फेर अपना शुद्ध आत्म द्रव्य है उसकूं दूसरे द्रव्य में लेजाना उसकूं द्रव्यान्तर कहते हैं तथा एक गुणसे दूसरे गुण में जाना उसकूं गुणान्तर कहते हैं तथा एक पर्याय से दूसरे पर्याय में जाना उसकूं पर्यायान्तर कहते हैं यह प्रथम

ध्यान का पाया याने शुक्ल ध्यान का प्रथम पाया यह कहां तक पाता है आठ में गुण स्थान से लेके इग्यारे तक होता है ॥ १ ॥ तथा जो फेर निश्चल एक द्रव्य और एक पर्याय एक गुण शब्द से शब्दांतर रहित भाव श्रुत का अवलंबन करके विचार करना यह दूसरा पाया यह पाया वार में गुण स्थान के विषै होता है तथा तेरमें तो ध्यानंतरिका होवे । २ । तथा जहां पर केवली भगवान अचिंत्य आत्म शक्ति करके वादर काय योग के विषै स्वभाव सेती स्थिति करके वादर बचन तथा मनो योग दोनूं कूं सूक्ष्म करे तथा सूक्ष्म वचन मन की स्थिति करके वादर काय योग प्रतें सूक्ष्म पणें प्रप्त करे फेर सूक्ष्म काय योग के विषै फेर क्षण मात्र स्थिति करके जल्दी से सूक्ष्म वचन चित्त का सर्वथा निग्रह करे तव फेर सूक्ष्म काय योग में स्थिति करके सूक्ष्म क्रिया चिद्रूप अपनी आतमा प्रतें स्वेच्छा पूर्वक भोग वै यह तीसरा । ३ । यह तेरे में गुण स्थान के अंत तक होता है । ३ । तथा तहां पर सूक्ष्म क्रिया का समुच्छेद होता है वो चौथा पाया है यह पावै तो चौदमें गुण स्थान में जरूर होता है तव जीव मोक्ष जाता है । ४ । यह ध्यान वाधा रहित लिंगा दिक में मोह करे नहीं तव मोक्ष फल का साधक जानना चाहिये यह धर्म १ और शुक्लध्यान दोनों निर्जरा का कारण है इस वास्ते इन कूं अभ्यंतर में माना है तथा आर्त्त १ और रौद्र । २ । यह दोनो कर्म वंधका कारण जानना इस वास्ते सुदृष्टियों के त्याग करने योग है अगर त्याग नहीं करे तो नंदन मणि यारे की तरह से वा कंडरीक जी की तरह सें महा दुक्ख की प्राप्ति होती है तथा फेर चित्त की चंचलता सेती खोठा ध्यान आभी जावे तो भी धीरे २ प्रसन्न चन्द राज रिषी की तरह से तिसकूं दूर करने का इलाज करणा और वल वीर्य फोरणा तथा सत् ध्यान के विषै अन्वय व्यव च्छेद करके अभ्यास करना । ५ । तथा उत्सर्ग त्याग करने योग्य वस्तु उस का परि त्याग दो प्रकार का होता है ॥ वाह्य । अभ्यंतर । तहां पर वाह्य वतलाते हैं गण समुदाय तथा शरीर उपधि आहार इनका त्याग करना चाहिये तथा दूसरा अभ्यंतर क्रोधादि कषाय त्याग । अब यहां पर सत् । और । आनंद । तथा सत् । चित् । आनंद अभि धानाख्य शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज उत्सर्ग कूं तो पेस्तर प्रायश्चित के अंदर कह दिया था फेर कहने से क्या जरूरी है तव गुरू महाराज गणाव च्छेद कादि कजोदय कहते हैं कि हे शिष्य प्रश्न ठीक है परन्तु

तथा इन अतिचारों का स्वरूप विशेष सेती आवस्यादिक ग्रन्थों में कहा है वहां से जान लेना तथा इन अतीचारों को त्याग करके स्वाध्याय मुनी करते हैं उन को महा लाभ पैदा होता है अगर नहीं करे तो विद्याधर की तरह से विद्या निष्फल को आदि लेके महा दोष उत्पन्न होने का संभव होता है तहां हीना चरत्वदोष पणें में विद्याधर का दृष्टान्त कहते हैं एक दिन के वक्त में राज गृही नगरी के पास के उद्यान में श्री महावीर स्वामी समवसरे तब स्वामी के आने की वार्त्ता सुन करके खुश होके श्रेणिक राजा अभय कुमारादि सहित तहां आकरके तीन प्रदक्षिणा देके नमस्कार करके तहां पर प्रधान सुर असुर विद्याधर मनुष्य समुदाय करके विराजमान सभा के विषै अपने योग्य स्थान में बैठा तब धर्म सुन करके पर्षदा के लोक चले गये तब एक कोई विद्याधर आकाश में जाने के वास्ते उड़ने लगे तब फेर पड़ जावे जमीन पर तब श्रेणिक राजा तिस का यह स्वरूप देख करके विस्मय होके स्वामी प्रतें तिसके उड़ने और गिरने का कारण पूछा तब स्वामी बोले इस के आकाश गामिनी विद्या मांय से एक अक्षर भ्रष्ट हो गया है तिस वास्ते यह ऊंचा जाणें कूं समर्थ नहीं है तब राजा के पास बैठा था अभय कुमार ने जिनराज का ऐसा वचन सुन करके जल्दी तहां जा करके विद्याधर प्रतें ऐसा कहा भो तेरी विद्या मांह से एक अक्षर भ्रष्ट हो गया है वो मैं तुझ कूं देऊं जो मुझ प्रतें इस विद्या कूं देवे तो तब तिस ने भी प्रमाण करके अभय कुमार हीन अक्षर था सो उस कूं देके विद्या सिद्ध कराई तब विद्याधर ने भी तिस विद्या प्रतें अभय कुमार कूं दीवी विद्या लेके अपने घर आया विद्याधर भी पूर्ण विद्यावान् होके आकाशमें उड़ा क्रम करके अपने ठिकाने गया इस लेश मात्र दृष्टान्त प्रतें सुन करके मुनी को भी प्रागुक्त दोष त्याग करने में यत्न करना इति हीनाक्षरे विद्याधर दृष्टान्तः तथा स्वाध्याय करने कराने वाले मुनियों को प्रथम सोले वचन अवश्य जानना सोई अनुयोग द्वारादि सूत्रोक्तानि अमूनि। लिंग तियं। ३। वयण तियं। ३। कालतियं। ३। तहय परोक्ख।१०। पच्चक्खं।११। उवणा यं वणयं चउक्कं।१५। अभ्भत्थं।१६। चेवसोल समं॥२३॥

व्याख्या— ईयंस्त्री।१। अयंपुमान्।२। इदं कुलं।३। यह तीन स्त्री।१। पुरुष।२। नपुंसक लिंग।३। यह तीन लिंग जानना तथा। देवः।१। देवौ।२। देवाः।३। एक वचन।१। द्विवचन।२। बहु वचन।३। यह प्रधान वचन जानना

तथा अकरोत् । १ । यह काम करता भया । १ । करोति । २ । नाम करता है । २ । करीष्यति । आगूं करेगा । ३ । इत्यादिक अतीत । १ । अनागत । २ । वर्तमान । ३ । यह तीन काल जानना तथा स ऐसा परोक्ष वचन तथा अयंइति प्रत्यक्ष वचनं । तथा उपनय अपनय वचन चार प्रकार का है तहां पर उपनय वचन प्रसंशा वचन जैसे रूप वती या स्त्री है तथा अपनय वचन निंदा वचन कुरूपा या स्त्री है तथा उपनय अपनय वचन प्रशंषा करके निंदा करणा जैसे रूपवती या स्त्री है परन्तु दुशीला है तथा अपनय उपनय वचन । निंदा करके प्रसंशा करे जैसे या कुरूपा है परन्तु सुशीला है तथा चित्त में कुछ और विचारा है परन्तु ठगने की बुद्धि करके जो कुछ कहने की इच्छा है परन्तु सहसात्करके जो चित्त में था वो वात कह देना तिस कूं अध्यात्म वचन सोलमा कहते हैं जो पुरष इन सोले वचनों का अज्ञात है और सूत्र वाचनें में प्रवर्त्तन होता है वै मूर्ख जिन वचन उल्लंघन करने वाले जिनाज्ञा के विराधक परन्तु आराधक नहीं इस वास्ते सु साधुवों कूं इसके ज्ञान पूर्वक पाग्रुक्त विधि करके सूत्रार्थ स्वाध्याय करना । ४ । तथा ध्यानं । अंतर्मुहुर्त मात्र काल एकाग्र चित्त अध्यवसाव रखना उस कूं ध्यान कहते हैं तिस का चार भेद है । आर्त्त । १ । रौद्र । २ । धर्म । ३ । शुक्ल । ४ । भेद सेती तहां पर रित याने दुःख से पीड़ित प्राणियों का मन होना तिस कूं आर्त्त कहते हैं तथा इष्ट वियोग । १ । अनिष्ट संयोग । २ । रोग चिंता । ३ । अग्र शोच विषय । ४ । तहां पर इष्ट शव्द रूप रस, गंध स्पर्श लक्षण विषयोंका वियोग कभी भी मुझे मत हुवो इत्यादिक चिंतन इष्ट वियोग विषय । १ । तथा अनिष्ट शव्दादिक विषय के संयोग की अप्रार्थना वो अनिष्ट संयोग विषय । २ । तथा रोग की उत्पत्ति होने से वहुत चिंता करणा उस कूं रोग चिंता विषय कहते हैं । ३ । तथा देवपणा चक्रवर्त्ति पणें की रिद्धि की प्रार्थनादिक अनागत काल विषयिक कार्य शोचना उसकूं अग्र शोच विषय कहते हैं । ४ । यह ध्यान तो शोक आक्रंदन स्वदेह ताड़नादि लक्षण लक्ष्य तीर्यंचगती जाने का कारण जानना इस ध्यान का होना छट्ठे गुण स्थान तक जानना तथा रुलावै दुर्वल प्राणी प्रतें उस कूं रौद्र कहवे हैं तथा प्राणी प्रतें मारणें की आत्मा में परणति पैदा होना तिसका यह कर्म उसकूं रौद्र कहते हैं तिस रौद्र का चार भेद है हिंसानु वंधि । १ । मृषानु वंधि । २ । चौर्यानु वंधि । ३ । परिग्रह रक्षणानुवंधि । ४ । अव इसके प्रत्येक भेद वतलाते हैं तहां पर आदी

कहते हैं मुनी महाराज द्रव्यादिक चार के विषै ममत्व धारण नहीं करे। तहां पर द्रव्य संती तो उपध्यादिक में। तथा श्रावकादिक में। तथा क्षेत्र करके ग्राम नगरादिक में। मनोज्ञ धर्म शाला में। तथा काल करके सरद रितू आदिक वा दिव सादिक तथा भाव करके शरीर पुष्टि वगैरे तथा क्रोधादिक। ५। तथा पांच महा व्रत के उपयोगी छट्ठा रात्रि भोजन निवृत रूप व्रतपणें मुनियों कूं अवश्य धारण करना चाहिये। रात्रि भोजन की चोभंगी दिखलाते हैं तथा दिन कूं ग्रहण करा और दिन कूं भोजन करना। १। दिन कूं ग्रहण करा और रात्रि कूं भोजन करे। २। तथा रात कूं ग्रहण करा दिनकूं भोजन करा। ३। तथा रात कूं ग्रहण करा और रात कूं भोजन करना। ४। यह चार प्रकार का रात्रि भोजन पंच महा व्रतधारी का व्रत में घात करने वाला है तथा स्वमत और परमत उन के विषै निषेध किया है तथा रात्रि भोजन में प्रत्यक्ष दूषण रहा है कुंथ्वादिक सूक्ष्म जीव का नाश होता है इस वास्ते व्रतियोंकूं अवश्य त्याग करना चाहिये यह पांच महाव्रत पालने का स्वरूप कहा। अब पंच इन्द्रिय रोधका स्वरूप दिखलाते हैं। इन पांच महा व्रत पालने की इच्छा करने वाले मुनी कूं शब्द रूप रस गंध स्पर्श लक्षण वालूं कूं पांच इन्द्रियों कूं वश करना चाहिये सोई दिखलाते हैं प्रथम शुस्वर में मुरज वेणु बीणा।वनितादिस का स्वर शुभ जानना। तथा काक करभ ऊंठ घूक राशभ गद्धा वगैरे के अशुभ शब्द है उस कूं सुन करके द्वेष नहीं करे। १। तथा अलंकार सहित गज घोड़ा स्त्री कूं आदि लेके तथा कुबड़ा कोढ़ी वृद्ध मृतक याने मुरदादिक का अशुभ रूप देख करके द्वेष नहीं करना। २। तथा चन्दन कपूर अगर कस्तूरी वगैरे की सुगंध शुभ है तथा मल मूत्र मुरदा तथा कालाव्रणादिक की गंध अशुभ गंध लेके द्वेष नहीं करे।३। तथा मत्स्पंडी शर्कर मोदक वगैरे शुभ है तथा रूक्षपर्यूषित अन्नक्षार जल इनोंको अशुभ रश का स्वाद ले करके द्वेष नहीं करे। ४। तथा स्त्री तूलिक जाती की रूई दुकूल वस्त्रादिक यह शुभ फर्श वाले हैं तथा पाषाण कांटा कांकरे इनका अशुभ फर्श है। ५। यह मुझ कूं अच्छा लगता है यहां तो राग भया तथा मुझ कूं यह खराब लगता है यह द्वेष मुनी राग द्वेष नहीं करे तब क्रम करके श्रोत्रादिक इन्द्रियका निग्रह याने वश होवे जब फेर कोई साधूके पूर्व भोगे भये भोग याद आजावे तथा और कुछ कौतूहल करके इन्द्रियें मदोन्मत्त होजावे तब तिस साधू ने इस माफिक अपनी आत्मा मतें वश करने में उद्यम करना

सोदिखलाते हैं ॥

—परिमिया माउजुव्वण ।मसंठियं वाहि वाहियं देहं ॥
परिणइ विरसा विसया । अणुरच्चसि तेसुकिं
जीवा ॥ १ ॥

व्याख्या—परिमित मायू यौवन असंस्थितं व्याधि व्याधितंदेहं । परिणति विषा विषया अनुरक्त सितेषु किं जीव ॥ १ ॥ इत्यादिक तथा जो साधू इन्द्रयों को वश नहीं करेगा वो मदोन्मत्त घोड़े की तरह से अपनी इच्छा माफिक गमन करे वो इस भव में और परभव में बड़े दुक्ख का भाजन होवे अब यहां पर अन्वय व्यतिरेक करके ज्ञाता धर्म कथा में कहा है दो काछवें का दृष्टान्त दिखलाते हैं जैसे । वाराण सी नगरी के विषै गंगा नदी के मृदंग तीरद्रह में गुप्त इद्रिन्य । और अगुप्त इद्रिन्यां ऐसे दो काछवे रहते थे वो दोनों एक रोज जमीन पर चलने वाले कीड़ा वगैर मांस के अर्थि होके द्रह से बाहिर निकले दुष्ट स्यालीयों ने देखा । तब काछवे डरे अपनी चार पांव की ग्रीवा याने नशकूं करोटी के भीतर गोप करके चेष्टा करके निर्जीव की तरह से रहे तब स्यालियों ने बारम्बार ऊंचा उठावै नीचा गिरावै पांव का घात देवे इत्यादि करके कुछ भी विरूपता करने कूं समर्थ नहीं भया कुछ दूर जाके एकान्त में रहा तब अगुप्त इन्द्रि वाला काछवा चपलाई करके अपना पांव और नश वाहिर निकाला तितने में तो जल्दी से उस स्याल ने टुकड़े २ कर डाले मरण प्राप्त भया तथा दूसरा अचपल काछवा था बहुत काल तक तिसी तरह से रहा जब वे दोनों स्याल बहुत वक्त तक रह के खेदातुर होके और ठिकाने चला गया तब वो काछवा धीरे २ दिशा अवलोकन करके कूद करके जल्दी से द्रह में चला गया सुखी भया इस माफिक पंचांग गोपन करने वाला काछवै की परें पांच इन्द्रिय गुप्त करणा जिस से भव्यात्मा सदा सुखी होवे। तथा दूसरा काछवा दुखी भया इसी तरह से और भी दुखी होगा इस वास्ते मुनी यूं कूं पांच इन्द्रि जीतने में यत्न करना चाहिये । इति इद्रिय जीतने ऊपर दो काछवै का दृष्टान्त दिखलाया ॥ इस माफिक इन्द्रिय जीतने से संयम होता है ॥ अब कषाय जीत ने का स्वरूप दिखलाते हैं ॥ तथा पांच इंद्रियों कूं जीतने वाले साधू कूं क्रोधादिक चार कषायों कूं उदय में नहीं आया

पेश्तर अतीचार शुद्धि के वास्ते दिख लाया था यहां पर तो सामान्य सेती निर्जरा के वास्ते दिखलाया इस वास्ते पुन रुक्ति नहीं। ६। इस माफिक छव प्रकार का कुनीर्थिक अनभि लक्षित अभ्भंतर तप दिखलाया इतने करके तपका स्वरूप पूर्ण भया।५। अव अनु क्रमा वसरा यात संयम का स्वरूप कुछ दिखलाते है संसामस्त्य प्रकार २ कर के यमनं सावद्य योग सेती दूर होना उस कूं संयम कहते हैं उसका भेद सतरे प्रकार से दिखलाते है॥

—पंचाश्रवा द्विरमणं। पंचेंद्रिय निग्रहः कषाय जयः॥ दंड़ त्रय विरति श्चेति। संयमः सप्त दश भेदः॥ २४॥

व्याख्या—पांच आश्रव प्राणाति पातादि लक्षण तिस सें दूर होना याने पांच महा व्रत धारण करणा अव तिंन व्रतों का स्वरूप दिखलाते हैं साधु महाराज त्रश और थावर सर्व जीव प्रतें मन वचन काया करके आप हणें नहीं। १। । १। तथा दूसरे से हणवावे नहीं। २। और जो हणता हो उस कूं अच्छा समझै नहीं याने जींव मारने की आज्ञा भी नहीं देवे। ३। तीन करण तीन जोग सें नव भांगा है। १। तथा राग द्वेप क्रोध मान माया लोभ हास्य भय कलह वगेरे करके प्राणांत हो जावे तोभी मृषा वाद नहीं वोले। मृषा वाद का चार भेद है सो दिखलाते है। सद्भा वनिपेध।१। असद्भावन।२। मर्थंतरा भिधानं।३। गर्हा वचन।४। तहां पर प्रथम सद्भूत निषेध कहते हैं। यह आत्मा नहीं है ऐसा कहे तो सद्भाव निपेध कहते हैं।१। अव दूसरा असद्भाव उद्भाव कहते हैं। श्यामाक तंदुल मात्र ललाटस्थो। आत्मा श्यामाक जाती का चावल वरोवर है फेर ललाट पर रहा है, ऐसा कहे, तो असद्भावोद्भावन कहना चाहिये। २। तथा तीसरा अर्थंतरा भिधान कहते है। गवादिक कूं अश्वादि कहणा। ३। तथा चौथा गर्हा वचन। ४। तथा कानेको कानाकहेतो गर्हा वचन कहते हैं। इत्यादिक। तथा साधू उप योग सहित हो के त्रिविध २ भांगे करके प्रत्याख्यान करते हैं इस वास्ते चार प्रकार। का अदत्तान दिखलाते हैं तिस में। जीव अदत्त तथा तीर्थं कर अदत्त स्वामी अदत्त तथा गुरु अदत्त किंचितमात्र भी ग्रहण करे नहीं।

तहां पर जीव अदत्त सचित्त कहते हैं तथा स्वविनास शंकित होके अपने शरीरकूं अर्प्पण करे और ग्रहण करने वाले कूं जीव अदत्त का दूषण लगता है वा वल करके दीक्षा देवे तो शिष्य भी जीव अदत्त होगया । १ । तथा अचित्त वस्तु ग्रहण करने की तीर्थं करों ने आज्ञादी नहीं सुवर्णादिक वस्तु ग्रहण करे तो तीर्थं कर अदत्त कहना चाहिये ।२। तथा तीर्थं करों ने आज्ञा दी है परन्तु वस्त्र असनादिक वस्तु स्वामी ने नहीं दी मगर ग्रहण करे तो स्वामी अदत्तादान कहना ।३। तथा स्वामी याने मालिकने आज्ञाभीदी मगर गुरु ने मना कर दिया भो मुनी यह वस्तु ग्रहण करना नहीं तिसकूं लोभादि वस सेती ग्रहण करे तो गुरु अदत्त जानना तथा गुर महाराज की आज्ञा विगर आहारादि करे तो उस कूं गुरु अदत्त कहते हैं ।४। तथा साधू अट्ठारे प्रकारका मैथुन सेवै नहीं तहां पर ऊदांदिक शरीर विषय मैथुन मन करके सेवै नहीं ॥ सेवावै नहीं ।२। तथा सेवतें कूं भला समझै नहीं । ३ । सर्व नव भेद होता है इस माफिक औदारिक करके नव भेद भया इस तरह से वैक्रिय करके भी नव भेद समझना । एवं सर्व अट्ठारे भेद होता है । ४ । तथा साधु महाराज संयम के उपकार करने की उपधि सिवाय और सर्व परिग्रह का त्रिविध २ भांगें करके परित्याग करे तथा संयम की उपकारिक उपधि दो प्रकार की जानना जिस में एक तो औघिक । और दूसरी औप ग्रहिक । २ । तहां पर जो वस्तु प्रवाह करके ग्रहण करने में आवै सो और कारण में भोगमें लावे उसकूं औधिक कहते हैं तथा वस्त्र पात्रादिक रजो हरणादि चौदे प्रकार का तथा कारण पड़ने से ग्रहण करके और कारण में इस्तमाल में लावे उसकूं औप ग्रहिक कहते हैं जैसे संथारा पाटादिक अनेक भेद हैं इन दोनूं पूर्वोक्त उपधि औघिक औपग्रहिक के ऊपर मुनी ममत्व धारण करे नहीं ममत्व करके रहित होना और संयम यात्रा के वास्ते दो प्रकार की उपधि धारण करने वाले मुनी परिग्रह रहित भया करते हैं सोई शास्त्र में दिखलाया है

—नसो परिग्ग हो वुत्तो । नाय पुत्तेण ताइणा ॥
मुच्छा परिग्ग हो वुत्तो । इइवुत्तं महेसिणा ॥ १ ॥

व्याख्या—दश वै कालिक मध्ये लिखितं परिग्रह नहीं कहा ज्ञात पुत्र याने सिद्धार्थ राजा का पुत्र मूर्च्छा कूं परिग्रह बतलाया है या बात महर्षियोंने कही है । १ । अब क्या

है उनकी उदीरणा नहीं करे तथा उदय में प्राप्त हो गया उन कूं विफल करणा करके जीत करणा याने रोकना कषी जते है प्राणी जिस करके उन कूं कष कहते हैं तथा संसार में ले जावे जिन करके तिन कूं कषाय कहते हैं वे। क्रोध ॥ १ ॥ मान ॥ २ ॥ माया ॥ ३ ॥ लोभ ॥ ४ ॥ भेद करके चार भेद रहा है तथा तिन चारूं के भेद जुदे २ अनंता नुबंधी कूं आदि लेके चार भेद हैं तहां पर अनंत भव भ्रमण करने के वास्ते अनु वध्नंतीति अनंतानु बंधी क्रोधादिक जीन के उदय करके जीव कूं सम्यक्त की प्राप्ति नहीं होती है तथा पाया भया वम देता है ॥ १ ॥ तथा नहीं है सर्वथा विरतिरूप प्रत्याख्यान जिस के विषै तिन कूं अप्रत्याख्यान कहते हैं जिनों के उदय सेती सम्यक्त पाया है तो भी जीवों के देश विरति का परिणाम नहीं होता अगर होवे तो चला जावे ॥ २ ॥ तथा प्रत्याख्यान सर्व विरतिरूप चारित्र कूं ढांक देवे उस कूं प्रत्याख्याना वरण कहते हैं जिनों के उदय करके जीव सर्व विरती नहीं पावे अगर पावे तो भी चला जावे तथा देश विरती का निषेध नहीं ॥ ३ ॥ तथा संईष ज्ज्वलयंति याने कुछ जलावे परीषह उपसर्ग निपात सेती साधू प्रतें उदयिक भाव में लावे उन कूं संज्वलन कहते हैं जिनों के उदय सेती यथा ख्यात चारित्र पावे नहीं बाकी चारित्र के भेद पावे ॥ ४ ॥ यह अनंता नु बंधी कूं आदि लेके कषाय जो हैं सो अनुक्रम करके जावज्जीव ॥ वर्ष ॥ चार मास ॥ पक्षस्थिति वाले रहे हैं ॥ तथा नरक ॥ तीर्यंच ॥ नर ॥ ३ ॥ देवता इत्यादि गती में लेजाने वाले जाननाहतथा इग्यार में गुण ठाने के अग्रभाग में चढ़ा भया साधू प्रतें गिरा के फिर मिथ्यात्व रूप अन्ध कूप में गिरा देवे शुद्ध आत्मा के गुण का घातक तथा सर्व अनर्थ के मूल भूत कषाय रहा भया है इस वास्ते सुबुद्धिवों कूं इन का विश्वास नहीं करना विशेष क्या कहैं इनों कूं जीतने में उद्यम करना सोई कहा है सो दिखलाते हैं ॥

—जा जीव वरिस चउमास। पक्खग्गा नरयतिरिय
नर अमरा॥ सम्माणु सव्व विरई। अहक्खाय
चरित्त घाय करा॥ १॥

व्याख्या—जावज्जीव। वरिष। चार मास। पक्ष।-तथा नार की तीर्यंच मनुष्य

और देवता यह गती होवे । तथा इतना पावे नहीं याने सम्यक्त । सर्वविरती । तथा यथा ख्यात चरित्र का घात करने वाले ॥ १ ॥

—जइ उवसंत कसाओ । लहइ अणंतं पुणोवि पड़िवायं ॥ नहुते वीससि अव्वं । थोवेवि कसायसेसंमि ॥ २ ॥

व्याख्या—जो उपशांत कषाय हो जावे तो भी अनंत भव में बारम्बार पडिवाई होता जावे इस वास्ते थोड़े कषाय का भी विश्वास नहीं करना ॥ २ ॥

—तत्तमिणं सारमिणं । दुवाल संगीइएसभावत्थो ॥ जंभवभमण सहाया । इमेक साया चइ ज्जंति ॥ ३ ॥

व्याख्या—तत्व यह है सार यह है द्वादशांगी में सार यह है जो भव भ्रमण करने में यह कषाय सहाय कारी है इस वास्ते त्यागन करना चाहिये इस तरह से कषाय जय रूप संयम रहा है अब तीन दंड विरती स्वरूप दिखलाते हैं यह चार कषाय जीतने वाले साधु कूं मन वचन काया इस तीन दंड सेती दूर होना चाहिये उसी कूं तीन गुप्ति कहते हैं यहां पर आग मोक्त विधि करके अकुशल कर्म सेती दूर होना और कुशल कर्म में प्रवर्त्तन करना मन वचन काया लक्षण योग उसी का नाम गुप्ति है गोपन करना मन करके उसी कूं गुप्ति कहना चाहिये तहां पर मनोगुप्ति विचारने से मन जो है सो मर्कट की तरह से अति चंचल वर्त्ते है सोई चंचलता शास्त्र गाथा द्वारा दिखलाते हैं ॥

गाथा—लंघइतरुणो गिरिणोय । लंघए २ जल निहीवि ॥ भमइ सुरासुर ठाणे । एसो मणमक्कडोकोवि ॥ १ ॥

व्याख्या—वृक्ष पर मन चढ़ जाता है तथा पर्वत का लंघन कर जाता है तथा जल निधि कहिये समुद्र लंघ जाता है देवता असुर के ठिकाने मन भ्रमण करता है ऐसा मन रूप मर्कट याने बन्दर समझना चाहिये ॥ १ ॥ इसी वास्ते यह मन मुनीयूं को भी दुर्ज्जय रहता है सर्व कर्म बन्ध में मुख्य कारण मन है तिस वास्ते तिस मन कूं दमन करने की इच्छा करने वाले मुनि यूं कूं असद्ध भावना त्याग करके बारे प्रकार की सद्ध

भावना विशेष करके आदर करना चाहिये जिस करके तिस माफिक चंचल चित्त है सो सुखें करके अपने वश आ सक्ता है ॥ १ ॥ तथा वचन गुप्त विचार तो साधू महाराज स्वध्याय की टेम छोड़ करके ओर वक्त में प्राये मौनी अवस्था में रहे भवांरंत था हस्तादिक की संज्ञा भी नहीं करेंगे तथा तिस माफिक प्रयोजन पड़ने से सत्य और असत्य याने सत्यासत्य मृषा वचन भाषन करे तव तहां पर जो वस्तु प्रतिष्टा बढ़ने की आशा करके कहने में आवे वो सत्य जैसे यह जीव है करता भोक्ता इत्यादिक तथा जो फिर प्रतिष्टा की आशा विगर कहना किस कूं असत्या मृषा बुलाना हो किसी कूं तव कहना अहो देव दत्त यह कार्य करो इस माफिक सत्य भाषा भी जो सुनने वाले कूं प्रिय और निर्वद्य होवे तिस माफिक वचन बोलना चाहिये तथा अप्रिय और सावद्य वचन सेती क्रोध की उत्पत्ति तथा जीव घातादिक बहुत अनर्थ के कारण असत्य वचन का बाहुल्यता करके त्याग करना ही कल्याण है कारण दाक्षिणता से बसु राजा मिथ्या बोला जिससे सातमी नरक गया इस वास्ते साधुओंकोतो सर्व था मृषा नहीं बोलना चाहिये तथा प्रयोजन विगर निर वद्य वचन भी बालक की तरह से जैसे तैसे नहीं बोलना तथा सत्य वचन भी प्रिय वोले ऐसा जो कहा है इस माफिक श्लोक द्वारा दिखलाते हैं ॥

श्लोक—नृप सचिवेभ्य नरादीन् । स्तथै वजल्पयतिन खलु
काणा दीन् ॥ नच संदिग्धे कार्ये । भाषा
मवधारिणी ब्रूते ॥ २५ ॥

व्याख्या—नृप राजा । सचिव मंत्री इभ्यनर श्री मान् पुरुष तथा आदि शब्द सेती सामंत । तथा सेठ । तथा सार्थ वाह कूं आदि लेके जिस माफिक वतला आये हैं उसी माफिक बोलना चाहिये ॥ जैसे वो नृप कहिये राजा के भाव में रहा है इस वास्ते राजा कूं राजा कहना मंत्रि प्रतें मंत्री कहना इभ्य कहना यथार्थ बोलना तथा प्रथ मांग सूत्र में दिखला है कि साधु कूं ऐसी भाषा बोलनी और ऐसी नहीं बोलनी सो दिखलातें हैं ॥

—जेया वन्ने तहप्पगारा तहप्प गाराहिं भासाहिं
बूयानो कुप्पंतिमाणवा । तेआ वितहप्पगारा तहप्प

गाराहिं भासाहिं अभि कंखभा सिज्जति ॥

व्याख्या—यहां पर सत् । चित् । आनंदा भिध तथा सत् आनंदाख्य शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज साधु कैसी भाषा भाषन करे तब सरोजोदय गुरू उत्तर देते हैं कि साधु कूं ऐसी भाषा बोलना चाहिये जिस भाषा के सुनने से कोई भी कोपायमान नहीं होवै । ऐसी भाषा बोलना उचित है तथा फेर विचार करके भाषण करना चाहिये परन्तु काने कूं काना यह न्याय अंगीकार नहीं करना तथा काने कूं काना कहना सच है मगर मर्म वचन है तथा गोलेकूं गोला आदि शब्द सेती कोढी तथा खोडा कुवडा तथा तथा चोर इत्यादिक साधु तथा श्रावक कूं नहीं कहना चाहिये सोई फेर पुष्ट करते हैं ॥

—तहेव काणं काणं ति । पंडगं पंडगं तिवा ॥ वाहियं
वाहिए रोगिच्चि । तेणंचोरंति नोवणति ॥ १ ॥

व्याख्या—तैसे ही काणें कूं काणा । नपुंसककूं नपुंसक तथा रोगीकूं रोगी चोर कूं चोर इत्यादिक भाषा साधु श्रावक नहीं बोले तथा संदेह विषयिक कोई कार्य पड़ गया कि खुद साधु संदेह वंत हो जावे तो भी या बात इसी तरह सें है इस माफिक अब धारिणी भाषा नहीं बोले तो किस तरह बोले वर्तमान योग ऐसा कह देवे मगर निश्चय नहीं कहै केवल व्यवहार भाषा बोलै सोई आगममें लिक्खा हैं सो दिखलाते हैं ॥

—आउस्सनबीसा सो । कज्जस्सव हूणि अंतरायाणि ॥
तम्हासाहूण वट्ट । माण.जोगेण ववहारो ॥ १ ॥

व्याख्या—आयुष्य का कुछ विश्वास नहीं तथा कार्यमें बहुत अंतराय पड़ जाता है तिस वास्ते साधु महाराज के वर्त्तमान जोग करके व्यवहार रहा हुवा है ॥ १ ॥ तथा फेर इस माफिक भाषा नहीं बोले कि यह कल्होडक याने यह नवीन वृषभ गाड़ी की धुरी में जोतने लायक है तथा यह आम्र फल भक्षण करने योग्य है तथा यह वृक्ष खंभे के लायक है तथा पाटा। तथा शय्या । तथा आसणादिक के योग्य वर्त्ते है तथा यह चांवल गोहूं वगैरे अन्न काटने योग्य है इत्यादिक

रूप वचन साधु बोले नहीं. तथा साधु का वचन प्रतीति का पात्र है इस वास्ते इनोंने पूर्वकाल में वृषभादिक दमन क्रिया करी थी इस वास्ते यह जांनते हैं और कहते हैं ऐसा सुन करके निश्चय करके तहां २ पर दमनादिक क्रिया में प्रवर्त्तन होने से महारंभ का कारण है इस वास्ते ज्यादा बोलना ठीक नहीं तथा पिता माता भाई बेंन स्वजन हे तात हे मात हे भ्रात इत्यादिक का सम्बन्ध करके साधू बोलावै नहीं तथा साधु महाराज तो अलौकिक आचार में रहे हैं इस वास्ते लौकिक सम्बन्ध भाषण करने का अधिकार नहीं सोई शास्त्र द्वारा दिखलाते हैं॥

—दम्मे वसहे खज्जे । फलेय थंभाई समुचिए रुक्खो ॥
गिम्भ्के अन्नेजणयाइ । अत्तिसयणेवि नलवेइ ॥२॥

व्याख्या—इस वृषभ को दमन करो यह खजूर का फल तोड़ो यह वृक्ष खंभे के लायक इत्यादिक पूर्वोक्त भाषा साधु नहीं बोलें अब यहां पर केर भी विशेषता दिखलाते हैं श्लोक द्वारा॥

श्लोक—राजेश्वराद्यैश्चकदापि धीमान् । पृष्टो मुनिः
कूपतडाग कार्ये ॥ अस्तीति नास्तीति व
देन्न पुन्यं । भवंतियद्भूत वधांतराया ॥ २६ ॥

व्याख्या—राजा हो चाहे मंडलीक हो चाहे ईश्वर हो चाहे युवराज हो तथा आदि शब्द सेती ग्राम का मालिक इन लोगों ने कदाचित कूवा है तालाब है उपलक्षण सेती बावड़ी है दान शाला है इत्यादिक कार्य के वास्ते कूपादिक करवाऊंगा इसमें मुझे पुन्य होगा वा नहीं ऐसा प्रश्न करने सेती बुद्धिमान सम्यक् आगम का जानने वाला मुनी महाराज ऐसा नहीं कहे तूं कूपादिक बणवाव बड़ा पुन्य है तथा मतबण बाब इस में कुछ भी पुन्य नहीं इत्यादिक दोनूं बातें नहीं कहै। अब यहां पर सत। और आनंदेति शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराजा दोनों मांय से साधु कुछ भी नहीं कहे इसका कारण क्या है जिस कारण सेती पुन्य है ऐसा कहे तो भूत का वध होता है तथा शोष करती दफै जल के आ‹ त रहे भये सेवालादि अनंत काय का वध होता है तथा पूतर

का शंबूक मत्स । मंडूक इत्यादिक त्रश जीवों का प्रत्यक्ष विनाश दिखरहा है तथा मत्स्यादिक आपस में जीव भक्षण करने वाला रहा है तथा नास्तिपुन्य है ऐसा कहे तो अंतराय दोष होता है तथा बहुत पशु पक्षी मनुष्य तृषा में पीडित होने वाला उनके जल पीने में व्यवच्छेद हो जावे तिस वास्ते मौन अंगीकार करना श्रेष्ट है वा अथवा हमारे लौकिक कार्य के विषै हमारा भाषण करने का अधिकार नहीं है ऐसा साधु कहे सोई सूत्र कृदंग सूत्र में कहा है सो गाथा द्वारा दिखलाते हैं ॥

गाथा—जहागिरंसमारभ । अत्थिपुन्नंति नोवए ॥ अह
वा नत्थि पुन्नंति । एवमेअं महब्भयं ॥ १ ॥
दाणट्ठआईजेपाणा । हम्मंति तस थावरा ॥
ते सिंसारक्खण ट्ठाए । तम्हा अत्थित्ति नोवए ॥२॥
जेसिंतं उव कप्पेइ । अन्नपाणं तहाविहं ॥ तेसिं
लाभंत रायंति । तम्हा नत्थित्ति नोवए ॥ ३ ॥
जे अदाणं पसं संति । वह मिच्छंतिपाणिणं ॥
जेयणं पडिसे हंति । वित्तिच्छेयंकरं तिते ॥ ४ ॥
दुह ओन भासंति । अत्थि वा नत्थि वापुणो ॥
आयंर यस्सहिच्चाणं । निव्वाणं पाउणं तिते ॥५॥

इस का भावार्थ पूर्वे कहा है उसी माफिक जानना तथा दत्त के आगू कालिका चार्य की तरह से कहणा सुकृत के अर्थि साधुवोंको विपत भी पड़ जावे तो भी सत्य वचन बोलना चाहिये। मगर मृषा कभी नहीं बोले जैसे तुरमिणी नगरी में कालिका चार्य का भाणजा दत्तना में पुरोहित छल करके अपणा स्वामी जित सत्रु राजा प्रते कैदखाने में डाल करके आप राज्य करने लगगया एक दिन माता की प्रेरणा करके आचार्य के पास जाके उन्मत्तता करके धर्म ईर्षा करके क्रोध सहित श्री कालिका चार्य यज्ञ का फल पूछने सेती गुरू महाराज धैर्य धारण करके तिस के आगूं यज्ञ हिंसा रूप और हिंसा का फल नरक ऐसा सत्य वचन कहा यह अन्य था होवे नहीं तथा इसमें क्या प्रतीति है ऐसा पूछा पुरोहित ने तव गुरू महाराज बोले कि तूं

सातमें दिन कुत्तों करके याने कुत्ता भक्षण करेगा और कूंभी में पचेगा तथा फेर भी पुरोहित ने पूछा इस में क्या प्रतीति है तब आचार्य बोले कि तिसी दिन तेरे मुख में अकस्मात् विष्टा पड़ेगी ॥ तब अत्यंत कोपायमान होके दत्त बोला तूं कैसे मरेगा तब गुरू महाराज बोले कि मैं समाधि सेती मर के देव लोक जाऊंगा तब दत्त हुंकारा करके उठ करके आचार्य प्रतें अपने सिपाइयों से रोका के अपने घर आके समाधि सेती प्रच्छन्न रहा तब दत्त मति मोह करके सातमें दिन कूं आठमा दिन मान करके आज आचार्य के प्राण करके शांति करूं ऐसा विचार के घर से निकला तब एक माली पुरीमें प्रवेश करती दफै शरीरके व्याकुलता करके राज मार्ग में ही मल उत्सर्ग करके फूलों करके ढांक दिया तितने में तो तिसी रस्ते से जाता था दत्त तिसके घोड़े का खुर सें उछल करके विष्टा पुरोहित के मुख में पड़ी तब वो विष्टा के स्वाद सेती चमत्कार पाके सातमा दिन जानके उदास होके पीछा गया तब वो पुरोहित के नाना तरेका दुराचारसें खेदातुर होके मूल मंत्रवी जित शत्रु राजाको पींजरेसे निकाल करके राज्य में स्थापन करा दत्त कूं छल सेबांध करके राजा के सुप्रत किया तब राजा तिस कूं कूंभी में डाल करके नीचे आग जला करके कुत्तोंकूं छोड़ करके कदर्थना सहित मारा बाद मरके नरक में गया तथा आचार्य का राजादिक बहुत मान किया यह वचन गुप्तिके विषय कालिकाचार्य का वृत्तांत कहा इस माफिक उत्तम मुनिकूं वचन गुप्ति धारण करना। २। तथा काय गुप्ति विचार करने से साधु काउसग्ग करके वा पद्मासन करके शरीरका व्यापार रोके तिस माफिक जाने में शयन करने में हरएक प्रयोजन में शरीर कूं प्रवर्त्तावै मगर कदम२ में उपयोग सहित मेरे शरीर करके कोई भी जीवका वध मत हुवो इस माफिक जयणा विचार करे कारण जयणा विगर कदम२ में छव कायोंकी बिराधना होवे सोई बात दृढ़ करते हैं ॥

—गमण ट्ठाण नीसि यण। तुअट्टणग्गहण निसि
रणाई॥ सुकायं असं वरं तो। छण्हंपि विराह ओ
हो इत्ति॥ १ ॥

व्याख्या—गमन करने में बैठने में उठने में सयन करने में थंडिल भूमि में इत्यादिक कार्यमें शरीरसे जयणा नहीं करे तो छव कायका विराधक होवे। १। इस माफिक

काय गुप्ति दिखलाई । इस तरहसे तीन गुप्ति कहके सतरे प्रकारका संयम दिखलाया ।६। तथा दस प्रकार का यती धर्म के विषै बाकी रहा सत्यादिक चार भेद कहते हैं तहां पर सत्य किसकूं कहते हैं मृषा वाद का त्याग होने से सत्य होता है । ७ । तथा शौच संयम के विषै निरुपलेपता याने अतीचार रहित । ८ । तथा अकिंचन परिग्रह रहित । ९ । तथा ब्रह्मचर्य सर्वथा काम क्रीड़ा का निषेध । १० । इतने करके दस प्रकार का यती धर्म का स्वरूप दिखलाया । अब क्या कहते हैं कि यह सुदुर्लभ मुनि धर्म निग्रंथ धर्म के विषय सर्वथा प्रमाद का त्याग करना ऐसा दिखलाते हैं ॥

—भवसय सहस्स दुल्ल हे । जाइ जरा मरण सागरु
त्तारे ॥ जइ धम्मंमि गुणायर । खण मवि माकाहि
सिपमायं ॥ २७ ॥

व्याख्या—हे गुणकी खान हे ज्ञानवान साधु लाख भवोंमें दुर्लभ रहा है तथा जन्म जरा मरण रूप समुद्र से तिराने वाला इस माफिक यति धर्म के विषय क्षण मात्र प्रमाद मत कर महा अनर्थ का कारण है यह प्रमाद ॥ २७ ॥ तथा फेर भी विशेषता दिखलाते हैं ॥

—सेण वई मोहनिवस्स एसो । सुहाण जंविग्घ करो
पुरप्पा । महा रिऊ सव्वजिआण एसोकयाइ कज्जो
नतओ पमाओ ॥ २८ ॥

व्याख्या—जिस कारण सेती यह दुरात्मा प्रमोदमोह राजा का सेना पती वर्त्तै है इस वास्ते मोक्षादिक सुक्ख का विघ्न करने वाला है तिस वास्ते परमार्थ के जानने वाले मुनियों कूं कवी भी यह प्रमाद नहीं करना तथा फेर भी विशेषता दिखलाते हैं ॥

—थोवोविक यपमाओ । जइणो संसार वद्धणो भणि
ओ ॥ जह सो सुमंगल मुणि । पमायदोसेण पय
वद्धो ॥ २९ ॥

व्याख्या—थोड़ा भी प्रमाद करने से साधू के संसार का बढ़ाने वाला कहा जैसे

सुमंगल आचार्य महाराज अल्प मात्र प्रमाद दोष करके पांव बांधा भया चमड़ी से इस माफिक जन्म भया सो प्रमाद के ऊपर सुमंगल साधू का दृष्टान्त कहते हैं इस भरत क्षेत्र के विषै पांच सै शिष्यां करके सहित सुमंगल नामें आचार्य होते भये वे आचार्य अप्रमत्त होके हमेशा शिष्यों कूं सूत्र अर्थ सहित वाचना देते थे अब कोई वक्त में बात रोग सेती आचार्य के कमर में वेदना उत्पन्न भई तब वाचना देने के लिये बैठने के वास्ते असमर्थ भये तब आचार्य महाराज शिष्य से कहा अहो गृहस्थ के घर सेती योग पट्ट लेके आवो तब शिष्यों ने भी गुरू भक्ति करके योग पट्ट लाया तब आचार्य ने कमर में रख करके पालखी बांध करके रहे तब तिस योगसें अत्यंत सुख प्राप्त भया आचार्य तिस योग पट्ट कूं क्षण मात्र नहीं छोड़े तब कितनेक दिन बाद शिष्य बोले हे भगवान आप के शरीर में साता हो गई इस वास्ते इस योग पट्ट कूं गृहस्थ के यहां देना चाहिये और इस प्रमाद स्थानकूं दूर करो जिस सेती थोड़े प्रमाद करने सेती बहुत संसार की वृद्धि होती है तब आचार्य बोले कि योग पट्ट धारणें में क्या प्रमाद है यह है तो मेरे शरीर का सुखकारी है मगर प्रमाद स्थान नहीं तब तो विनीत शिष्य मौन धारण करके रहे अब कितनेक काल गये बाद वे सुमंगल आचार्य श्रुत उपयोग सेती अपणा आयुष क्षय जाण करके एक विशिष्ट गुणवान शिष्य कूं सूरि पद में स्थापन करके आप संलेखना करके काल अवांछा पूर्वक रहते भये तब तिन शिष्यों नेभी शुभ ध्यान उपयोग सहित गुरु को आराधना कराने लगा तिस वक्त में शिष्यों ने कहा हे भगवंत व्रत ग्रहण सेती लेके जो कुछ प्रमाद सेवन करा होसो उसकी आलोचना लेवे और पाप निवर्त्तिक प्रतिक्रमण करो तब आचार्य महाराज योग पट्ट कूं छोड़के सर्व प्रमाद स्थान की आलोचना प्रतिक्रमणा दिक करा तब शिष्य बोलें हे स्वामी योग पट्ट धारण रूप प्रमाद स्थान आलोचना करो ऐसा वचन सुन के कोपरूप अग्नी में ज्वलित होके कहने लगे अरे दुष्टो तुम अत्यंत दुर्विनीत हो जो अभी तक योग पट्ट से भया दूषण उस कूं ग्रहण करते हो तब तो शिष्य भी गुरू महाराज कूं कोपायमान जान करके विनय सहित इस माफिक बोले कि हे स्वामी हमारा अपराध माफ करो हमने अज्ञात पन में आप कूं अप्रीति कारक वचन कह दिया आगूं से नहीं कहेंगे। अब इस माफिक वचन करके आचार्य का उपशांत कोप भया परन्तु योग पट्ट के ऊपर ध्यान रह गया तिस करके तिस आचार्य ने प्रमाद

स्थान की आलोचना लीची नहीं इस माफिक काल करके अनार्य देश में कूड़ागार के विषै मेघ रथ राजा के विजया नामें राणी तिस की कूख में गर्भ पणें उत्पन्न भया मगर जन्म की वक्त में कमर में बींटा भया चमड़ा उसका पट्ट करके पांव बन्धा भया इस माफिक पुत्र भया राजा तिस का जन्म महोत्सव करके बारमें दिन दृढ़ रथ ऐसा नाम दिया तब वो पांच धाय करके पालन होने लगा अनुक्रम से जब आठ बरस का भया तब कला चार्य के पास वहोत्तर कला का अभ्यास किया अनुक्रम करके सकल कला में कुशल भया तिस में भी संगीत शास्त्र में विसेष निपुण भया तब दृढ़ रथ कुमर कों संगीत शास्त्रमें निपुण सुन करके बहुत गांधर्व लोक अपनी२ कला दिखलाने के वास्ते तहां पर आया मगर सम्पूर्ण संगीत का भेद नहीं जानने से वे लोक कुमर के चित्त कूं प्रसन्न करने कूं असमर्थ भया तब कुंमर ने उन लोगूं कूं निरुत्साह देख करके बहुत द्रव्य देके संतोषित करे तब वे लोक प्रसन्न होके जगैं २ दृढ रथ की कीर्त्ति करने लगे इस माफिक काल जा रहा था अब इधर शिष्य का सम्बन्ध दिखलाते हैं जो पांचसै शिष्य थे उनों में विशुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्र के धारक बहुत तपस्या करने वाले आचार्यादिक तिन के साथ में कितनेक साधुवों कूं अवधि ज्ञान उत्पन्न भया तिस बल करके अपनें गुरु का स्वरूप देख करके अनार्य क्षेत्र में तिस माफिक अवस्था में रहे हैं इस माफिक अपने गुरु कूं देख करके धिक्कार २ प्रमाद सेवन करने वाले कूं याने प्रमाद कूं भी धिक्कार है कि जो थोड़े से प्रमाद सेवन करने से बहुत दुख के भागी होवेंगे ऐसा विचार करके तब तिनों के भीतर जो मुख्य आचार्य थे तिनों के मन में ऐसा विचार उत्पन्न भया अगर जो कोई उपाय करके हमारे गुरू कूं अनार्य क्षेत्र सेती यहां लावे तो श्रेष्ट है तब आचार्य यह विचार सर्व साधुवों कूं कहके एक योग्य साधू कूं अपना गच्छ का भार दे करके अनार्य देश में शुद्ध आहार मिलना दुर्लभमान करके तिस माफिक दृढ़ संहन वाले महा तप और चारित्र शक्ति युक्त इस माफिक कितनेक साधुवों कूं साथ में ग्रहण करके तहां से विहार करके ग्रामानुग्राम बिहार करतेर आर्य क्षेत्र से आगूं आहार की गवेषणा नहीं करते अनुक्रम से अनार्य क्षेत्र में उद्यानक विषय में जहां पर कूडागार नगर था तहां पर आये तिस के नजदीक बाग में प्रासुक भूमी प्रतें प्रति लेखना करके इन्द्रादिक अवग्रह ग्रहण करके रहे तब नगर के रहने वाले लोग कभी साधू का स्वरूप

पेस्तर देखा नहीं था उस वक्त नया स्वरूप देख करके नया लोक कौन है ऐसा विचार करके साधुवोंके पास आकरके पूछने लगे आप लोक कौन हो तब साधू बोले कि हम तो नट हैं तब लोक बोले कि आप नट हो तो राजा के पास चलो जिस करके तुम लोगों के धनकी प्राप्ति बहुत होवे तब साधु बोले कि हम किसी के पास जाते नहीं जो हमारे पास आवेगा तिस कूं अपनी नाटिक कला दिखलावेंगे तब फेर लोक बोले कि आप लोग राजा के पास नहीं जावोगे तो फेर किसके घर भोजन करोगे तब आचार्य बोले कि हम लोग भोजन नहीं करते तब वे सर्व लोक बिस्मयवंत होके तथा वहां पर कितनेक साधू प्रति लेखनादिक क्रया कर रहे थे उनकूं देख करके पूछा आप क्या कर रहेहो तब साधू बोले कि हम नाटिक संबंधी परिश्रम कर रहे हैं तब तो वे लोक अपने ठिकाने गये अब या हकीकत शहर में फैल गई राजा भी किसी के मुख सेती तिस बात कूं सुन करके विस्मय सहित तिनों का स्वरूप देखने के वास्ते तहां पर गया तहां पर तिन साधुवों कूं देख करके ऐसा कहा कि तुम कौन हो कौन ठिकाने सेती और कौन प्रयोजन यहां आना भया तब आचार्य बोले कि भो देवानुप्रिय हम नट हैं दूर देश सेती तुमको अपनी कला दिखलाने के वास्ते यहां आये तब राजा बोला नाटक दिखलाओ तब आचार्य बोले जो संगीत शास्त्र में निपुण होवे तिस के आगूं नाटक करें तब राजा बोला कि मेरा लड़का सर्व जानता है तब आचार्य बोले कि जल्दी हमारे पास लावो तब राजा मनुष्यों कूं भेज करके कुमरकूं पालखी ऊपर बैठाके तहां पर लाया आके साधुवों प्रतें इस मांफिक बोला तुम लोग संगीत शास्त्र में कुशल हो तो प्रथम संगीत शास्त्र के भेद बतलावो तब आचार्य महाराज श्रुत ज्ञानादिक बल करके सर्व संगीत के भेद कुमर के आगूं कहा तब तिन भेदों कूं सुन करके कुमर अति विस्मय होके दिल में विचारने लगा यह निश्चय करके सर्व शास्त्र का जानने वाला नटाचार्य रहा है ऐसा और कोई भी नहीं इस वास्ते अभी इस की नाटक कला देखना चाहिये ऐसा विचार करके राज कुमर ने साधुवों से ऐसा कहा कि भो नट लोको नाटिक करो जिससे तुमारे कला की परीक्षा करें तब आचार्य बोले प्रथम नाटिक का उपगरण लावो तब कुमर अपने पुरुषों को भेज करके सर्व नाटिक के उपगरण मंगवावा तब आचार्य वादित्र ध्वनि करते भये पेस्तर मधुर स्वरसे आलाप किया तिसकूं सुन करके सर्व लोक चित्र लिखित की तरह से होगया तब नाटिक प्रारंभ होने

की वक्त आचार्य महाराज एक दोहा गायन में कहने लगे

—धी धी पमाय ललियं। सुमंगलोवत्थ एरिसिं पत्तो
किंकुणिमो अंबडया। पसरंतिन अम्ह गुरु पाया॥ १॥

व्याख्या—धिक् २ प्रमाद ललितं सुमंगलं साधु एतादृशीं भव स्थां प्राप्त किंकुर्म सर्वे लोका श्रृण्वंतु अस्माकं गुरोः पादा नप्रसरंति। धिक्कार हुवो २ इस लेश मात्र प्रमाद कूं जिस करके सुमंगलाचार्य इस माफिक अवस्था कूं प्राप्त भया॥ अहो सर्व लोक श्रवण करो हमारे गुरु के पांव फैलते नहीं॥ १॥ तिस बाद याने आचार्य के कहे बाद बचन सर्व साधुवों ने ऊंचे स्वर सेती पढ़ने लगे तथा वीणादिक बजाणें लगे तब कुमर भी वारंवार पढ़ रहे थे उस दोहे को सुन करके दिल में विचार किया यह पढ़ते हैं कौन सुमंगल था तिसने प्रमाद कैसे करा इत्यादि तवतो यह ईहा अपाय धारणा अर्थात ग्रह करणें लगा जिससे जाती स्मरण रूप मूर्च्छा आई तिससे जमीन पर गिर गया तब एक दम हा हारव हो गया तब राजादिकने शीतल उपचार किया जिससे कुमर सावधान हो गया अपना पूर्व भव स्मरण करा तिन पूर्व भव के शिष्यों मतें देख करके इस माफिक विलाप करने लगा अहो दुःख मयी यह संसार है अहो कर्मों की विचित्र गती है इस संसार के विषै दुष्कर्म जन्य तथा प्रमाद दोष करके यह जीव नाना प्रकार का दुःख भोग वते हैं मैं भी किंचित्मात्र प्रमाद अंगीकार करनेसे इस माफिक अवस्थाकूं प्राप्त भया तब कुमरका इस माफिक विलाप देख करके राजा विचार किया निश्चय करके इन धूर्तों ने कुमर कूं पगला कर दिया इस वास्ते इन कूं मारो तब राजा रोष सेती सेवक लोगों को हुक्म दिया मारने के वास्ते तब कुमर बोला हे पिता जी यह हित के करने वाले हैं इस वास्ते पूजा सेवा करने लायक है मगर वध बंधनादिक के योग्य नहीं तब राजा भी कुमर के वचन सेती साधुवों का बहुत सत्कार सेवा भक्ति करने लगा तिस बाद कुमर साधुवों कूं एकान्त में बुलवाके ऐसा वचन कहा हे देवानुप्रिय यह अनार्य क्षेत्र है तथा लोक भी अनार्य है यहां पर सत् धर्म की बात भी सुनने में नहीं आती है अब यहां पर मेरी क्या गती तब आचार्य बोले कि तुम हमारे साथ चले आवो तिससे तुमारे कार्य की सिद्धि होवे तब कुमर बोला कि पांव बंधा भया है इस वास्ते चल सक्ता नहीं इस वास्ते

आगूं मेरा निर्वाह कैसे होगा तब आचार्य बोले कि यह सर्व साधु तुमारी भले प्रकार से वेया वच्च करेगा तुम आर्य क्षेत्र में पहुंचोगे तब से ऐसा वचन सुन करके कुमर तत्काल पिता के पास जाके विनती करी भो माता पिताजी जो आपकी आज्ञा होवे तो यह महा कला चार्य है इनों के साथ मैं भी सीखने के लिये जाता हूं तब माता पिता बोले हे पुत्र तेरा विजोग सहन नहीं होता इस वास्ते इन नटाचार्य कूं यहां पर रखके कला अभ्यास करो तब कुमर बोला आपने सत्य कहा मगर यह विदेशी है और अपने पास द्रव्यादिक ग्रहण करे नहीं इस वास्ते यह कैसे रहे तिस वास्ते विचारान्तर छोड़ करके मेरे कूं आज्ञा देवो तब मैं इनों के पास में सम्पूर्ण कला अभ्यास करूं तब माता पिता कुमर का अति आग्रह मान करके आज्ञा देते भये और चढ़णें के वास्ते कितनेक सेवक लोग सहित एक पालकी दीवी तब प्रसन्न होके कुमर पालखी ऊपर चढ़ करके चलने लगा तिनके पिछाड़ी सर्व साधु चले अनुक्रम करके अनार्य क्षेत्रकूं लंघ करके आर्य क्षेत्रमें आये तब पालखी कूं पीछी लौटा दीवी तब साधू रस्तेमें रह के कोई नगरमें भिक्षा के वास्ते जाकर के शुद्ध आहार लाके महा तप का पारणा करते भये तब कुमर बोला अब मैं क्या करूं तब आचार्य बोले तुम व्रत ग्रहण करो तब तिसने व्रत ग्रहण करा पूर्व भवके शिष्य भी अखेद करके तिसकी वेया वच्च करने लगे अनुक्रम से अपने गच्छ वाले सर्व साधु इकट्ठे होके आनंद भाव कूं प्राप्त भया तब कुमर व्रत ग्रहण से लेके जावज्जीव तक छट्ठ छट्ठ तप करके अप्रमाद करके संयम पाल करके अवधिज्ञान पाके अनुक्रम से आयु क्षय होने से समाधि सेती काल करके नवमें ग्रैवेयक में देवता पणें उत्पन्न भये तहां से चव करके महा विदेहमें मुक्ति जावेगा तथा और भी साधु संयम आराधन करके उत्तम गतीमें गये। यह प्रमाद के ऊपर सुमंगलाचार्य का दृष्टान्त कहा। इस माफिक लेश मात्र प्रमाद सेती उत्पन्न भया फल सुन करके संसार में डरने वाले साधुवों कूं सर्वथा प्रमाद का त्याग करना चाहिये अब प्रमाद त्याग करके संयम पालनेमें उद्यम वंत हो रहे हैं ऐसे मुनियोंकूं मन वश करने के वास्ते बारे भावना भावणी चाहिये तिसका स्वरूप किंचित् दिखलाते हैं॥

—पढ़म मणिच्च। १। मसरणं। २। संसारो। ३।
एगयाय।४। अन्नत्तं।५। असुइत्तं।६। आसव।७।
संवरोय।८। तहयनिज्जरानवमी।६। लोग

सहावो । १० । बोहियदुल्लहा ॥११। धम्मस्स
साहगा अरिहा । १२ । ऐयाओ भावणाओ । भावे
यव्वा पयत्तेण ॥ २१ ॥

व्याख्या—यह अनित्य कूं आदि लेके बारे प्रकार की भावना सुदृष्टियों कूं प्रयत्न करके भावन करना रात दिन अभ्यास करना तहां पर इस संसारके विषै मोहादिक वश करके सर्व वस्तुके विषै विपरीत बुद्धि करके मूर्ख आदमी स्वामी पणा यौवन पणा शरीर लावण्य पणा बल आयु विषय सुख वल्लभजन संयोगादिक से उत्पन्न भया पर्वतसे उतरी महानदी के नीर के पूर की तरह से प्रबल तर वायू के समूह सेती हली ध्वजाके पट की तरह से अपणाईप्सित प्रदेश स्वेच्छा से विहार कारी चौ तरफ सेती भमरों से आकुल मद भर रहा है ऐसे हाथी के कान की तरह से चंचल तथा बहुत हवा करके हणा वृक्ष का पत्र परि पक उसके समूह की तरह से अति चंचल सर्व पदार्थ रहा है मगर मूर्ख इन पदार्थों कूं सर्वदा नित्य स्वरूप करके जाने मगर तत्व दृष्टि करके सर्व भाव अनित्य है नहीं है इनों में कोई भी पदार्थ नित्य जो परमानंद प्राप्त करने वाले सत् ज्ञानादिक वे नित्य हैं और सर्व अनित्य हैं इस माफिक विचार करना तिस कूं प्रथमा अनित्य भावना कहते हैं तथा फेर भी भावना दिखलाते हैं ॥

—सामित्तण धणजुव्वण । रइ रूव बलाउ इट्ठ संजोगा ॥
अइ लोला घण पवणा । हय पायवपत्तव्व ॥ १ ॥

व्याख्या—स्वामी पणा धनपणा यौवन पणा तथा रती रूप बल आयु वल्लभ के संजोग कैसे हैं अत्यंत वायु करके पक्का भया पान गिर पड़े इसी तरह से शरीरादिक पदार्थ अनित्य हैं ॥ १ ॥ अब दूसरी असरण भावना कहते हैं इस लोक के विषै माता पिता बैन भार्या पुत्र मित्र भटादि परिवार देखने से जब मृत्यु अकस्मात् आती है तब अकस्मात् प्राणियों के जीवित का अपहार करती है पूर्वोक्त कोई भी मृत्यु से बचा सके नहीं तब एक श्री जिन धर्म बिगर और कोई भी सरण नहीं होता इत्यादिक जो विचार करणा उसकूं असरण भावना कहते है ॥ सो दिखलाते हैं ॥

—पिऊ भाउभयणि भज्जा । भडाण पच्चक्खपिक्ख

माणाणं ॥ जीवंहरेइमच्चू । पुण कोइ नहोइसे
सरणंति ॥ २ ॥

व्याख्या—पिता माता भाइ बैन स्त्री सुभट प्रत्यक्ष देखते भये मृत्यु अकस्मात् आके जीवित हर लेवे फिर कोई भी शरण गत नहीं ॥ २ ॥ अब तीसरी संवर भावना दिखलाते हैं ॥ इस संसार के विषै चौरासी लक्ष जीवा योनी में बारम्बार जन्म मरण अंगीकार करके परि भ्रमण कहते हैं यह संसारी जीव कर्मोदय की विचित्रता से कभी सुखी और कवी दुखी कभी राजा कभी रंक कभी स्वरूपवान कभी कुरूपवान इस माफिक नाना प्रकार की अवस्था भोगते हैं तथा जीव और कर्म का सम्बन्ध विचार करने से अनेक संबन्ध हो गया मगर देखो कर्म की विचित्रता से एक भव में अनेक संबन्ध हो जाता है कुवैर दत्त की तरह से महा दुष्कर्म का कारण से अनेक संवन्ध होता है फिर नाना प्रकार के भव में नाना प्रकार का संवन्ध जान लेना चाहिये तिस वास्ते वस्तुगति करके एकान्त दुःख मयी संसार रहा हुवा है इस में मूर्ख रक्त रहता है मगर तत्व ज्ञानी नहीं इत्यादिक विचार करना तिस कूं संसार भावना कहते हैं तथा फिर भी विशेषता दिखलाते हैं ॥

—जाई मिगमुंचंतो । अवरं जाइं तहेव गिराहंतो ॥
भमइ चिरं अविरामें । भमरोव्व जीओ भवारामे ॥ १ ॥

व्याख्या—एक जाती कूं छोड़ करके दूसरी जाती कूं ग्रहण करे वहुत काल से घूम रहा है मगर कहां भी आराम नहीं भमरे की तरह से घूमता रहता है भवरूप वाग में यह जीव ॥ १ ॥ इत्यादिक विचार करना अब यहां पर कुवेर दत्त और कुवेर दत्ता का संबंध अठारे नातरों पर दिखलाते हैं मथुरा नगरी में कुवेर सेना नामें वेश्या रहती थी वा एक दिन के समय में नवीन उत्पन्न भया गर्भ याने प्रथम गर्भ उत्पन्न भया और तरुण थी तिस गर्भ के योग से अत्यन्त खेदातुर भइ तब तिस की माता कुटिनी तिस प्रतें खेदातुर देख करके तिस की तकलीफ मिटाने के वास्ते वैद्यों को बुलवाया तिनों ने नाड़ी वगैरे चलती देख करके रोग रहित मान करके ऐसा कहा कि इसके शरीर में रोग तो कुछ भी नहीं मगर पेट में पुत्र पुत्री रूप जोड़ला रहा है इस कारण सेती इस

के शरीर में तकलीफ़ हो रही है तब वैद्यों को सीख दे करके वा कुटिनी पुत्री प्रतें कहने लगी यह गर्भ तेरे प्राण हरण करने वाला है इस वास्ते रखणा न चाहिये ज्यादा क्या कहें याने गिराने काबिल है तब वेश्या बोली मैं तकलीफ़ भी सहूंगी मगर मेरे गर्भ कूं कुशल रहो तब वा वेश्या गर्भ की वेदना सहन करके समय में पुत्र पुत्री रूप जोड़ा पैदा भया तब फिर कुटनी बोली हे पुत्री यह पुत्र पुत्री रूप तेरे नव योवन का हरण करने वाला है इस वास्ते इन कूं अशुचि की तरह से त्याग कर अपनी आजीविका का कारण यौवन है इसकी रक्षा कर तब वेश्या बोली हे माता जो इस माफिक करने का इरादा होवे तो दस दिन तक विलंब करो पीछे तुमारे कहने माफिक करूंगी तब तिस डका की आज्ञा से वा वेश्या दस दिन तक दूध पिला करके उन बालकूं कूं अच्छी तरह से पाल करके इग्यार में दिन उन दोनूं का नाम दिया गया पुत्र का नाम कुबेर दत्त और लड़की का नाम कुबेर दत्ता रक्खा गया तथा तिनों के नाम की मुंदड़ी दो बणवा के उनों की आंगुली में पैना के एक लकड़ की पेटी में उन दोनूं बालक कूं रखकरके स्याम की वक्त में यमुना जी के प्रवाह में तिस पेटी कों वह वा दीवी तब वा पेटी जल में चली जाती अनुक्रम करके सूर्य उदय की समय में शोरीपुर के दरवाजे के पास प्राप्त भई तहां पर स्नान करने के वास्ते आये दो धनवान के पुत्र तिनों ने पेटी आती कूं देख करके जल्दी ग्रहण करके तिस के अन्दर एक लड़का और लड़की देख करके उन दोनों धन वान मांय से लड़के की वांछा वाले ने लड़का ग्रहण किया और लड़की की इच्छा वाले ने लड़की ग्रहण करी इस माफिक पुत्र पुत्री रूप दोनूं ग्रहण करके अपनी २ स्त्रियों के सुपरत किया मुंदड़ी के लिखित अक्षर अनुसारें ही उनका नाम उसी माफिक कायम रक्खा गया तब वे दोनूं कुबेर दत्त और कुबेर दत्ता उन धन वानूं के यहां अति यत्न करके बढ़ रहे थे अनुक्रम करके यौवन अवस्था में प्राप्त भया तब दोनूं बालकूं की तुल्याता मान करके दोनूं धन वानूं ने उनका पाणि ग्रहण कर दिया अब एक दिन की वक्त दोनों स्त्री भर्त्तार सार पांशा खेल ने कूं बैठे तब कुबेर दत्त के हाथ सेती नामां कित मुंदड़ी कोई प्रकार करके निकल करके कुबेर दत्ता के आगूं पड़ गई तब वा कुबेर दत्ता तिस मुंदड़ी कूं अपनी मुंदड़ी के बरोबर आकृति एक देश की घड़ी भई बराबर नाम जिस मेंइस माफिक देख करके अपने मनमें कुबेर दत्त प्रतें अपना भाई पणा नि-

श्चय करके वे दोनूं मुंदड़ी कुवेर दत्त के हाथ में डाल दीवी तब कुवेर दत्त भी तिस मुंदड़ी कूं देख करके अपनी बेंन पणें में निश्चय करी तब अत्यंत विषवाद कूं प्राप्त भया तव दोनूं जनें अपने विवाह कार्य कूं अकार्य मानते भया और अपना संदेह मिटाने के वास्ते अपनी २ माता प्रतें सोगन दिलां के अति आग्रह करके अपना २ स्वरूप पूछा तब अपनी २ माता तिन दोनूं के आगूं संदूक मिली उस दिन से लेके सर्व हकीकत कह दीवी तब कुवेर दत्त मातां पिता प्रतें ऐसा कहा कि तुम लोगों ने हमारा जोड़ला जान करके यह अकार्य किस वास्ते किया तब माता पिता बोले तुमारा बरोबर रूप तेज करके तिस कन्या के बरोबर बर नहीं पायां जथा बराबर गुण रूप चतुराई देख करके तुमारा आपस में विवाह संबंध किया मगर अभीं तक कुछ बिगड़ा नहीं जिस वास्ते सिर्फ आपस में हथ लेवे का दोष लगा है मगर मैथुन रूप अकृत्य नहीं भया तिस वास्ते तुम विषवाद मत करो तुम कूं दूसरी कन्या पाणिं ग्रहण करवाउंगा तब कुवेर दत्त बोला आप का वचन प्रमाण है लेकिन अभी तो व्यापार करने के वास्ते पर देश जाने की इच्छा करता हूं इस वास्ते मुझ कूं आज्ञा देवो तब माता पिता ने आज्ञा दीवी तब कुवेर दत्त वो वृत्तांत अपनी वैंन कुवेर दत्ता सें कह करके बहुत क्रयाणक वस्तु ले करके कर्म योग सेती अपनी उत्पत्ति के ठिकाने ही मथुरा नगरी में गया तहां पर हमेशा अपना उचित ब्यवहार करे एक दिन के वक्त कोई दुष कर्म संयोग सेती अद्भुत रूप की धरने वाली अपनी माता कुवेर शेना वेश्या कूं देख करके काम में पीडित होके तिस प्रतें बहुत द्रव्य देके अपनी औरत करी हमेशा तिस के साथ विषय सुख भोगवै तहां पर अनुक्रम करके तिस के एक लड़का भया अब सोरीपुर नगर में वा कुवेर दत्ता माता के मुख सेती मूल से अपणी तिस हकीकत कूं सुन करके जल्दी बैराग पा करके सांध्वी के संयोग सेती दीक्षा ग्रहण करके महा तप करके विशुद्ध अध्यवसाय के जोग सेतीं थोड़े काल में अवधि ज्ञान उपार्ज्जन कि या तब वा साध्वी अवधि ज्ञान के बल करके अपना भाई का स्वरूप देख रई थी मथुरा में जाके अपनी माता के साथ लगगया और पुत्र सहित देख करके कर्म की गति को धिक्कार कर करके अपने भाई का अकृत्य रूप महा पाप जाण करके पाप रूप कीच सें निकालने के वास्ते आप मथुरा नगरी में आकरके कुवेर सेना वेश्या के ही घर में जाके धर्म लाभ रूप आशीर्वाद देने पूर्वक तिस के पास

रहने का ठिका मांगा तब कुवेर सेना वेश्या भी तिस साध्वी प्रतें नमस्कार करके ऐसा बोली हे माहा सती में वेश्या हूं मगर अभी तक भर्त्तार के संयोग सेती निश्चय करके कुल स्त्री हूं तिस वास्ते तुम सुख करके मेरे घर के नजदीक निर वद्यमकान ग्रहण करके हम को उत्तम आचार में प्रवर्त्तावो तब कुवेर दत्ता साध्वी भी सपरिवार सहित तिस ने बतलाया उपासरायाने मकान उस में रही अब वा वेश्या हमेशा तहां आकरके तिस बालक प्रतें साध्वी के आगू जमीन में लोटते भये कूं वहां रख देवे तब अवसर की जानने वाली साध्वी आगूं लाभ जान करके तिस बालक प्रतें इस माफिक बतलावे हे बालक तूं मेरा भाई है ॥ १ ॥ तथा तूं मेरा पुत्र है ॥ २ ॥ तूं मेरा देवर है ॥ ३ ॥ तूं मेरा भतीजा है ॥ ४ ॥ तूं मेरा काका है ॥ ५ ॥ तथा तूं मेरा पौता है ॥ ६ ॥ तथा जो तेरा पिता है सो मेरा भाई है ॥ १ ॥ तथा मेरा पिता ॥ २ ॥ तथा दादा ॥ ३ ॥ तथा भर्त्तार ॥ ४ ॥ तथा पुत्र ॥ ५ ॥ तथा सुसरा ॥ ६ ॥ होता है तथा जो तेरी माता वा मेरी माता ॥ १ ॥ तथा दादी ॥ २ ॥ तथा भोजाई ॥ ३ ॥ तथा वहू ॥ ४ ॥ तथा सासू ॥ ५ ॥ तथा सोक ॥ ६ ॥ होती है तब कुवेर दत्त एक दिन की वक्त तिस साध्वी का वचन सुन करके विस्मय पाके तिस साध्वी प्रतें कहने लगा हे आर्यो वार २ ऐसा अयुक्त क्ययूं भाषन कर रई है तब साध्वी बोली कि मैं अयुक्त नहीं कहती जिस वास्ते यह बालक मेरे एक माता पणा करके भाई है तथा मेरे भर्त्तार के पुत्र होने सेती मेरा भी पुत्र भया मेरे भर्त्तार का छोटा भाई पणा करके मेरा देवर भी हो गया तथा मेरे भाई का पुत्र होने से मेरा भतीजा भी भया मेरे माता का पती तिसका भाई होने से मेरा काका भी हो गया तथा मेरे शोकका पुत्र तिसका पुत्र होने से मेरा पोता भया ॥ ६ ॥ इस तरह से बालक के साथ अपना छत्र संवन्ध दिखलाया । तथा फिर भी कहने लगी जो इस बालक का पिता है वो मेरे एक माता पणा सेती भाई है तथा मेरी माता का भर्त्तार इस वास्ते मेरा पिता । मेरे काका का पिता होने से मेरा दादा होता है पेश्तर मुझ कूं परणी इस वाते मेरा भर्त्तार । तथा मेरी शोक का पुत्र इस वास्ते मेरा पुत्र भया तथा मेरे देवर का पिता होने से मेरा शुशरा ॥ ६ ॥ इस तरह से बालक का पिता कुवेर दत्त केसा था अपना छै संबन्ध बतलाया ॥ तथा फिर भी कुवेर दत्ता साध्वी बोली कि जो इस बालक की माता है सो मेरे कूं जन्म देने वाली माता है तथा मेरे

काके की माता इस वास्ते मेरी दादी भई। तथा मेरे भाई की स्त्री है इस वास्ते मेरी भोजाई भई। तथा मेरे शोकका पुत्र तिसका पुत्र तिसकी बहु होनेसे मेरी वहू भई॥ तथा मेरे भर्त्तार की माता होने से मेरी शासू भई॥ तथा मेरे भर्त्तार की दूसरी स्त्री होने से मेरी शोक भई॥ ६॥ यह बालक २ की माता कुवेर सेना वेश्या के साथ अपना छव संवन्ध दिख लाया॥ इस प्रकार करके अट्ठारे प्रकार का संवन्ध निवेदन करके वा साध्वी तिस बात की प्रतीती के वास्ते व्रत ग्रहण करती दफै अपनी नामांकित मुंदड़ी कुवेर दत्त कूं दीवि॥ तब कुवेर दत्त भी तिस मुंदड़ी कूं देख करके सर्व संवन्ध विरुद्ध जान करके जल्दी वैराग्य पाकरके आत्मनिंदा करके अपनी शुद्धी के वास्ते दीक्षा ग्रहण करी और तप करा तथा कुवेर सेना वेश्या भी इस माफिक हकीकत सुन करके प्रतिवोध पाके श्रावक धर्म अंगीकार किया तव कुवेर दत्ता साध्वी भी इस माफिक तिण लोगों का उद्धार करके अपणी प्रवर्त्तनी याने गुरणी के पास गई अनुक्रम करके यह पूर्वोक्त सर्व जीव अपना धर्म उत्तम प्रकार से आराधन करके उत्तम गतीमें गया यह अट्ठारे संवन्ध ऊपर कुवेर दत्त और कुवेर दत्ता का वृत्तान्त कहा। यह एक भव अंगीकार करके संवन्ध दिखलाया अनेक भव की अपेक्षा करके तो प्रायेंसां व्यवहारिक जीवों के एकेक संवंध अनंती दफै हो गया व्यवहार करके सोई वात फिर दृढ़ करते हैं॥

—श्रीमद् पंच मांग सूत्र वृत्ति वारमा सतकका सात मा उद्देसा। अयन्नं भंते जीवे सव्व जीवाणं माइत्ताए॥

इत्यादिक—गौतम स्वामी ने श्री वीर भगवान सेती प्रश्न किया हे भगवान यह जीव सर्व जीव के माता पिता भाई वैंन भार्या याने स्त्री पणें पुत्र पणें पुत्री पणें अरी पणें में वैरी घात पणें में वधक पणें में प्रत्यनीक पणें में राजा पणें में युवराज पणें में सार्थ वाह पणें में दास पणें में प्रेष्यपणें में भृतक पणें में भाग ग्राहक पणें में शिक्षणीय पणें में द्वेष्य पणें में उत्पन्न भया पेशतर इस तरह से सर्व जीव इस जीव के माता पणें में अनेक वक्त अनंती दफै उत्पन्न भया पहिली॥ ३॥ अब चौथी एकत्व भावना कहते हैं जैसे इस संसार के विषै एका की जीव उत्पन्न होता है और इकेला पर भव में

जाता है तथा अकेला ही कर्म पैदा करता है तथा तिस का फल भी अकेला भोगता है तत्व रुचि करके एक श्री जिन धर्म विगर और कोई भी स्वजनादिक सहाय नहीं कर सक्के इत्यादिक चिंतवन करणा उस कूं एकत्व भावना कहते हैं तथा फिर भी विशेषता दिखलाते हैं ॥

—इक्को कम्माइं सम्मं । जणइंभुंजइ फलंपि तस्सेक्को ॥
इक्कस्स जम्म मरणे । पर भव गमणंच इक्कस्स
इत्यादि ॥ ४ ॥

व्याख्या—यह जीव अकेला कर्म करता है और तिस का फल भी अकेला भोगता है अकेला जन्मता है अकेला पर भव में जाता है ॥ ४ ॥ अब पांचमी अन्यत्व भावना कहते हैं यहां पर जो आत्म प्रदेश करके गाढ़ा याने सघन संबंध बहुत काल तक मनोभीष्ट अशन पानादिक करके बहुत लालन पालन करा मगर वस्तु गती करके अपणा शरीर भी अन्य है आखिर में प्राणी के साथ जाता नहीं तब बाहिर के धन कन कादिक पर वस्तू की बात ही क्या है तिस वास्ते एक आत्म धर्म विगर सर्व भाव जो है अन्य है इत्यादिक विचार करणा उस कूं अन्यत्व भावना कहते है सोई दृढ़ करते हैं ॥

—चिर लालियंपि देहं । जइ जिय मंतंमि नाणु
वट्टेइ । तातंपिहोइ अन्नं । घण कणयाईण का
वात्ता ॥ १ ॥

व्याख्या—बहुत काल तक इस शरीर का लाड़ करा और पाला मगर आखिर में शरीर की भस्म हो जाती है तिस वास्ते जुदा है जब शरीर काम आता नहीं तब धन कनकादिक की क्या बात है ॥ । १ । तथा और भी विशेषता दिखलाते हैं ॥

—अन्नं इमं कुडंवं । अन्ना लच्छी शरीर मवि अन्नं ॥
मोत्तुं जिणिं दधम्मं । नभवं तर गामिओ अन्नोत्ति ॥ ५ ॥

व्याख्या—यह कुडुंब अन्य है लक्ष्मी अन्य है शरीर भी अन्य है जिन राजके धर्म

सिवाय और कोई भी भवान्तर में नहीं जा सक्ता ॥ ५ ॥ अब छठी अशुचि भावना दिखलाते हैं। जैसे। यह रस रुधिर याने खून मांस मेद हाड़ वीर्य मींजी मई है तथा श्लेष्म नाक का मैल मल मूत्रादिक पूरण चमड़ी नसें तथा रोग शरीर का फूल जाना इत्यादि समाकुल यह शरीर रहा है तत्व दृष्टि करके विचार करो तब तो महा अशुचि करके भरा हुवा यह औदारिक शरीर है सद्भूत एक आत्म धर्म बिगर कैसे शुद्ध होवे कोई प्रकार करके भी शुद्ध नहीं। इति तात्पर्यः। तथा जो कोई इस शरीर कूं इस माफक केवल जलादि करके शुद्धि की इच्छा करते हैं वे तत्व विमुख अज्ञानी जानना इत्यादिक विचार करणा उस कूं अशुचि भावना कहते हैं तथा फेर तंदुल वैयाली पईन्नेके अनुसार सेती इस शरीरकूं गर्भा धान सेती लेके कुछ विशेष करके अशुचिका स्वरूप दिखलाते हैं तहां पर स्त्री के नाभि सेती नीचे फूल की नाल के आकार दोय नाड़ी हैं तिस के नीचे अधो मुखी होके पद्म कोश के आकार जीव के उत्पत्ति का स्थान स्वरूपा योनी होती हैं तिस के नीचे प्रदेश में आंबे की मांझर तुल्य मांझर रही है वा रितु समय के विषै फूट जाती है तब खून गिरने लगता हैं तब वाजब कोश आकार योनी में प्रवेश करे पुरषके संयोग सेती शुक्रमिश्रित होवे तब योनी जीव उपजणे योग्य होती है तहां पर वारे मुहूर्त तक बीर्य और खून अवींध योनी के विषै होवे तब तिससे ऊपर वींधी भई योनी पणें में जाता है तिस वास्ते वारे मुहूर्त के अन्दर तहां पर जीव उत्पन्न होता है आगूं नहीं तथा प्रथम समय में एकत्र मिला भया पिता संबंधी बीर्य माता संबंधी खून आहार पणें ग्रहण करे इसी का नाम ओज आहार है वो अपर्याप्त अवस्था तक होता है जब पर्याप्ता हो जावे तब तिस गर्भ के लोम आहार होता है अब तिस जीव आश्री वीर्य और खून द्रव्य सात दिन तक कलल होवे तब फेर सात दिन तक बुदबुदे का स्वरूप होवे तब प्रथम मास में कर्ष कम एक पल प्रमाणें मांस की पेशी होती है तथा दूसरे मांस में वा मांस की पेशी सघन मांसकी पिंडी होजावे तथा तीसरे मासमें माताकूं डोहला पैदा होवे तथा चौथे मास में माता का अंग पीड़ै पांचमें मास में वो जीव तिस मास की पिंडी के अंकूरे की तरह से दो हाथ दो पांव मस्तक एक ऐसा पांच अवयव प्रतें निष्पन्न करे तथा छट्ठै मास में पित्त और खून पैदा करे सातमें मास में सात सैंनसा पांचसै मांस की पेशी नव धमनी नाड़ी विशेष प्रतें साढ़ी तीन क्रोड़ रोम कूप पैदा करे आठमें मास में कुछ कम

निष्पन्न होवे तथा नवमें मासमें समस्त अंगोपांग निष्पन्न होता है तथा गर्भावस्था में माता का जीव के रस हरणें वाली पुत्र के जीव का रस हरण करने वाली दोय नाड़ी हैं तिस के अंदर पैली माताके जीवसे बंधी भई पुत्रके जीव से फर्श करी भई तिस नाड़ी करके पुत्र का जीव माता का भोजन करा भया नाना प्रकार का रस विगयादिक का एक देश करके ओज आहार ग्रहण करता है तथा दूसरी पुत्र की नाड़ी माता के जीव प्रतें फर्श करी भई तिस करके जीव अपने शरीर प्रतें विस्तार करे मगर गर्भमें कवल आहार ग्रहण करे नहीं तथा लघु नीत बड़ नीत इनका भी गर्भ में संभव होता नहीं जब फेर आहार द्रव्य ग्रहण करे तब तिसके कान कूं आदि लेके पांच इन्द्री पणें हाड़ मींजी केश रोमन खपणें परिणमन होवे तथा गर्भ में रहा हुवा जीव माता शयन करे तब वोभी सोवै माता सुखणी होवे तो वोभी सुखी होवे तथा माता दुखणी होवे तब वो भी दुखी होवे इस माफिक कर्म के उदय सेती जीव परम अंधकार के विषै अशुद्ध से भरा हुवा गर्भ प्रदेश के विषै महा दुख भोगता हुवा रहता है तब नव मास गये बाद वर्त्तमान काल में चाहे आगूं के कालमें गर्भणी स्त्री जो है सो। स्त्री। १। पुरष। २। और नपुंसक। ३। तथा केवल प्रतिबिंब मृगा लोढे की तरे से जन्म होना उस कूं प्रतिबिंब कहते हैं। ४। इन चारूं मांय से हरएक जन्म होजाता है तहां पर वीर्य अल्प होने से और खून अधिक होने से स्त्री होती है और बीर्य अधिक होने से और खून अल्प होने से पुरष होता है तथा दोनूं बराबर होवे तो नपुंसक होवे तथा केवल खून ही होवे तो निर्जीव मांस पिंड रूप प्रतिबिंब होजाता है तथा कोई जीव फेर बहुत पापादिक से पीड़ित होता हुवा दुःख पाता हुवा बहुत भवों का कर्म जन्य पाप उदय भया तिस करके गर्भ में ज्यादा भी रह सक्ता है तथा वात पित्तादिक दूषण करके तथा देवतादिक स्तंभित कर देते हैं इत्यादि पूर्वोक्त कारणों करके गर्भ में बारे बरष तक रह सक्ता है निरन्तर इस माफिक गर्भ की भव स्थिति रही है तथा काय स्थिति जो मनुष्यों के गर्भ की चौवीस बरस की जानना चाहिये सो दिखलाते हैं॥ कोई भी जीव बारे वरस तक गर्भमें रह करके फेर मरके तिस माफिक दुष्कर्म के वस सेती वोई गर्भ में रहा था कलेवर तिसमें उत्पन्न होके फेर बारे वरस तक जीवे इस वास्ते चोबीस बरस उत्कृष्ट गर्भा वास होता है तथा तीर्यंच जीव जो है सो तीर्यंचणी के गर्भ में उतकृष्ट आठ बरस तक रहता है तिस पीछे तिस

का विनाश या प्रशव याने जन्म होना होता है अब यहां पर सत्। चित्। आनंदाख्य शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज स्त्रियों की गर्भोत्पत्ति योग्य योनी कब तक रहती है तथा पुरषों के गर्भाधान के योग्य वीर्य कितने काल तक सचित्त रहता है सो कृपा करके बतलाईये तब निखिल विघ्नंध्वंश का वच्छेद का वच्छेद कर्त्व श्री महावीर स्वामी फरमाते हैं कि हे शिष्य पचपन बरष तक स्त्री की योनी अम्लान है इस वास्ते गर्भ ग्रहण करने लायक जानना चाहिये॥ तिस पीछे अचित्त योनि हो जाती है सोई बात निशीथ चूर्णि से दृढ़ करते हैं॥

—इत्थी ए जाव पण पन्न वासा नपूरंति ताव अमि
लाय जोनि पगभ्भं गिरहइ॥

॥ इत्यादिक॥ वहां पर भी पचवन बरस तक सचित्त योनी कही है॥

—पण पन्न वासाए पुण कस्सवि। अत्त वंभइ नपुण
गभ्भं गिरहइ पण पन्नाए पर ओनो अत्त व्वं नोगभ्भं
गिरह इत्ति॥

व्याख्या—पचपन बरस तक स्त्री गर्भ ग्रहण करे परन्तु रोगादिक कारण सेती पचावन बरस से पहिली अचित्त योनी हो सक्ती है तथा पचपन बरस लंघन भये बाद अगर रोगादिक कारण नहीं है तोभी गर्भा धान ग्रहण करने लायक योनी नहीं हो सक्ती तथा पचत्तर बरष तक पुरष वीर्यगर्भा धान के लायक सचित्त रहता है तिस पीछे तिस माफिक शक्ति नहीं रहती है इस से वीर्य हीन भी हो जाते हैं सोई बात फेर भी निशीथ चूर्णिका पाठ से दृढ़ करते हैं॥

—पण पन्नाइ परेणं। जोणि पमि लाइए महि लियाणं॥
पण हत्तरिए परओ। होइ अवीओ नरो पायं॥१॥

व्याख्या—पचपन बरस तक स्त्रियों की योनी सचित रहती है तथा पुरष का वीर्य पचत्तर बरस तक सचित्त रहता है पीछे अवीर्य याने शक्ति हीन हो जाता है यह कानूक सो बरस की उमर वालों की अपेक्षा करके जान लेना चाहिये तथा एक सो

वरषके ऊपर दोयसे तीनसे चारसे या वत् कहां तक कहना पूर्व कोटि वरषको ऊमर वाली जो स्त्री होवे तिणों की सर्व आयू मांय से आधी उमर समझ लेना चाहिये जब तक योनी अम्लान नहीं होवे वहां तक गर्भाधान धारण करे तथा पुरषों के सर्व पूर्व कोटि वरष को आयु होने से उसका चरम भाग याने आखिर का भाग याने वीसमें भाग में बीर्य रहित होता है तथा पूर्व कोडि से ऊपर ऊमर वाले युगलियों के तो जल्दी ऊमरमें याने पूर्व कोटि वालूं की अपेक्षा करके उनके जल्दी प्रसव होना चाहिये इत्यादिक फेर विशेष बात बड़े ग्रन्थों से जान लेना तथा इस शरीर के विषै तीन माता संबंधी अंग हैं॥

मांस। १। शोणित याने खून। २। मस्तक याने भेजा। ३। यह तीन। ३। तथा तीन पिता सम्बंधी अंग होता है। अस्थि नाम हाड़ का है। १। तथा हाड़ मींजी। २। तथा केश मूंछ दाड़ी रोम नख। ३। यह तीन। अब फेर इस शरीर के पृष्ट करंड याने पूठ पिछाड़ी का भाग याने पृष्टक रंडक याने पिछाड़ी का भाग वगैरे अव यवों की संख्या दिखलाते हैं॥ मनुष्य के शरीर में पिछाड़ी का भाग वगैरे में अट्ठारे प्रमाणें गांठ रूप संधी ये हैं तिण अट्ठारे संधी ये मांय से बारे संधा उन मांय से बारे पांशुली निकल करके दोनूं तरफ बींट करके वक्षस्थल याने छाती का भाग के बीच में पाले कै आकार परिणमी तथा तिसी पृष्ट बंस के बाकी रही छव संधीयें उन मांय से छव पांशुली निकल करके दोनूं पसवाड़ों कूं बींट करके हृदय के दोनूं पसवाड़े तथा वक्षपंजर सेती नीचें और शिथिल कूख के ऊपर आपस में मिली नहीं इस माफिक रहती है इस कूं कटाह कहते हैं तथा शरीर के विषै प्रत्येक २ पांच २ वाम प्रमाणें दो आंतें हैं तिनके अन्दर एक स्थूल। १। और दूसरी छोटी। २। जो मोटी आंत है उस से लघु नीत परण मन होता है तथा फेर छोटी आंत है तिस सेती बड़ नीत पर णमन होता है तथा इस शरीर में दो पस वाड़ा है दाहिणा। १। और वामा। २। तहां पर जो दाहिना पसवाड़ा है सो दुःखकारी परण मन वाला जानना चाहिये तथा जो वाम पसवाड़ा है सो सुक्खकारी परण मन जानना चाहिये तथा फेर इस शरीर के विषै एक सौ साठ संधीयें हैं तथा अंगुली कूं आदि लेके हाड़ के टुकड़ों का मिलाप का ठिकाणा उणकूं संधीयें कहते हैं तथा एक सौ सात प्रमाणें मर्म स्थान रहा है तथा पुरष के शरीर में सात सै नाभी से उत्पन्न भई नसें हैं तथा एक सौ

साठ नसें ऊर्ध्व गामी याने ऊंची चढ़ने वाली नाभी सेती लेके माथेतक जातीहैं तिस नसकूं रस हरणी भी कहते हैं तिन नसों में कोई तरह का व्याघात नहीं होने से कान। आंख। नाक। जीभ इनों का बल वृद्धि रहता है तथा उपघात होने से इन्द्रियों का बल क्षय हो जाता है तथा एक सौ साठ और दूसरी नसें हैं नीचे चलने वाली पांव के तलों में चली गई तिस नसों के अनुप घात सेती याने घात नहीं होनेसे जांघोंका बल वगैरे वृद्धि होता है तथा उसके घात होने सेती शिर में वेदना तथा अंधपणा करे तथा एक सौ साठ और नशें गुदा में प्रवेश करी भई जिनों के बल करके वायू तथा लघुनीत और बड़ नीत प्राणियों के प्रवर्त्तन होता है इन नशों के घात सेतीं अर्श रोग तथा पांडु रोग तथा मल मूत्र वायु का निरोध होता है तथा एक सौ साठ और नशें तिरछी चलने वाली सिर से हाथों के तली तक पहुंची तिन नसों के अनुप घात सेती बाहु बल प्राप्त होता हैं तथा तिन नशों के उपघात सेती पीठ प्रदेश में तथा पेट में वेदना उत्पन्न हो जावे तथा और भी पंच वीस नसें श्लेष्म कूं धरणे वाली हैं तथा और फिर पंच बीस पित्त की धरने वाली हैं तथा दस नशें शुक्र याने वीर्य वगैरे सात धातु कूं धारने वाली हैं इसी तरह से नाभी से उत्पन्न भई सात सै नसें पुरुष के शरीर में होती है तथा स्त्रियों कूं नशें सात सै मांयसें तीस कमती करना याने छव सै और सित्तर नसें होती हैं तथा नपुंसक के फिर बीस नसें कमती होती हैं तथा इस शरीर के विषै नव सें प्रमाण हाड़ बंधन नाड़ी रही है तथा फिर नव नाड़ी रस वहन करने वाली धमनी नाड़ी जानना तथा मूंछ दाढ़ी विगर निन्नाणवे लाख रोम कूप है अगर सर्व मिलाने से साढ़ी तीन कोटि रोम कूप होती है तथा श्मश्रू नाम मूंछ दाढ़ी का है तथा केश शब्द करके शिर के बाल तथा मुख के भीतर जीभ लंबाण आत्मां गुल करके सात अंगुल प्रमाणें होती है तथा तोल करके मगध देश प्रसिद्ध पलों करके चार पल प्रमाणें होती है तथा आंख के मांस का गोला दो पल प्रमाणें होता है तथा सिर तो अस्थि खंड रूप याने हाड़ के टुकड़ा चार कपाल करके निष्पन्न होता है तथा ग्रीवा नाम नश का है सो चार अंगुल प्रमाणें होती है तथा मुख से हाड़ के टुकड़े रूप दांत प्राये बत्तीस होता है तथा हृदय के भीतर का मांस खंड रूप साढ़ी तीन पल का होता है तथा वक्षस्थल भीतर गुप्त मांस विशेष रूप काल जो फिर पंच वीस पल प्रमाणें होता है तथा शरीर के विषै मूत्र और खून प्रत्ये के याने जुदा २ एक आढक प्रमाणें हमेशा होता है तथा इस माफिक वीर्य और खून जहां कमती वेशी होता

हैं तहां पर वात का दूषण जानना चाहिये तथा पुरुष के शरीर में पांच कोठा होता है तथा स्त्री के छव कोठा होता है तथा फिर पुरुष के दो कान दो आंख दो नासिका का छेद तथा मुख वायू गुदा नव श्रोत्र याने नव अशुचि स्थान होता है तथा स्त्री के स्तन दोय मिलाने से ग्यारह अशुचि स्थान होता है यह मनुष्य गती अंगी कार करके जानना तथा तीर्यंच गती के विषै बकरी वगैरे दो स्तनी के इग्यारे श्रोत्र याने अशुचि स्थान जानना तथा गाय वगैरे चार स्तनी की तरह से अशुचि स्थान रहता है शूकरी वगैरे आठ स्तनी के सतरे अशुचि स्थान जानना यह निर्व्याघात में जानना तथा व्याघात होने से फिर एक स्तनी बकरी के इग्यारे अशुचि स्थान होता है तथा तीन स्तनी गाय के वारे अशुचि स्थान होता है तथा पुरुष के शरीर में पांच सै मांस की पेशी होती है तथा स्त्री के तीस कमती जानना तथा नपुंसक के वीस कमती। तथा यह शरीर अनेक मोटे रोगों के उत्पन्न होने का स्थान है तहां पर संसार में रहा भया सर्व रोग की संख्या दिखलाते हैं गाथा द्वारा॥

—पंचेव य कोडी ओ। लक्खा अड सट्ठिसहस नव
नवई॥ पंच सयाचुल सीई। रोगाणं हुंति संखाओ॥ १ ॥

व्याख्या—पांच क्रोड़ अड़सठ लाख निन्नाणवे हजार पांच सै चौरासी रोगों की संख्या जानना इस माफिक हाड़ कूं आदि लैके संघात रूप विविध व्याधि करकै आकुल व्याकुल इस शरीर के विषै कौण चीज शुचि है मगर एक भी नहीं॥ ६ ॥ अब सातमी आश्रव भावना दिखलाते हैं। इस संसार के विषै जीव मिथ्यात्व। अविरति। कषाय। योग। इनों करके आश्रव समय २ में शुभ अशुभ कर्म पुद्गल प्रतें ग्रहण करता है तहां पर जिन पुन्यात्मा का चित्त हमेशा सर्व सत्व के विषै मित्राई। गुणवान के ऊपर प्रमोद रखना। तथा अविनीत ऊपर मध्यस्थ भाव। तथा दुःखी के विषै करुणा करके वासित होणा वे शुभ कर्म बांधते हैं तथा फेर जिनों के मन में आर्त्त रौद्र ध्यान मिथ्यात्व कषाय विषयों करके सर्वदा भरा हुवा रहै वे प्राणी अशुभ कर्म बांधते हैं इत्यादिक विचार करना उसकूं आश्रव भावना कहते हैं सोई दिखलाते हैं॥

—मिच्छत्ता विरइ कषाय। जोग दरिहिं जेहिं अणु समयं॥ इहकम्म पुग्गलाणं। गहणंति आसवाहुंति॥ १॥

व्याख्या—मिथ्यात्व। अविरत। कषाय। योग। द्वार करके समय २ में कर्म रूप पुद्गल कूं ग्रहण करणा उस कूं आश्रव भावना कहते हैं॥ ७॥ अब आठमी संवर भावना कहते हैं। जैसे यहां पर मिथ्यात्व कूं आदि लेके पांच आश्रव को सम्यक्त करके रोकणा तिसकूं संवर कहते हैं वो दो प्रकार का होता है। सर्व करके। और देश करके। तहां पर सर्व संवर तो अयोगी केवलीयों के होता है। तथा देश करके एक दो तीन आश्रवों कों रोकणा तथा फेर जुदा २ द्रव्य भाव भेद करके दो प्रकार का जानना तहां पर आत्मा के विषे रहा भया आश्रव सें उत्पन्न भया कर्म रूप पुद्गल उनों कूं सर्व तथा देशेंच्छेदन करणा तिसकूं द्रव्य संवर कहते हैं॥ तथा जो फेर भवका कारण की क्रिया का त्याग याने भव बढ़ाने की क्रिया का त्याग करे उस कूं भाव संवर कहते हैं इस माफिक स्वरूप आश्रव का विरोधी संवर कूं चिंतवन करना उस कूं संवर भावना कहते हैं सोई बात फेर पुष्ट करते हैं॥

—आसवदार पिहाणं। सम्मत्ताईहिं संवरोतेउ॥ पिहियासवो विजीवो। सुतरिव्व तरेइ भवजल हिंति॥ ८॥

व्याख्या—आश्रव रूप दरवाजा ढांकणा किस करके सम्यक्तादि करके वो संवर आश्रव ढांकणे से जीव संसार रूप समुद्र से जल्दी तिर के संसार का अंत करे। ८। अब नवमी निर्ज्जरा भावना दिखलातेहैं जैसे इस संसारके विषें पेस्तर बांधा भया कर्मोंकों तप करके कर्त्तन याने दूर करणा तिसका नाम निर्ज्जरा है बंधे भये कर्मकूं रोकणा उस कूं संवर कहते हैं पेस्तर के कर्म कूं क्षय करणा उस कूं निर्ज्जरा कहते हैं या निर्ज्जरा दो प्रकार की जानना। सकाम निर्ज्जरा। दूसरी अकाम निर्ज्जरा। तहां पर सकाम निर्ज्जरा बारे भेद। बाह्य। अभ्यंतर तप प्रत्येक २ छै प्रकार का होता है वे भेद पेस्तर यती धर्माधिकार में दिखलाया या बारे प्रकार की निर्ज्जरा विरति परिणा तोकूं होती है वोही कर्म क्षय के वास्ते अपणी अभिलाषा करके करते हैं तथा अकाम निर्ज्जरा तो विरति परिणाम रहित बाकी जीवों के अभिलाषा रहित शीत उष्ण क्षुधा प्यास वगैरे

सहन करने सेती होती है इस माफिक निज्जरा का चिंतवन करणा तिस कूं निज्जरा भावना कहते हैं सोई फेर दृढ़ करते हैं ॥

——कम्माण पुराणाणं । निक्किंतणं निज्जरा दुवालसहा ॥
विरयाण सास कामा । तहा अकामा अविरया णंति ॥ ६ ॥

व्याख्या—प्राचीन कर्मकूं निकृंतन याने जीर्ण करणा उसका नाम निज्जरा है वो बारे प्रकार की कही है वा निज्जरा विरती यूं कै सकाम होती है तथा अविरती यूं कै अकाम निज्जरा होती है ॥ ६ ॥ अब दशमी लोक स्वभाव कहते हैं अब लोक के मध्य भाग में चौदे राज प्रमाणें लोक रहा हुवा है वो लोक कमर स्थापन करके दोनूं हाथोंकूं तिरछा फैला के दोनों पांव सहित जो पुरष तिसके आकार रहा है वाथवा नीचा मुख कर दिया ऐसे बड़ी कुंडी एक के ऊपर दूसरी रही भई तिसके आकार यह लोक रहा है यहां पर यह तात्पर्य है सातराज विस्तार नीचे का लोकके बल से ऊंचा लोक संकोच खाता भया तीरछा लोक एक राजका विस्तारहै तब फेर ऊंचा जावे तब विस्तार पाता भया ब्रह्म लोक का तीसरा पाथड़ा एक राज विस्तार चला गया तथा फेर थोड़ा २ संक्षेप पाता हुवा सर्व के ऊपर लोकाग्र प्रदेश का पाथड़ा एक राज विस्तार जानना चाहिये तब यथोक्त संस्थान वाला लोक होता है तथा तिस लोकके विषै धर्मास्तिकाया दिक छै द्रव्य रहा हुवा है तहां पर जो स्वभाव सेती गतीमें प्रवर्त्तन हो रहा है ऐसे जीव पुद्गलोंकूं मत्स जलकी तरह सें सहाय कारक होवे तिसकूं धर्मास्तिकाय कह तेहैं । १ । तथा जो फेर रस्ते में चलने वालूं कूं छाया की तरह से रहने वाले जीव कूं सहाय देना उस कूं अधर्मास्तिकाय कहते हैं । २ । यह दोनूं प्रदेश सेती तथा प्रमाण सेती लोक आकाश तुल्य है तथा वो जीव जो है उन कूं गती गमन और स्थिती याने थिर रहने वाले कूं आधार भूत अवकाश देना उसकूं आकाशास्ति काय कहतेहैं । ३ । तथा चेतना लक्षण जीव धर्म है सो कर्म का कर्त्ता और भोक्ता रहा है तथा जीवन धर्म है जिस का उसकूं जीवास्ति काय कहते हैं । ४ । तथा पृथ्वी और पहाड़ बादल समस्त वस्तुवों का परिणामी कारण है तथा पूरणगलन धर्म धर्म है जिसका उसकूं पुद्गलस्तिकाय कहते हैं । ५ । तथा वर्त्तना लक्षण नया पुराण ऐसे पुद्गल वस्तुवों का जीर्ण होना तथा नूतन

होना इस माफिक स्वभाव वाला काल जानना उसकूं कालास्तिकाय कहते हैं। ६। इन छव द्रव्य में पुद्गल द्रव्य कूं छोड़ करके सर्व अमूर्त्ति जाणना तथा पुद्गल जो है सो मूर्त्त है याने दिखाई देता है तथा जीव द्रव्यकूं छोड़ करके सर्व अचेतन द्रव्य है अब यहां पर सत्। चित्। आनन्दाख्य शिष्य प्रश्न करता है असंख्याया प्रदेश मयी लोक आकाश के विषै अनंता जीव द्रव्य तथा तिणों से अनंत गुण अधिक पुदगल द्रव्य कैसें रह सक्ता किंतु संकीर्ण पणा होना चाहिये ॥ इति प्रश्नः ॥

अब ज्ञानी महाराज उत्तर देते हैं। हे शिष्य। जीव द्रव्य अमूर्त्ति है इस वास्ते संकीर्ण पणा नहीं होता तथा पुदगल मूर्त्ति है तो भी प्रदीप प्रभादि दृष्टांत करके तथा विध याने तिस माफिक विचित्रता करके एक आकाश के विषै अनंतानंत परमाणू आदि पुद्गल द्रव्यों से संकीर्णता करके रह सक्ते हैं याने रहते हैं सर्वदा असंख्यात प्रदेश में ठहरे उस में आश्चर्य क्या है सोई पूज्य वर्य नवांगी कारक कोटिक गणेश्वर श्रीमदा भय देव सूरि महाराज श्री भद्विवाह प्रज्ञप्त्यंगौ। त्रयोदश शतकके चौथा उद्देशा में दिखलाया है ॥ आगासत्थि काएणं इत्यादि जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य के भाजन समान इस के कहनेका मतलब यह भया आकाशस्ति कायादिक करके जीवोंका अवगाह प्रवर्त्तन होता है तथा एक परमाणू आदि करके यह आकाशास्तिकाय प्रदेश ऐसा जाना जाता है उस करके पूर्ण भर गया तथा दो द्रव्य करके भी पूर्ण भर गया कैसे कहा जाता है परिणाम भेद करके जैसे कोठे में आकाश में एक दीपक की प्रभा के पडल करके भी पूरण होता है तथा दूसरा भी तीसरा भी यावत् सो प्रमाणें तहां पर आ सक्ता है तथा औषध सामर्थ्य सेती पारे का कर्ष।सोने का कर्ष सो प्रमाणें जुदा हो जावे पुद्गल परिणाम की विचित्रता है ॥ तथा यहां पर फेरभी ऊर्ध्व अधो तीरछे लोकका स्वरूप का चिंतन करणा उसकूं लोक स्वभाव कहते हैं सोई फेर पुष्ट करते हैं ॥

—अह मुह गुरु मल्ल यट्ठियं। लहु मल्लयजुअल संठियं
लोगं। धम्माइ पंचदव्वेहिं। पूरियंमणसिचिंतिज्जेत्ति ॥ १० ॥

व्याख्या—पेस्तर दिखला आये हैं पुरपका आकार उसी माफिक लोक का संस्थान आकार उस लोक में धर्मास्ति कायादिक पांच द्रव्य है याने पूरित है इस माफिक दिलमें

विचार करणा । अब इग्यारमी बोधि दुर्लभ भावना दिखलाते हैं अनंत से अनंत काल दुर्लभ पंचेंद्री में मनुष्य भव वगैरे की सामग्री का योग मिल भी जावे तोभी परम विशुद्धि की करने वाली सर्वज्ञोंके फरमाया भया तत्व ज्ञान रूपा बोधि प्रायें मिलना दुर्लभ है वा बोधि जो एक दफै भी जीवकों मिल जावे तो जीवोंकूं इतने काल तक घूमणा नहीं पड़े इत्यादिक विचारणा उसकूं बोधि दुर्लभ भावना कहते हैं । सोई बात फेर दृढ़ करते हैं ॥

—पंचिदिय त्तणा इय । सामग्गी संभवेवि अइ दुल्लहा ॥
तत्ताव वोहरूवा । वोही सोही जियस्सजओत्ति ॥ ११ ॥

व्याख्या—पंचेंद्रियत्व पणें की सामग्री पाई तो भी तत्वाव वोध रूप वोधी शुद्धि करने वाली ऐसी जीवकूं बोधी पाणी दुर्लभ जानना ॥ ११ ॥ अब बारमी भावना धर्म कहने वाले अर्हंत है ऐसी भावना उसकूं बारमी धर्म कथिक भावना कहते हैं इस संसार के विषै वीत राग देव है सो सर्वदा पर अर्थ करने में उद्यत रहते हैं तथा निर्मल केवल ज्ञान करके सकल लोका लोक जाणते देखते हैं श्रीमान् अर्हंत विगर इस माफिक निर्मल साधु श्रावक संबंधि सद्भूत धर्म कथा कहणें कूं कोण समर्थ रहा है तथा कुतीर्थियों का वचन तो अज्ञान मूल पूर्वा पर विरोध है और हिंसादिक दोष पुष्ट रहा है इस वास्ते कुतीर्थिक वचन तो प्रत्यक्ष असद्भूत है तथा जो फेर वे भी कोई ठिकाने दया सत्यादिक का पोषण करते हैं तथा पुराण स्मृति में केवल दर्शन मात्र है तत्व करके कुछ भी नहीं इस वास्ते तत्व सेती शुद्ध स्वरूप की धारणें वाली सकल जगतके जीवों की तारणें वाली श्रीमद् अर्हंत की वाणी का कितना वरणाव करूं अगर जो एक भी वचन कोई प्रकार कानमें पड़ गया होतो रोहिणीयेंकी तरहसे प्राणियों कूं महा उपगार होता है इत्यादिक विचार करना उस कूं बारमी भावना कहते हैं सोई बात फेर दिखलाते हैं ॥

—धम्मो जिणेहिं निरुवहि । उवयार परेहिं सुठ्ठ पन्नतो ॥
समणाणं समणो वास याणं । दसहा दुवाल सहा ॥ १ ॥

व्याख्या—धर्म के कहने वाले जिन हैं तथा उपगार के करने वाले बहुत शोभनीय निरूपण करा तथा साधुवों की और श्रावकों की दस प्रकार तथा बारे प्रकार की भावना भावित करणा । १ । अब भगवानकी वाणी ऊपर रोहिणी ये चोरका वृत्तान्त दिखलाते

हैं। राज गृही नगरीके विषै श्रेणिक नामें राजा राज करता था तिसके अभय कुमार नामें सर्व बुद्धि का निधान पुत्र होता भया तथा उधरसे तिस नगरके समीप वर्त्ति वैभार पर्वत की गुफा में भयानक लोह खुरा चोर वसता था वो चोर राज गृह नगर के लोगों कूं स्त्रियों करके धन करके अभ्यास करके काम अर्थ कूं साधन करता हुवा काल गमा रहा था तिसके रोहिणी नामें स्त्री के रोहिणीया नामें अति क्रूर पुत्र भया अब लोह खुरा अपनी मौत के वक्त में पुत्र प्रतें बुलवा करके ऐसा कहा हे पुत्र जो अपने हित की वांछा करता है तो मेरी कही भई एक शिक्षा सुन यहां पर निश्चय करके यह तीन गढ़के भीतर रहा है श्री वीर जिन कोमल वचन करके कहते हैं तिसका वचन उत्तर काल में दारुण याने भयानक तूं कभी नहीं सुणना इस माफिक पुत्र प्रतें शिक्षा देकर के अपणा प्राण त्याग किया तव रौहणिया भी पिता की शिक्षा याद करके हमेशा चोरी करता रहै अब एक दिन के वक्त श्री वीर प्रभू तहां समवसरे तव देवतों नेसमव सरण की रचना करी। तव भगवान भव्य जीवूं के आगूं धर्म देशना प्रारंभ करी तव वो चोर चोरी करने के वास्ते राज गृही में जाता था समवसरण के पास पहुंचा तहां पर ऐसा विचार किया जो इस रस्ते होके जाऊंगा तव तो जिन का वचन श्रवण करनेमें आवेगा और रस्ता है नहीं अव क्या करूं वा विपवाद करने की जरूरी नहीं कानों में अंगुली डाल करके चला जाऊं ऐसा विचार करके तिसी माफिक करके जल्दी पांव उठा करके जाने लगा दैव योग से तिस के पांव में गाढ़ा कांटा भग गया तिस कूं निकाले विगर कदम मात्र भी आगूं चलने समर्थ नहीं भया तव इच्छा विगर कान की एक अंगुली खेंच करके तिस करके वाहर का शल्प का उद्धार किया मगर तिस के अंत रंग शल्प विशोधिनी देव स्वभाव वर्णिका इस माफक श्री वीर वाणी कानों में पड़ गई। सो दिखलाते हैं॥

—अणिमिस नयणा मण कज्ज साहणा। पुष्फ दाम अमि लाणा॥ चउरंगु लेन भूमिं। नछि वंति सुरा जिणा बिंति॥ त्ति॥१॥ संग्रहिणी गाथा देवतावों का संबंध॥

व्याख्या—भगवान् श्री महावीर देशना दे रहे थे॥ उसमें देवतावोंका संबंध फरमा

रहे थे कि देवता ऐसा होता है किनेत्र फरकावै नहीं मन से कार्य करने वाले फूलूं की माला कम लावै नहीं चार अंगुल जमीन से अधर रहते हैं इस माफिक सर्वज्ञों ने कहा है इस माफिक देवता का अधिकार रोहिणी ये चोर के कान में पड़ गया तब रोहिणीया क्या कहता है बहुत सुनी २ ऐसी चिंता करके जल्दी से कांटा निकाल करके फेर आंगुली से कान ढक करके राज गृही में गया तहां पर वो अपनी इच्छा माफिक चोरी करके फेर पर्वत की गुफा में प्रवेश कर गया परन्तु पांव का कांटा निकालती वक्त में श्री वीर भगववान् की वाणी सुनने में आई थी मगर उस वाणी कूं दुर्द्धर शल्प की तरह से मान करके हमेशा दिल में रंज रक्खै अब हमेशा सर्व नगर कूं मूष करके तिस चोर ने दुःखी कर दिया नगरके लोगों कूं अवसर में राजा प्रतें दुःख निवेदन करा तब राजा भी मधुर वचन करके लोगों कूं विश्वास देके कोट वाल प्रतें कहने लगा अरे चोर कूं पकड़ करके लोगों की रक्षा क्यों नहीं करता है तब कोटवाल बोला हे देव रोहिणीया नामें अति दुर ग्रह कोई चोर प्रगट भया है तिस कूं पकड़ने के वास्ते बहुत उपाय करा परन्तु कोई भी उपाय करके उस कूं पकड़ नहीं सक्के हैं इस वास्ते हे देव आप अपणा कोटवाल पणा ग्रहण करो ऐसा कहने सेती राजा अभय कुमारके सामने देखा तब अभय कुमार बोला कि हे पिता जी सात दिनके भीतर चोर प्रतें पकड़ के लाऊं नहीं तब बहुत क्या कहूं चोर का दंड देना ऐसा कह करके अभय कुमार सर्व चोर का ठिकाना यत्न करके देखता है मगर कहां भी चोर मिले नहीं तब छट्ठे दिन संध्या की वक्त में नगर के भीतर लोकूं का कोलाहल मना करके किलेके बाहिर चौ परफ सिपाईयों को रख दिया तिस दिन अप शकुनों ने मना करा तो भी वो चोर नगरके भीतर प्रवेश करके जब तक किसी के घर में चोरी करने लगा तितने में तो कदम२ में रहे भये सिपाई मिल कर एक हांक करके त्रासित किया वो चोर भग कर के ऊंचा उड़ करके किले ऊपर चढ़ करके बाहिर पड़ता था उतने में तो सिपाइयों ने पकड़ लिया सवेरे की वक्त तिन को अभय कुमारके सुप्रत किया अभय कुमार राजा के सुप्रत किया तब राजा भी तिसके पास चोरी का माल देखा नहीं जब पूछा कि तूं कोण है ऐसा पूछे वाद वो चोर बोला हे राजन् मैं तो शालिग्राम में रहने वाला दुर्ग चंड नामें राजा का कर देने वाला खेती करने वाला कृपाण हूं यहां पर कुछ कार्य करके रात कूं अपने गाम जाता था तहां पर तुमारे

सिपाईयों ने डराया मुझे तब डर करके कोट लंघ के बाहिर गिर रहा था इतने में इन सिपाइयों ने चोरकी बुद्धि करके पकड़ लिया अब यह विचार के जाणने वाला तुम विचार करो अगर मैं चोर हूं तो मुझे दंड दो वा मेरे मरणें सेती अभय कुमार जीवै तैसा इलाज करो इस माफिक रोहिणिये का वचन सुन करके राजा तिस चोर प्रतें दृढ़ बंधन सेती बांध करके प्रतीति के वास्ते तिस गाम में सिपाई भेजा तिस गाम में तिस चोर ने पेश्तर संकेत कर दिया था जिस वास्ते दूसरों की जमीन में ठगाई चोरी करता था मगर तिस गांव की पालणा करने वाला था तिस गांव के मालिक पास जाके राजा के सिपाई ने तिस बात कूं पूछी तब सब ग्राम के लोग कहने लगा सत्य है यहां पर दुर्ग चंड किसाण बसता है वो गए दिन नगर में गया था परन्तु अभी तक आया नहीं तिस कारण करके सब लोक तिस की हकीकत जाणने के वास्ते आतुर रहा है तब वो सिपाई पीछा आकर के इसी माफिक विनती करी तब राजा उदास हो गया और विचारने लगा कि अहो अभय कुमार मौत के भय सेती सरल गांव का लोक है उस पर चोरका व्यप देश करता है तब अभय कुमार मुख चेष्टादि करके राजा का अभिप्राय जान करके मैं इस चोर का कापटय पणा कौन बुद्धि से प्रगट करूं ऐसी चिंता में पड़ गया तब तो जल्दी से उत्पन्न भई बुद्धि वो अभय कुमार एक सात मजला विचित्र चित्राम करके सहित नाना प्रकार के मोती जड़ा के रंभा बरोबर रूपवान् नारी तथा देवता सरीखा तिन करके स्वर्ग विमान बरोबर तईयार करवाके चोर प्रतें कहने लगा धिकार हुवो मुझ दुर्मतीकूं जो तुम खातरी करने लायक हो उनकी मैंने ऐसी विटंबना करी अब एक दफै तूं मेरे महिल में आव जो तुमारी भक्ति करके अपणा अपराध दूर करूं तब वो भी बड़ा कपटी था मंत्री के साथ तिस महिलमें गया तहां पर मिष्ट आहार करके परम प्रीति करी तब अभय कुमार मदिरा पा करके दिव्य वस्त्र पहिना के तिस पलंग पर सुलाया अब नींद दूर होने से वो चोर देवता जैसा मकान देखा आप स्वर्ग में रहा है इस माफिक मानने लगा तब अभय कुमार की आज्ञा करके चौतरफ से नर नारी का समुदाय तिस चोर कूं अंगीकार करके जय२ नंदा ऐसा मंगल उच्चारण किया फेर कहने लगे कि पूर्व भव के सुकृत के वश सेती इस विमान में तूं उत्पन्न भया हम सर्व तुमारे नौकर हैं ऐसा कहके तिनों ने नाटक प्रारंभ किया तब अभय कुमार के आदेश सेती एक पुरष सोने का दंडा हाथ में लिया भया आ

करके तिन लोगों से कहा कि भो नाटक जरा देर तक मौकूव रक्खो जब तक इस देवता से देव लोक संबंधी स्थिति याने मर्यादा रीति करवावें ऐसा कह करके तब तिस रोहिणीयें से पूछने लगा भो नवीन देव आप अपने पूर्व भव में पैदा किया पुन्य पाप निवेदन करो पीछे देवलोक का सुख भोग वो तब तो रोहिणीया उदास हो गया यह क्या सत्य स्वर्ग है या मेरे वास्ते अभय कुमार ने कोई भी प्रपंच रचन करा दिखता है ऐसा विचार करके वो धीर बुद्धि वाला चोर कांटा निकालने की वक्त में श्रवण गोचर हो गया था देवताओंका अधिकार नेत्र फुरकावें नहीं इत्यादिक भगवान् का वचन सुणा था उनकूं स्मरण किया तव यह आप आगूं रहा भया मनुष्य लोगूं का जमीन में पांव लगे हुये तथा माला कम लाई भई नेत्र मिले भये तथा मन वंछित सिद्ध करने में असमर्थ देख करके भगवानके वचनों के साथ तिन पुरषांका साक्षात विरोध देख करके वो सर्व अभय कुमारका रचा भया कापठय देख करके जाणा तब तो वो दंड वाला पुरष फेर बोला भो क्या विचार कर रहा है सर्व देवलोक वाले अपनी २ भक्ति दिखलाने के वास्ते तइयार रहे हैं इस वास्ते तुम जल्दी से अपना वृत्तांत कहो तब रोहिणीया बोला जिन पूजा साधू से वा तथा दया पालना पात्र में दान देना मंदिर वणवाणा इत्यादिक उत्तम धर्म कृत्य मैंने पूर्व भवमें किया है तथा फेर दंड धारी बोला भो देव प्राणियों का जन्म एक स्वभाव करके नहीं जाता है तिस वास्ते अकृत्य भी चोरी स्त्री लोलपादिक पाप कर्म करे हो सो निवेदन करो शंका रहित कहो तब रोहिणी यों कहने लगा कि अहो दिव्य ज्ञानका धारक तुझ को मति भ्रम पैदा हो गया जिससें इस माफिक विपरीत बोलता है जो निश्चय कर के साधुवों की सेवा करने वाले श्रावक ऐसा कुकर्म करे या नहीं अगर जो कुकर्म करे या नहीं अगर जो कुकर्म करे तो इस माफिक स्वर्ग का सुक्ख कैसे मिले तिस वास्ते मेरे तो मन करके पाप नहीं है किस वास्ते बेर २ पूछता है तब चिक के भीतर रहा भया था अभय कुमार सर्व हकीकत सुन करके रोष से होंट चबा करके रोहिणीयें की बुद्धि का केशलपणें की तारीफ करणें लया तब अभय कुमार रोहिणियेके पास आकरके अलिंगन करके ऐसा कहा हे वीर आज तक मुझ कूं किसी ने जीता नहीं तुमने फेर जीता मगर बड़ा आश्चर्य यह है कि मैं भी तुझ कूं ग्रहण कर सका नहीं. इस माफिक अभय कुमार का प्रीति पूर्वक वचन सुन करके. रोहिणियों बोला हे अभय: श्री वीर वचन हृदय में

धारणा करा इस वास्ते तुमने मुझ कूं ग्रहण नहीं कर सका इसमें क्या आश्चर्य है अगर मदिरा पिला के तुम देवलोक में पहुंचाते हो तिसमें आश्चर्य है तब अभय कुमार बोला हे भाई मेरा कहा भया सुणते हो इस से मुझ कूं क्यों सरसातुर करते हो अब यथार्थ हकीकत कहो कि चोर पणें में तैंने श्री वीर वाणी कैसे सुनी इस माफिक स्नेह सहित पूछा तब वो चोर सर्व हकीकत अपनी कहके फैर बोला जो जगत गुरू का वचन में तब नहीं सुनता तो आज तुम छल करके क्या २ विटंबना करते फेर भी मैं क्या कहूं जिस जिस प्रभू का एक भी वचन प्राणियों का महा कष्ट दूर करने वाला होता है अगर जो सर्व आगम श्रवण करने में आवे तबतो अक्षय सुक्ख याने मोक्ष सुक्ख देने वाला करूर होवे मुझ कूं पिता रूप बैरी ने ठगा उस करके कान में पड़ गई श्री वैरी वाणी तिस प्रतें शल्प की तरह से मानता था परन्तु वा वाणी अमृत स्वभाव करके मुझ कूं अभी जीवित दान देने वाली भई अब हे भाई सर्व धन चोरी करा हुवा तुम कूं दिखला करके में तो श्री वीर महाराज के चरण कमल की भक्ति सहित दीक्षा अंगीकार करूंगा तब अभय कुमार रोहिणीये कूं राजा के पास लाके कहा कि हे स्वामी यह अपणा चोर पणा मानता है खुदने जाहर कर दिया तब राजा मारणें काहुकम दिया तब अभय कुमार बोला कि हे पिता जी इस कूं छोड़ोगे तब तो चोरी का धन पीछे देगा नहीं तब इस विगर माल हाथ आवेगा नहीं तथा मैंने भी भाई करके इस कूं ग्ररण किया है मगर बुद्धि करके नहीं अब यह फेर बैराग्य वासित मन करके दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा करता है तिस वास्ते मारणें के योग्य नहीं तब तो तिस चोरने अपहरण करा भया धन सर्व दिखलाया राजा ने तिस द्रव्य कूं यथा योग्य नगर वालूं कूं दे दिया तिस बाद श्रेणिक राजा ने निकलने का महोच्छव करा धन स्त्री परिवार त्याग करके रोहिणीयो चोर नगर के लोक स्तवना कर रहे थे इस माफिक श्री वीर प्रभू के पास विधि सहित दीक्षा ग्रहण करके पूर्वं अंगी कारकराथा खोटा पाप तिसकी शुद्धीके वास्ते नाना प्रकारकी तपस्या तपी शुद्ध धर्म अंगी कार करके अनसन करके स्वर्ग गया यह भगवान की वाणी के महात्म पर रोहिणीयें का वृत्तांत दिखलाया इस माफिक बारे भावना का स्वरूप दिखलाया ॥ १२ ॥ अब साधू संबंधी बारे प्रतिमा का स्वरूप कहते हैं ॥ मासाई सत्तंता । ७ । पढ़मा । ८ । विई । ९ । तइय । १० । सत्त राइंदिण अहराई । ११ । एगराई । १२ । भिक्खू पड़िमाण बर सगं । ३२ ।

व्याख्या—प्रथमा याने पहिली एक मास की प्रतिमा । १ । तथा दूसरी दो मास की । २ । तीनरी तीन मास की । ३ । इस माफिक सातमी सात मास की प्रतिमा ॥ तथा आठमी नवमी प्रतिमा दशमी प्रतिमा एकेक सात अहो रात्रि प्रमाणें जानना तथा फेर इग्यारमी अहो रात्रि की प्रतिमा । ११ । तथा बारमी एक रात्रि की प्रतिमा इस माफिक भिक्षु प्रतिमा तथा साधु की प्रतिज्ञा विशेष बारे प्रकार की होती है तहां पर एक मास की प्रतिमा में अन्न और पाणी प्रत्येक एकेक दात ग्रहण करे जिसमें विच्छेद याने बाधा नहीं पड़े उस रूप देना उसकूं दात कहते हैं तथा दो मास की प्रतिमा में दोय दात ग्रहण करे तीन मास की प्रतिमा में तीन दात ग्रहण करे इस तरह से सात मास की प्रतिमा में सात दात ग्रहण करे भात और पाणी की तथा सातमी सात अहो रात्रि प्रमाणें तथा आठमी प्रतिमा पानी रहित एकांतरे उपवास तथा पारणेंमें आंबिल करणा दातका नियम नहीं तथा गामके बाहिर ऊंचा मुख शयनाशन करके रहना तथा दशमी प्रतिमा भी इसी माफिक मगर इतनी विशेपता है तिस प्रतिमा के विषै गायदूणे के आसण से रहना तथा इग्यारमी भी उसी माफिक जानना केवल तिस में पाणी रहित छट्ठ भत्त का पच्चक्खाण करे तथा लंबी भुजा करके रहणा तब फेर बारमी प्रतिमा में भी यही विधान मगर इतना फरक है पाणी रहित तीन उपवास करना तथा आंख फरकावै नहीं एक पुदगल गत दृष्टि करके लंबी भुजा करके रहना इन प्रतिमाकूं अंगीकार करने वाले वज्र रिषभनाराच तथा रिषभ नाराच अर्द्ध नाराच इन मांय से हरएक संघैण वाला कर सक्ता है तथा जघन्य करके नवमें पूर्वकी तीसरी वस्तु तक पढ़ने वाला तथा उत्कृष्ट करके कुछ कम दश पूर्व तक अध्यन करने वाला सुत्रार्थ सेती तथा

—तवेण । १ । सुत्तेण । २ । सत्तेण । ३ । एगत्तेण । ४ । वलेणय । ५ । तुलणा पंचहा वुत्ता । पडिमं पडि वज्जओ ॥ १ ॥

व्याख्या—तप करके । सूत्र करके । २ । सत्व करके । ३ । एकत्व करके ।४। बल करके । ५ । तुलना पांच प्रकार की कही । प्रतिमा अंगीकार करने वाला साधु महाराज जानना इस गाथा माफिक तुलना पांच प्रकार की पेस्तर ही भावित करते हैं एक मास कूं

आदि लेके सात प्रतिमा सात महीनाकी दिखलाईहै तिसी माफिक परिकर्म जानना चाहिये तथा बरसात में इनों कूं अंगीकार नहीं करते हैं तथा परिकर्म भी मना है तथा आदि के दोनूं प्रतिमा एक ही वर्ष में एकत्र होती है। तथा तीसरी तथा चौथी प्रतिमा एक ही वर्ष में होती है याने एकेक वर्ष लगता है तथा और तीन प्रतिमा का और वर्ष में परिकर्म होता है तिस वास्ते नव वर्ष में आदि की सात प्रतिमा समाप्त होती हैं॥ तथा फेर अष्टमी प्रतिमा कूं आदि लेके तीन प्रतिमा इकवीस दिन में पूरी होती है तथा इग्यारमी प्रतिमा तीन दिन में पूरी होती है तथा अहोरात्रि के अन्त में छह भत्त करणा पड़ता है तथा बारमी फेर प्रतिमा रात्री के अनंतर अष्टम करणा चार अहो रात्रि का होता है यहां पर और भी बहुत वक्तव्यता है सोतो प्रवचन सारोद्धार सेती जानना ऐसा कहा संक्षेप करके बारे प्रकार की मुनि प्रतिमा का स्वरूप। अब लेश मात्र मुनियों का अहो रात्रि कृत्य दिखलाते हैं॥

—शुद्धा चारःसाधुः। श्री जिन वचनानुसारतो नित्यं॥
कुर्यात्क्रमण सम्यक्। स्वस्याहो रात्रि कृत्यानि॥ २१॥

व्याख्या—शुद्ध आचार के धारक साधु महाराज उनोंका अहोरात्रि कृत्य श्री जिन वचन अनुसार सेती अनुक्रम करके कहता हूं अब इस में विशेषता दिखलाते हैं कृत्य का अनुक्रम यह है साधु महाराज रात्रि के चरम भाग में पीछे पहर में मंद स्वर करके सूत्र अर्थ परावर्त्तन रूप स्वाध्याय करे इस माफिक करे जिससे असंयत जागै नहीं तिस पीछे तिसी पहर का चौथा भाग वाकी रहने से छै प्रकार का आवश्यक करै तब ऊकड़ू बैठ करके शरीर के परि भोग मुख पत्ती आदिक उपगरणों की यथा विधि पड़ि लेहणा करै तथा पड़िलेहणा समाप्ति भये बाद बरोबर सूर्य उदय होने से धर्म शाला प्रतें प्रमार्ज्जना करे तब वंदना पूर्वक आचार्यादिक से पूछ करके तिनों की आज्ञा करके वेयावच्च तथा स्वाध्याय करे मगर अपणी बुद्धि करके कुछ भी नहीं करै सोई दिखलाते हैं॥

—छट्ठ ट्ठम दशम दुवाल सेहिं। मासद्ध मास खम
णेहिं॥ अकरंता गुरु वयणं। अणंत संसारिया
भणिया॥ १॥

व्याख्या—अट्ठ अट्ठम दसम चार उपवास द्वादशम यानें पांच उपवास अर्द्ध मास वगैरे तप करके मगर गुरू का वचन प्रमाण नहीं करे तो अनंत संसारी कहा है ॥ १ ॥ कुछ कम पोरषी की वक्त में बैठ करके मुंह पत्ती की पडिले हणा करे पीछे पात्रादिक उपगरणों की पडिले हणा करे तव फिर दूसरी पोरषी प्राप्त होने से पूर्व गृहीत सूत्रार्थ का स्मरण करें तव फिर भिक्षा की वक्त होने से आग मोक्त विधी करके गुरू महाराज की आज्ञा ग्रहण करके उपाश्रय से निकलती दफै आवस्सही इत्यादिक उच्चारण करै तथा भिक्षा के वक्त उत्सर्ग करके तीसरी रोरषी का टेंम जानना अथवा काल के काल अंगीकार करना जिस देस शहर में लोक भोजन करते हैं वो ही वक्त स्थविर कल्पियूं कैं भिक्षा का वक्त जानना चाहिये तथा साधु व्याक्षेप रहित आकुलता रहित मूर्खता रहित युग मात्र दृष्टि लगा के चौतरफ से उपयोग सहित एक घर से दूसरे घर पैंतालीस दूसण रहित भिक्षा ग्रहण करके लोट करके नैपेधि की उच्चारण पूर्वक ईर्या वहि प्रति क्रम करके यथा विधि आहारादिक गुरू महाराज से वतला करके पच्चक्खाण पार करके गृहस्थादिक रहित उद्योत स्थान में रह करके क्षुधा वेदनी उपशमन के वास्ते ॥ १ ॥ तथ वेया वच्च के वास्ते ॥ २ ॥ ईर्या शुद्धी के वास्ते ॥ ३ ॥ सतरे प्रकार का संयम पालने के वास्ते ॥ ४ ॥ तथा प्राणधारणों के वास्ते ॥ ५ ॥ स्वाध्या यादिक धर्म चिंता के वास्ते ॥ ६ ॥ भोजन करते हैं तथा आहार करती दफै सुर सुर दोष पांच हैं उन करकें रहित आहार करे सोई गाथा द्वारा पांच दोष दिखलाते हैं ॥

—असुर सुरं ॥ १ ॥ अचचचवं ॥ २ ॥ अद्रुय ॥ ३ ॥
मविलंवियं ॥ ४ ॥ अपरि साडिय मण वयण काय
गुत्तो ॥ भुंजे अपक्खिव वण सोही ॥ १ ॥

—तथा मुनि वाहर विहार मात्रा त्तालण स्वाध्याय वेया वच्च कार्य करके चौथा प्रहर होने सेती फिर मुंह पत्ती पडि लेहै तथा गुरू महाराज का तथा अपना उप गरणादिक की पडि लेहणा करके तथा स्वाध्याय करके तथा तिसी प्रहर चौथा भाग वाकी रहणें सेही लघु नीत वड़ नीत के थंडिला देखे प्रति लेखना करे तिसवाद आधा सूर्य का विम्व वाकी रहने से गुरू महाराज के सामने आवश्यक अंगीकार करे तथा एक

प्रहर तक श्रुत परावर्त्तन रूप स्वाध्याय करणा तिस पीछे सूत्रार्थ स्मरण करे तब निद्रा की वक्त में गुरू की आज्ञा लेके जमीन तथा संथारो देख करके चैत्य वंदन पूर्वक रात्रि संथारा गाथा उच्चारण करके रजो हरण कूं दहिणें पास रख करके किंचित् सोवे मगर अती निद्रा वश नहीं होवे इस माफिक लेश मात्र अहो रात्री का कृत्य दिखलाया तथा विस्तार करके सर्व साधू अधिकार ग्रन्थान्तर से जानना अवमुनीयों का अनेक गुण धारकता दिखलाते हैं ॥

—निच्चमचं चलन यणा । पसंतवयणापसिद्ध गुण रयणा । जिय मयणा मिउ वयणा । सव्वत्थविस न्निहि अजयणा ॥ ३४ ॥ इरि यासमिह पभिई । निय सुद्धा यार सेवणे निउणा । जे सुय निहिणो समणा । तेहि इमाइं भूसियापुहवी ॥ ३५ ॥

अव यहां सिद्धान्त रीति करके साधू का गुण वर्णन करते हैं ॥

—जाति संपन्ना । कुल संपन्ना । वलसंपन्ना । रूव संपन्ना । विणय संपन्ना । णाण संपन्ना । दंसण संपन्ना । चरित्त संपन्ना । लज्जा संपन्ना। लाघव संपन्ना । मिउमद्दव संपन्ना । पगइ भद्द याविणीया ओयंसी । तेयंसी । वच्चंसी । जिय कोहा । जिय माणा । जिय लोहा । जिय णिद्दा । जिइंदिया जिय परीसहा । जीविया सामरण भय विप्प मुक्का। उग्गंतवा । घोरतवा । दित्ततवा । घोर वंभ चेर वा सिणो । बहुस्सुया । पंच समिईहिंती गुत्तो । अकिं चणा । निम्ममा । निरहंकारा । पुक्खरइव अलेवा । संखो इवनिरंजणा । विहं गुव्वपिप्पमुका । भारंडुव्व अप्पमत्ता । घरितिव्व सव्वं सहा । जिण वयणो

वदेसण कुसला । एगंत परो वयार निरया । किंव
हुणा । जाव कुत्तिया वणभूआ । एरिसा ।
जिणाणा राहगा । समणा । भगवंतो निय चरणे
हिं महीयसं पवित्त यंतो । विहरंतित्ति ॥

—अब यहां पर इस माफिक साधु आदि लेके उत्तम पुरषुं कूं आराधन करके सत धर्म का दुर्लभता दिखलाते हैं ॥

——जह चिंता मणि रयणं । सुलहंनहु होई तुच्छवि
हवाणं ॥ गुण विहविवज्जियाणं । जीवाण तह धम्म
रयणंति ॥ २६ ॥

व्याख्या—तुच्छ विभव । याने अल्प धन वाले स्वल्प पुन्य वाले जीवों के जैसे चिंता मणि रत्न सुलभ पैदा नहीं होता तथा सम्यक्तादिक गुण रूप धन करके रहित जीवों कूं धर्म रूप रत्न पाणा दुर्लभ है जो जायदेव कुमार की तरह से अतुल पुन्य रूप गुण करके भरे हैं तिनों के मणि की खांण के तुल्य मनुष्यगती में चिंता मणि रत्न बरोबर यह उत्तम धर्म पावे ॥ इति भावार्थः ॥

यहां पर पशुपाल जयदेव का दृष्टान्त कहते हैं हस्ति नागपुर नगर में सेठ तिसकी बसुंधरा नामें स्त्री तिस की कूंख में उत्पन्न भया जयदेव नामें पुत्र भया वो बारे बरस तक रत्न परीक्षा का अभ्यास करा तब वो शास्त्रोक्त अनुसार करके चिंतामणी का प्रभाव जान करके बाकी मणीयों कूं पत्थर समान समझणे लगा तिसी कूं पैदा करने के वास्ते सहर में प्रतिहाट प्रति घर में घूमणे लगा मगर काहां भी मिले नहीं तब खेदातुर होके अपने पिता प्रतें बोला मेरे चित्त में चिन्ता मणि लगा है यहां पर तो मिलता है नहीं इस वास्ते मैं तो अन्यत्र जाऊंगा तब माता पिता बोले हे पुत्रया एक कल्पना मात्र है मगर परमार्थ करके कहां भी नहीं तिस वास्ते तूं यहां इंयथेच्छा पूर्वक और रत्नो का व्यवहार कर इस माफिक बहुत कहा तो भी वो जयदेव चिंतामणि प्राप्ति के वास्ते निश्चय हो करके हस्तिनापुर से निकल करके बहुत नगर ग्राम आकर

कर्वट पत्तन समुद्र तीर के विषै देखता हुवा बहुत काल तक घूम करके कहां भी नहीं मिलने से उदास होके अपने दिल में बिचार ने लगा यह सत्य है मिथ्या है जो कहां भी दिखती नहीं अथवा शास्त्र में लिक्खा भया अन्यथा नहीं होवे कहां भी होगा ऐसा निश्चय करके वो फिर भी बहुत मणियों कूं देखता रहता है अतिशय करके गवेषणा करने लगा तब एक दिन कोई भी वृद्ध पुरष ने तिस जयदेव सेती कहा भोभद्र यहां पर एक मणी की खाण है तिसके विषै पुन्यवान पुरषकूं प्राप्त होतीहै तब जयदेव तिसके वचन सेती तहां पर जा करके चिंतामणि देखने लगा तब तहां पर एक मंद बुद्धि वाला पशु पालक के हाथ में गोल पत्थर देख करके तिसकूं शास्त्रोक्त रीति करके चिंतामणी जान करके तिस के पास मांगने लगा तब पशुपाल बोला तेरे इस से क्या प्रयोजन है तब बणिया बोला मैं अपणें घर जाके लड़कूंकूं खेलने के वास्ते दूंगा तब पशुपाल बोला यहां पर इस माफिक बहुत हैं तूं खुद क्यूं नहीं ग्रहण करता तब बणिया बोला मैं अपणें घर जायों कूं उत्सुक कहुं तिस वास्ते मुझ कूं दे तूं फेर यहां फिरता रहता है इस वास्ते तुझकूं और मिल जायगा इस माफिक कह करके यह पर उपगार शील था मगर तिस कूं नहिं दीवी तब जय देव उपकार बुद्धि करके तिस कूं कहा हे भद्र जो तूं मुझकूं नहीं देवे तोतूं खुद इस चिंतामणि कूं आराधन कर जिस करके तुम कूं भी मन वंछित देवे तबपशुपाल बोला भो अगर सत्य चिंतामणि रत्न है तो मैं विचारताहूं बहुत बोरका फल कचरादिक जल्दी देवो तब कुछ हस करके जय देव बोला अहो इस माफिक विचार मत कर किस तरह से कर तीन उपवास करके संध्या की वक्त में इस मणि प्रतें शुद्ध जल से स्नान करवाके शुद्ध भूमी में ऊंचे प्रदेश मेंरख करके चंदन कपूर कुशुमादिक करके पूजा करके नमस्कार करके पीछे इसके आगूं पूर्वोक्त विचार करना चाहिये वो सर्व सवेरे मिले ऐसा सुन कर वो पशुपाल मार्ग जाता बोलने लगा अपनी बकरियों कूं लौटा के गाम के सामने चला तब निश्चय करके हीन पुन्निया इस के हाथ में यह मणि रत्न नहीं ठहरेगा ऐसा विचार करके जयदेव भी तिसका पीछा छोड़े नहीं अब पशुपाल मार्ग में जाता हुवा कहने लगा हे मणि अभी बकरी बेच करके धन सारादिक लाके तेरी पूजा करूंगा तुम भी मेरे चिंतितार्थ पूरण करने का उद्यम करना फेर भी हे मणि अभीग्राम दूर है इस वास्ते मार्ग में कोई कथा कहो ॥

अगर तूं नहीं जाने तो मैं कहूं तूं सुन एक नगर के विषै एक हाथ प्रमाणें देव मंदिर तहां पर चतुर भुजो देव रहा है इस माफिक बारंवार बोले तो भी जब तक मणि नहीं बोले तितने में तो मूर्ख कोपायमान होके मणि प्रतें बोला अरे जो तूं हुंकार मात्र भी नहीं देवे तो फेर वांछितार्थ पदार्थ देने में क्या आशा है अथवा चिंतामणि ऐसा तेरा नाम मृषा नहीं किंतु सत्य है जो तेरी प्राप्ति से मेरी मन की इच्छा नहीं होई तो फेर में राब छाछ बिगर चण मात्र नहीं रहता था सो मैं आज तेरे वास्ते उपवास तीन करे हैं गोया मरणें समान दशा होगई में ऐसा मानता हूं इस बणिये ने मुझे मारणें के वास्ते तेरी तारीफ करी तिस वास्ते तूं तहां पर चली जा जहां पर मेरे नजर में मत आव-तिस पशु पाल ने तिस मणी कूं दूर फेंक दी तब आनंदित हुवा जयदेव जल्दी से नमस्कार पूर्वक चिंता मणि प्रतें ग्रहण करके सम्पूर्ण मनोर्थ होके अपने नगर के सामने चलने लगा मार्ग में महापुर नगर में मणि के प्रभाव सेती बहुत धन संपदा होगई वो जयदेव कुमार सुबुद्धि सेठकी पुत्री रत्नवती नामें परणीज करके बहुत परिवार सहित हस्तिनापुर में संप्राप्त भया तथा अपने पिता माता के चरणों में नमस्कार किया तब तिस माफिक रिद्धि युक्त तिस कूं देख करके माता पिता बहुत प्रशंसा करने लगे तथा स्वजन लोगों ने भी सन्मान किया शेष जनों ने भी तारीफ करी आप जावज्जीव सुखी भया यह धर्म रत्न प्राप्ती के ऊपर पशुपाल और जयदेव का उपंनया वृच्छेद का वृच्छेद ॥

——कत्वं विहितं । इत्युक्त सग्रसंगं छद्मस्था श्रित सर्व
विरति स्वरूपं । इत्थं स्वरूपं परमात्म रूपं । निरूप
कंचित्र गुणं पवित्रं । सुसाधुधर्मं परिगृहय भव्या ।
भजंतुदिव्यं सुख मत्त यंत्र ॥ प्राक्तन सद्ग्रंथानां ।
पद्धतिमा श्रित्पवर्णि तोत्र मया । साध्वाचार विचारः
शुद्धोनिजकात्म शुद्धि कृते ॥ २ ॥

इति श्री मद्बृहत्खरतर गच्छाधीश्वर श्री जिन भक्ति सूरीन्द्र पद पद्म समाराधक श्री जिन लाभ सूरि संगृहीत आत्म प्रबोध ग्रन्थे संक्षेपतःसर्व विरति वर्णनो नाम तृतीयःप्रकाशः ॥ ३ ॥ भाषा कर्त्ता विदुषा पंचाननेव पद्मोदय मुनिना ॥ अपराभिधानेन विपश्चिद्वरिन्म

णिरक्त मणिना ॥

तृतीय प्रकाश कथन किये अनंतर अनुक्रम करकै चतुर्थ प्रकाश प्रारम्भ करते हैं। तहां पर परमात्मा दो प्रकारके कहे हैं। जिसमें एकतो भवस्थ परमात्मा याने चार अघाती कर्म बाकी रहे हैं मोक्षगयेनहिं उन कूं भवस्थ परमात्मा कहते हैं। १। और दूसरे सिद्ध परमात्मा याने अष्ट कर्मक्षय करके मोक्ष पहुंचे उणकूं सिद्ध परमात्मा कहते हैं। २। उण दोनूं के प्राप्ति होणें का प्रकार याने कारण सूचक दो आर्या श्लोक द्वारा निरूपण करते हैं।

—क्षपकः श्रेणपारूढः। कृत्वा घनघाति कर्मणां नाशम्॥
आत्मा केवलभूत्यां भवस्थ परमात्मतां भजते ॥१॥

व्याख्या—आत्मा याने चेतन क्षपक श्रेणि प्रतें चढ़ करकै घनघाती कर्म ४ ज्ञाना वरणी। १। दर्शना वरणी। २। मोहनी। ३ अंतराय। यह चार कर्म आत्मा के गुणों के घातक ऐसे उण चारो कर्मों का नाश करकै जल्दी से प्राप्त करा समस्त लोक अलोक प्रकाशक केवल ज्ञानं और केवल दर्शन रूप संपदा पैदा करणे वाले भवस्थ परमात्मा पद कूं अंगीकार करे। १। तिस पीछें वोहि आत्मा जल्दी सें कितने काल वाद चौदमें गुण स्थान में चरम समय में भवोपग्राहिचार कर्म याने भव में जब तक उस शरीर सें रहते हैं सो दिखलाते हैं। वेदनी कर्म। १। आयु कर्म। २। नाम कर्म। ३। गोत्र कर्म। ४। यह चार कर्म भव तक रहणें वाले हैं उण चारं कर्मों कों मूल सेती विनाश करकें रिजु गती याने सरल गती करके भगवती जी में सात श्रेणी लिखी हैं उनमें रिजुगती भी दिख लाई है उस गती करकै एक समय मात्रभी अन्य प्रदेशकूं स्पर्श करे नहीं उस गती सहित लोक के अग्र भाग सिद्धि स्थान में प्राप्त होकर के सिद्ध परमात्मा होते हैं। २।

अब यहां परमात्मा के स्थिति का परिमाण जघन्य अंतर्मुहूर्त्त काल और उत्कृष्ट आठ वरस कम पूर्व कोड़ी वरस तक रह सकते हैं और सिद्ध परमात्मा की स्थिति तो आदी है मगर अंत नहिं इस वास्ते सिद्धों की सादि अपर्यवस्थिति ज्ञानियों ने फरमाई ऐसा समझणा चाहिये। इस माफिक परमात्मा पणा जिणों में वर्त्त रहा है तिणों कूं पर

मात्मा कहते है उणके दो भेद हैं उण में एक तो भवस्थ केवली। १। और दूसरे सिद्ध महाराज। २। अब कुछ भवस्थ केवलियों का स्वरूप दिखलाते हैं। भवस्थ केवली दो प्रकारके होते हैं। एक तो जिन। १। और दूसरे अजिन। २। अब जिन किसकूं कहते हैं जिन नाम कर्म उदय वर्त्ति याने तीर्थ कर गोत्र बांधा है जियों ने उण कूं जिण कहो चाहै तीर्थ कर कहो सोई श्री मद्धेमचंद्राचार्य महाराज ने हेमकोश में कहा है। अर्हन्।१। जिन। २। पारगत। ३। त्रिकालवित्। ४। क्षीण अष्टकर्मा। ५। परमेष्ठि। ६। अधी श्वर। ७। शंभू। ८। स्वयंभू। ६। भगवान्। १०। जगत्प्रभू। ११ तीर्थंकर। १२। तीर्थकरो। १३। जिनेश्वर। १४। स्याद्वादी। १५। अभयदा।१६। सर्वज्ञ। १७। सर्व दर्शी। १८। केवलिन।१६। देवाधि देव। २०। बोधिद। २१। पुरषोत्तम। २२। बीतराग।२३। आप्त। २४। इत्यादिक नाम जिन तीर्थ करके कहे हैं। १। अब अजिन किसकूं कहते हैं। अजिन नाम सामान्य केवलियों का है। २। अब जिन कहिये तीर्थकर उणका स्वरूप निक्षेपों करकै दिखलाते हैं। नाम जिन। १। स्थापना जिन। २। द्रव्य जिन। । और भाव जिन। ४। उणों का स्वरूप गाथा द्वारा बतलाते हैं।

—नाम जिणा जिण नामा। ठवणा जिणाओ जिणंद
पड़िमाउ॥ दव्वजिणा जिण जीवा। भाव जिणा
समव सरणत्था॥ १॥

व्याख्या—तहां पर नाम जिन किस कूं कहते हैं। ऋषभदेव अजित नाथ यावत् महावीर तक नाम जपणा उणकूं नाम जिन कहते हैं। १। तथा नाम जिन साक्षात् जिन गुण वर्जित है मगर परमात्मा के गुण स्मरण का हेतु कहिये कारण परमार्थ सिद्धि के करणें वाले सुदृष्टि वंतो कूं निरंतर स्मरण करणा चाहिये तथा लौकिक में देखते हैं मंत्रा क्षर स्मरण करणें सेती कार्य सिद्धि होजाता है। १। अब थापना का स्वरूप दिखलाते हैं। तथा रत्न सोना रूपा मृन्मयी कृत्रिम। अकृत्रिम। जिनेंद्र की स्थापना करणा उण कूं स्थापना जिन कहते हैं। उण थापना में भी साक्षात् जिन गुण नहीं है तो भी तत्व करके जिन के स्वरूप का स्मरण कराणें का मूल कारण देखणें सें सम्यग् दृष्टियों के चित्त में परम शांत रश प्राप्त होणेंका कारण रहा है अबोधि जीवों कूं बोधिका मूल हेतु केवलियों के बचन करके साक्षात् मूर्त्ति जिन समान जानना चाहिये शुद्ध मार्ग के धारक श्रावकों कूं

द्रव्य भाव पूर्वक निरंतर शंका रहित वंदना पूजा करणा तथा स्तवना करणा। साधु मुनियों कूं हमेशा भाव पूजा करणा चाहिये कारण सावद्य योग सें दूर होगये २ वजे सें युक्त भाव पूजा उचित है इसी माफिक जिन आगम में लेख दिखलाया है। यहां पर मनोमती याने ढुंढक लोक सुबुद्धि हीन इस युग में पैदा भया श्री वीर विरुद्ध भाषण करने वाले को हुंडी मिथ्यात्व में पराभूत अपनी मति कल्पना सें कल्पि अर्थ करने वाले तीर्थंकरों के फरमाया अनेकांत धर्म के लोपक प्रगट करा है दुष्ट वचन विलास जिनों ने तत्व करके जैनी तो नहिं मगर जैना भास याने अन्य कूं जैनी मालूम पड़ते हैं मगर असल में जैनी नहिं श्री मत्परम गुरु के बचन उत्थापक अनंत भव भ्रमण का भय नहिं गणने वाले अपनें ग्रहण करा असत्पक्ष उसकूं स्थिर करने के लिये मुग्ध जन के आगूं उत्सूत्र प्ररूपणा करती दफै ऐसा कहते हैं कि स्थापना जिन तो ज्ञानादिक गुण करके शून्य है इस वास्ते वंदनादिक करने के योग्य नहीं तिण कूं वंदनादि करणें से जल्दी सम्यक्तका नाश होता है तथा आगममें तिणोंकों वंदनादिक करने का अधिकार नहीं है बहुत क्या कहें आधुनिक श्री पूजजती लोकों ने अपना महात्म्य वधाने के लिये जिन मंदिर की स्थापना करी है ज्यादा क्या बतलावें तिनकी पूजा वगैरे करने में साक्षात् जीव हिंसा दिखती है जहां पर जीव हिंसा होती है तहां पर धर्म नहीं होता कारण धर्म तो दया मूल कहाहै तिस वास्ते अपना सम्यक्त अक्षय रखने वाले प्राणी कूं तिणों का दर्शन करणा भी अयुक्त है॥

तथा जो फिर अपणें बडेरों की संतुष्टि के वास्ते पीपल वगैरे वृक्षमूल में सचित्त जल सींचनादि करना तथा मिथ्यात्वि आदिक देवता की पूजा वगैरे में प्रवर्त्तन होना तिस में सम्यक्त का नाश नहीं है श्रावक को संसारि पणें में इस माफिक का कार्य करना चाहिये इस माफक मनोमती याने ढुंढक लोकों ने पूर्वपक्ष करा उस पक्ष कूं खंडन करने के लीये सद्भूत युक्ति करके तिणों के असत्पक्ष कूं निराकरण के के वास्ते कुंछ प्रति वचन कहते हैं। तहां पर स्थापना जिन तत्व करके जिन स्वरूप स्मरण करने का कारण पेस्तर दिखलाया और सत धर्म युक्त प्रत्यक्ष्यादि प्रमाण सिद्धहै इस वास्ते तिणों में सर्वथा गुण नहिं है तौभी बन्दनादि करणा तो योग्य है तिणों के दर्शन बन्दनादिक करने से जल्दी शुभ ध्यान प्रगट होता है प्राणियोंका सम्यक्त निर्मल

होयों का मूल कारण है तिस वास्ते तिर्णों का सम्यक्त नाश होता है इत्यादिक कहने वाले महा मिथ्यात्वि जानना उन दुष्टों का वचन पंडितों को मान्य नहीं करना चाहिये विशेष क्या कहें जहां पर चित्राम की पुतली याने स्त्री का चित्राम होवे तहां पर साधु महाराज रहै नहीं ऐसा दस वैकालिक अंग में निषेध करा है साक्षात् स्त्री गुणवर्जित है तोभी तिसकी आकृति मात्र करकेहि विकारका कारण होजाता है। इति दृष्टांतः। इस कूं घटाते हैं। अगर जब तिस पूतली कूं देखने से विकार पैदा हो जाता है तो परमशांत रश के अनुकूल सौम्य आकार धारी श्री जिन प्रतिमा के देखने सेती सुबुद्धियों के उत्तम ध्यान पैदा होवे इसमें क्या संदेह इस माफक पंडितों कूं विवेक करके विचार कहना चाहिये तथा फिर जिन मनोमती ढूढ कोने ऐसा कहा कि आगम के विषै जिन चैत्य वन्दनादिक अधिकार का नास्तिक पणा कहा और चैत्य का स्थापना वगेरे आधुनिक श्री पूज जती लोको ने करा है इत्यादिक कहने वाले तथा पूजा में हिंसा रूप करके अधर्म पणा बतलाया तथा वृक्षादिक सींचन में और मिथ्यात्वि देवता की पूजा करने में सम्यक्त का नाश नहीं होता इत्यादिक उन्मत्त की तरह सें बोलने वाले सर्व था अयुक्त भाषण करते हैं मदिरा पान करने वाले की तरह सें कोहंडी ढूंढक लोक भी बोलते हैं। अब उत्तर पूर्व सिद्धांति कहते हैं आगम के विषैं ठिकाणें २ जिनचैत्य बंदन तथा पूजा वगैरे का अधिकार निरुपण करा है इस वास्ते थापना भी प्राचीन सिद्ध है तथा पूजा करने में यदि अधर्म होता होतो आगम में कहा हैकि हियाए। सुहाए। खेमाए निस्सेसियाए इत्यादिक। तथा अधर्म पणें में तो कदम कदम में तीर्यंच नरक गति आदिक होना चाहिये तथा पीपल वगेरे वृक्षों में सचित्त जल सींचनादिक विधान करना गोया जिन धर्म आगम के विरोधपणें की क्रिया प्रगठ दिखती है याने मिथ्यात्वियों का काम है या बात बालगोपाल प्रसिद्ध है तथा संम्यक्तियों कूं अन्यदेव का वन्दन करना। राजा भियोग १ गणा भियोग २ इत्यादिक अपवाद मार्ग में छव आगार सहित रक्खा गयाहै मगर उत्सर्ग मार्गमेंतो बिलकुल त्याग है कारण उत्सर्ग मार्गमें अन्य देवादिक वन्दन करने से सम्यक्त का नाश होता है अब यहां पर ऊपर जो बातें दिखलाई है उन कूं विशेष पुष्ट करने के वास्ते कितनेक आगम के वचन दिख दिखलाते हैं तहां पर प्रथम ज्ञाता धर्म कथा सूत्र में कहा है द्रोपदी का अधिकार लिखते हैं॥

—तथाचतत्शूत्रं । तएणं सादोवई रायवर कन्नगा नहाया कयबलिकम्मा । कय कोउय मंगलपायछित्ता । सुद्ध प्पवेसाइं । मंगल्लाईं । बथ्थाईं पवर । परिहिया मज्जुण । घराउ । पड़िनि रकमइ । जेणेव जिणहरे ।तेणेव उवागछइ । जिण हरं । अणुपविसइ । आलोए पणामं करेइ । लोम हत्थयं परामुसइ । २ । एवंजहा ।सूरिआभे जिण पड़िमाउ । अचेइ । तहेव भाणिअव्वं । जावधूवंडह २इ वामंजाणुं अंचेइ२त्ता दाहिणं जाणुं धरणि तलं सिनिहट्टु तिक्खुत्तोमुद्धाणं धरणि तलंनिनिअंसेई ईसिंपच्चुन्नमइ करयलजावकट्टु एवंवयासी । णमो त्थुणं अरिहंताणं।जावसंपत्ताणं । वंदइनमंसइ। २त्ता जिणहराओ पड़िनिरकमइत्ति तथा राजप्रश्नीयो पांगे प्येवमुक्तामस्ति । तएणंसे सूरियाभेदेवे । पोत्थरयणं गिरहइत्ता पोत्थरयणंविहाडेइ२त्ता । पोत्थरयणंवाएत्ति २त्ता। धम्मियंववसायं पडि गिरहइत्ता। पोत्थरयणंवि हाडेइत्ता। पोत्थरयणं पडिनिक्खमंतित्ता । सिंहास णाओ अभ्भुट्ठेइत्ता । ववसायसभाओ ।पुरिच्छिमिल्ल दारेणं पडिनिक्खमइत्ता जेणेव णंदा पुक्खरणीतेणेव उवागछइत्ता । णंदाएपुक्खरणीए पुरच्छिमिल्लेणं तोर णेणं । तिसोपाणपडिरूवेणं पच्चोरूहइ२त्ता । तत्थह त्थ पायं पक्खालेइ२त्ता । आयंते चोक्खे । परमसुइ भूए । एगं महंरययामयं विमल सलिल पुन्नं मत्त गय मुहागिइसमाणं भिंगारं पगिरहइ२त्ता । जाई

तत्थउप्पलाइं जावसत पत्ताइं । सहस्सपत्ताइं । ताइं गिरहइ२त्ता। णंदाओ पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ२त्ता। जेणेव सिद्धायतणे तेणेव पहारत्थ गमणयाए। इत्यादि। जाव वहुहिय देवेहिय देवीहिय सद्धिं संपरिवुडे । सव्वढ्ढीए । जाववाइयरवेणं। जेणेवसिद्धयतणेतेणेव उवागछइ२त्ता जिणपडिमाणं आलोए पणामंकरेइ २त्ता । लोमहत्थगंपरामुसइ२त्ता । लोम हत्थ गंगिरा हइ२त्ता । जिण पडिमाओ लोमहत्थेणं पमज्जइ२त्ता। जिण पडिमाओ सुरहिणा गंधोदएणं रहाहेइ२त्ता । सरसेणंगोसीसचंदणेणंगायाइं अणुलिं पइ२त्ता। जिण पडिमाणं अहयाइं देव दूसजुयलाइं निअंसेइ२त्ता । अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं अच्चेइ२त्ता पुप्फारुहाणं । मल्लारुहाणं। वन्नारुहाणं। चुन्नारुहाणं । वत्थारु हाणं । आभरणरुहाणं । करेइ२त्ता। आसत्तो सत्त विउल वग्घारिय मल्लदाम कलावं करेइत्ता । जावक रग्गहिय करयल पब्भट्ठ। विप्पमुक्केणं। दसद्ध वन्नेणं कुसुमेणं मुक्कपुप्फ पुंजोवयार कलियं करेइ२त्ता । जिण पडिमाणं पुरओ अत्थेहिं सन्नेहिं रययामएहिं अत्थरसा तंदुलेहिं । अठ्ठमंगले आलिहइ। तंजहा। सत्थिय । १ । सरिवत्थ । २ । नंदियावत्त । ३ । वद्धमाण ।४। वरकलस ।५। भद्दासण ।६। मछ ।७। दप्पण ।८। तयाणं तरंचणं। चंदप्पहरयण वइर वेरु लिय वियलदंडं कंचण मणि रयण भत्ति चित्तं । कालागुरुपवरकंदुरुक्कतुरुक्क धूवमघमघंत गंधुत्त माणु

विद्धं। धूम वट्टिं विणिम्मुयंतं। वेरुलियमयं कडुच्छुअं पग्गहिय पयत्तेण धूवं दाऊण जिण वराणं। अट्ठ सय विसुद्ध गंध जुत्तेहिं महावित्तेहिं। अत्थजुत्तेहिं अपुणरुत्तेहिं। संथुणइ २त्ता। सत्तट्ठपयाइं ओसरइ २त्ता। वामंजाणुं अंचेइ२त्ता। दाहिणं जाणुं धरणितलंसिनिहट्टु। तिक्खुत्तोमुद्धाणं। धरणितलं सि निवाडेइ। ईसिंपच्चुन्नमइ२त्ता। करयल परिगा हियं दसनं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु। एवं वयासी। णमोत्थुणं अरिहंताणं। जाव ठाणं संप त्ताणं। तिकट्टु। वंदइ। णमंसइ२त्ता। एषां आलाप कानां मर्थस्तु सुगमत्वान्नलिखितं॥

इसी प्रकार सेती जीवा भिगमो पांगेपि विजय देव वक्तव्यता धिकार में। इसी माफक सूत्रा लापक कथन करा है तहां से जाण लेणा। इस माफक अलावा सम्यक्ति देवता। तथा मनुष्य आचरित जिनपूजा अधिकार निरूपण करा है और साक्षात् दिखाई देता है तिणकूं नास्ति पणा कैसे कह सक्ते हैं सम्यक्तितियों कूं विचार करणा चाहिये॥ तथा इस ठिकाने कुमती जैना भास ढुंढक खुद मिथ्या दृष्टि होके अन्यकूं भी मिथ्या दृष्टि समझते हैं कारण चोर होता है उसकूं दुनिया चोर मालुम पड़ती है तथा जैना भाश मनो मती ढुंढक लोक द्रोपदी कूं भी मिथ्यात्त्रिणी कहते हैं उनकूं सरम आती नहीं तथा जिन गृह शब्द का तथा शिद्धाय तन शब्द का मूल अर्थ दूर करके अपनी मति कल्पना से कामदेव और यक्ष वगैरे का घर रूप नवीन अर्थ प्ररूपन करते हैं इस माफक ग्रथिल की तरह से वोलने वाले मनोमती ढुंढक लोक कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं अगर जो द्रोपदी मिथ्यात्त्रिणी ने कामदेव की पूजा करी हो तथा सूर्याभ वगैरे ने यक्षादिक की पूजा करी हो तो द्रव्य पूजा के अंत में नमोत्थुणं अरिहंताणं इत्यादिक शक्र स्तवं नहीं पढ़ते और वो पाठ आगम में साक्षात् दिखता है शक्र स्तव का पाठ सम्यक्ति विगर अन्य कूं याद भी नहीं होता इस वास्ते हे ढुंढक लोको तुम उस पाठका लोप क्यूं करते हो अगर द्रोपदी

मिथ्यात्विणी होती तो णमोत्थुणं काहे कूं पढ़ती सो दिल में विचार करो तथा वैमानिक देवता अपनेसे हीन पुन्य वाले यत्त वगैरेकी पूजा किस वास्ते करेंगे तथा फेरभी विशेपता दिखलाते हैं अगर जो द्रोपदी श्राविका नहिं होती तो नारद जी आये तब असंयती अव्रती जाणकर कैउठणा तथा वंदन नमस्कार बिलकुल करा नहीं ऐसा पाठ ज्ञाता सूत्र में प्रगट रहा है और वंदनादिक व्यवहार नहि करणें से निश्चय करके द्रोपदी श्राविका थी तथा श्राविका बिगर माय करके पूर्वोक्त विधी से वाकिफ नहीं होवे इत्यादिक पंडित विचार करेंगे तथा फेर मनोमती ढुंढक क्या कहते हैं सूर्याभ देवता ने अपनी राजधानी के मंगलके वास्ते जिन प्रतिमा पूजी है इस माफक ढुंढक लोक बोलते हैं अब उन मनोमतियों कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं सूत्रके विषै यह पाठ तो नहीं है मगर यह पाठ तो जरूर है पूजा कूं अंगीकार करके ॥

—हियाए। सुहाए। खेमाए। निस्सेयसाए। आणुगा मियत्ताए भविस्सइ ॥

व्याख्या—पूजा हितकी करणें वाली सुक्ख की करने वाली। कल्याण की करने वाली मोत्त की देने वाली परभव में सहाय देने वाली इत्यादिक पाठ मोजूद है इस वास्ते श्री सर्वज्ञों का वचन करके तो पूजा में मोत्त फल होता ही है इस वास्ते उन मनोमतियों का विश्वास कैसे करें॥ अब फेर मनोमती ढुंढक जैना भाश ऐसा कहते हैं कि भगवान ने हिंसा का निषेध करा है इस वास्ते हम कैसे अंगीकार करें इस माफिक बोलने वालों कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि हम किस वास्ते कहते हैं कि तुम हिंसा करो मगर भगवान ने जिन पूजा कोन आगम में निपेध करी है सो बतलावो तथा आगम में तो प्रगट करके सतरे प्रकारी पूजा बहुत स्थान में कारण पणें करके बतलाई है तथा प्रश्न व्याकरण सूत्र में प्रथम संबर द्वार में अहिंसा का साठ नाम दिखलाया है सो तिण के अंदर पूजा भी ग्रहण करी है सो कुछ सूत्रा लापक द्वारा बतलाते हैं। निव्वाणं। १। निव्वुई। २। समाही। ३। संती। ४। आयतणं। ५। जयणा। ६। मप्पमाओ। ७। आसासो। ८। अभओ ९ सव्वस्सवि अनाघाओ। १०। चोक्खा। ११। पवित्ती। १२। सूई। १३। पूया। १४। विमलप्पभासइ निम्मल तरित्ती। ६०। एवमाईणि नियम गुण निम्मयाइं पज्जव नामाणि होंति अहिंसाए भगवई एत्ति॥

व्याख्या—यहां पर पूजा शब्द में अहिंसा ग्रहण करी है यजनं यज्ञ इतिव्युत्पत्तिः। इस वास्ते हे ढुंढक लोको तुम उस पूजा कूं हिंसा में कैसे गणते हो तथा और सूत्र कृतांग में अर्थ दंडाधिकार में। ऐसा कहा है कि नागहेऊं। भूयहेऊं। इत्यादिक पाठ में नाग भूत यक्षादिक के वास्ते पूजा करने में हिंसा पणा दिखलाया है मगर जिन पूजा में हिंसा नहीं अगर हिंसा होती तो सूत्र में जिणहेऊं इत्यादिक पाठ होता मगर वो तो दिखता नही इस वास्ते सूत्र का वचन उत्थापन करके तुम मनोमतियों का वचन कैसे अंगीकार करें। तथा फेर भी जैना भाश मनोमती ढुंढक लोक ऐसा कहते हैं कि जिन पूजा में षट् काय के आरंभ का संभव होता है इस वास्ते श्रावक उस पूजा का आचरण कैसे करें इस माफक बोलने वाले ढुंढक लोकूं कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि सर्वज्ञों का धर्म अनेकांत है इस वास्ते सम्यक्तियों कूं एकांत पक्ष ग्रहण करना न चाहिये कारण एकांत में मिथ्यात्व है इस वास्ते तीन ज्ञान के धारक श्री मल्लिनाथ स्वामी ने छव मित्रों के प्रतिबोध देने के वास्ते सोने की पूतली के विषै हमेशा अन्न का कवल डालते थे तथा सुबुद्धि मंत्री ने अपना मालिक राजाकूं प्रतिबोध देने के वास्ते खाल का जल वह वाया तथा फेरभी आगम के विषै बहुत हाथी घोड़ा रथ पैदल परिकर सहित कूणिक राजा भगवान प्रतें वंदना करने के वास्ते गया है ऐसा औपपातिकोपांग में लेख दिखता है तथा ज्ञाता सूत्र में था वच्चा कुमर के अधिकार जहां है दीक्षा महोत्सव का हगाम श्री कृष्ण जी वासुदेव की फौज ले गये हैं इत्यादिक कारण में बहुत हिंसा होती है मगर लाभ का कारण ज्यादा है इस वास्ते हिंसा की गणती नहीं तथा जिनाज्ञा अंगीकार कर के उत्तम यतना तथा भक्ति करके सत् क्रिया करने में बिलकुल हिंसा नहीं होती तथा जहां पर हिंसा हैं वहां पर भगवान् की आज्ञा नहीं अगर सत् क्रिया में हिंसा होती होवे तो साधू लोक प्रति क्रमणे ऊठ बैठ करते हैं तथा विहार भी करते हैं अगर उस क्रियावों में भगवान की आज्ञा नहीं होवै तो तिस में हिंसा होनी चाहिये तिस वास्ते सूत्र का व्यवहार यह है जो लाभ के निमित्त निरवद्य परिणामों करके प्रवर्त्तन पूर्वक होने से तिस माफिक कर्मबंध होता नहीं यह संबंध श्री विवाह प्रज्ञप्त्यंगे अष्टादशम शतकस्या ष्टमोद्देश के विस्तार सहित समझना चाहिये तहां पर सूत्र कार क्या लिखते हैं सो दिख लाते हैं भावितात्मा अनगार युगमात्र दृष्टि पूर्वक देखते जाते हैं मगर पांव के नीचे कुकुट

कुलिंगादिक जानवर के बच्चों का अनुप योग में विनाश हो जावे तो तिसकों हिंसा के परिणाम के अभाव सेती ईर्या पथि की क्रिया होती है मगर सांपराय की क्रिया नहीं तथा पूजा में पुष्पादिक का आरंभ दिखता है मगर परिणाम करके हिंसा का फल नहीं होना कारण परिणाम में ऐसी सक्ति है कि जहां पर आश्रव है वहां पर संवर है और जहां पर संवर है वहां पर आश्रव है तथा फेर भी परिणाम की विशेपना दिखलाते हैं जैसे मुनि महाराज नदी ऊतरणे की वक्त में जल के ऊपर करुणा का रंग याने परिणाम होता है तिसी माफक श्रावकोंके भी जिन पूजामें पुष्पादिक ऊपर करुणा का परिणाम होता है ॥

हिंसानुवंध क्लिष्ट परिणामका अभाव है साधु मुनी राजकी तरहसे उन श्रावकोंके भी दुष्कर्मबंध का अभाव रहा है तथा फिर एक दृष्टान्त भी दिखलाते हैं कि जैसे व्रण छेदन करने की वक्त में प्रानीयों के वेदना होनी है मगर अन्त में महा सुक्ख पैदा होता है तिसी तरे से पूजा के विषै भी स्वल्पमात्र आरंभ होने सेती भी परिणाम विशुद्धि करके अनुक्रम सेती परमानन्द पद की प्राप्ति होती है। अब यहां पर ढूंढक मनोमती कुतर्क रूप प्रश्न करते हैं कि। अगर जो पूजा करने में इस माफक होना है फिर साधु मुनी द्रव्य पूजा क्यू ं नहीं करते हैं । अब इस का स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि द्रव्य पूजा तो रोगीयों को औषध की परें उपगार की करने वाली है किस कूं है कि जो गृहस्थ लोग आरंभ में मग्न हो रहे हैं उन प्राणीयों कूं महा उपगार करने वाली द्रव्य पूजा जानना चाहिये इस वास्ते द्रव्य पूजा तो गृहस्थ के करने योग्य है मगर सर्व आरंभ करके मुक्त होगए हैं तथा रोगरहित हो गए हैं इस वास्ते साधुओं कूं द्रव्य पूजा करना उचित नहीं उनों कूं तो भाव पूजा करना लाजिम इस वास्ते मुनी महाराज कूं अनुकंपा करने का भी भगवान ने आज्ञा दीनी नहीं जिस वास्ते दश मांग में कहा भी है कि धर्मार्थादिक वास्ते साधु हिंसा करे तो मन्द बुद्धि पना कहा। अब यहां पर यह रहस्य बतलाते हैं कि सिद्धांत में निश्चय करके देश विरती श्रावक कूं वाल पंडित कहा है मगर एकांत पंडित नहीं कहा इस वास्ते तिन कूं देशें करके वाल समझना चाहिये इस कारण सेती संसारिक कार्यों के विषै प्रवर्त्त मान हो रहा है इस माफिक गृहस्थ श्रावक कूं द्रव्य पूजादिक धर्म कार्य निषेध नहिं हो सक्ता इस वात कूं पंडित विचारेंगे अथवा इस माफक युक्ति दूर रहो किन्तु पापाचारी मनुष्य कूं अंगीकार करके मन्दबुद्धि

पणा दिखलाया है अन्य कूं नहिं तथा तिसी प्रश्न व्याकरण के आश्रव द्वार में शौक रिक मत्सबंधादिक धीवरलोक अशुभ परिनामी पाप रुचि वाले जीवों कूं तिस माफक हिंसाके करने वाले कहे हैं मगर शुभ परिणाम वाले श्रावककूं जिन गृह धर्म शाला वगेरे में पाप हिंसा नहिं बतलाई जैसे ढूंढक लोक के रहने वास्ते थानक बनवाते हैं इसी तरे से समझ लेना तथा मनोमती ढूंढक लोक ऐसा कहते हैं कि प्रतिमा एकेंद्रिका दल याने पुद्गल है तिन कूं वन्दनादिक करना अयुक्त है इस माफक बोलने वाले ढूंढक लोकूं कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि श्री सर्वज्ञों ने जिन बिम्ब कूं जिन प्रतिमा शब्द करके उच्चारण कीये हैं तथा देव गृहभी और सिद्धायतन शब्द करके भी उच्चारण करा है तिस वास्ते अहो ढूंढक लोकों तुम लोकभवभ्रमण का भय नहिं मान करके किस वास्ते इस माफक कठोर वचन कहते हो तथा तुम लोक पूर्व दिशा के सामने बैठ करके वन्दना दिक करते हो वो दिशा अजीव रूप है सो तुमारे मतमें ऐसा लेख कहां से आया उस दिशा कूं वन्दनादिक करने में क्या होता है अगर तुम ऐसा कहोगे कि दिशा कूं वंदना करती दफे हमारे मन में श्रीशो मंधरादिक भगवान रहे हैं तो जिन प्रतिमा वंदन करती दफे भी मनमें सिद्धादिक का ध्यान कहां चला गया भाव की अपेक्षा करके भाव दोनों ठिकाने सदृश समझना चाहिये इस वास्ते तिस न्याय कूं निषेध करना बुद्धिवानों का काम नहिं तथा फिर भी एक बात दिखलाते हैं कि सूत्र में गुरू की तेतीस आशातना त्याग करनी कही है तथा गुरू का आशन तथा पाटा अजीव रूप है मगर गुरु पने में स्थापित करदिया गुरु पने का भाव लाके तिसका बहुमान विनया दिक करते हैं सो तत्व करके गुरु काहि बहुमान भया तिसी तरे से जिन प्रतिमा का भी बहुमानादिक वस्तु करके सिद्धों काहि समझना चाहियै तथा फिर सुधर्मा सभा में जिन डाढें रही भई हैं वे भी अजीव स्कंध रूप है मगर सिद्धांत में वन्दना पूजा करने योग्य आशातना रहित करना कहा है इस वास्ते जिन प्रतिमा जिन समान वंदन पूजा करने योग्य है इसमें क्या संदेह है तथा पंचमांग के आदी में णमो बंभीए लिवीए इस वाक्य करके सुधर्मा स्वामी आप अक्षर विन्यासरूप लिपी है उस कूं नमस्कार करा तब तिनों के वचनानुसारी माणियों कूं लिपी की तरह से जिन प्रतिमा कूं नमस्कार करने में क्या दोष आता है कारण स्थापना का दोनूं ठिकाणें सदस भाव है तथा

तीन लोक के स्वामि भगवान समवसरण के विषै अपने मूल रूप करके पूर्व दिशा के सामने सिंहासन पर विराजमान होते हैं तब देवता तत्काल भगवान के समान आकार तीन प्रतिबिंब रचन करके बाकी दिशावों के विषै सिंहासन ऊपर स्थापन करते हैं तिस वक्तमें सर्व साधू तथा श्रावकादिक भव्य जन प्रदक्षिणा देणें पूर्वक वंदना करते हैं यावात सकल स्याद्वाद मतमें बाल गोपाल में प्रसिद्ध है तहां पर ऐसा जानते हैं सर्वज्ञों ने दाना दिक धर्मकी रीति दिखलाई है तथा अपनी थापनाका वंदनादिक व्यवहार भी दिखलाया अगर यह व्यवहार नहीं दिखलाते तो भगवान की आज्ञा में चलने वाले साधु साध्वी वगैरे थापना रूप जिन प्रतिमा कूं कैसे वंदनादिक करते इस बात कूं विवेकी होगा सो विचार लेगा ढुंढक लोक कहते हैं कि मंदिरतो श्री पूज जती लोगों ने बनाया है ऐसा ढुंढक लोक बोलने वाले मूर्ख हैं जैनागम से जिन प्रतिमा प्राचीन है या नवीन है मगर ढुंढक लोक तो अभव्वी वा दुर्लभ बोधि मालुम होते हैं किस कारण से ठाणांग जी के पांचवें ठाणें में पांच कारण से दुर्लभ बोधि करे सो दिखलाते हैं प्रथम सत् आनंदाभिध शिष्य ने प्रश्न पूछा कि हे महाराज दुर्लभ बोधि कर्म कितने कारण से पैदा करे ॥

—अरिहं ताणं अवन्नं वयमाणे । १ । सिद्धाणं अवन्नं वयमाणे । २ । साहूणं अवन्नं वयमाणे । ३ । केवलिपन्नत्तस्स धम्मस्स अवन्नं वयमाणे । ४ । विवक्क तवबंभचेर देवाणं अवन्नं वयमाणे ॥ ५ ॥

व्याख्या—अरिहंतों का अवर्णवाद गोया निंदा तथा उल्लंठवचन बोलना । तथा सिद्धों का अवर्णवाद । तथा साधूका अवर्णवाद । तथा केवली कथित धर्म का अवर्णवाद । तथा पूर्व भव में ब्रह्मचर्य पालने से सम्यक्ति देवता भया उनका अवर्णवाद बोले । यह पांच कारण से दुर्लभ बोधि कर्म पैदा होता है ढुंढिये लोक इन पांचों का अवर्णवाद बोलते हैं इस वास्ते ढुंढिये दुर्लभ बोधि सही हैं तथा जिन प्रतिमा वंदन करने का अधिकार फेर भी दिखलाते हैं श्री पंच मांग के वीशमें शतक के नवमें उद्देश में विद्याचारण जंघाचारण मुनियों कूं अंगीकार करके शाश्वती अशाश्वती जिन प्रतिमा वंदन करने का अधिकार प्रगट पणें दिखलाया है सो सूत्र द्वारा बतलाते हैं ॥

—विज्ञाचारणस्सणं भंतेतिरियं केवइएगइविसएपन्नत्ते ।
गोयमा । सेणं इयोएगेणं उप्पाएणं माणु सुत्तरेपव्व
इए समोसरणं करेइ२त्ता तहिंचेइयाइंवंदइ२त्ता विइ
एणं उप्पाएणं नंदिंस्सरवरदीवे समोसरणं करेइत्ता
तहिंचेइयाइंवंदइत्ता ततोपडिनियत्तइत्ता इहमागच्छइ
त्ता इहंचेइयाइंवंदइत्ता । विज्ञाचारणस्सणं गोयमा
तिरियं एवइएगइविसएपन्नत्ते विज्ञाचारणस्सणंभंते
उढ्ढंकेवइएगइविसएपन्नत्ते गोयमा सेणंइयो एगेणं
उप्पाएणं नंदण वणे समोसरणं करेइत्ता तहिंचेइया
इंवंदइत्ता विइएणं उप्पाएणं पंडग वणे समोसरणं
करेइत्ता तहिंचेइयाइंवंदइत्ता ततोपड़िनियत्तइत्ता इह
मागच्छइत्ता इहंचेइयाइंवंदइत्ता विज्जा चारणस्सणं
गोयमा उढ्ढंएवइएगइ विसएपन्नत्ते सेणंतस्सट्ठाणस्स
अणालोइय पड़िक्कंते कालंकरेइ नत्थितस्स आराहणा
तस्पस्थानस्य लब्धिस्फोरणरूपस्य सेणंतस्स ठाणश्स
आलोइय पड़िक्कंते कालंकरेइ अत्थितस्स आराहणा ॥

इसी माफक जंघा चारण गती संबंधि भी समझ लेना मगर गती में विशेपता है सा दिखलाते हैं जंघाचारण मुनि तिरछी गती कूं अंगीकार करके यहां से एक कदम करके तेरमें रुचकवर द्वीप में जावे तहां से लौटकरके दूसरे कदम करके नंदीश्वर द्वीप में जावे तीसरा कदम करके यहां आवे अब ऊर्द्ध गती अंगीकार करके दिखलाते हैं प्रथम कदम करके पंडक वन में जावै तहां से लौट करके दूसरे कदम करके नंदन वन में जावे तहां से फेर यहां आवे ॥ ऊपर सेणंतस्सट्ठाणस्स इत्यादि भावार्थ दिखलाते हैं लब्धि फोरणकरी गोया प्रमाद सेवन करा उस प्रमाद करके आलोयण नहीं करे तो चारित्र में आराधना नहिं होती तिस विराधना करने से चारित्र आराधना का फल नहिं मिलसके अगर आलोयना लेवे तो चारित्र आराधना का फल मिलता है

तथा फिर इस अधिकार दिखलाने का मतलब क्या है कि वे मनोमती जैनाभाश ढूंढक लोक उत्सूत्र प्ररूपणका भय नहीं मान के वह परंपरा से व्याकरण द्वारा से प्राप्त भया मूल चैत्य शब्द कूं दूर करके अपना मति कल्पना करके चैत्य शब्द का ज्ञान रूप अर्थ प्ररूपन करते हैं इस माफिक मृषा अर्थ प्ररूपन करने वाले ढूंढक लोक कूं स्याद्वादी उत्तर रूपानन चपेट देते हैं ॥ अगर जंघा चारन विद्या चारन साधुवों ने ज्ञान प्रते वन्दना करी होतो चेइयाइं ऐसा बहु वचन का पाठ नहीं होता किस वास्ते भगवान का ज्ञान अत्यन्त अद्भुत् एक स्वरूप है गोया ज्ञान ऐसा एक वचन है ज्ञानं १ ज्ञाने २ ज्ञानानि ३ इस माफिक कुलशब्द की परें रूप होता है सो ढूंढियेलोक व्याकरण पढ़ते तो मालूम होता वो ज्ञान एक वचन वाचक है वहां पर चेइयं ऐसा एक वचन का पाठ होता मगर वो तो है नहीं किन्तु चेईयाइं ऐसा चैत्यं ॥ १ ॥ चैत्ये ॥ २ ॥ चैत्यानि ॥ ३ ॥ इस माफिक व्याकरण द्वारा रूप होता है इस वास्ते चेईयाइं असा शब्द देखते जिन प्रतिमा वन्दन करी असा पंडित जन विचारेंगे मगर ढुंढियेलोक तो जिनाज्ञा के विराधक और मृषावादी जिनों का द्वितीय व्रत रहा नहीं कारण अनुयोग द्वार तथा दश मांग सूत्रा दिक में सोले वात जाने विगर उपदेश देते हैं वे मृषावादी और जिनाज्ञा के विराधक जानना अव सोले पदार्थ दिखलाते हैं ॥

—कालतियं ॥ ३ ॥ वयणतियं ॥ ३ ॥ लिंगतियं ॥ ३ ॥
तहयहोइपच्चक्खं ॥ ११ ॥ उवणय वणय चउक्कं ॥
अभभत्थं चेव सोलसमं ॥ १ ॥

व्याख्या—काल तीन ॥ ३ ॥ वचन तीन ॥ ३ ॥ लिंग तीन ॥ ३ ॥ प्रत्यक्ष ॥ १० ॥ परोक्ष ॥ ११ ॥ प्रमाण उपनय वचन अपनय वचन । इस के ४ भेद हैं गोया ॥ १५ ॥ भये तथा शोलमा अध्यात्मिक वचन ॥ १६ ॥ ये सोले भये । इनों का विचार भेद बुद्धिमान समझ लेंगे । तथा व्याकरण पढ़े विगर इन भेदों का मालूम पड़ता नहिं । और व्याकरण पढ़ना दश मांग में संवर द्वार द्वितीय में लिक्खा है सो आगुं दिखलायंगे तथा चैत्य अर्थ ज्ञान का कहां लिखा है सो बतलावों । चैत्यवन खंड का नाम भी है तथा हेम अनेकार्थ कोष में भी चैत्य वन खंड का तथा सभातरू का भी और चैत्यं दिवौ

कस: ऐसा भी लेख है इस वास्ते अरिहंतचेइयाइं इस ठिकाने अरिहंत का मंदिर साबूत होता है सो पंडित जन विचार करेंगे। तथा जिन प्रतिमा का फिर भी भगवती सूत्र से साबूती देते हैं तथा ढूंढकलोक तुम ऐसा भी मत कहना कि मानुषोत्तर पर्वतादिक में जिन प्रतिमानहिं है तथा जंबूद्वीप प्रज्ञप्त्यादिक के विषै मेरुवन तथा मानुषोत्तर तथा नंदीश्वरद्वीप इत्यादिक के विषै शास्वत ठिकाणें के विषै सर्वस्थानों में जिन प्रतिमा रही भई है। तथा फिर भी श्री विवाह प्रज्ञप्ती के तृतीय शतक के द्वितीय उद्देश में प्रगट करके जिन प्रतिमा का अधिकार दिखलाया है सूत्र द्वारा बतलाते हैं॥

—किंनिस्साएणं भंते असुर कुमारदेव उढ्ढं उप्पयंति। जावसो हम्मो कप्पो। गोयमा। सेजहानामए। इहसवराइवा। वव्वराइवा। टंकणाइवा। टंकणइवा। चुचुयातिवा। पुलिंदातिवा। एगं महंरन्नंवा। गड्डंवा। दुग्गंवा। दरिंवा। विसमंवा। पव्वयंवा। नीसाएखु महल्लमपि आसवलंवा। हत्थिवलंवा। जोहवलंवा। आगलिंति। एवमेव असुर कुमाराविदेवा। णण्णत्थ। अरिहंतेवा। अरिहंत चेइयाणिवा। अणगारेवा। भाविअप्पाणो निस्साएढ्ढं उप्पयंति। जावसो हम्मो कप्पोत्ति॥

व्याख्या—सूत्र में णण्णत्थ ऐसा दिखलाया सो निश्चय करके॥ इस लोक के विषै अथवा अर्हंतादिक की निश्रा गोया शरण विचार करके ऊंचा जाते हैं मगर अन्यत्र नहिं वो शरणा और ठिकानेनहींहैं उसी उद्देशमें तीन निश्रा गोयासरणा दिखलाया पीछै दो प्रकार की आशातना बतलाई अर्हंत। १। तथा साधू की। २। तह पर अर्थ ऐसा मालूम होता है अर्हंत की प्रतिमा कोई प्रकार करके अर्हंत के तुल्य जनानेके वास्ते भिन्नता नहीं दिखलाई गोया प्रतिमा है सो साक्षात् अर्हंत ही है इस वास्ते ऊपर के सूत्रा लापक से प्रतिमा साबूत भई कि नहीं सो पंडित जन विचार करेंगे हमने तो कुमती जनानन पर सूत्र रूप चपेटा देनीथी सो दे दीवी। तथा फेर कुमती मनोमती जैना भाश ढुंढक बालक

बतोर कहते हैं कि कोन श्रावक ने जिन प्रतिमा की पूजा करी यह कुतर्क है अब स्याद्वादि उत्तर देते हैं कि । सिद्धार्थ राजा । सुदर्शन शेठ । शंख । पुष्कलि । कार्तिक शेठ । आदि लेके । तथा तुंगीया नगरी के वसने वाले बहुत श्रावकूं ने श्री जिन प्रतिमा की पूजा करी है सो अधिकार सिद्धांत में जाहिर दिखता है सो लिखते हैं । एहाया कयवलि कम्मेति पाठ है इस का अर्थ इस माफक । स्नाता । याने स्नान करा । तिस पीछे । कृतंवलि कर्म । याने अपने घर के देव अर्हंत की प्रतिमा उनकी पुजा करी । मगर ऐसा मत कहना कि तिणों ने कुल देवी की पूजा करी कारण सम्यक्त अंगीकार करती दफै उनों ने जिन प्रतिमा छोड़करके और देवतोंकी पूजादिक बिलकुल त्यागकर दिया कारण तुंगीया नगरी के रहने वाले श्रावकूंका सूत्रमें वर्णन कराहै उसमें विरोध आजावे सो वर्णन दिखलाते हैं श्री विवाह प्रज्ञप्ती के द्वितीय शतक के पंचमो देश में कहा है सो इस माफक है ॥

—अड्ढादित्ता । अवंगुय दुवारा । अस हिज्जदेवा सुर नाग सुवन्न जक्ख रक्खस किंनर किंपुरिस गरुल गंधव्व महोरगा दिएहिं देवगणेहिं निगांथाओ पाव यणाओ अणतिक्कमणिज्जा निग्गंथे पावयणे निस्सं किया निक्कंखिया निव्बितिगिच्छा लद्धट्ठा गहि यठ्ठा ॥

इत्यादिक पाठ सुगम है मगर कठिन शब्दका अर्थ लिखतेहैं । तहां पर असहिज्जत्ति । इस का तात्पर्य इस माफक है किसी का सहाय वांछै नही तथा फेर भी उन श्रावकूं की दृढ़ता दिखलाते हैं वे श्रावक कैसे थे कि अगर जो बहुत आपदा याने तकलीफ पड़ जावे मगर कोई देवताका सहायकी जरूरी नहीं करते थे अपना करा भया कर्म आपहि भोगवे हैं इस माफक निश्चयके धारक तथा अदीन मनकी वृत्ति जिनोंकी वे श्रावक ऐसे विशेषण करके सहित वे अन्य मिथ्यात्वि की पूजा कैसे करेंगे प्रत्यक्ष विरोध आता है तुमारे कहने से इस माफक पंडित बिचार करेंगे । तथा फेर भी जिन प्रतिमा की साबूती दिख लाते हैं औपपातिक अंग में अंबड़ परिब्राज का धिकार में जिन चैत्यों कूं साक्षात् बंदना करणा दिखलाया है ॥

—तथावतत्सूत्रं। अंबडस्सणं परिव्वायगस्स लोकप्पंति अन्नउत्थिएवा अन्नउत्थिय देवयाणिवा अन्नउत्थिय पग्गहियाणि अरिहंतचेइयाणिवा बंदित्तएवा नमंसित्तएवा जावपज्जुवा सित्तएवा णणनत्थ। अरिहंतेवा। अरिहंतचेइयाणिवा ॥

इत्यादिक सूत्रमें साक्षात् जिन प्रतिमा दिखाई है। मगर ढुंढक लोकूंका जिन प्रतिमा से द्वेस हो गया सो अनंत काल तक परिभ्रमण करेंगे फेर दुर्लभ वोधी तो मूल में हैई॥ तथा फेर जिन प्रतिमा की सावूती उपासक दशांग सूत्र में भी दिखलाते हैं आनंद श्रावक के अधिकार में ऊपर पाठ वताया है उसी माफक पाठ वहां पर है सो देखना हो तो देख लेना। तथा ढुंढक जैना भाश ऐसी कुतर्क करते हैं कि। प्रदेशि राजा ने मंदिर क्यूं नहीं वनवाया। इस माफक वोलने वाले मनोमतीयों कूं स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि प्रदेशिराजा जिन धर्म अंगीकार करे वाद कितने काल जीता रहा जो मंदिर वनवावे तथा फेर सर्व श्रावक एक तरह का धर्म करें ऐसा नियम नहीं है तिस वास्ते सुदृष्टिवान् सर्व श्रावकों कूं सर्व धर्म कार्य के विषै सम दृष्टि करके श्रद्धा करणा चाहिये अपने २ गुणठाने की हद माफक सर्व धर्म कृत्य करणा उचित है मगर कुदृष्टि ढुंढक लोकूं ने साधु श्रावककी करणी मति कल्प नासे एकहि कर रक्खी है इस वास्ते इस वात का पंडित विचार करेंगे। तथा फेर भी जंबूद्वीप पन्नत्तीमें प्रथम जिन निर्वाण स्थानमें दाढ ग्रहणाधिकारमें। जिणभत्तीए। धम्मोत्तिकट्टु। ऐसा पाठ है। तथा आगममें अगर जो दाढें ग्रहण अधिकार में भी जिन भक्ती कही तो जिन चैत्य वणवाणें में तो जिन भक्ति जाहर करके दिखाई है इसमें क्या संदेह की बात है तथा फेर महा निशीथ सिद्धांत में श्रावकों कों अंगीकार करके मंदिर वनवाने का अधिकार तथा शाधुवों कों अंगीकार करके चैत्य वंदनादिक का अधिकार जाहरात करके निरूपन करा है तिसकूं धर्मार्थि पंडित जन आपहि समदृष्टि करके विचार लेना। तथा व्यवहार सूत्र में भी इस माफक कहा है ॥

—जहे वसम्मं भावियाई। पासिज्जा। तहेव आलोइज्जा ॥

इत्यादिक पाठ के विषै चैत्य साक्षि से आलोयण कही है अव कितनेक आगम

वचन दिखलावें बहुत आगम के विषै स्थापना का अधिकार विद्यमान रहा है जिए कूं संदेह हो वैसो देख लेना। तथा ढुंढक लोक अज्ञ की परें कुतर्क रूप वचन कहते हैं कि। हम तो वत्तीस आगम प्रमाण करते हैं महा निशीथादिक तो वत्तीस से वाहिर है इसवास्ते प्रमाण नहीं करते। अव स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि नन्दी सूत्र के विषै आगम की गिनती वहोत्तर वा चोरासी आगम दिखलाया है उनकूं उत्थापक करके तुम लोक वत्तीस आगम प्रमाण करते हो सो किसकी आज्ञा से तुमारे में ऐसा उत्कृष्ट ज्ञान भी नहीं है जिस से मानना नहीं मानना ऐसा मालूम पड़ जावे वो ज्ञान तो अभी इस क्षेत्र में है नहीं इस वास्ते तुम लोक परम मिथ्यात्वी वाचाट हो तथा इस काल में श्री वीर प्रभू के वचन के परम विश्राम भूत तिनों की परंपरा में उत्पन्न भये गोया आज्ञा के वतोर सर्व सिद्धांत के लिखने वाले महा उपकारी। श्री देवर्द्धि गणि क्षमा श्रमणजी सर्व साधुवों की सन्मती लेके शिद्धांत पुस्तकमें लिखवाया। उणोंके वचनकूं उत्थापन करके तुम लोकोंने जाहरात करके भगवान की आज्ञा की विराधना करी तथा फेरभी इस वातकूं पुष्ट करते हैं आगम में प्रमाण करे हुये निर्युक्ति। चूर्णि। भाष्य। टीका। उण कूं उत्थापन करके तुम लोकूं ने भगवान की आज्ञा की विराधना करी सोई वात भगवती जी के पंचवीसमें शतक के तृतीय उद्देश में कही है॥

—सुत्तत्थोखलुपढमो। वीओनिज्जुत्तिमी सिओ भणि
ओ। तइओ यनिरवसेसो। एसवि ही होइ अणु
ओगो॥ १॥

इस गाथामें पंचांगी सावूतहै सो पंडित जन मान्य करते हैं मगर ढुंढक हठक दाग्रहि अज्ञानी वे लोक मानते नहीं। उनकूं अनंत काल भ्रमण करना वाकीहै इस वास्ते सुबुद्धि आती नहीं। तथा फेर ढुंढक लोक ऐसा कहते हैं कि। हम तो सूत्र के अनुसार प्ररूपना करते हैं निर्युक्ति वगैरे से हमारे क्या प्रयोजन है इस माफक मनोमती कुतर्क रूप पक्ष करते हैं। मगर अव स्याद्वादी उत्तर देते हैं कि तुम लोक कहतेहो कि सूत्रानुसार प्ररूपना करते हैं यह तुम्हारा कहना अयुक्त है कारण सूत्र का अति गंभीर आशय रहा है सो निर्युक्ति आदि के परिज्ञान विगर उपदेश देने वालों कू नयनिक्षेप द्रव्य गुण पर्याय काल

लिंग वचन धातुस्वरादिक के ज्ञान बिगर कदम २ में मृषा वादादिक का दोष लगता है किस वास्ते ढुंढिये लोक शब्द शास्त्र पढ़ते नहीं उन कूं व्याकरणादिक पढ़ने की साबूती देते हैं प्रश्न व्याकरण सूत्र के द्वितीय संवर द्वार में ऐसा लेख है सो लिखते हैं ॥

—केरिसयंपुण सच्चनुभासि अव्वं जंतंदव्वेहिं। पज्जवे
हिय। गुणेहिं कम्मेहिं बहु बिहेहिं सिप्पेहिं आगमे
हिय नामक्खाय निवाय उवसग्ग तद्धिय समास
सिद्धि पदहेऊ जोगिय उणाइ किरिया विहाण
धाउसर विभत्ति वन्न जुत्तं तिकल्लं दसविहं पिसच्चं
जह भाणियं तहय कम्मुणा होइ दुवालस विहाय
होइ भासा वयणंपि होइ सोलस विहं एव अरिहंत
मणुन्नाय समक्खियं संजएणं कालंमिय वत्तव्वं॥

व्याख्या—किस माफक सत्य वचन बोला जाता है पर्याय गुण कर्म बहु विध शिल्प चतुराई आगम करके नाम। आख्यात। निपात। उपसर्ग।तद्धित। समास। सिद्धि पद। हेतू। योगिक। उणादि क्रिया। विधान। धातु। स्वर। विभक्ति। इत्यादिक पदार्थ का ज्ञान व्याकरण बिगर होता नहीं। इस वास्तेढुं ढक मृषा वादि जानना। अब बहुत क्या कहें वस्तु गती करके दुष्ट मिथ्यात्व रूप पिशाच ग्रस्त कर लिया ढुंढक लोकूं कूं इस वास्ते कुदृष्टि अपणा ग्रहण करा असत्यपक्ष कूं पुष्टि के वास्ते बहुत दिल माफक अपनी इच्छा पूर्वक उत्सूत्र की प्ररूपणा करते हैं लोक में भाव साधू की उपमा की परें विचरते हैं अपनी आत्मा प्रतें तथा दूसरे जीवों प्रतें अपार संसार में डुबाते हैं और आप भी डूबते हैं। इस वास्ते शिक्षा देते हैं कि जो भव्य जीव संसार से डरने वाले होवें सो अपने गुण की कुशलता इच्छा करने वाले लोकूं कूं वे ढुंढक लोक बगुले की तरह से बाह्य क्रिया करने में उद्यम करते हैं परम अज्ञानी उन महा निन्हवों का सर्वथा परिचय नहीं करणा कारण उत्तम सम्यक्त रूप रत्न मैला होने का कारण है अगर जिनों के मन में संका होवे तो सिद्धांतोक्त अनेकांत मत कूं छोड़ करके तिणों की परिक्षा कर लेवो मगर बाह्य क्रिया मात्र सों सिद्धि नहीं कारण बाह्य क्रिया तो अभव्वी भी करते हैं उस के बल से मध्यम

ग्रैवेयक त्रिकमें जाते हैं फेर अनंत संसार में घूमा करते हैं तथा आगम में सत् ज्ञान की अपेक्षा करके क्रिया की गौणता कही है और सत् ज्ञान की मुख्यता दिखलाई है सो सिद्धांत द्वारा लिखते हैं व्याख्या प्रज्ञप्ति के आठमें शतक के दशमें उद्देशे में रहा हुआ यह सूत्र है ॥

—मए चत्तारि पुरिस जाया, पन्नता ।। तत्थणं जेसे पढमे पुरिस जाते सेणं पुरिसे सीलवं असुतवं । उवरते अविन्नाय धम्मे एसणं गोयमा मएपुरिसे देसा राहए पन्नत्ते तत्थणं दोच्चे पुरिसजाते सेणंपुरिसे असीलवं सुतवं अणुवरते विन्नायधम्मे एसणं गोयमा मएपुरिसे देसविराहए पन्नत्ते तत्थणं जेसे तच्चे पुरिसजाते सेणंपुरिसे सीलवं सुतवं उवरते विन्नायधम्मे एसणं गोयया मएपुरिसे सव्वाराहए पन्नत्ते तत्थणं जेसे चउत्थे पुरिसजाते सेणंपुरिसे असीलवं असुतवं अणुवरते अविन्नाए धम्मे एसणं गोयमा मएपुरिसे सव्वविराहए पन्नत्ते ॥

इति सूत्र सुगमत्वादर्थं न लिखितं । विद्वज्जन रहस्य समझ लेंगे । अब यहां पर सत् आनंदाभिध शिष्य प्रश्न करता है स्थानांग सूत्र के विषै तथा अपृष्ट व्याकरण सूत्रके विषै जमाली कूं आदि लेके सात निन्हव निरूपन करे हैं उन निन्हवों के अंतर्गत सब निन्हव आगया इस वास्ते ढुंढक लोकूं कूं निन्हव जुदा कैसे दिखलाया । इति प्रश्न । अब गुरू उत्तर देते हैं कि हे शिष्य ढुंढक लोक आधुनिक निन्हव है कारण सूत्र में ऐसा लेख है सुबाने याइयं मग्गं वहवे परि भस्सई । इत्यादिक उत्तराध्यन वचन प्रमाणसे दिगंबरों की परें ढुंढक भी सर्व्व निन्हव जान लेना तथा ठाणांग सूत्र में सात निन्हव छोटे ग्रहण किये हैं मगर दिगंबर तो महा निन्हव जानना चाहिये उसीमाफक जिन प्रतिमा उत्थापक कोढंडी मनोमती ढुंढक भी महा निन्हव जानना चाहिये अब बहुत लेख करके जरूरी नहीं सत्यासत्य पंडित समझेंगे इतने करके लेश मात्र स्थापना जिनका स्वरूप दिखलाया । २ ।

तथा जो जीव तीर्थं कर पणें आगूं होवेंगे उनकूं द्रव्य जिन कहना चाहिये जैसे श्रेणिक। कृष्णादिक आगूं काल में होने वाले हैं मगर वंदना करने योग्य है कल्पवृत्ती में लेख भी है कि श्री भरत चक्रवर्त्ती वंदना करी मरीची के भव में श्रीवीर स्वामी के जीव मतें। ३। यह तीसरा जिन बतलाया। अब भाव तीर्थं कर का स्वरूप दिखलाते हैं तहां पर जो समस्त यथा वस्थित जीवादिक पदार्थ के अर्थावभासी केवल ज्ञान अंगीकार करके सकल लोक लोचना मंदा नंदोत्सव कारि निरूपम प्राकार त्रयोद्भासित इस माफक समव सरण के मध्य भाग में विराजमान याने स्थापन करे भये विचित्र रत्न खंड खचित सिंहासनऊ पर विराजमान रहे भये विशिष्ट आठ महा प्राति हार्य सहित परम अर्हंत की रिद्धि मतें साक्षात् भोग रहे हैं उनकूं भाव जिन कहते हैं वे भाव जिन उत्तम मार्ग दिखलाने करके सर्व जीवों के परम उपकारी करके सर्वदा वंदन स्तवना पूजा करने के योग्य जानना चाहिए। ४। इतने करके चार निक्षेपों सहित चार प्रकारके जिन बतलाये। इसी माफक जिन कूं छोड़ करके केवली तथा सिद्ध महाराज उन में भी यथा योग्य निक्षेप लगाना सर्व पदार्थ में चार निक्षेपा होता है अनुयोग द्वारादिक सूत्र में दिखलाया है। जत्थय जंजाणिज्जा सिरुवक्कमं निरकेव चउक्कयं तस्स। इत्यादिक पंडित विचार करेंगे॥ अब केवली महाराज के आहार का विषय विशेष करके पिंड निर्युक्ति के वचन करके दिख लाते हैं॥

—उहोसुओ वउत्तो। सुयनाणी जइ विगिण्हइ असुद्धं
तं केवली विभुंजइ। अपमाण सुअंभ वेइयरा॥४॥

व्याख्या—ओघ नाम सामान्य करके श्रुत याने पिंडनिर्युक्त्यादिक रूप आगम केविषै उपयोग सहित तिसके अनुसारे ग्रहण करणें नहीं ग्रहण करणें योग्य ऐसे विचार पूर्वक श्रुत ज्ञानी साधु याने श्रुत केवली महाराज अगर अशुद्ध आहार भी ग्रहण करे तो भी तिस आहारकूं केवली भोजन करे अगर नहिं करे तो तथा श्रुत ज्ञानके अप्रमाण होने से सर्व क्रिया के लोप का प्रसंग होता है तथा श्रुत ज्ञान विगर छद्मस्थों के क्रिया कांड के परिज्ञान का असंभव होजाता है या बात शिष्य वर्ग सहित केवली कूं आश्रय करके कही है अगर जो आप अकेला होवे तो तब अपने ज्ञान बल करके यथा योग्य

शुद्धहि ग्रहण करे यहां पर जिन अजिन कूं अंगीकार करके और भी बहुत वक्तव्यता है मगर यहां पर नहीं दिखलाते है कारण ग्रंथ बढ़ जावे इस वास्ते यहां पर नहीं कही पंडित जन अन्य ग्रंथ से जान लेना। इनने करके लेश मात्र भवस्थ केवली का स्वरूप दिखलाया। अब सिद्ध महाराजका स्वरूप प्रज्ञापनादि सूत्रोक्त गाथा करके कुछ दिखलाते हैं॥ तहां पर उत्तानी कृत छत्र संस्थान संस्थित गोया रही भई जिसका सर्व स्वर्ण मयी समय क्षेत्र सम श्रेणी करके पंतालीस लाख जोजन प्रमाणें बहुत मध्य देश भाग में आठ जोजन प्रमाणें लंबी चवड़ाई पणा तिस पीछे सर्व दिशा विदिशावों के विषै स्तोक २ प्रदेश हानी करके कमती होता २ सर्व के छेवड़े माखी के पांख से भी अति छोटी अंगुल के असंख्यात में भाग चवड़ी ईषत्प्राग्भारा नामें पृथ्वी ऊंची निश्रेणी गती करके एक जोजन बाद लोकका अंत होता है तिस जोजन केऊ परिभागमें जो चौथा कोश है तिसके सर्व के ऊपर छट्ठै भाग में सिद्ध भगवंत अनंत अनागत काल स्वरूप करके विराजते हैं तिसका स्वरूप निरूपण करने वाली गाथा निरूपण करते हैं। यथा॥

—तत्थविय तेअवेया। अवेयणा निम्ममा
असंगाय॥ संसारविप्प मुक्का। पएस निव्वत्त
संठाणा॥ ५॥

व्याख्या—तहां पिण सिद्ध क्षेत्र में गये बाद वेसिद्ध भगवंत अवेदी याने पुरुष वेदादि करके रहित। तथा साता साता वेदना रहित तथा ममत्व रहित तथा बाह्य अभ्यंतर संगर हित किस कारणं से संसार से दूर हो गये तथा फेर किस माफक रयेहैं अपणे आत्म प्रदेशों करके निष्पन्न संस्थान जिणों के विषै तिणों कों प्रदेश निर्वृत्त संस्थान कहते हैं यहां पर प्रदेश शब्द करके आत्म प्रदेश जाणना चाहिये मगर बाहिर पुद्गल नहिं पांच शरीर आत्मा ने त्याग कर दिया॥ ५॥ अब यहां पर सत् आनंदा भिध शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज सिद्ध महाराज कहां रए हैं। तबकजोंदयगुरु उत्तर देते हैं सो गाथा दिखलाते हैं॥

—कहिंपडिहया सिद्धा। कहिं सिद्धा पइट्ठिया॥
कहिं बोइं चइत्ताणं। कत्थ गंतूण सिज्झई॥ ६॥

व्याख्या—कहिं इति अत्र तृतीया अर्थ सप्तमी जाणना इसका अर्थ इस माफक समझणा तथा सिद्ध महाराज किस करके ठहरगये गोया आगूं गये नहिं तथा कोन स्थान में सिद्ध महाराज प्रतिष्ठित हैं तथा कौन क्षेत्र के विषै शरीर त्याग करके कहां पर जाके सिद्धावस्था में प्राप्त होगये ॥ ६ ॥ अब उपरिउक्त प्रश्न का उत्तर गाथा द्वारा बतलाते हैं ॥

—अलोएपडिहया सिद्धा । लोयग्गेय पइट्ठिया इहिं
बोइं चइत्ताणं । तत्थ गंतूण सिज्झई ॥ ७ ॥

व्याख्या— यहां पर सप्तमी के अर्थ में तृतीयार्थ समझणा अलोक करके याने केवल आकाश रूप करके आगूं गये नहिं कारण अलोक में धर्मास्तिका यादिक का अभाव है इस वास्ते तिसके नजदीक रह गये गोया लोक में ठहर गये ऊपर एक जोजन बाद अलोक आगया इस वास्ते सामीप्य ऐसा शद्व रक्खा तथा लोक में पंचास्तिकाय के अग्र भाग याने मस्तक ऊपर सिद्ध रए हैं फेर संसार में आवेंगे नहिं तथा इस मनुष्य लोक के विषै शरीर का त्याग करके लोक के अग्र भाग में प्रदेशांतर भी स्पर्श करै नहिं तहां पर जाके निष्टितार्थ होते हैं गोया विराजमान रए हैं अब यहां पर सत् आनंदाभिधशिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज सिद्ध तो कर्म रहित होगये इस वास्ते उणों का गती किस माफक होता है गोया गती नाम चलणें का है गोया ऊपर कैसे गमन करा यह प्रश्न है ॥ अब गुरु उत्तर देते हैं कजउदयाभिधानाख्य । हे सत् आनंद शिष्य पूर्व प्रयोगा दिक करके गती याने गमन का होना धूम्र का सहज करके ऊर्ध्वजाणे का स्वभाव है यथा जीवका भी ऊर्ध्वगती जाणें का स्वभाव है यथा धनुष बाण का स्वभाव ऊच्चग मनका है तद्वत् जीवका भी ऊर्ध्व गमन स्वभाव जाणना तथा फेर भी दृष्टांत द्वारा पंचमांग सूत्र द्वारा दिखलाते हैं यदुक्तं श्री भगवत्यंगे । श्री गौतम स्वामी ने प्रश्न पूछा श्री महावीर स्वामी से ॥

—कहन्नं भंते अकम्मस्सगई पन्ना यत्ति । गोयमा
णिस्संगताए । निरंगणताए गतिपरिणामेणं बंधण

छेयणताए णिरिंगणताए पुव्व प्पयोगेणं अकम्मस्स गई पन्नत्ता ॥

इत्यादि अब इस सूत्र का लेशमात्र अर्थ दिखलाते हैं निस्संग तथा कहिये कर्म मल दूर होणें से तथानीरागतयाकहियै मोह दूर होणें करके तथा गति परिणाम करके याने गति स्वभाव करके अलाबु द्रव्यकी तरह से कर्म रूपबंधन छेद करके तथा एरंड फल की तरे से तथा निरिंधन करके याने कर्म रूप इंधन मोचन करके तथा धूम की तरह से तथा पूर्व प्रयोग करके तथा सकर्मता के निषै गति परिणाम करके तथा बाण की तरह से अकर्म बल करके गती जानना इत्यादिक पूर्वोक्त अलाबू आदि पदार्थों का दृष्टांत की योजना तो सूत्र तथा वृत्ती से विशेष समझ लेना । ७ ॥ अब क्या कहते हैं सिद्ध महाराज मोक्षमें पधार गये तब जो संस्थान याने आकार होताहै सो दिखलाते हैं ॥

—दीहंवा हस्संवा । जंचरिम भवेभवेज्ज संठाणं ॥
तत्तोत्ति भागहीणा । सिद्धाणो गाहणा भणिया ॥ ८ ॥

व्याख्या—तथा दीर्घ याने बड़ा पांच सै धनुष प्रमाणें तथा ह्रस्व कहिये छोटा दोय हाथ प्रमाणें तथा मध्यमं वा विचित्रं याने आखिर के भव में जो संस्थान होता है तिस संस्थान से तीन भाग कम बदन उदरादि अवयवों में छिद्र रंध्र पूर्ण होणें करके तीसरे भाग कमती शिद्ध महाराज की अवगाहना अपनी अवस्था करके निरूपन करी तीर्थ कर गणधरोंने यहां के संस्थान प्रमाण की अपेक्षा करके तीन भाग कम तहां का संस्थान जानना चाहिये ॥ ८ ॥ अब इसी बात को फेर पुष्ट करते हैं ॥

—जं संठाणंतु इहं भवं । चयं तस्स चरम समयंमि ॥
आसीय पए सयणं । तं संठाणं तहिं तस्स ॥ ९ ॥

व्याख्या—यत्संस्थान याने जो संस्थान जिस का जितनें प्रमाणें संस्थान होवे याने इस मनुष्य भव में था तिसी माफिक संस्थान शरीर प्रतें त्याग करती दफै आखिर के समयके विषै सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपातीध्यानके बलकरके मुख तथा पेट वगैरे अवयवों में छिद्रादि करके पूर्ण होनें से तीन भाग कमती प्रदेश के घन याने समूह थे वेई प्रदेशों के

समूह मूल प्रमाण की अपेक्षा करके तीन भाग कमती संस्थान तहां लोक के अंतमें सिद्धों का होता है और प्रकार करके नहीं ॥ ९ ॥ अब उत्कृष्ट आदिक भेद भिन्न २ करके अवगाहना दिखलाते हैं ॥

—तिन्निसया तेत्तीसा। धणुंति भागोय होइ नायव्वो ॥
एसाखलु सिद्धाणं। उक्कोसो गाहणा भणिया ॥ १० ॥

व्याख्या—तीन सै तेतीस अधिक धनुष एक धनुष का तीन भाग होता है। इस माफक निश्चय करके सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना निरूपन करी या अवगाहना पांच सै धनुष शरीर वालों की अपेक्षा करके जानना ॥ अब यहां पर सत् आनंदा भिध शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज। मरु देवानाभि कुलगर याने जुगली या उनकी स्त्री तथा नाभि राजा का पचवीस अधिक पांच सै धनुष प्रमाणें शरीरका प्रमाण था उसी माफक मरु देवा का शरीर का प्रमाण था तिसी माफक मरु देवा का संघयण तथा संस्थान तथा उंचासपणा नाभि कुलगर के बरोबर समझना इस माफक मरु देवा भगवती सिद्धावस्था में प्राप्त भई तिस माफक तिस मरु देवा के शरीर का मानसे तीभाग कमती करने से सिद्ध अवस्था में साढ़ा तीन सै धनुष अवगाहना प्राप्त होता है इस वास्ते उक्त प्रमाणें अवगाहना कैसे घटै इति प्रश्नः ॥ अब उत्तर देते हैं कि हे शिष्य ऐसा मत कहो मरुदेवा का शरीर प्रमाण नाभि राजासे कुछ कमती था अगर स्त्री उत्तम संस्थान की धरणें वाली रही है मगर उत्तम संस्थान धारक पुरषों की अपेक्षा में तथा अपने २ काल अपेक्षा करके कुछ कमती प्रमाण होता है इस वास्ते मरु देवा भी पांच सै धनुष प्रमाणें जानना चाहिये इस वास्ते कोई भी दोष नहीं तथा फेर भी विशेषता दिखलाते हैं मरुदेवा माता हाथी पर चढ़ी भई अंग संकोच हो गया उस अवस्था में सिद्ध भई तिस वजहसे शरीर का संकोच पणा होने से अधिक अवगाहना का संभव नहीं होता इस वास्ते विरोध नहीं इस बात कूं भाष्य कार पुष्ट करते हैं ॥

—कह मरु देवा माणं। नाभिओजेण किंचिऊणासा॥
तो किर पंच सयच्चिय। अहवा संकोचतो सिद्धा ॥ १० ॥

व्याख्या—मरु देवा नाभि राजा के शरीर प्रमाण से कुछ कमती थी इस वास्ते पांच सै धनुष शरीर जानना वाथवा संकोच सहित सिद्धावस्था में प्राप्त भई । इस वास्ते विरोध नहीं ॥

—चत्तारिय रयणीओ । रयणित्ति भागूणिया बोधव्वा ॥
एसा खलु सिद्धाणं । मज्झि मोगाहणा भणिया ॥ ११ ॥

व्याख्या— च्यार हाथ उस में तीन भाग कमती एक हाथ में कमती करना याने तीन भाग कमती हाथ समझना इस माफक निश्चय करके सिद्धों की मध्यम अवगाहना जानना । अब यहां पर सत् आनंदा भिध शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज जघन्य करके तो सात हाथ प्रमाणें सिद्धोंकी अवगाहना आगममें दिखलाई है इस माफक पूर्वोक्त अवगाहना जघन्य होना चाहिये मगर मध्यमा अवगाहना कैसे घटे इति प्रश्न ! । अब गुरू उत्तर देते हैं कि हे शिष्य ऐसा मत कहो । तीर्थंकर की अपेक्षा करके जघन्य पद में सात हाथ की सिद्धि कही है मगर सामान्य केवलियों की हीन प्रमाणें होती है इस वास्ते पूर्वोक्त अवगाहना भी याने शरीर प्रमाण सामान्य सिद्ध की अपेक्षा करके विचार करना इस वास्ते उक्त अवगाहना में दोष नहीं ॥ ११ ॥

—एगाय होई रयणी । अट्ठेवय अंगुलाइं साहीया ॥
एसा खलु सिद्धाणं । जहन्न ओगाहणा भणिया ॥ १२ ॥

व्याख्या—एक हाथ परिपूर्ण आठ अंगुल अधिक इस मांफक सिद्धों की अवगाहना जघन्य समझना किस की अपेक्षा में गोया कूर्मा पुत्रजी की अपेक्षायें उनका शरीर दो हाथ प्रमाणें था वा अथवा सात हाथ का शरीर है मगर घानी में पीलने वगैरे करके शरीर घट जाता है उस अपेक्षायें भी जान लेना । अब तीन प्रकार की अवगाहना का क्रम दिखलाते हैं भाष्य कार के मत से ॥

—जिट्ठाउ पंचधणुसय । तणुस्सतमझ्झायसत्तहत्थस्स ॥
देह त्तिभाग हीणा । जहन्निया जा विहत्थस्स ॥१॥

—सत्तूसिए सुसिद्धी। जहन्नओकहमियंमि विहत्थेसु॥
साकिर तित्थयरेसू। सेसाणं सिद्धि माणाणं॥ २॥
—तेपुण होज्ज बिहत्था। कुम्मा पुत्तादयो जहन्नेणं॥
अन्नेसं वट्टिय सत्त। हत्थ सिद्धस्स हीणत्ति॥ ३॥

इस का भावार्थ तो ऊपर दिखला दिया है। उत्कृष्ट पांच सै धनुष। मध्यम सात हाथ। शरीर का तीन भाग कम करना। तथा जघन्य दो हाथ दृष्टांत ऊपर दिखलाया उसी माफक समझ लेना॥१२॥ अब अवगाहना कहे के बाद सिद्ध महाराज का संस्थान दिखलाते हैं॥

—ओगाहणाए सिद्धा। भवत्ति भागेण होइ परिहीणा॥
संठाण मणित्थंथं। जर मरण विप्प मुक्काणं॥ १३॥

व्याख्या—अपनी २ अवगाहना करके सिद्ध होते हैं मनुष्य जन्म में जो शरीर था उस से तीन भाग कमती करणा। तथा संस्थानका आकार नियत नहीं है नहीं तो दीर्घ है और नहीं छोटे हैं तथा सर्वथा संस्थानका अभाव भी नहीं॥ १३॥ अब यहां पर सत् आनंद भिथ शिष्य प्रश्न करता है कि हे महाराज सिद्ध भगवान् परस्पर देश भेद करके रहे हैं वा जुदे२ रहे हैं इति प्रश्नः। अब गुरू उत्तर देते हैं गाथा द्वारा॥

—जत्थय एगोसिद्धो। तत्थअणंता भवक्खयविमुक्का॥
अन्नोन्न समोगाढा। पुट्ठा सव्वे बिलोगंते॥ १४॥

व्याख्या—जहां एक सिद्ध है तहां पर अनंते सिद्ध रहे हैं भवक्षय विम मुक्त आपस में मिले भये एकमें अनेक लोकके अंत कूं फर्श करके रहे हैं॥१४॥ अब सिद्ध महाराजों का लक्षण बतलाते हैं॥

—असरीरा जीव घना। उव उत्ता दंसणेय नाणेय॥
सागार मणा गारं। लक्खण मेयंतुसिद्धाणं॥ १५॥

व्याख्या—सिद्ध शरीर रहित तथा बहुत जीव समुदाय रूप तथा केवल दर्शन केवल ज्ञान उपयोग सहित अगर जो पिण केवल ज्ञान उत्पन्न भया तथा सिद्धत्व पणा प्रगट भया तब से केवल ज्ञान उपयोग होनेसे ज्ञानका प्रथम प्रधान पणाहै मगर सामान्य लक्षण दिखलाने के लिये प्रथम सामान्य आलंबन दर्शन बतलाया तथाच ।

—सामान्य विषयं दर्शनं । विशेष विषयं ज्ञानं ॥

इसका मतलब यह है कि छद्मस्थों के प्रथम दर्शन हैं और केवलियों के प्रथम ज्ञान है तिस वास्ते साकार अनाकार सामान्य विशेष उपयोग रूप सिद्धों का लक्षण है ।१५। अब केवल ज्ञान तथा केवल दर्शन का कुछ विशेपता दिखलाते हैं ॥

—केवल नाणुवउत्ता । जाणंता सव्व भाव गुण भावे ॥
पासंता सव्वओ खलु । केवल दिट्ठीहिं णंताहिं ॥ १६ ॥

व्याख्या—सिद्ध महाराज केवल ज्ञान के उपयोग सहित सर्व भाव गुण मतें सर्व पदार्थ गुण मतें तथा पर्याय मतें जानते हैं तहां पर जीव के साथ वर्त्ति तो गुण है तथा क्रम वर्त्ति याने क्रम करके होवे उनकूं पर्याय कहते हैं तथा अनंत केवल दृष्टि करके सर्व प्रकार करके देखते हैं तथा केवल दर्शन की भी अनंतता कारण सिद्ध भी अनंते रहे हुए हैं इस वास्ते सिद्धों में तथा केवलियों में प्रथम ज्ञान है पीछे दर्शन है ॥ १६ ॥ अब क्या कहते हैं कि सिद्ध महाराज उपमा रहित सुख भोगते हैं सो दिखलाते हैं ॥

—नवि अत्थिमाणु साणं । तंसुक्खंनवियसव्व देवाणं॥
जं सिद्धाणं सुक्खं । अव्वा बाहं उव गयाणं ॥१७॥

तथा मनुष्य चक्रवर्त्ति आदि लेके उनको भी इस माफक सुक्ख नहीं । तथा सर्व देवता याने पंचा नुत्तर वालों को भी इस माफक सुक्ख नहीं जैसा सुक्ख सिद्धों कूं है तथा किस माफक सिद्ध महाराज रहे हैं कोई प्रकारकी तकलीफ नहीं इस माफक विराजमानहै । अब फेरभी सिद्धोंके सुक्खकूं कोई भी पावे नहीं सो नास्ति भांगा दिखलाते हैं ॥

—सुरगणसुहं समत्तं । सव्वद्धा पिंडियं अणंत गुणं ॥

णविपावइ मुत्ति सुहं । णंताहिंवि वग्ग वग्गेहिं ॥ १८ ॥

व्याख्या—अतीत अनागत वर्त्तमान तीनूं काल के उत्पन्न भया समस्त देवतों का सुक्ख उणकूं सर्व काल और सर्व समय करके गुणा दियां जावे तिसका भी अणंत गुणा दिया जावे उसी प्रमाण कूं असत्कल्पना करके एकेक आकाश प्रदेश में उस सुक्ख कूं तथा गुणाकार कूं स्थापन करे गोया सकल आकाश प्रदेश करके पूर्ण करे तब अनंत हो गया तिस अनंत कूं भी अनंत वर्ग करके वर्ग करणा तो भी गोया मुक्ति के सुक्ख की बराबर नहीं हो सकै याने सिद्ध के सुक्ख की तुलना नहीं होती ॥ १८ ॥ अब सिद्ध महाराज के सुक्खकूं निरुपमता याने उपमा रहित पणा दिखलाते हैं ॥-

—जह नाम कोई मिच्छो । नयरगुणे वहु विहे विया ॥
णंतो ॥ नसक्कइ परिकहेउं । उवमाए तहिं असंतीए॥ १९ ॥

जैसे एक कोई म्लेच्छ नगर के गुणों प्रतें तथा घर में रहने वगैरे नाना प्रकार का सुख भोगव्याजाण रहाहै गुणों प्रतें जाणरहा है मगर जंगलमें गएबाद अन्यम्लेच्छोंकेआगूं कह सक्ता नहीं किस वास्ते गोया उपमा का अभाव है यह गाथा का अक्षरार्थ कहा । अब विशेष भावार्थ कथा से दिखलाते हैं । एक महा जंगल में बहुत म्लेच्छ रहते थे वे जंगल के पशु समान तहां पर काल व्यतीत करते थे एक दिन के समय में कोई राजा तिस प्रतें विपरीत चाल वाला घोड़ा अपहरण करके जंगल में लेगया तहां पर एक म्लेच्छ ने देखा कोई सत्पुरुष है ऐसा विचार करके सत्कार पूर्वक अपने ठिकाने लेगया तब राजा भी तिस म्लेच्छ को उपकारि मान करके अपने नगरमें लाके स्नान विलेपनादि पूर्वक अमूल्य वस्त्र आभूषण प्रधान महल में निवास मिष्टान्न पानादिक करके बहुत संतोषित किया हमेशा अपने शरीर की परें पास में रक्खे कितने दिन व्यतीत भये बाद वर्षा काल का मोका आने से बहुत काल का निवास जंगल स्मरण आया तब वो म्लेच्छ क्षण मात्र भी रह सका नहीं वस्त्राभरणादिक त्याग करके अपना सागी वेष पहर करके तहां से निकल करके जंगल में चला गया तहां पर और म्लेच्छादिक थे उनों ने इस कूं बहुत दिनों से आया देख करके सब मिल करके इस से पूछा भो मित्र तूं इतने दिन कहां गया था तब

यह बोला एक वड़े नगर में गया था तब तिनों ने फेर इस से पूछा कि हे मित्र नगर के साथा और क्या खाया तब यह म्लेच्छ बोला कि मैंने लाडू खाया तब इनों ने पूछा कि लाडू कैसेथे अब यह म्लेच्छ नगरके गुण वगैरेकूं जानता है मगर कह सक्ता नहीं कारण उपमा का अभाव है तथापि पानी से बेलू मिश्रित करके पिंड बांध करके बोला कि लाडू ऐसे होते हैं अन्य पदार्थ का अभाव होने से कुछ बयान कर सका नहीं इसी दृष्टांत पूर्वक केवल ज्ञानी भी अपने अनंत ज्ञान करके मुक्ति का सुक्ख जानते हैं मगर उपमाके अभाव करके भव्य जीवों के आगूं कह सक्के नहीं अब इसी बात कूं पुष्ट करते हैं गाथा करके॥

—इय सिद्धाणं सुक्खं। अणोवमं नत्थितस्स ओवम्मं॥
किंचिविसे सेणेत्तो। सारक्खमिणं सुणहु वोच्छं॥ २०॥

व्याख्या—ऐसा कहने से सिद्धों का सुक्ख अनुपम रहा है सो किस माफक है सो कहते हैं कि उपमा रहित है तथापि अज्ञ पुरषों की प्रतीती के वास्ते कुछ विशेषण करके ज्ञानी देशें उपमा देते हैं सो इस माफक है सो श्रवण करो॥ २०॥

—जह सव्व काम गुणियं। पुरिसो भोत्तूण भोयणं
कोई॥ तरहाछुहा विमुक्को। अच्छिज्जजहा अमियतित्तो॥२१॥
—इव सव्व काल तित्ता। अतुलं निव्वाण मुव गया
सिद्धा॥ सासय मव्वावाहं। चिट्ठंति सुहीसु हंपत्ता॥२२॥

व्याख्या—जैसे कोई पुरष सर्व काम गुणित सकल सौंदर्य सहित भोजन करके भूख प्यास रहित होके जैसे अमृत पीके रहे तिस माफक रहे॥ २१॥ इसी तरह से निर्वाण याने मोक्ष में प्राप्त भये सिद्ध महाराज सर्व काल तक याने सिद्धों की आदि तो है मगर अंत नहीं उस काल पर्यंत सर्वथा औत्सुक्ख भाव त्यागकर दिया परम संतोष सहित इस माफक सुखी होके रहे हैं॥ २२॥ अब उक्त अर्थ को विशेष भावना सहित दिखलाते हैं गाथा द्वारा॥

—सिद्धत्तिय बुद्धत्तिय। पारगयत्तिय परं परगयत्ति॥
उम्मुक्क कम्म कवया। अजरा अमरा असंगाय॥२३॥

—णिच्छिन्न सव्व दुक्खा। जाइ जरामरण बंधणविमुक्का॥
अव्वा बाहं सोक्खं। अणु होंति सासयं सिद्धा॥ २४॥

व्याख्या—आठ प्रकार के कर्मों कूं भस्म कर दिया जिनों ने ऐसे सिद्ध महाराज होते हैं तथा सामन्य करके कर्मादिक सिद्ध भी कहे जाते हैं ठाणांग जी के आठमें ठांणें में लौकिक आठ प्रकार के सिद्ध दिखलाये हैं सो गाथा करके दिखलाते हैं॥

—कम्मे सिप्पेय विज्जाए। मंते जोगेय आगमे॥ अत्थ
जुत्त अभिप्पाए। तवे कम्मक्खइयत्ति॥ १॥

व्याख्या—कर्म सिद्ध याने अनेक कर्म करके लोकमें तारीफ बतलावे। शिल्प याने चित्र कर्मादि नाना प्रकारसे लौकिक में प्रतिष्ठा पावे। तथा नाना प्रकार की विद्या दिखलाके चमत्कार बतलावे। तथा मंत्र करके तथा पदार्थ के संयोग करके आगम करके अर्थ युक्ति अभिप्राय कथन करके तथा तप करके इत्यादिक सिद्ध कहे हैं मगर कर्म क्षय करके लोकोत्तर सिद्ध जानना चाहिये असलमें सिद्ध इनकूं कहते हैं इसलिये पूर्वोक्त सिद्ध त्याग करके निरूपन करते हैं कि आठ कर्म रूप इंधन कूं जला के भस्म करदी जिनों ने फेर संसार में आगमन वृत्ति नहीं है जिनों की तथा तत्व के जानने वाले उनकूं बुद्ध कहते हैं तथा पारगत भी कहते हैं गोया चतुर्दश राज के ऊपर जाके विराजमान होगये तथा परंपरा गत भी कहते हैं परंपरा करके ज्ञानदर्शन चारित्र प्राप्त करे गोया चतुर्दशम गुणस्थान में रह के मोक्ष पधारे अब यहां पर मिथ्यात्वी तत्वके अज्ञात ऐसा कहा करते हैं कि कर्म का त्याग करते नहीं और मोक्ष से संसार में अवतार ले लेते हैं इस वचन से भी बाधकता रही है संसार में अवतरण का अभाव है कर्म बीज जलने से भवांकुर होसक्ता नहीं तथा दूर कर दिया है कर्म रूप व गतर जिनों ने तथा जरा रहित शरीर अभाव होने से जरा का भी त्याग होगया तथा अमरा याने मरे नहीं अशरीर करके प्राण त्याग का असंभव है जीव तो अमर है मगर प्राण त्याग रूप मरण कहा है सो सिद्धों में है नहीं तथा बाह्य और अभ्यंतर संग रहित होगये तथा सर्व दुक्खों कू लंघन कर दिया जिनों ने वो कोण सा दुक्ख था सो दिखलाते हैं जाति जरा मरण बंधन विमुक्ताः याने जाति जन्म लेना तथा जरा उमर हानि रूप तथा मरण, प्राण त्याग रूप तथा बंधनानि याने

अष्ट कर्म रूप बंधन इन सबका त्यागकर दिया जिनों ने याने जुदेहोगये इसवास्ते शास्वत सुक्ख के भोगने वाले सिद्ध महाराज रहे हैं ॥२४॥ अब सिद्ध महाराज के इकतीस गुण दिखलाते हैं । संठाण । ५ । वन्न । ५ । रस । ५ । गंध । २ । फास । ८ । वेयं । ३ । गसंगभव । ३ । रहियं । इकतीस गुण समिद्धं । सिद्धं बुद्धं जिणं नमिमो ॥ २५ ॥

व्याख्या—गोल । १ । तीस । २ । चतुरस्र । ३ । लंबा । ४ । परिमंडल । ५ । भेद करके संस्थान पांच । ५ । तथा । काला । १ । नीला । २ । पीला । ३ । लाल । ४ । सफेद । ५ । भेद करके वर्ण पांच । ५ । तथा । तीखो । १ । कडुवो । २ । कषायलो । ३ । खट्टो । ४ । मीठो । ५ भेद करके रश पांच । ५ । तथा । सुगंध । १ । तथा । दुर्गंध । २ । भेद करके गंध दो । २ । तथा । भारी । १ । हलको । २ । तथा सुकमाल । ३ । तथा कठोर । ४ । तथा शीत । याने ठंडा । ५ । तथा गरम । ६ । तथा चीकनो । ७ । तथा रूखा । ८ । भेदकरके फर्श । ८ । तथा स्त्री वेद । १ । तथा पुरुष वेद । २ । तथा नपुंशक वेद । ३ । भेद करके वेद तीन प्रकार के । ३ । तथा अंग याने शरीर उसका संग । तथा परवस्तु का संग । तथा भव याने जन्म । इन पूर्वोक्त इकतीस उपाधि रहित इस वास्ते इकतीस गुण करके सहित गोया गुण रूप रिद्धि सहित सिद्ध तथा बुद्ध । तथा जिन मतें मैं नमस्कार करता हूं ॥ २५ ॥ अब क्या कहते हैं सिद्धोंके जो अष्टकर्म क्षय होने से आठ गुण उत्पन्न हुए सो दिखलाते हैं ॥

—नाणं चदंशणं चेव । अव्वा बाहं तहेव सम्मत्तं ॥
अक्खयट्ठिई अरूवं । अगुरुलहु वीरियं हवई ॥२६॥

व्याख्या—ज्ञानं । १ । तथा । दर्शन । २ । अव्याबाध । ३ । गोया बाधा रहित । ३ । तथा सम्यक्त याने क्षायक सम्यक्त सहित । ४ । तथा अक्षय स्थिती । ५ । तथा अरूपि । ६ । तथा अगुरु लघु । ७ । तथा वीर्य सहित । ८ ॥ २६ ॥ अब यहां पर विशेष तात्पर्य दिखलाते हैं । ज्ञानावरणी कर्म का क्षय होने से अनंत ज्ञान उत्पन्न भया । १ । तथा दर्शनावरणी कर्म का क्षय होने से अनंत दर्शन पैदा भया । २ । तथा वेदनी कर्म का क्षय होने से अव्याबाध गुण गोया तकलीफ रहित इस गुण करके अनंता सिद्ध प्रमाणो पेत क्षेत्र के विषै अन्योन्य अवगाढ करके गोया एक में अनेक मिले भये रहे हैं तोभी परस्पर

में व्याबाधा का अभाव जानना। ३। तथा मोहनी कर्म क्षय होने से क्षायिक सम्यक्त उत्पन्न भया। ४। तथा आयुकर्म क्षय होने से अक्षय स्थिति रूप गुण उत्पन्न भया। ५। तथा नाम कर्म क्षय होने से अरूपी गुण पैदा भया। ६। तथा गोत्र कर्म क्षय होने से अगुरु लघु गुण प्राप्त भया। ७। जैसे उच्च गोत्रके उदय सेती खातरी याने बड़ा मानते हैं तथा नीच गोत्र के उदय सेती लघुता होती है गोया हलका मानते हैं तथा सिद्ध महाराज के विषै तो दोनूं का अभाव रहा है इस वास्ते अगुरु लघु गुण युक्त है। अब यहां पर सत् आनंदाभिध शिष्य प्रश्न करता है कि सज्जनों के तो सिद्ध महाराज पूज्य हैं मगर नास्तिकों के तो अपूज्य हैं इस वास्ते लघुपणा भया आप अगुरु लघु फरमाते हैं कोन प्रकार से सो कहिये। अब गुरु उत्तर देते हैं। जैसे उच्च गोत्र धारक पुरुष के आने से ऊठणा आसनदेना पूजा अंगीकार करते हैं तथा नीच गोत्रधारक पुरुष के आने से आगूं बैठाते हैं याने सामने बैठावै। यह पूर्वोक्त व्यवहार सिद्धावस्थामें नहीं है इस वास्ते अगुरु लघु गुण युक्त है। ७। तथा अंतराय कर्मका क्षय होने से अनंत वीर्य गुण उत्पन्न होवा है। ८। इस वास्ते लोक अलोक वर्त्ति अनंत पदार्थों कों युगपद्द ज्ञान करके ग्रहण करण रूप गुण प्रगट हो जाता है। ९। तथा जो सिद्ध महाराज हैं अनंत सुखपणा जानने में आता है सो वेदनी कर्म तथा मोहनी कर्म के दूर होने से अव्यबाध और अनंत सुक्ख उत्पन्न होता है तथा अनंत सम्यक्त गुण प्राप्त होता है इस माफक सिद्धों का गुण दिखलाया। इतने करके सकल मंगल मयी परमात्मा का स्वरूप दिखलाया॥

—इत्थं स्वरूपं परमात्म रूपं। निधाय चित्ते निरवद्य वृत्ते॥ सध्यानरंगाकृत शुद्धि संगा। भजंतु सिद्धिं सुधियः समृद्धिं॥ १॥

व्याख्या—इस माफक परमात्मा याने उत्कृष्ट आत्मा का स्वरूप प्रतें चित्तमें धारण करके पाप वृत्ति दूर करके उत्तम ध्यान रूप रंग करके शुद्ध संग करके उत्तम बुद्धि वाले पुरुष सिद्धि याने मोक्ष रूप रिद्धि प्रतें भजे याने अंगीकार करे॥ १॥

—भगवत्समयोत्कीना। मनुसारेणैष वर्णितोस्तिमया॥

परमात्मत्व विचारः । शुद्धः स्वपर प्रबोध कृते ॥ २ ॥

व्याख्या—सर्वज्ञों का समय याने शासन उनके अनुयायी यह ग्रंथ दर्शन करा। या बात ग्रंथ कर्त्ता उपाध्याय श्री क्षमा कल्याण जी गणी महाराज फरमाते हैं परमआत्मा का तत्व विचार परम शुद्ध कारक अपनी आत्मा प्रतें बोध कारक और अन्य भव्य जीवों की आत्मा को बोध दायक जानना चाहिये ॥ २ ॥ अब ग्रंथ समाप्ति में पूज्यों का नाम दइते हैं। श्री जिन भक्ति सूरि जी महाराज के चरण कमल में भ्रमर समान श्री जिन लाभ सूरि जी महाराज ने संग्रह करा आत्म प्रबोध ग्रंथ के विषै परमात्मा का वर्णस्वरूप चोथा प्रकाश निरूपण करा इस ग्रंथ कूं रचन तो पूज्योपाध्याय श्री क्षमा कल्याण जी महाराज ने करा है मगर अपणा विनय दिखला के आचार्यों का नाम दाखल करा है कारण बड़े होते हैं सो अपनी लघुताई बताते हैं ॥ ४ ॥ अब आत्म प्रबोध की महिमा बतलाते हैं ॥

—नरेंद्र देवेंद्र सुखानि सर्वाण्यपि । प्रकामं सुलभानि लोके ॥ परंचिदानंद पदैकहेतुः । सुदुर्लभ सात्विक आत्म बोधः ॥ १ ॥

व्याख्या—चक्रवर्त्ति आदि तथा इंद्रादिक देवता उन का सुक्ख सर्व प्रकार करके बहुधा मिलना सुलभ है इस लोकके विषै। मगर चित् आनंद का हेतु याने कारण बहुत दुर्लभ मिलता है तत्व रूप आत्म बोध ॥ १ ॥

—ततो निरस्या खिल दुष्ट कर्म । व्रजं सुधीभिः सततं स्वधर्म्मः ॥ समग्र संसारिक दुःखरोधः । समर्ज्जनीयः शुचिरात्म बोधः ॥ २ ॥

व्याख्या—तिस वास्ते अहो भव्य जीवो समस्त दुष्ट आठ कर्म कूं दूर करके पंडित जन निरंतर अपने धर्म में प्राप्त होते हैं तथा समग्र संसारी दुक्ख का निरोध करो और निर्मल आत्म बोध की आराधना करो ॥ ३ ॥ अब यहां पर आत्म बोध अंगीकार करने वाले भव्य जीवों को वचन रूप महात्म बतलाते हैं ॥

—नतेनरा दुर्गति माप्नुवंति । नमूकतां नैवजड़स्वभावं॥
नचांधतां बुद्धि विहीनतांनो । येधारयंतीह जिनेंद्र
वाणीम् ॥ ३ ॥

व्याख्या—जो आत्म प्रबोध कूं धारण करते हैं वे मनुष्य दुर्गती में नहीं प्राप्त होवें तथा मूकपणा तथा जड़स्वभाव पणा तथा अंधापणा तथा बुद्धि हीन पणा कभी प्राप्त होवे नहीं जो पुरष आत्म प्रबोध रूपा जिनेंद्र वाणी प्रतें धारण करेंगे उन कूं पूर्वोक्त दुर्गुण कभी होगा नहीं ॥ ३ ॥

—ये जिन बचने रक्ताः । श्री जिन बचनं श्रयंति भावेन ॥
अमलागत संक्लेशा । भवंतिते स्वल्प संसाराः ॥ ४ ॥

व्याख्या—जो भव्य जीव श्री जिन वचन में रक्त हैं तथा जिन बचन प्रतें भाव कर के अंगीकार करते हैं वे भव्य जीव संक्लेश रूप मल कूं धो करके अल्प संसारी होते हैं ॥ ४ ॥ तथा प्रथम यह निरूपन करा था ॥

—यदुक्त मादौ स्वपरोप कृत्यै । सम्यक्त धर्मादि चतुः
प्रकाशः ॥ विभाव्यतेसौ शुचिरात्म बोधः । समर्थितं
तद्भगवत्प्रशादात् ॥ १ ॥

व्याख्या—पेस्तर या बात दिखाई थी कि प्रथम स्व तथा पर उपकार के वास्ते सम्यक्त धर्मको आदि लेके चार प्रकाश रचन करता हूं सो चार प्रकाश रूप आत्म प्रबोध ग्रंथ निर्मल संपूर्ण करा सो सर्वज्ञों की कृपा से पूर्ण हुवा ॥ १ ॥ अब ग्रंथ कर्त्ता माफी मांगते हैं ॥

—प्रमाद बाहुल्य वशा दबुध्दया । यत्किंचि दाप्तोक्ति
बिरुद्ध मत्र ॥ प्रोक्तं भवेत्तज्जनितं समस्तं । मिथ्या
स्तुमे दुष्कृत मात्म शुध्द्या ॥ २ ॥

व्याख्या—बहुत प्रमाद के बश सेती वाथवा अबुद्धि करके तथा सर्वज्ञों के वचन

से विरुद्ध यहां पर कहा होतो तिसका आत्म शुद्धि करके मुझे मिथ्या दुष्कृत हूवो॥२॥
अब ग्रंथ कर्त्ता अपनी परंपरा गत पट्टावली निरूपन करते हैं॥

—श्री मद्वीर जिनेंद्र तीर्थ तिलकः सद्भूत संपन्निधिः।
संजज्ञे सुगुरुः सुधर्म गणभृत्त स्यान्वये सर्वतः॥
पुण्ये चांद्र कुले भवत्सुविहिते पक्षे सदा चारवान्।
सेव्यः शोभन धीमतां सुमतिमानुद्योतनः सूरिराट्॥ ३ ॥

व्याख्या—श्रीमान् महावीर स्वामी जो के शासन में तिलक समान छतीसं पदा का निधान इस माफक भये सद्गुरु सुधर्मा गणधर उनके परंपरा में सर्व साधु हो गये तथा फेर पुन्यवान् चंद्रकुल में उत्पन्न भये शुद्ध पक्षके धारक शोभन बुद्धिके धारक पंडित जनों कूं श्री उद्योतन सूरि राजा की सेवा करनी चाहिये॥ ३ ॥

—आशीत्तत्पद पंकजैक मधुकृत् श्री वर्द्धमाना भिधः।
सूरिस्तस्य जिनेश्वराख्य गणभृज्जातो विनेयोत्तमः॥
यः प्रापत् शिव सिद्धि पंक्ति शरदि १०८० श्रीपत्त
नेवादिनो। जित्वा सद्विरुदंकृती खरतरे त्याख्यं नृपा
देर्मुखात्॥ ४ ॥

व्याख्या—श्री जिन उद्योतन सूरिजी महाराज के चरण कमल में भ्रमर समान श्री वर्द्धमान सूरि जी भये तथा तिनों के पाट पर विनयवान् श्री जिनेश्वर सूरि जी गणधर गोया आचार्य भया जिनोंने दुर्ल्लभ राजाके सामने चैत्य वासियोंकूं पराजय करके १०८० संवतमें खरतर विरुद पाया राजाके मुख सेती राजाने कहा कि यह खरा रहा इस वास्ते खरतर विरुद दीया या बात अनेक ग्रंथ में साबूत है मगर इस बातकूं पढ़ करके कितनेक अन्य गणावलंबी सहन नहीं करतेहैं भटकतेहैं कुयुक्ति अज्ञानाच्छादितमती से विरुद्ध लिखते हैं किसं १२०४ में खरतर उत्पत्ति भई ऐसा लिखने वालों ने लेखनी संभाई उस वक्त में नसा पिया दिखता था किस वास्ते १२०४ में श्री जिन दत्त सूरि जी के समय मौजूदगी में खरतर गच्छ का भेद गोया उस मांय से द्वितिया शाखा निकली रुद्र पल्लीय खरतर

द्वितीया शाखा भिन्न जब खरतर प्रथम से था तब तो शाखा निकली होगी मगर दृष्टि रागांध में कुछ दिखता नहीं तथा फेर दृष्पारूढ होने से तो फेर सर्वांधत्व पणा हो गया इस सबब से अनेक पुस्तक छपाते हैं उसमें १२०४ में खरतर उत्पत्ति ऐसा लेख लिखते हैं प्रथम से राग द्वेष होने का कारण अन्य गण वालों ने करा था और गच्छ संबंधी कलहकी नीव जैनतत्वा दर्शसे जमी है अपनी किताबमें काहे कूं दूसरेकूं विपरीत लिखना आपको अखतियार क्या है अपने२ गच्छ संबंधी व्यवस्था लिखना फायदे की बातहै मगर यह तो अफलातून बन गये फेर क्या दिखाई देवे बंदरथा और बिच्छु खा गया भूत था और सराप पी लिया इस दृष्टांत पूर्वक जैसे आया वैसा लिख दिया मगर ऐसा सोचा नहीं कि दांत बड़े२ हैं और दांत तोड़ने वाले बठे हैं हम काहेकूं सूते सिंहकूं जगावें हमारे तो कोई गच्छ से राग द्वेष नहीं है मगर चलते भये बैल के आर लगावे तो क्रोध का कारण होताई है इस वास्ते हे मित्र जनो गच्छ संबंधी हकीकत लिखने का तथा पुस्तक छपाने का त्याग करो घर की फौज घर में मत लड़ो नुकसान का कारण हैं ऐसे आप लोक पंडित नाम धराते हो तो प्रथम तो ढुंढक चढ़ रहे है फेर तेरे पंथी चढ़ रहे हैं फेर दिगंबर चढ़ रहे हैं उन से विवाद करो और उनकूं सन्मार्ग में लाओ जब तो हम आपकूं सिद्ध समझें नहीं तो खाली सेखी काख में छाणो इस माफक कदाग्रह करने से फायदा नहीं तथा हमने फेर भी एक कदाग्रह की रीति नूतन देखी है कि श्री शांति विजय जी खरतर मीमांशा अभिधान पुस्तक छपवांयगे तो क्या खरतर वाला तप गण शमीक्षा नहीं छपांयगे अहो देवानुप्रिय छापा छपाने में द्वेष बढ़ेगा मगर घटेगा नहीं इस वास्ते कार्य कारण बंध करणा मुनासिब है विस्तरेणालं॥ तथा पूर्वोक्त श्री जिनेश्वर सूरि जी महाराज के पाट पर श्री जिन चंद सूरि जी गणधर भये गोया गुण का समुद्र के बतोर तथा संवे गरंग सहित श्री अभयदेव सूरिजी महाराज तिनों के भाई होते भये जिनों नें अति गहनार्थ गर्भित स्थानांगादि नवांगकी टीका रचन करी सं। ११२२ में श्री अर्हंत का धर्म कूं दीपायमान करा तथा अल्प बुद्धि वालोंके महार्थ जाननेको बड़ा भारी सहाय करा। अब यहां पर एक बात याद आगई सो दिखलाते हैं संबंध पाके दर्शाना पड़ता है आधुनिक छापेकी कितावें देखनेमें आतीहैं उनमें ऐसा लेख दृष्टिगोचर होताहै कि श्रीअभय देवसूरिजी तो खर..रमें नहींभये किंतु अन्यगणमें भयेहैं ऐसालेख लिखने वालोंका मतिभ्रम

मिटाते हैं अहो देवानुप्रियो अगर जो आपके गणमें तथा अन्य गणमें श्री अभयदेव सूरिजी होते तो कुछ तो स्मारक चिन्ह रहता कारण अपने पज्य वर्ग का स्मारक तो होनाई चाहिये सो तो आपके कोई गण में दिखता नहीं देखिये अहो देवानुप्रियो खरतर गण में श्री अभय देव सूरि जी स्तंभनक पार्श्वनाथ की मूर्त्ति प्रगट करी उनकी स्तुति श्री अभय देवाचार्य ने रचन करी श्री सेढ़ी तटिनी तटे पुरवरे श्री स्तंभने स्वर्गिगै। इत्यादि स्तुति प्रति क्रमण में खरतर वाले हमेशा सायंकाल में कहते हैं तथा श्री स्तंभनक पार्श्व नाथ जी का सोले नवकार का काउसग्ग करते हैं इस वास्ते स्मारक चिन्ह खरतर में जाहिर है तथा श्री अभय देव सूरि रचित जय तिहु अणवत्तीसी खरतर वाले प्रति क्रमणादि चैत्य वंदन के स्थानमें कहते हैं यह द्वितीय स्मारक चिन्ह भया इस वजे से श्री अभय देव सूरि जी खरतर में भया साबूत होता है आप दृष्टि राग में कुतर्क करो तो हमारे हानी नहीं शुझेशु किंवहुना। तथा श्री अभय देव सूरि जी के पाट पर श्री जिन वल्लभ सूरि जी महाराज संघपट्टा वगैरे अनेक ग्रंथके कर्त्ता भये तथा श्री जिन शासन का महिमा बढ़ाने वाले पुरष भये तथा तिनों के पाट पर श्री जिन दत्त सूरि जी महाराज भये जिनों को अंबा देवी ने युग प्रधान पद दिया तथा मिथ्यात्व का नाश करने वाले पांच नदी पांच पीर के साधक तथा बावन बीर चौसठ योगनियों कूं वश करने वाले एक लाख तीस हज्जार श्रावक प्रति बोधक इस माफक चमत्कारी यह आचार्य भये तथा जिनोंकी देवतायों ने सेवा करी तथा तिनों के पाट श्रीजिन चंद्र सूरिजी मणि वाले भये अपने धर्म में तत्पर और ललाटमें मणी थी तथा बादशाहों ने नमस्कार करा प्राचीन दिल्ली में अग्नि संस्कार माणक चौक में बादशाह के हुकम से दिया गया। तथा तिणों के वंश में गुणके निधान उत्तम विधान के साधक परम पवित्र मुनीश्वर परम चमत्कारिक श्री जिन कुशल सूरिजी दादा नाम से प्रसिद्ध आचार्य भये जीवितावस्था में चमत्कार दिखाया तथा देवलोक गये बाद भी चमत्कार दिखलाया तथा तिनों के पाट श्री जिन भद्र सूरि जी आदि भये। तथा तिनों के पट्टानुक्रम श्री जिन चंद्र सूरि जी भये परम मुनि मार्ग के सेवन करने वाले फेर जिनों ने दया लाके अकब्बर कूं प्रति बोध दिया। तथा तिणों के पाट श्री जिन सिंह सूरि जी भये उनों ने अपनी चतुराई से सर्व सूरि कूं प्रसन्न किये तथा अपनी बुद्धि करके गोया बृहस्पति कूं जीतने वाले सदृश भये याने देसें उपमा दी गई है तथा तिणों के पाट

देदीप्पमान मतापके धारक श्री जिनराज सूरिजी भये जिनों ने जैनराजीति नामक न्याय का ग्रंथ बनाया फेर सिद्ध गिरी में चोमुखजी में मतिष्ठा कराई तथा तिनों के शिष्य श्री जिन रत्न सूरि जी भये गुणों का समुद्र और जगत में मसिद्ध भये। तथा तिनों के पाट पर उदयाचल समान तथा मेरु पर्वत समान श्री जिन सौख्य सूरिजी भये सत्कीर्तिवान् तथा महा विद्वान् भये। तथा तिनों के पाट सेवन करने वाले युग मधान सत्य मतिज्ञा के धारक श्री मान् जिन भक्ति सूरिजी गुरु महाराज गणधर भये तथा तिनों के पाट विनय वान् श्री जिन लाभ सूरि जी भये जिनों ने महा ग्रंथ रूप समुद्र मथन करके रत्न की परें यह आत्म मवोध ग्रंथ ग्रहण किया सं। १८३३ में कार्तिक शुदि पंचमी के दिन मनरमण करने वाला श्री मनराख्य विंदर में इस ग्रंथ कों पूर्ण करा। तथा जो कुछ उत्सूत्र तथा मतिभ्रम-प्रयोग करके निरर्थक वचन कहने में आया हो तो बुद्धिवान् शुद्ध करके वाचेंगे कारण सज्जन पुरषों का पर उपकार करणा यही धर्महै। जब तक पृथ्वि मंडल मध्यदेश में मेरु विराजमान है तब तक मुनी रत्नों को वाचणा चाहिये तब तक यह आत्म मबोध ग्रंथ जयवंतार हो॥

—तथा प्रथमा दर्शेऽलेखि। क्षमा कल्याण साधुना॥
श्रीमान् संशोधि तोपि सोयं। ग्रंथः सद्बोध भक्ति भृता॥ १७॥

॥ आचार्य नामावली ॥

श्री जिन भक्ति सूरि जी
श्री जिन लाभ सूरि जी
श्री जिन चंद्र सूरि जी
श्री जिन हर्ष सूरि जी
श्री जिन सौभाग्य सूरि जी
श्री जिन हंस सूरि जी
श्री जिन चंद्र सूरि जी
श्री जिन कीर्त्ति सूरि जी

॥ शिष्यावलीयम् ॥

वाचक श्री प्रीति शागर जी गणी
वाचक श्री अमृत धर्म जी गणी
पाठक श्री क्षमा कल्याण जी गणी
पाठकेव श्री गुणानंद जी गणी
पाठक पदलायक श्री महिमा भक्तिजी गणी

तच्छिष्याणुना पंडित चरणरजेव पंडित पन्नालाल मुनी दीक्षाभिधानेन पंडित पद्मोदय मुनिना श्री आत्म प्रबोध ग्रंथकी भाषा रचना करी।

श्री जबलपुरे सेठ श्री चांदमल्ल भूरा गोत्रीय प्रार्थनया। संवत् १९६७ का पोष शुदी ११ बुध घस्रे चेदं पूर्णम गमत् ॥

॥ संस्कृत विषयिक सद्गुरूणां नामावलीयं ॥

—श्री मद्वीर जिनेंद्र तीर्थ तिलकः सद्भूत संपन्निधिः।
संजज्ञे सुगुरुः सुधर्म्म गण भृत्त स्यान्वये सर्वतः ॥
पुण्ये चांद्रकुले भवत्सु विहिते पक्षेसदा चार वान्।
सेव्यः शोभन धीमतां सुमति मानुद्योतनः सूरिराट् ॥ १

आशी त्तत्पद पंकजैक मधुकृत् श्री वर्द्धमानाभिधः।
सूरिस्तस्य जिनेश्वराख्य गण भृज्जातो विनेयोत्तमः ॥
यःप्रापत् शिव सिद्धिपंक्ति शरदि श्रीपत्तनेवादिनो।
जित्वा सद्वरुदंकृती खरतरे त्याख्यं नृपा देर्मुखात् ॥ २

तत्शिष्यो जिनचंद्र सूरिगणभृज्जज्ञे गुणांभोनिधिः।

मार्ग सेवी ॥ अबोधि तोयेन दया परेण । अकब्बरा
ख्यः पति साहि मुख्यः ॥ ६
तदन्वभूत् श्री जिन सिंह सूरिः । स्वपाट वाल्हादित
स । सूरिः ॥ ततः स्वधीर्निर्जित देव सूरिः । स्फुर
त्प्रतापो जिन राज सूरिः ॥ ७
तत्शिष्यो जिन रत्नसूरि सुगुरुः श्रीजैन चंद्रस्ततो ।
गच्छे शोगण भृद्वरो गुण गणांभोधिर्जग द्विश्रुतः ॥
तत्पट्टोदय शैल मूर्ध्नि सुतरां भास्व त्प्रतापो द्धुरः ।
ये नोत्तुंग नवांग वृत्ति रचनां कृत्वार्हतः शासने ।
साहाय्यं विदधे महत् श्रुत परिज्ञानार्थिनां श्रीमतां ॥ २
तत्पट्टे जिन बल्लभोगण धरः सन्मार्ग सेवा पराः ।
संजातस्तदनु प्रभूत महिमा सद् भव्य बोधः प्रदः ॥
अंबा दत्त युग प्रधान पद भून्मिथ्यात्व विध्वंसकृ ।
न्नेता श्री जिनदत्त सूरि रभ वद्वृंदारकाभ्यर्चितः ॥ ३
तदनु श्री जिनचंद्रः सूरिवरो। भूत्स्व धर्म निस्तंद्र ः ॥
सन्मणि मंडितभालः । प्रणता खिलशिष्ट भूपालः ॥ ४
तद्वं शेगुण निधयः । सम्यग् विधयो मुनीश्वराः
शुचयः ॥ श्रीजिन कुशल मुनींद्रः । श्री जिन भद्रा
दयो भूवन् ॥ ५
जज्ञे मुनींद्रस्त दुनु क्रमेण । श्री जैन चंद्रो मुनि
संविग्नोभय देव सूरि मुनि पस्तस्यानुजो भूत्ततः ॥
पूज्यः श्री जिन सौख्य सूरि रभवत्सत्कीर्ति विद्या
वरः ॥ ८

तत्पादांबुज सेविनोयुग वराः सत्य प्रतिज्ञा धराः ।
श्रीमंतो जिनभक्तिसूरिगुरवोभूवन् गणाधीश्वराः ॥
यैरुद्दाम गुणैः स्वधर्म निपुणै र्निः शेष तेजस्विनां ।
तस्थे मौलि पदे प्रकाम सुभगैः पुष्पैरिव प्रत्यहं ॥ ९
तेषां विनेयो निरवद्य वृत्तिः । प्रमोदतः श्री जिन
लाभ सूरिः ॥ इमं महा ग्रंथ पयोधि मध्या । त्सम
ग्रही द्रत्न मिवात्मबोधं ॥ १०
हुताश मध्यावसु चंद्र वत्सरे । समुज्ज्वले कार्त्तिक
पंचमी दिन ॥ मनोरमे श्री मन रा्रव्य बंदरे ।
अगमन्निबंधः परिपूर्ण तामयं ॥ ११ ॥

इति सद्गुरूणां पट्टावली समाप्ता ॥

॥ श्री मज्जैनेंद्र देवो जयतु तराम् ॥

* विज्ञापन *

श्री आत्म प्रबोध ग्रंथ के बारे में विज्ञप्ति पत्र महाशय लोगों से निवेदन करते हैं कि अहो मेरे प्रिय मित्रजन वा साधर्मी भाई साहबों से एक विज्ञप्ति रूप अरज है कि अपने स्याद्वाद धर्म में अभी वर्त्तमान काल में ज्ञान की बड़ी खामी है गृहस्थ लोग तो बिलकुल पढ़ते नहीं तथा जती वा संवेगी लोगों में कुछ पढ़नेका अभ्यास है मगर मिथ्या त्वियों में महा पंडित मौजूद हैं उनों की अपेक्षा करके तो स्याद्वाद में बिलकुल पंडिताई न्यून है जैनियों में ऐसा मेरे नजर में दिखता नहीं सो मिथ्यात्वि पंडितों के साथ संस्कृत भाषामें एकदिन तक बराबर परस्पर भाषण करे सो इस माफक नहीं श्वेतांबर में तो बहुत कम भाष्य पर्यंत व्याकरणादि अध्ययन करने वाले अल्पतर हैं इसका सबब यह है कि स्थान२ पर पाठशाला नहीं होने से विद्या कमती होती जाती है विद्या विगर हेय । ज्ञेय । उपादेय । पदार्थ तथा भक्षाभक्ष वा पेयापेय का विवेचन नहीं हो सक्ता तथा अपने मत से वाक भी होना तो दूर रहा इस वास्ते विशिष्ट ज्ञान होने का कारण देखिये कि प्रथम सम्यक्त वगैरे प्राप्ति होने का खप करणा मगर सम्यक्त प्राप्ती के लिये ऐसा कोई ग्रंथ भी होना चाहिये देखिये जनाब इस माफक तो ग्रंथ आत्म प्रबोध ग्रंथ अमूल्य रहा है उसके जरिये से गोया स्वधर्म विषयिक विशिष्ट ज्ञान होने सक्ता है मगर संस्कृत के वजे से पढ़ने वालों की गणना कमती है कारण संस्कृत व्याकरण विगर पढ़ सक्ते नहीं इस वजे से अहो महाशय लोक आप के केवल उपगार के लिये इस आत्म प्रबोध ग्रंथ की हिंदी भाषा तथा टीका सहित छपवाके भव्य जीवों के हित के लिये जाहर करी है इस आत्म प्रबोध कूं जाहर करने वाले जबलपुर निवासी सेठ श्रीयुत चोथमल जी चांदमल जी भूरा ने अपने घर से दो तीन हजार रुपे ज्ञानखाते लगा के प्रसिद्ध भव्य जीवों को भेंट के वास्ते अर्प्पण करने के लिये प्रकाशित किया है इस आत्म प्रबोध ग्रंथ का भावार्थ जानना मुसकिल है जिस कूं आत्म प्रबोध याने आत्म ज्ञान विगर अपर धर्म शोभित नहीं हो सक्ता तथा आत्म ज्ञान किस वजे से होता है उसका कारण रूप सम्यक्त हैं इस वास्ते आत्म प्रबोध ग्रंथ में प्रथम सम्यक्त का स्वरूप दिखलाया है सम्यक्त कितने प्रकार का तथा सम्यक्त का काल विचार तथा कोन से गुण स्थानमें कौनसा सम्यक्त होता है तथा एक प्रकार वा दो प्रकार या तीन प्रकार यावत् दस रुचि करके सम्यक्त दस प्रकार का बतलाया तथा कारक । रोचक । दीपक ।

तीन प्रकार का सम्यक्त बतलाया तथा तीन पुंज का स्वरूप वा अभव्य वा भव्य विचार तथा अभव्य में दीपक सम्यक्त उपचार से पावे ऐसा दिखलाया है तथा ग्रंथिक स्वरूप दिखलाया है तथा देवतत्व। गुरूतत्व। और धर्मतत्व के लक्षण बतलाये हैं तथा जीवरूप दीवाल परधर्म वा सम्यक्त रूप चित्राम शोभित होताहै तथा चार सद्दहनाकूं अंगीकार करके गोया सम्यक्त के ६७ भेद दृष्टांत सहित दिखलाये हैं इत्यादिक रत्न पदार्थ सहित प्रथम प्रकाश में अर्थाधिकार रहा है तथा द्वितीय देश विरती प्रकाश में देश विरती प्राप्ति होने का स्वरूप तथा काल नियम तथा श्रावक के २१ गुण बतलाये हैं तथा १२ व्रत ऊपर भिन्न२ दृष्टांत बतलाये हैं तथा सवा विश्वा दया और बीस विश्वा दया का स्वरूप दिखलाया है तथा श्री महावीर स्वामी के दस श्रावक आनंद काम देवादिक का दृष्टांत दिखलाया है इत्यादि रत्न सहित द्वितीय प्रकाश अर्थाधिकार रहा है तथा तृतीय प्रकाश सर्व विरती प्राप्ति होने का स्वरूप तथा काल नियम दिखलाया है तथा पुरुष। तथा स्त्री। तथा नपुंसक। इन तीनों के देश विरतीके योग्य प्राप्ति अप्राप्ति होनेका स्वरूप दिखलाया है तथा कितने प्रकार का पुरुष वा कितने प्रकार की स्त्री तथा नपुंशक वेद। यह तीनों का दीक्षा के योग्यायोग्य का स्वरूप दिखालाया है तथा बाल दीक्षाऊ पर अतिमुक्तक कुमर का दृष्टांत बतलाया है तथा संयम के भेद वा साधू के २७ गुण दिखलाये हैं तथा प्रमाद ऊपर सुमंगल साधू का दृष्टांत दिखलाया है इत्यादिक रत्न पदार्थ सहित तीसरा प्रकाश जानना। तथा चतुर्थ प्रकाशमें परमात्मा का स्वरूप गोया भवस्थ केवल परमात्मा। तथा सिद्ध परमात्मा तथा ४ निक्षेप सहित चार प्रकार का जिन दिखलाया। तथा मूर्त्ति नहीं मानने वाले ढुंढक लोकूं कूं थापना सिद्ध करके दिखलाई है थापना निक्षेपा प्रमाण सहित और चैत्य शब्द का ज्ञान अर्थ करने वालों को व्याकरण द्वारा खंडन करा है और चैत्य शब्द करके अरिहंत का मंदिर साबूत करके दिखलाया है तथा शाश्वती अशाश्वती जिन प्रतिमा वंदन करने ऊपर जंघाचारण विद्याचारण का भगवती सूत्र की साक्षी देके साबूती दिखलाई है गोया स्थापना नहीं मान्य करने वाले ढुंढक लोकूंकूं सूत्र द्वारा खंडन करा है तथा थापना की साबूती दी गई है तथा द्रव्य जिन का स्वरूप तथा भाव जिनका स्वरूप दिखलाया है तथा सिद्ध महाराज की अवगाहना वा संस्थान का स्वरूप दिखलाया है तथा सिद्धों के ३१ गुण बतलाये हैं तथा केवली आहार ग्रहण करे उसका स्वरूप दिखलाया है अंत में सिद्ध के सुखका स्वरूप दिखलाया है इत्यादिक रत्न सहित चौथे प्रकाश में अर्थाधिकार पूर्ण करा है इस माफक इस आत्म प्रबोध ग्रंथमें चार प्रकाश रहे हैं अब पंडित जनों से एक विज्ञप्ति करता हूं कि प्रथम के फारम १० तथा पृष्ठ ८० तक सेठ ने अन्यानक्षरी के मारफत छपवाया इस वजे से गलतियें बहुत रह

गई इस वास्ते हमारा दोष नहीं तथा पृष्ठ ८१ से लेके गोया फारम ११ से संपूर्ण ग्रंथ हमारे मारफत छपा है उस में काना मात्रा वगैरे की तो गलती छापे की वजे से आगई होगी मगर अक्षर पद की गलती नहीं है अगर होवे तो भी विशेषज्ञ शुद्ध करके और गुणग्राहि पूर्वक पढ़ियेगा इस के पढ़ने से बहुत लाभ होगा इस लिये सेठ चांदमल जी भूरा जबलपुर निवासी ने ज्ञानखाते एक हजार पुस्तक छपवा के साधर्मी भाईयों कूं भेंट देने के लिये छपवाके प्रसिद्ध करी है धन्यवाद है सेठ कूं जिनों ने दो हजार रुपये घर से लगा के इस ग्रंथ कूं प्रसिद्ध करा और उपगार करा इस वास्ते सेठ धन्य है इस लाभ में हद नहीं इतना लाभ तथा उपगार की सीमा नहीं इसवास्ते इस रत्न ग्रंथकूं जरूर पढ़ियेगा जिससे धर्म की वाकवी होगी तथा साधर्मियों के उपगार के वास्ते निछरावल विगर दी जायगी बहुत नाम करने का कारण रहा है इस आत्म प्रबोध ग्रंथ की कहां तक तारीफ करूं बहुत उपगारी ग्रंथ है यह आत्म प्रबोध ग्रंथ न्यायांभोनिधि आत्मार्थि मुनिराज परम शांत गुण सहित श्री कृपाचंद्र जी महाराजके उपदेश से छापा गया है इस वास्ते महाराज कूं धन्यवाद देता हूं इस आत्म प्रबोध ग्रंथ जो मेरे मारफत छपा गया है गोया पृष्ठ ८१ से लेके अखीर तक मेरे हस्ते छपा है अगर उस में गलती रह गई हो तो मिथ्या दुष्कृत देता हूं पंडित जन खुद विचार करेंगे कारण शास्त्र समुद्र में छद्मस्थ चूक जाते हैं शुद्धेषु किंबहुना ॥

पुस्तक मिलने का ठिकानाः—

सेठ चोथमलजी चांदमलजी भूरा,

जबलपूर.

इस ग्रंथ की भाषा करने वाला अपनी गुर्वावली लिखता है ॥

—पूज्या श्रीभक्ति सूरींद्राः । तत्शिष्या प्रीति शागराः ॥
वाचकामृत धर्मादि । क्षमा कल्याण पाठकाः ॥ १ ॥
तच्छिष्या गुण आनंदा । भक्तिंच महिमा भिधं ॥
तत्शिष्य मणुना चेयं । पद्मोदयेन निर्मिता ॥ २ ॥

॥ श्री ॥

॥ इश्तहार ॥

व

॥ स्तवना ॥

श्री आत्म प्रबोध ग्रंथ भाषा टीका सहित साधर्मी भाइयों के भेंट के लिये सेठ श्री चुन्नीलाल जी भूरा उन की धर्मपत्नी अंतकाल की समय में ज्ञान खाते रुपये दिये और ऐसा कहा कि हमारे पीछे आत्म प्रबोध की पुस्तक एक हजार छपवाके प्रभावना के बतौर भेज देना इस वास्ते इस पुस्तक को छपवाकर आप लोग की सेवा में उपस्थित करता हूं कि आप इसको पढ़कर धर्म की उन्नति करेंगे विस्तरेणालम् ॥

इस पुस्तक का मिलने का पताः—

सेठ चौथमल चांदमल भूरा,

जबलपूर.